BED-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

शिक्षार्थी अवबोध
Understanding Learner

BED-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

शिक्षार्थी अवबोध
Understanding Learner

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक एवं सदस्य

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी

सह आचार्य, शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा (राज.)

सदस्य

1. प्रो. पी. के. साहू
   शिक्षा विभाग
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय (उप्र.)
2. प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव (से.नि.)
   जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय,
   नई दिल्ली
3. प्रो. आर. जे. सिंह
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ प्र.)
4. प्रो. डी. एन. सनसनवाल
   देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
5. प्रो. एस. बी. मेनन
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6. प्रो. स्नेह. एम. जोशी
   एम. एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा
7. प्रो. सोहनवीर सिंह चौधरी
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय,
   नई दिल्ली
8. डॉ. एम. एल. गुप्ता
   सह आचार्य शिक्षा (से. नि.)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
9. डॉ. अनिल शुक्ला
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उप्र.)

संपादन एवं पाठ लेखन

संपादक

डॉ. बी. एस. राजयादा

रीडर (सेवानिवृत्त)

क्षेत्रिय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर

पाठ लेखक

डॉ. माधुरी चौबे
लो. नि. शि. प्र. म. डबोक

डॉ सन्ध्या जिहार
एडवांस इंस्टी. ऑफ मैने., गाजियाबाद

डॉ. वन्दना शै. वर्मा.
प्राचार्य
एच. एल. एम. टी. टी. कॉलेज. गाजियायाद

डॉ. मनोज कुमार सक्सेना
एडवांस इंस्टी. ऑफ. मैने., गाजियाबाद

डॉ. स्मिता भावलकर
प्राचार्य.
सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन

डॉ. लिलेश गुप्ता
प्राचार्य
प्रगति टी. टी. कॉलेज, कोटा

डॉ. राधारानी सक्सेना
प्राचार्य
फूले. शि. प्र. महाविद्यालय, जयपुर

डॉ. राकेश तोमर
क्षत्रिय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. (डॉ) नरेश दाधीच	प्रो. (डॉ.) एम. के. घडोलिया	योगेन्द्र गोयल
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	संकाय विभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : अप्रेल 2012 ISBN - 13/978-85-8496-329-8

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश की वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

कुलसचिव, व. म. खु. विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के लिये मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई व इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 - विकासोम्मुख अधिगमयक	7-38
इकाई 2 - अभिगमकर्ता की समस्याएं एवं उनका प्रबंधन : अधिगमकर्ता के व्यवहार पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन हेतु इसके विकासात्मक परिपेक्ष्य के निहितार्थ	39-48
इकाई 3 - अधिगम सिद्धान्त : व्यवहारवादी बनाम समग्रवादी सिद्धान्त : स्कीनर गाने, आसुबेल तथा पियाजे के सिद्धान्त तथा निर्मितवाद	49-77
इकाई 4 - व्यक्तियों एवं प्रौढ़ों की अधिगम शैली	78-93
इकाई 5 - अधिगम के प्रकार, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, अधिगम कार्य	94-114
इकाई 6 - अधिगमकर्ता की विशेषताएं आवश्यकताएं एवं अभिप्रेरणा	115-130
इकाई 7 - अवधान, स्मृति, रूचि	131-144
इकाई 8 - व्यक्तित्व, अर्थ, सिद्धान्त, कारक और प्रारूप	145-156
इकाई 9 - व्यक्तित्व का मानप : प्रक्षेपण तथा अप्रेक्षपण प्रविधियां तथा व्यक्त्वि का मापन	157-168
इकाई 10 - विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व के साथ व्यवहार में शिक्षक की भूमिका	169-192
इकाई 11 - बुद्धि (मल्टीपल एवं कृत्रिम) का सम्प्रत्यय एवं सिद्धान्त, ज्ञान तथा बुद्धि में अन्तर, कृत्रिम बुद्धि	193-210
इकाई 12 - बुद्धि का मापन तथा उनका शिक्षण अधिगम व्यवस्था में प्रयोग	211-225
इकाई 13 - सजनात्मकता: अवधारणा, बुद्धि से सम्बंध, सृजनात्मकता का मापन	226-238
इकाई 14 - विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चे : श्रवण एवं दृष्टि दोष युक्त बच्चे, प्रतिभाशाली, पिछड़े तथा बाल अपराधी बच्चे	239-257
इकाई 15 - विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता व योजना बनाना अध्यापक की सक्रियता	258-274
इकाई 16 - बालकों का निर्देशन एवं परामर्श	275-301
इकाई 17 - अधिगमक : व्यक्तिक विभिन्नताएं -कारक, समस्याएं तथा शिक्षण अधिगम तंत्र में इसकी उपयोगिता	302-313
इकाई 18 - मनोवैज्ञानिक परीक्षण : अवधारणा, प्रयोग, विभिन्न परीक्षण, प्रक्रिया व विश्लेषण एवं अर्थनिर्णय, समाज समिति एवं समूह	314-332

	गतिकी इत्यादि	
इकाई 19 -	सांख्यकीय अवधारणाओं तथा केन्द्रीय प्रवृतियों, प्रतिशतक, विचलन तथा अनुक्रमित आकड़ों से सह -सम्बंध गुणांक का सांख्यकीय अर्थ निर्णय	333-361

इकाई-1 (UNIT- 1)

विकासोन्मुख अधिगमयक(Learner as a Developing Individual)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

1.0 उद्देश्य (Objectives)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

1.2 विकास की विभिन्न अवस्थाऐं (Different Stages of Development)

1.2.1 शैशव अवस्था जल से 8 वर्ष की आयु तक ।
(Infancy: from birth upto 6 yrs of age)

1.2.2 बालावस्था, वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक ।
(Childhood: from 6yrs to 12 yrs of age)

1.2.3 किशोरावस्था 13 वर्ष से 19 वर्ष की आयु तक ।
(Adolescence: from 13yrs to 19 yrs of age)

स्वपरखप्रश्न (Check your Progress)

1.3 विकास के विभिन्न आयाम (Different Aspects of Development)

1.3.1 शारीरिक विकास (Physical Development)

1.3.1.1 शैशवावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development during Infancy)

1.3.1.2 बाल्यवस्था में शारीरिक विकास (Physical Development during Childhood)

1.3.1.3 किशोरावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development during Adolescence)

1.3.1.4 शारीरिक विकास को प्रभावित वाले तत्व (Factors influencing Physical Development)

स्वपरखप्रश्न (**Check your Progress**)

1.3.2 मानसिक विकास (Mental Development)

1.3.2.1 मानसिक विकास के क्षेत्र (Areas of Mental Development)

1.3.2.2 शैशवावस्था में मानसिक विकास (Mental Development during Infancy)

1.3.2.3 बालावस्था में मानसिक विकास (Mental Development during Childhood)

1.3.2.4 किशोरावस्था में मानसिक विकास (Mental Development during Adolescence)

1.3.2.5 मानसिक विकास को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors influencing Mental Development)
स्वपरखप्रश्न (**Check Your Progress**)
1.3.3 सामाजिक विकास (**Social Development**)
1.3.3.1 शैशवावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Infancy)
1.3.3.2 बाल्यावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Childhood)
1.3.3.3 किशोरावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Adolescene)
1.3.3.4 सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors influencing Social Development)
स्वपरखप्रश्न (**Check Your Progress**)
1.3.4 संवेगात्मक विकास (Emotional Development)
1.3.4.1 शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development during Infancy)
1.3.4.2 बात्यावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development during Childhood)
1.3.4.3 किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development during Adolescence)
1.3.4.4 संवेग को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Influencing Emotional Development)
1.3.4.4 संवेगात्मक विकास में शिक्षा का महत्त्व (Importance of Education in emotional Development)
स्वपरखप्रश्न (**Check Your Progress**)
1.3.5 चारित्रिक विकास (Development of Character)
1.3.5.1 संवेग, स्थायीभाव और चरित्र (Emotions, Sentimentse and Character)
1.3.5.2 शैशवावस्था में चारित्रिक विकास (Development of Character during Infancy)
1.3.5.3 बाल्यवस्था में चारित्रिक विकास (Development of Character during Childhood)
1.3.5.4 किशोरावस्था में चारित्रिक विकास (Development of Character during Adolescence)
1.3.5.5 अच्छे चरित्र के लक्षण (Features of a Good Character)
1.3.5.6 चारित्रिक विकास में शिक्षा की भूमिका (Role of education in Development of Character)

स्वपरखप्रश्न (**Check Your Progress**)

1.4 सारांश (Summary)

1.5 शब्दावली (Glossary)

1.6 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)

1.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to Self-Learning Exercises)

1.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-End Question)

1.0 उद्देश्य(Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद मुख्यत: निम्न बिन्दुओ पर आपकी गहरी समझ विकसित हो सकेगी:

1. आप विकास की विभिन्न अवस्थाओं के शैक्षिक महत्त्व को समझ सकेगें ।
2. आप विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले विकासों के स्वभाव को समझ सकेगे ।
3. आप विकास को प्रभावित करने वाले कारकों को समझ सकेगे ।
4. अधिगमयक की शैक्षिक प्रगति में इन कारकों की भूमिका का अनुमान लगा सकेगे ।
5. विकासात्मक अवस्थाओं में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन की व्याख्या कर सकेगे ।
6. आप विद्यार्थियो को उनकी दैनिक जीवन की गतिविधियों को समझकर उन्हे परामर्श दे सकेगे ।
7. आप उनकी समामजिक बुराईयों का मार्गन्तिकरण कर सकेगे ।
8. आप प्रत्येक अवस्था की विशेषता को समझते हुए उनके गुणों का सही विश्लेषण कर सकेगे ।
9. आप समलिंगिय एवे विषमलिगिंय विचारधारा में भेद कर सकेगे ।
10. आप विकास के विभिन्न आयामों की विशेषताओं का शिक्षा में महत्त्व समझ सकेगे ।
11. आप अपनी शिक्षण शैली को विद्यार्थियों की अवस्था एवं विकास के अनुसार अधिक प्रभावी बनाकर उन्हे उचित शिक्षा प्रदान कर सकेगे ।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

"विकास, अभिवृद्धि, परिपक्वता और अधिगम-ये सब शब्द उन शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और नैतिक परिवर्तनों का उल्लेख करते हैं, जिनका व्यक्ति अपने जीवन मे आगे बढते समये अनुभव करता है।"- कोलेसनिक"

"*The terms growth, development, maturation and learning refer to the physical, mental, social, emotional and moral changes which a person experiences as he advances through the life"*

- Kolesnik

यह सर्वविदित है कि बालक जन्म से ही सीखना प्रारम्म कर देता है तथा मृत्युपर्यन्त तक उसके सीखने की प्रक्रिया चलती रहती है । जाने अनजाने में अपने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से व्यक्ति सीखता रहता है तथा उसके आधार पर उसमें अपने परिवर्तन आते रहते है । अर्थात् सीखना एक बहुत ही सामाजिक व सहज प्रचलित प्रक्रिया है । गेट्स व अन्य के

अनुसार अनुभव के द्वारा व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को सीखना या अधिगम (Learning) कहते हैं। क्रो व क्रो के अनुसार सीखना आदतों, ज्ञान व अभिवृत्तियो का अर्जन है । इससे स्पष्ट होता है कि प्रत्येक व्यक्ति जन्म से ही एक अधिगमयक (Learner) होता है । और यह अधिगम किसी भी बालक या व्यक्ति के विकास की अतिमहत्तवपूर्ण प्रक्रिया है । यह विकास प्रक्रिया समान्यत: तीन रूपों में चलती है -

1. अभिवृद्धि (Growth)
2. विकास (Development)
3. परिपक्वता (Maturation)

हालांकि तीनों ही प्रत्यय एक दूसरे से घनिष्टता से संबंधित है परन्तु इनमें अनेक सूक्ष्म अंतर भी है । अभिवृद्धि एक परिमाणात्मक (Quantitative) विकास का घोतक है जैसे आयु की वृद्धि, लम्बाई, उंचाई आदि में वृद्धि । अभिवृद्धि सदैव नही चलती वरन् निश्चित आयु की प्राप्ति उपरान्त अभिवशद्धि की प्रक्रिया रूक जाती है । विकास बहुपक्षीय है । यह मात्र परिणात्मक वृद्धि का ही लाभ नही है । यह दोनो परिमाणात्मक व गुणात्मक (Qualitative) परिवर्तनों को व्यक्त करता है । इसमें अन्य परिवर्तन भी सम्मिलित हैं जैसे व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन जिसे मापा नही जा सकता है। अत: विकास अभिवृद्धि से अधिक व्यापक प्रत्यय है । तथापि यह एक निरन्तर व सतत् प्रक्रिया है जों जन्म से मृत्यु तक निरन्तर जारी रहती है । परिपक्वता (Maturation) वह अवस्था है जब अभिवृद्धि रूक जाती है । ड्रेवर इसे अभिवृद्धि की पूर्णता (Completion of Growth) के नाम से भी पुकारते है।

इस इकाई में मानव जीवन की प्रारंभिक तीन अवस्थाओं यथा शैश्वावस्था, बाल्यावस्था एवं किशोरावसथा में विकास व अधिगम के विभिन्न आयामों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है । इस अध्याय में यह बताया गया है कि 19 वर्ष की आयु तक, जब तक कि बालक विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करता है, विकास की प्रत्येक अवस्था में, विकास के विभिन्न आयामों की क्या स्थिति रहती है और उसमें किस प्रकार के परिवर्तन आते हैं । शिक्षा. शिक्षक और विद्यालय के लिये इन जानकारियों का बहुत अधिक क्योकि इस ज्ञान से वे बालक के सर्वागीय विकास में अपनी वांछित भूमिका निभा सकेगें ।

1.2 विकास की विभिन्न अवस्थाऐ (Different stages of Development)

विद्यालय में अध्ययन काल की अवधि को विकास की प्रकृति की विशेषताओं के आधार पर निम्न तीन अवस्थाओं में विभक्त किया जा सकता है :

1.2.1 शैशव अवस्था

जन्म से 6 वर्ष की आयु तक **(Infancy : from birth upto 6 yrs of age)**

जीवन के प्रथम दो वर्षो मे बालक अपनी भावी जीवन स्थिति एवं महत्व का शिलान्यास करता है। यद्पि किसी भी आयु मे उसमे परिवर्तन हो सकता है, परंतु प्रारंभिक प्रवृत्तिया और प्रतिमान सदैव बने रहते है।" - स्ट्रेग

“During the first two years of life, the child lays the foundation for his future. Although, change is possible at any age, early trends and patterns tend to persist.” -Strong

"व्यक्ति का जितना भी मानसिक विकास होता है, उसका आधा तीन वर्ष की आयु तक हो जाता है।" -गुडएनफ

“One-half of an individual’s ultimate mental stature has been attained by the age of three years.” - Goodenough

"बालक प्रथम के 6 वर्षो मे बाद के 12 वर्षो से दूना सीख लेता है।" - गेसल

“In the first six years of life a child learns twice as much of what he learns in the next 12 years.” - Gessel

"शैशवावस्था मे सीखने की सीमा और तीव्रता, विकास की ओर किसी भी अवस्था की तुलना मै बहुत अधिक होती है।' - वाटसन

"The scope and intensity of learning during infancy exceeds that of any other period of development” - Watson

“तीन और दस साल के बीच के वर्ष बालक के शारीरिक, संवेगात्मक और मानसिक विकास के लिए सबसे अधिक महत्तपूर्ण है। अत हम पूर्व प्राथमिक शिक्षा के अधिक संभव विस्तार की आवश्यकता स्वीकार करते है। - शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन

"The years between 3 years and 10 years are of great importance in child’s physical, emotional and intellectual development. We therefore, recognize the need to develop pre-primary education as extensively as possible.” **-Education Commission Report.**

1.2.2 **बाल्यावस्था : 7 वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक।**

(Childhood: from 7 yrs to 12 yrs of age) :-

स्थिति एवं महत्त्व :-

"शैक्षिक दष्टिकोण से जीवन चक्र मे बाल्यावस्था से अधिक महत्तपूर्ण कोई अवस्था नहीं है। जो शिक्षक इस अवस्था में बालको को शिक्षा देते है, उन्हे बालको की, उनकी आधारभूत अवश्यकताओ की उनकी समस्याओ एवं उनकी परिस्थितियो की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए, जो उनके व्यवहार को रूपांतरित व परिवर्तित करती है । यह वह समय होता है जब बालक के मूल दष्टिकोण, मूल्य और आदर्श काफी हद तक मूर्त रूप लेते है।

ब्लेयर, जोन्स व सिंम्पसन

“No period during the life cycle is more important then childhood from educational point of view. Teachers who work at this level should understand children, their fundamental needs, their problems and the forces which modify and produce behavior change. Childhood is the time when the individual’s basic outlooks, values, and ideas are to a great extent shaped.

Blair, Joneand Simpson

1.2.3 किशोरावस्था : 13 वर्ष से 19 वर्ष की आयु तक।

(Adolescence : from 13 yrs to 19 yrs of age) स्थिति एवं महत्त्व :-

“किशोरावस्था बड़े सघर्ष, तनाव, तूफान और विरोध की अवस्था है"। -स्टेन्ले हाल

“Adolescence is a period of great stress and strain, storm and strife.”

-Stanley hall

“किशोरावस्था वह समय है जिसमे विचारशील व्यक्ति बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर संक्रमण करता है। - जरशील्ड

"Adolescence is a period, in which growing person makes transition from childhood to maturity.” - Jersild

“इस बात पर कोई मतभेद नहीं हो सकता है की किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन समय है।

-ई.ए.किर्कपाट्रिक

"There can be no difference of opinion about the fact that adolescence is the most difficult period of life” -E A Kirkpatrik

"किशोरावस्था की विषेशताओ को सर्वोत्तम रूप से व्यक्त करने वाला एक शब्द है - परिवर्तन - शारीरिक, सामाजिक, और मनोवैज्ञानिक"। - बिग व हंट

“The one word which best characterizes adolescence is ‘Change’. The change is physiological, sociological and psychological.”- Bigg and Hunt

“हमारे सबके संवेगात्मक व्यवहार में कुछ विरोध होता है, पर किशोरावस्था में यह व्यवहार विशेष रूप से स्पष्ट होता है ।" - बी एन झा

"घनिष्ठता और व्यक्तिगत मित्रता उत्तर - किशोरावस्था की विशेषता है ।" - वेलेंटाइन

"शिशु के समान, किशोर को अपने वातावरण में समायोजन करने का कार्य फिर से प्रारभ करना पड़ता है ।" - रास

"किशोर, प्रोढो को अपने मार्ग मे बाधा समझता है, जो उसे अपनी स्वतन्त्रता का लक्ष्य प्राप्त करने से रोकते है।" -कोलेसनिक

"किशोर और किशोरियों दोनों को अपने शरीर व स्वस्थ्य की विशेष चिंता रहती है। किशोर के लिए सबल, स्वस्थ्य और उत्साही बनना एवं किशोरियों के लिए अपनी आकश्ति को नारी जाती आकर्षण प्रदान करना महत्त्पूर्ण होता है।"

- कोलेसनिक

"किशोर की मानसिक जिज्ञासा का विकास होता है। वह सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक और अन्तराष्ट्रिय समस्याओ में रुचि लेने लगता है। वह इन समस्याओ के संबंध में अपने विचारो का निर्माण भी करता है ।" - कोलेसनिक

"जिन समूहो से किशोरों का संबंध होता है, उनसे उनके लगभग सभी कार्य प्रभावित होते है। उनकी भाषा नैतिक मूल्यो, वस्त्र पहनने की आदतों और भोजन करने की विधियो को प्रभावित करता है।" - बिग व हंट

"किशोर समाज - सेवा के आदर्शो का निर्माण और पोषण करता है। उसका उदार मानव जाति के प्रेम से ओतप्रोत होता है और वह आदर्श समाज का निर्माण करने मे सहायता के लिए उधिग्न रहता है।" - रास

"किशोरावस्था, अपराध प्रवशत्ति के विकास सा नाजुक समय है । पक्के अपराधियों की विशव संख्या इस अवस्था मे ही अपने व्यावसायिक जीवन को गंभीरतापूर्वक आरंभ करती है।"

- वेलेंटाइन

"किशोर, महत्त्पूर्ण बनना, अपने समूह मे स्थिति प्राप्त करना और श्रेष्ठ व्यक्ति के रूप मे स्वीकार किया जाना चाहता है।" - ब्लेयर , जोन्स व सिंम्पसन

"किशोरावस्था एक नया जन्म क्योकि इसी मे उच्तर व श्रेष्ठतम मसनव विशेषताओ के दर्शन होते है।" - स्टेन्ले हाल

"Adolescence is a new birth for, the higher and more completely human traits are now born" - Stanley Hall

एक अध्यापक के रूप मे हमारा संबंध प्रारम्भिक तीन अवस्थाओ में होता है। इन अवस्थाओ को और उपविभाजित किया जा सकता है। जन्म से 3 वर्ष की आयु तक पूर्व-शैशव(Pre-infancy) व 3 से 6 वर्ष की आयु तक उत्तर-शैशव (Post-Infancy) अवस्था कहलती है। इसी प्रकार 6 से 9 वर्ष की आयु तक पूर्व-बाल्यावस्था (Pre-Childhood) तथा 9 से 12 वर्ष उत्तर-बाल्यावस्था (Post-Childhood) कहलती है। 12 से 15 वर्ष की आयु तक पूर्व-किशोरावस्था (Pre-Adolescence) तथा 15 से 18 तक की अवस्था उत्तर-किशोरावस्था (Post-Adolescence) कहलती है।

विकास की विभिन्न अवस्थाओ पर स्व-मूल्यांकन प्रशन

(Self Evaluation Questions Different stages of development)

0.1 शैशवकाल के विकास को सबसे अधिक महत्व क्यों दिया जाता है ?

0.2 प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षको को छात्रो की आधारभूत आवशयकताओ व समस्याओ को समझना क्यों आवशयक है ?

0.3 किशोरावस्था अधिक तनावपूर्ण क्यों होती है ?

1.3 विकास के विभिन्न आयाम (Different aspects of Development)

प्राणी का विकास विभिन्न आयामो व दिशाओ में होता है। कुछ प्रमुख आयाम निम्नलिखित है :-

1 शारीरिक विकास (Physical Development)

2 मानसिक विकास (Mental Development)

3 सामाजिक विकास (Social Development)

4 संवेगात्मक विकास (Emotional Development)

5 नैतिक या चारित्रिक विकास (Moral or Character Development)

1.3.1 शारीरिक विकास (Physical Development)

" बालक सर्वप्रथम एक शरीरधारी प्राणी है। उसकी शारीरिक सरंचना उसके व्यवहार और दृष्टिकोण के विकास का आधार है। अत: उसके शारीरिक विकास के रूपो का अध्ययन आवश्यक है।"

- क्रो एवं क्रो

"The child is first and foremost a physical being. His physical constitution is basic to the development of his attitudes and behavior. Hence, It is necessary to study the patterns of his physical growth"

- Crow&Crow

जन्म से पूर्व भ्रूण के स्थापित होने के साथ ही व्यक्ति का शारीरिक विकास प्रारम्भ हो जाता है जोकि एक स्वभाविक, प्राकृतिक एवं सतत प्रक्रिया है जिसपर वंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव पड़ता है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओ में शारीरिक विकास में मुख्यत: निम्नांकित बाते देखने को मिलती है।

1.3.1.1 शैशवावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development during Infancy):-

शैशवावस्था में जन्म के प्रथम सप्ताह उपरान्त शिशु के भार मे वृद्धि होती है जो शैशवावस्था की समाप्ति तक समान्यत: 40 पौड़ के लगभग हो जाता है। शिशु की लंबाई में भी 20 इंच से आरंभ होकर 40 से 42 इंच तक की वृद्धि होती है। प्रारम्भ के दो वर्षो में शिशु के सिर का विकास तेजी से होता है जो बाद में अन्य अंगो में विकास की अपेक्षा में मन्द पड जाता है। नवजात शिशु में लचीली, कोमल लगभग 270 हड्डियाँ होती है। आयु बढने के साथ फास्फोरस (Phosphorus), कैल्शियम (Calcium) व अन्य खनिजो (Minerals) की सहायता से हड्डियाँ बढती है और कठोर हो जाती है। सामान्यात: नवजात शिशु के दांत नहीं होते है। जन्म के 6-7 माह बाद अस्थाई दूध के दांत आ जाते है और चार वर्ष की आयु तक समस्त दूध के दांत आ जाते है और पाँच वर्ष की आयु के बाद स्थायी पक्के दांत आने प्रारम्भ हो जाते है। नवजात शिशु के हृदये की धड़कन बहुत तेज होती है जिसमे समय के साथ मंदता और स्थिरता आ जाती है। शैशवावस्था में लड़को की अपेक्षा लड़कियों में शारीरिक विकास अधिक तीव्रता से होता है।

"शिशु अपने नैतिक गृह-कार्यो में लगभग आत्म-निर्भर हो जाते है। पाँच वर्ष अंत तक अनेक शिशु पर्याप्त स्वन्त्रता और कुशलता प्राप्त कर लेते है।" - स्ट्रैंग

1.3.1.2 बाल्यावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development during Childhood)

बाल्यावस्था शारीरिक विकास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इसमे बालक में अनेक शारीरिक, मानसिक व संवेगात्मक (Emotional) परिवर्तन होने लगते है। शारीरिक तौर पर बालक का भार पर्याप्त बढ जाता है । 10 वर्ष की आयु के बाद लडकियों के भार मे लड़को कि अपेक्षा अधिक वृद्धि होती है। लंबाई कि बढोतरी इस अवस्था में आपेक्षाकृत कम होती है। सिर का आकार बदलता रहता है। हड्डियो की संख्या 350 तक पहुच जाती है। दूधिया दांत गिर कर स्थाई दांत आ जाते है। अन्य अंगो मे भी मंद गति से विकास होता रहता है। हृदय की धड़कन स्थिर हो जाती है। यौनांगों (Genital Organs) का विकास तेजी से होने लगता है। बालक के

लगभग सभी अंगो का विकास हो जाता है। वह अपनी शारीरिक गति पर नियंत्रण करना जान जाता है, अपने सभी कार्य स्वयं करने लगता है और दूसरों पर निर्भर नहीं रह जाता है।

1.3.1.3 किशोरावस्था मे शारीरिक विकास (Physical Development during Adolescence) :-

किशोरावस्था सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व जटिल अवस्था है । इसमें आन्तरिक व बाह्ा दोनो स्तरों में सबसे ज्यादा परिवर्तन होते हैं । मांसपेशियों व हड्डियों के मजबूत होने के कारण भार में अधिक वृद्धि होती है । लम्बाई भी तेजी से बढती है । सिर व मस्तिषक में पूर्ण परिपक्वता आ जाती है । हडिडयों में परिपक्वता के साथ पुष्टता भी आ जाती है । लचीलापन समाप्त हो जाता है । दाँत पूर्ण स्थायित्व प्राप्त कर लेते हैं । आन्तरिक अंगों का पूर्ण विकास हो जाता हे । लड़को में रक्तचाप में वृद्धि होने लगती है । पाचनक्रिया पूर्ण सामर्थ्यशील बन जाती है । गुप्तांग पूर्ण विकसित हो जाते हैं । लडकों मे स्वप्नदोष तथा लडकियों में मासिक धर्म (Menstrual Cycle) प्रारम्भ हो जाता है । दोनों में संतानोपत्ति क्षमता आ जाती है ।

1.3.1.4 शारीरिक विकास को प्रभावित वाले तत्व (Factors influencing Physical Development) -

बालक के शारीरिक विकास पर उसके परिवार, खान पान, भरण पोषण एवं उसके वातावरण का असर पडता है । मुख्यत: बालक का शारीरिक विकास निम्न तत्वों से प्रभावित होता है:

1. वंशानुक्रम (Heredity) माता पिता से प्राप्त वाहक सुत्र (Genes) इसका निर्धारण करते है ।
2. वातावरण (Environment) बालक के आस पास घटित समस्त घटनाएं तथा वातावरण उसके विकास पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती हैं ।
3. भोजन (Balanced Diet) : पौष्टिक भोजन शारीरिक विकास को बढाता है । इससे नई स्फूर्ति व शक्ति का संचार होता है ।
4. खेल व व्यायाम (Play & Exercise) सुचारू शारीरिक विकास हेतु नियमित खेल व आयाम आवश्यक है । इससे रक्त शुद्धि, रक्त संचार, श्वसन क्रिया आदि का विकास होता है व हड्डियाँ मजबूत होती है । शरीर की क्षमता बढती है ।
5. माता पिता का प्यार (Parental Love) यह बालक की मनोवृत्ति को प्रभावित कर परोक्ष रूप से बालक के शारीरिक विकास को प्रभावित करता है ।
6. पर्याप्त नींद व आराम (Adequate Sleep & Rest) शैशवावस्था में 14 से 18 घंटे, बाल्यावस्था में 11 से 14 घंटे तथा किशोरावस्था में कम से कम 9 घंटे की नींद व आराम अच्छे शारीरिक विकास हेतु आवश्यक है । इससे ही थकान दूर होती है ।

शारीरिक विकास पर स्व-मूल्याकन प्रशन
(Self-evaluation questions on Physical Development)

1. शैशवकाल शारीरिक विकास की आधारशिला क्यों कहलती है?

2. बाल्यावस्था जीवन को स्वर्णिम काल कैसे है?
3. किशोरावस्था को काष्ठावस्था भी कह सकते है। क्यों ?

1.3.2 मानसिक विकास (Mental Development):-

“शैक्षणिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणो से अध्यापक मानसिक विकास के क्रम के ज्ञान को अपने हित में प्रयोग कर सकता है। वह पाठ्यक्रम और शिक्षण को छात्र की सीखने की योग्यता या मानसिक क्षमता के अनुकूल बना सकता हैं। - सोरन्सन

"Psychologically and educationally, knowledge of the course of mental growth can be used to advantage by the teacher. The Curriculum and teaching can be adjusted to the learning ability or the mental capacity of the pupil." -Sorenson

1.3.2.1 मानसिक विकास के क्षेत्र (Areas of Mental Development) :-

मानसिक विकास पर वंशानुक्रम व वातावरण का गहरा प्रभाव पडता है । समुचित वातावरण, जिसमें भौतिक व सामाजिक दोनो ही प्रकार के वातावरण सम्मिलित है, के मिलने पर मानसिक योग्यताओं का विकास बेहतर ढंग से होता है । वंशानुक्रम (Heredity) मानसिक योग्यताओं के विकास की सीमा निर्धारित करता है । मानसिक विकास के निम्न क्षेत्र हैं

1. **बुद्धि का विकास (Development of Intelligence)** बुद्धि का विकास प्राय: 18 से 21 वर्ष तक होकर रूक जाता है । बाल्यावस्था से ही सुक्ष्म व अमूर्त बौद्धिक चिन्तन (Intellectual thinking) का विकास होने लगता है । स्मृति बौद्धिक विकास का क्रियात्मक पक्ष है ।
2. **भाषा विकास (Development of Language)** प्रारम्भ में निरर्थक शब्दों के उच्चारण से लेकर बाल्यावस्था में सार्थक शब्दों को बोलने की व कुछ लिखने की योग्यता का विकास होता है। किशोरावस्था में बालक लिखित व मौखिक रूप से अपने विचारों को व्यक्त करने की क्षमता का विकास कर लेता है ।
3. **संवेदना व प्रत्यक्षीकरण(Sensation & perception):** विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों (Sensory organs) के माध्यम से हुई अनुभूति को संवदेना कहते हैं। शैशवावस्था में संवेदना शून्यतुल्य होती है । शनै: शनै: इसका विकास होता है और बालक संवेदना का निश्चित अर्थ निकालने लगता है जिसे प्रत्यक्षीकरण कहते है। किशोरावस्था में संवेदना व प्रत्यक्षीकरण की पूर्ण क्षमता विकसित हो जाती है।
4. **समस्या समाधान योग्यता का विकास (Development of problem Solving ability) :** मानसिक विकास के साथ समस्याओं को समझने एवं उनका समाधान खोजने की योग्यता का विकास भी होता है।
5. **प्रत्यय निर्माण व तर्क शक्ति का विकास (Development of concept formation and reasoning ability)** बालक के बडा होने के साथ ही प्रत्यय निर्माण, समुचित

तर्क प्रस्तुत करने व विधिवत तार्किक विश्लेषण (Logical Analysis) करने की क्षमता का विकास हो जाता है ।

6. **संज्ञान विकास (Cognitive Development):** परिस्थितियों व अवस्थओ से संज्ञान लेने की क्षमता का विकास भी मानसिक विकास का महत्त्वपूर्ण पक्ष है ।

"General mental growth is most rapid in the first 5 years of life, nearly as rapid from ages 5 to 10. Less so from 10 to 15 and much less from 15 to 20." - **Sorenson**

1.3.2.2 शैशवावस्था में मानसिक विकास (Mental Developmental during Infancy) -

शैशवावस्था में बालक में स्पर्श, घ्राण, स्वाद आदि की संवेदनशीलता होती है । चुभन की पीडा का अहसास होने लगता है । ध्वनि पर प्रतिक्रिया होने लगती है । आत्मगौरव की प्रवृत्ति प्रबल होती है । समय संख्या, भार आदि का ज्ञान नही होता है । जिज्ञासा तीव्र होती है । भाषा संबंधी विकास सीमित होता है । स्मृति के चिन्ह प्रकट होने लगते है । कल्पनाशक्ति उपयोग ज्यादा होता है । यौन प्रवृत्तियां विकसित होने लगती है । रचनात्मक किया में रूचि दिखाई देती है । वस्तु संग्रह की प्रवृत्ति देखी जा सकती है ।

"जब बालक 6 वर्ष का हो जाता है, तब उसकी मानसिक योग्यताओ को लगभग पूर्ण विकास हो जाता है!' -क्रो एवं क्रो

1.3.2.3 बाल्यावस्था में मानसिक विकास (Mental Developmental during Childhood) -

बाल्यावस्था में अधिकतर यांत्रिक स्मृति रहती है । साधारण व सरल वाक्यों का प्रयोग होने लगता है । बाद में संयुक्त व जटिल वाक्यों की रचना की क्षमता विकसित होती है । संख्या प्रत्यय विकसित होने लगती है । अवधान या एकाग्रता विस्तार में वृद्धि होती है । रूचिकर बातों में अधिक ध्यान लगता है । चिन्तन सरल व साधारण होता है । ठोस वस्तुओं के बारे में तर्क विकसित होता है । कार्य कारण संबंध की जानकारी होती है । परन्तु बालक तर्कसंगत निर्णय लेने में असमर्थ होता है ।

"मानसिक विकास 15 से 20 वर्ष की आयु में अपने उच्तम सीमा पर पहु च जाता है!'

- वुडवर्थ

1.3.2.4 किशोरावस्था में मानसिक विकास

(Mental Development during Adolescence) -

किशोरावस्था में समृति का बेहतर विकास होता है । कल्पना शक्ति अधिक विकसित होती है । कल्पना की अभिव्यक्ति कविता, कहानी आदि में नजर आती है । अवधान या ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता बढती है । "सफल एकाग्रता" का विकास होता है । रूचियों में विविधता प्रकट होने लगती है । खेल, वार्तालाप, वाचन, चलचित्र आदि का शौक बढने लगता है । बुद्धि का विकास चरम पर होता है । मस्तिक में स्नायुतन्त्र के परिपक्व हो जाने के कारण चिन्तन शक्ति का विकास होता है । व्यक्ति समस्या समाधान का प्रयत्न करने लगता है । तर्क व निर्णय शक्ति का विकास होता है । उचित व अनुचित बातों में अन्तर समझ में आने लगता है । भाषा पर पूर्ण अधिकार हो जाता है । सुन्दर व शुद्ध शब्दों के माध्यम से विचारों की अभिव्यक्ति होने लगती है।

'किशोरों का चिंतन बहु धा शक्तिशाली पक्षपातों व पूर्ण-निर्णयो से प्रभावित रहता है ।

- एलिस को

1.3.2.5 मानसिक विकास को प्रभावित करने वाले तत्व

(Factors Influencing Mental Development)

विभिन्न कारक मानसिक विकास को प्रभावित करते है । कुछ निम्नानुसार हैं:

1. वंशानुक्रम (Heredity) - थार्नडाइक और शिविजंगर ने अपने अधयन द्वारा सिद्ध कर दिया है कि बालक, वंशानुक्रम से कुछ मानसिक गुण और योग्यताएं प्राप्त करता है, जिनमें वातावरण किसी प्रकार का अन्तर नही कर सकता है । गेट्स व अन्य ने लिखा है :- किसी व्यक्ति का उससे अधिक विकास नहीं हो सकता हैं जितना कि उनका वंशानुक्रम संभव बनाता है!'
2. परिवार का वातावरण (Family Environment) - परिवार के वातावरण का बालक के मानसिक विकास से घनिषठ संबंध है । एक अच्छा परिवार जिसमे माता पिता के अच्छे संबंध होते है जिसमें वे अपने बच्चों की रुचियो और अवश्यकताओ को समझते हैं एवं जिसमे आनंद और स्वतन्त्रता का वातावरण होता है। प्रत्येक सदस्य के मानसिक विकास में अत्याधिक योग देता । - कुप्पूस्वामी
3. समाज (Society) -अच्छा व साधन सम्पन्न समाज बालक के मानसिक विकास की गति व सीमा को निर्धारित करता है ।
4. विद्यालय का वातावरण (Environment of the School)- विद्यालय का उचित वातावरण बालक की मानसिक गुणों व शक्तियों का विकास करता है । अरस्तु (Aristotle) के शब्दों में "शिक्षा मनुष्य की शक्ति विशेष रूप से उसकी मानसिक शक्ति का विकास करती है!'
5. परिवार का सामाजिक - आर्थिक स्तर (Social & Economic status of the family) उच्च सामाजिक व आर्थिक स्थिति वाले परिवारों अधिक साधन सम्पन्न होने के कारण उनमें बालक का मानसिक विकास अधिक होता है । स्ट्रांग के अनुसार - "ऊच्च सामाजिक स्थिति वाले परिवार के बच्चे बुद्धि की मौखिक व लिखित परीक्षाओ में स्पष्ट रूप से श्रेस्ठ होते हैं।"
6. शारीरिक स्वास्थ (Physical health) - सबल व स्वस्थ बालक अधिक परिश्रम करके अपने मानसिक विकास की गति व सीमा में वृद्धि कर सकता है । इसी कारण से शारीरिक स्वास्थ्य को प्राचीन काल से बल दिया जाता रहा है । अरस्तु (Aristotle) के शब्दों में "स्वस्थ्य शरीर मे ही स्वस्थ्य मस्तिस्क का वास होता है।"

मानसिक विकास पर स्व-मूल्यांकन प्रशन

(Self-evaluation questions on Mental Development):-

01 शैशवावस्था आत्मगौरव को काल किस प्रकार से है?

02 किशोरों का चिंतन पक्षपाती क्यों होता है?

03 बाल्यावस्था में मानसिक विकास के क्या लक्षण दिखाए देते हैं?

04 प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षकों को बालकों के मानसिक विकास को प्रभावित करने वाले

कारको को समझना क्यों आवश्यक है?

1.3.3 सामाजिक विकास (Social development) -

"सामाजिक अभिवृद्धि और विकास का अर्थ है स्वयं और दूसरों के साथ सहजता के साथ चल सकने की योग्यता में वृद्धि।" - सोरेनसन

"By social development & growth we mean the increasing ability to get along well with oneself and others." - Sorenson

"सहयोग करने वालों में 'हम' की भावना का विकास और उनके साथ काम करने की क्षमता का विकास तथा संकल्प ही सामाजीकरण कहलाता है।" - रॉस

"The development of the feeling of 'We' in the associates and the growth in their capacity to and will to act together is called Socialization."

- Ross

सामाजिक विकास का अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने समूह की मान्यताओं और मानदण्डों के अनुसार तथा सामाजिक सम्भावनाओं के अनुकूल व्यवहार करना सीखता है । इसमें व्यक्ति में समूह के लिये विश्वासपात्रता, प्रतिस्पर्धा, मित्रता, सहयोग, विचारों को सम्मान देने की भावना आदि की योग्यता का विकास होता है ।

"सामाजीकरण की प्रक्रिया दूसरे व्यक्तयों के साथ शिशु के सम्पर्क से प्रारम्भ होती है और आजीवन चलती रहती है" -सारे एवं टेलफोर्ड

"The process of socialization begins with the infant's contact with other people and continues throughout life." -Sawrey and Telford

1.3.3.1 शैशवावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Infancy):-

शैशवावस्था में 3 माह की आयु तक शिशु न तो सामाजिक होता है न ही असामाजिक । 5 माह की आयु तक शिशु में सामाजिक होने के लक्षण दिखाई देने लगते है । वह हंसी व गुस्से में भेद करने लगता है व अपनी ओर ध्यान खींचने के लिये हाथ पैर मारने लगता है । नौ दस माह में वह मौन व भावनात्मक अभिव्यक्ति करने लगता है । थोडा बड़ा होकर वह अपरिचित व्यक्ति को देखकर रोने लगता है । 3 बर्ष की आयु का बालक सामूहिक खेलों में सहयोगात्मक भावना प्रकट करने लगता है । पहले तीन वर्षो में शिशु पूर्णतया आत्मकेन्द्रित व स्वार्थी होता है । उसमें पराशयता की भावना पायी जाती है । 4-5 वर्ष की आयु में विद्यालय में जाने के साथ ही शिशु का सामाजिकरण होने लगता है । उसमें सामूहिक व्यवहार की भावना आने लगती है । उसपर साथियों, अध्यापक, अभिभावकों का प्रभाव पडने लगता है । बालक के कुछ मित्र भी बन जाते हैं। पाँचवे वर्ष तक शिशु के व्यवहार के संबंध में हरलॉक (Hurlock) ने लिखा है : "शिशु दूसरे बच्चों के सामूहिक जीवन से अनुकूलन करना उनसे लेन देन करना और अपने खेल के साथियो को अपनी वस्तुओ में साझीदार बनाना सीख जाता हैं। वह जिस समूह का सदस्य होता है उसके द्वारा स्वीकृत प्रतिमान के अनुसार अपने को बनाने की चेष्टा करता हैं।"

1.3.3.2 बाल्यावस्था में सामाजिक विकास (Social Development during Childhood) -

बाल्यावस्था में बालक अपने समाज के समर्क में आकर कुछ कौशल प्राप्त करने लगता है । उसका सामाजिक क्षेत्र बढने लगता है । 6 से 10 वर्ष की आयु को "टोली की आयु" (Gang Age) भी कहा जाता है । इस आयु में बालक अपने अधिकांश समय अपने मित्रों के साथ टोली में बिताता है । इस समूह का बालक पर अत्याधिक प्रभाव पडता है । हरलॉक (Hurlock) ने लिखा है "टोली बालक में आत्म-नियत्रंण, साहस, न्याय, सहनशीलता, नेता के प्रति भक्ति दूसरें के प्रति सदभावना आदि गुणो का विकास करती है ।" बालक का सामाजिक विकास तीव्रता से होने लगता है । विद्‌यालय का रहन सहन, सहपाठी मित्रों का आचार विचार, तथा भाषा बोली उसे प्रभावित करते हैं । विद्‌यालय परिवार को चाहिये की इस आयु में बालक के साथ उदारतापूर्वक मधुर व्यवहार करे और सामाजिकता की ओर उसे बढने में उसको सहयोग करें । अधिकांश समय घर से बाहर बिताने के बाद भी बालक में अपने माता पिता, अभिभावक, अध्यापक व बड़ो के स्नेह की आकांक्षा रहती है । निम्न व्यवहार मुख्यता से परिलक्षित होते हैं :

1.4 मित्रों का चयन करना : समान आयु के बच्चों से मित्रता में जाति, धर्म, आर्थिक सिथति आदि का प्रभाव रहता है ।

1.5 प्रतिस्पर्धा की भावना : दलीय खेलों (Team games) में व समूह में रहकर निजी उद्देयों की प्राप्ति की होड़ रहती है ।

1.6 सामाजिक शिष्टाचार व सूझ : समाज में रहने के कायदे समझने लगता है । आयु के अनुसार लडकियों में इसका प्रभाव अधिक होता है ।

1.7 सामाजिक अनुमोदन व ग्रहणशीलता : बालक अपने खेल, व्यवहार, भाषा, गान आदि के संबंध में अनुमोदन व प्रशंसा को लालायित रहता है । मित्रों, सहपाठी, साथी समूह से प्रभावित होकर विचारों को अधिकाधिक ग्रहण करने की भावना रहती है परन्तु अपने से बड़ो के प्रति विपरीत ग्रहणशीलता पाई जाती है ।

1.8 लिंग विरोधी विचार : लड़के लड़कियां एक दूसरे के प्रति विरोधी विचार रखने लगते है । लडके अपने को लड़कियो से अधिक कियाशील व दक्ष समझते है व लडकियों को हीन दृष्टि से देखते हैं । 8 से 10 वर्ष की आयु में यह विचार अधिक प्रभावी पाये जाते हैं ।

1.3.3.3 किशोरावस्था में सामाजिक विकास

(Social Development during Adolescence) -

किशोरावस्था में बालक का सामाजिक विकास तेजी से होता है । 18 वर्ष की आयु तक बालक का सामाजिक विकास लगभग परिपक्तता प्राप्त कर लेता है । सामाजिक कियाएं चरम पर होती है । इस अवस्था में अपने परिवार की अपेक्षा मित्रों, साथी समूहो की आदतों, व्यवहारों का प्रभाव अधिक पड़ता है । लिंग विरोधी विचार क्षीण पड़ जाते है । लडके लडकियां आपस में मित्रता करते हैं । समान के साथ साथ विपरित लिंग में मित्र बनाने की इच्छा प्रबल होती है । किशोरियों का शारीरिक विकास किशोरों की अपेक्षा 2 वर्ष पहले होने के कारण वे अपने से बडे लडकों में रहना अधिक पसंद करती है । लडके लडकियां अपने अभिव्यक्तिकरण, रहन सहन, वेश भूषा, चाल ढाल, केश विन्यास और व्यवहार से एक दूसरे को आकर्षित करना चाहते है । इस अवस्था के अंत

तक किशोर अपने समूहो को छोडकर सामाजिक कार्यकमों में भाग लेना प्रारम्भ कर देते है । किशोरों में सामुदायिक भावना सहयोग, परोपकार, सामाजिक सहिष्णुता का विचार बढने लगता है। बालक में सामाजिक परिपक्वता आने लगती है । वह अपने कर्तव्य व उत्तरदायित्व समझने लगता है व समाज के अनुकूल स्थापित कर लेता है । इस अवस्था में बालक को अपने माता पिता अन्य अभिभावक, अध्यापक आदि के मार्गदर्शन की सर्वाधिक आवश्यकता रहती है । शारीरिक, सामाजिक व संवेगात्मक परिवर्तनों को सही दिशा प्रदान करने व उनको समाज के अनूकूल बनाने में इस मार्गदर्शन की बडी महती भूमिका है । क्रो एवं क्रो के अनुसार :-

"जब बालक 13 या 14 वर्ष की आयु में प्रवेश करता है तब उसके प्रति दूसरों के और दूसरों के प्रति उसके दृष्टिकोण न केवल उसके अनुभवो में, वरन उसके सामाजिक संबंधो में भी परिवर्तन करने लगते हैं।"

1.3.3.4 सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले तत्व

(Factors influencing Social Development):-

स्किनर व हैरीमन के शब्दों में “वातावरण और सुगठित सामाजिक साधनो के कुछ ऐसे विशेष कारक है, जिनका बालक के सामाजिक विकास की दशा पर निश्चित और विशिष्ट प्रभाव पड़ता है। निम्न तत्व बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करते हैं

1. वंशानुक्रम : क्रो एवं क्रो के अनुसार "शिशु की पहली मुस्कान या उनका कोई विशिष्ट व्यवहार वंशानुकम से उत्पन्न होने वाला हो सकता है।"
2. शारीरिक व मानसिक विकास : स्वस्थ और अधिक विकसित मस्तिषक वाले बालक का सामाजिक विकास अधिक होता है ।
3. संवेगात्मक विकास : क्रो एवं क्रो के अनुसार "संवेगात्मक और सामाजिक विकास साथ साथ चलते हैं। "प्रेम और विनोद से परिपूर्ण बालक सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है ।“
4. परिवार व पड़ोस : बालक परिवार के सदस्यों के जैसा आचरण और व्यावहार करने का प्रयत्न्न करता है । एलिस के अनुसार ऐसा इसलिये है क्योंकि "बालक का विश्वास होता है की यदि वह बड़े लोगो की भांति व्यवहार नहीं करेगा तो वह किसी-न-किसी प्रकार के उपहास का लक्ष्य बनेगा।"
5. सामाजिक व्यवस्था : बालक के सामाजिक विकास को निश्चित रूप और दिशा प्रदान करती है समाज का कार्य, आदर्श और प्रतिमान बालक के दृष्टिकोणों का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि ग्राम और नगर, जनतंत्र और अधिनायकतंत्र में बालक का सामाजिक विकास विभिन्न प्रकार से होता है ।
6. शिक्षक : यदि शिक्षक शान्त, शिष्ट और सहयोगी है। तो उसके छात्र भी उसी के समान व्यवहार करते हैं । स्ट्रांग ने लिखा है -“वास्तविक सामाजिक ग्रहणशीलता और योग्यता वाले शिक्षको से दैनिक संपर्क, बालक के सामाजिक विकास मे अतिशय योग देता है।"
7. मित्र समूह : समूह या टोली के सदस्य के रूप में बालक इतना व्यवहार-कुशल हो जाता है कि समाज में प्रवेश करने के बाद उसे किसी प्रकार की कोई कठिनाई का अनुभव नही होता है । हरलॉक ने इस संबंध में कहा है कि समूह के प्रभावों के कारण बालक

सामाजिक व्यवहार का ऐसा महत्वपूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त करता है जैसे प्रौढ समाज द्वारा निर्धारित की गए दशाओ में उतनी सफलता से प्राप्त नहीं किया जा सकता है।"

8. विद्यालय का वातावरण : विद्यालय में जनतंत्रीय वातावरण होने पर बालक का सामाजिक विकास अविराम गति से उत्तम रूप ग्रहण करता चला जाता है । दण्ड और दमन पर आधारित वातावरण बालक के सामाजिक विकास को कुण्ठित कर सकता है ।
9. खेल कूद व मनोरंजन के साधन : खेल व मनोरंजन के द्वारा बालक में उन सामाजिक गुणों का विकास होता है जिनकी उसको आजीवन आवश्यकता रहती है । स्किनर और हैरिमन के शब्दों में खेल का मैदान बालक का निर्माण-स्थल है । यहाँ उसे प्रदान किए जाने वाले सामाजिक और यांत्रिक उपकरण उसके सामाजिक विकास को निश्चित करने मे सहायता देते है।"

   "सामाजिक प्राणी के रूप में व्यक्ति के व्यवहार का विकास उसके व्यक्तित्व के विकास के रूप में होता है।" - गेटस व अन्य

   "The development of a person's behavior as a social creature proceeds apace with the development of his individuality."

   - Gates & others

सामाजिक विकास पर स्व-मूल्यांकन प्रशन
Self-evaluation questions on social development:-
1. मानसिक विकास बालक के सामाजिकरण में किस प्रकार से योगदान देता है?
2. बाल्यवास्था में साथी समूह या टोली को बालक के समाजिक विकास में क्या महत्व है?
3. किशोरावस्था में सही सामाजिक विकास हेतु सशक्त मार्गदर्शन आवश्यक है । क्यों?
4. बालक के सामाजिक विकास में विद्यालय का महत्त्वपूर्ण योगदान कैसे है?

1.3.4 संवेगात्मक विकास (Emotional Development) -

कुछ परिभाषाएं (Some Defination) :-

1. संवेग, व्यक्ति की उत्तेजित दशा है। - वुडवर्थ

   "Emotion is a "moved" or 'stirred-up' state of the individual."

   -Woodworth
2. संवेग, गतिशील आंतरिक समायोजन है जो व्यक्ति के संतोष, सुरक्षा ओर कल्याण के लिए कार्य करता है । - क्रो व क्रो

   "An Emotion is a dynamic internal adjustment that operates for the satisfaction, protection and welfare of the individual."

   - Crow and Crow
3. संवेग, प्राणी की जटिल दशा है, जिसमे शारीरिक परिवर्तन, प्रबल भावना के कारण उत्तेजित दशा और एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने की प्रवृति निहित रहती है

   - ड्रेवर

“Emotion is a omplex state of the organism, involving bodily changes, a state of excitement marked by strong feeling and an impulse towards a definite form of behavior.”

-Drever

4. संवेग, प्राणी की उत्तेजित मनोवैज्ञानिक और शारीरिक दशा है जिसमे शारीरिक क्रियाए और शक्तिशाली भावनाए किसी निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए स्पष्ट रूप से बढ़ जाती है। - किम्बल यंग

"Emotion is the aroused psychological and physiological state of the organism, marked by increased bodily activity and strong feelings directed towards some definite object." -

Kimball young

संवेग अर्थात Emotion, भावना या भावो तीव्र या उद्दीप अवस्था को कहते हैं । भय, कोध, ईर्ष्या चिन्ता आदि संवेग का उदाहरण है । संवेग परिस्थितियों की जटिल अवस्था है जो कभी व्यक्ति के कार्य में बाधक होती है तो कभी प्रेरणापद भी होती है । बालक के जीवन में संवेगों को बड़ा महत्व है । संवेग के कारण बालक क्रियाएं करता है और संवेगात्मक क्रियाओं की पुनरावृत्ति धीरे धीरे आदत बन जाती है । संवेग की कुछ विशेषताएं निम्न है :

1. बालको में संवेग थोडी देर के लिये ही होते हैं।
2. बालको में संवेग की उत्पत्ति जल्दी जल्दी होती है ।
3. बालको में तीव्र संवेग घातक नही होते जबकि किशोरावस्था में हानिकारक हो सकते है ।

1.3.4.1 शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास

(Emotional Development during Infancy) :-

शैशवावस्था में बालक के संवेग के संबध में विभिन्न मत हैं । कुछ विद्वान मनोवैज्ञानिक जैसे वाट्सन (Watson) मानते हैं कि जन्म के समय शिशु में भय, क्रोध, और प्रेम जैसे तीव्र संवेग पाये जाते हैं जबकि के. एम. ब्रिजेज (KM Bridges1932) व उसके साथियों के अनुसार जन्म के समय बालक में कोई संवेग नही होता है । बालक मात्र उद्दीप्तावस्था या उत्तेजना का अनुभव करता है । दो वर्ष की आयु तक मुख्य-मुख्य संवेगों का विकास हो जाता है। आयु, अधिगम व अनुभव के आधार पर संवेगों में परिवर्तन व परिपक्वता आती हैं। के एम ब्रिजेज व उसके साथियों के अनुसार शैशवकाल में संवेगों को क्रमिक विकास निम्नानुसार होता है :

आयु	संवेगों का विकास								
जन्म	उत्तेजना (Excitement)								
3 मास	पीडा (Distress)					आनन्द (Delight)			
6 मास	भय (fear)	घृणा (disgust)	क्रोध (anger)		उत्तेजना	आनन्द (Delight)			
12 मास	भय	घृणा	क्रोध		उत्तेजना	उल्लास (elation)	प्रेम बड़ों से (affection)		
18 मास	भय	घृणा	क्रोध	ईर्ष्या (jealousy)	उत्तेजना	उल्लास (elation)	प्रेम बच्चों से	प्रेम बड़ों से	
24 मास	भय	घृणा	क्रोध	ईर्ष्या (jealousy)	उत्तेजना	उल्लास (elation)	प्रेम बच्चों से	प्रेम बड़ों से	हर्ष

1.3.4.2 बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास

(Emotional Development during Childhood) :-

बाल्यावस्था में संवेगों की अभिव्यक्ति दिखाई देती है । बालक अपने मित्रों व साथियों के प्रति प्रेम, घृणा आदि करना सीख जाता है । संवेग स्थाई रूप धारण करने लगते है । बालक भय, कोध जैसे घातक संवेगों पर नियन्त्रण पाने में समर्थ होने लगता है । संवेगों को अपने माता पिता, अध्यापक आदि के समक्ष प्रकट करने में लज्जा व संकोच करने लगता है । बालक के संवेगात्मक विकास में विद्यालय के वातावरण व शिक्षको के व्यवहार का अत्याधिक प्रभाव पडता है । अवांछनीय संवेगों से छुटकारा पाने में अभिभावकों व शिक्षकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षकों का सरल व मश्दु व्यवहार को बालक के संवेगात्मक विकास पर अच्छा प्रभाव पडता है । इस अवस्था में अधिक नियन्त्रण व कठोर अनुशासन बालक के संवेगात्मक विकास में बाधक होते हैं । ऐसी स्थिति में बालक झूठ बोलना चोरी करना आदि सीख जाता है जो संवेगात्मक विकास के लिये अनिष्टकारी सिद्ध होती हैं । अधिक नियन्त्रण व कठोर अनुशसान से संवेगों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति बाधित होती है । इस अवस्था में बालक का संवेगात्मक विकास उपयुक्त व वांछनीय हो, उसके लिये उसके परिवार, विद्यालय एवं साथी समूह का वातावरण स्वस्थय व आदर्शात्मिक होना चाहिये ।

1.3.4.3 किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास

(Emotional Development During Adolescence) :-

किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास की दिशा अनेक तरह से प्रभावित व अन्तरप्रभावित होती है । कोल व ब्रूस के विचार में - “किशोरावस्था के आगमन का मुख्य चिन्ह संवेगात्मक विकास मे तीव्र परिवर्तन है।“ इस पर व इसका बालक के शारीरिक व मानसिक विकास पर बहुत प्रभाव पडता है। इससे बालक के व्यक्तित्व का परिपक्व स्वरूप बनने लगता है जो उसके भविष्य की दिशा निर्धारित करता है । इस अवस्था में बालक की संवेगात्मक अभिव्यक्ति उसके शारीरिक अभिवृद्धि ज्ञान, अनुभव, अधिगम व रूचियों पर आधारित होती हैं । क्रोध नामक संवेग भी बढने लगता है। विषम परिस्थितियों में घबराहट व निराशा भी दिखाई देती है । अन्याय व अपमान के

प्रति सहनशीलता कम होती है । सहयोग व परोपकार की भावना बढी हुई होती है । लड़को की अपेक्षा लड़कियां अधिक दुखी व चिन्तित रहती है । इस अवस्था नें संवेगों की प्रबलता स्थाई भागों के रूप में बदलने लगती है । यौन अंगों का तीव्र विकास होने के कारण प्रेम व स्नेह के संवेग अधिक बढते हैं और विषम लिंग के प्रति आकर्षण के रूप में इसकी अभिव्यक्ति होती है । बी एन झा के अनुसार - "किशोरावस्था मे बालक और बालिका,दोनों में काम-प्रवृति बहुत तीव्र हो जाती है और उनके संवेगात्मक व्यवहार पर असाधारण प्रभाव डालती है।"

1.3.4.4 संवेग को प्रभावित करने वाल तत्व

(Factors influencing Emotional Development) :-

मुख्य रूप से संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने के तत्व निम्न हैं :

1. थकान : "क्रो एवं क्रो का मत है कि "जब बालक थका हुआ होता है तब उसमे क्रोध, चिड़चिड़ापन के समान अवांछनीय संवेगात्मक व्यवहार की प्रवृत्ति होती है ।"

2. शारीरिक स्वस्थ्य : अच्छे स्वास्थ वाले बालकों की अपेक्षा अस्वस्थ बालकों के संवेगात्मक व्यवहार में अस्थिरता होती है ।"

3. मानसिक स्वस्थ्य : अधिक मानसिक योग्यता वाले बालकों का संवेगात्मक क्षेत्र भी अधिक विस्तृत होता है । हरलॉक के अनुसार 'साधारणतया निम्नतर मानसिक स्तरो में बालको में उसी आयु के प्रतिभाशाली बालको की अपेक्षा संवेगात्मक नियन्त्रण कम होता है ।'

4. अभिलाषा : माता पिता की बालक से आशाऐ एवं स्वयं बालक की अपनी अभिलाषा पूर्ण नही होने पर बालक में संवेगात्मक तनाव उत्पन्न हो जाता है । कारमाइकेल का कथन है - "कोई भी बात जो बालक के आत्मविश्वास को कम करती है, या उसके आत्म सम्मान को ठेस पहुचाती है या उसके कार्य मे बाधा उत्पन्न करती है, या उसके द्वारा महत्त्पूर्ण समझे जाने वाले लक्ष्यो की प्राप्ति में अवरोध उत्पन्न करती है, उसकी चिंतित और भयभीत रहने की प्रवृत्ति में वृद्धि कर सकती है।"

5. सामाजिक स्वीकृति : क्रो एवं क्रो का मत है कि "यदि बालक को अपने कार्यो की सामाजिक स्वीकृति नही मिलती है तो उसके संवेगात्मक व्यवहार में उग्रता या शिथिलता जा जाती है।"

6. पारिवारिक वातावरण : पारिवारिक वातावरण के अनुरूप ही बालकों में संवेगात्मक विकास होता है। शान्त, सुरक्षित व आनन्दित वातावरण में बालक के संवेगों में संयम व स्थिरता रहती है। बालक के प्रति माता पिता का व्यवहार भी इसको बहुत प्रभावित करता है ।

7. सामाजिक वातावरण : क्रो एवं क्रो का मत है कि निम्न सामाजिक स्थिति के बालको में उच्च सामाजिक स्थिति के बालको की अपेक्षा अधिक असंतुलन और अधिक संवेगात्मक अस्थिरता रहती है।"

8. विद्यालय का वातावरण : विद्यालय का बालक के संवेगात्मक विकास पर बहुत गंभीर प्रभाव पडता है । यदि विद्यालय के कार्यकम उसके संवेगों के अनुकूल होते हैं तो वह आनन्द का अनुभव करता है । अन्यथा उसमें असफल होने का भय रहता है और उसमें घृणा या क्रोध या चिड़चिड़ापन का निवास हो जाता है ।

जरशील्ड के लिखा है कि -

'परिवार के बाद विद्यालय ही संभवत: वह दूसरा स्थान है, जो व्यक्ति की उन भावनाओ पर आधारभूत प्रभाव डालता है जिनका निर्माण वह अपने और दूसरे के प्रति करता है।'

“Next to family, the school is probably the second place which influences those emotions of an individual which one creates in respect of oneself and others.” Jersild

1.3.4.5 संवेगात्मक विकास में शिक्षा का महत्व

(Importance of Education in emotional Development)

बालक के संवेगात्मक विकास पर कक्षा, विद्यालय व शिक्षकों के व्यवहार का अत्याधिक प्रभाव पडता है क्योंकि बालक अनुकरण से सीखता है । शिक्षक के अच्छे व आदर्श व्यवहार से बालक में स्पर्धा प्रसन्नता, प्रेम, शांति जैसे स्वस्थ संवेगों का विकास होता है । शिक्षक द्वारा उपेक्षा व उपहास करने पर बालक में ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, अनुशासनहीनता जैसे नकारात्मक संवेग उपन्न होते हैं। अत: संवेगो की शिक्षा के क्षेत्र में बहु त उपयोगिता व महत्व है ।

1. झा के अनुसार - "शिक्षक, बालकों के संवेगों को परिष्कृत करके उनको समाज के अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता प्रदान कर सकता है ।
2. शिक्षक, बालकों की मानसिक शक्तियो के मार्ग को प्रशस्त करके, उन्हे अपने अध्ययन में अधिक क्रियाशील बनने की प्रेरणा प्रदान कर सकता है ।
3. शिक्षक, बालकों में उचित संवेगों का विकास करके उनमें उत्तम विचारों, आदर्शो, गुणों व रूचियों को निर्माण कर सकता हैं ।
4. शिक्षक, बालकों को अपने संवेगों पर नियन्त्रण करने की विधियां बताकर, उनको शिष्ट और सभ्य बना सकता है ।

"जो व्यस्क स्वयं कुछ सीमा तक विवेकपूर्ण रह सकते है, उन्हे बालको और बालिकाओ के व्यवहार के प्रतिमानों और मनोवैज्ञानिक विकास को प्रभावित करने के लिए अधिक उत्तम अवसर सुलभ रहते है।"

- थॉमप्सन

"Adults who can remain more or less rational themselves have a much better chance of influencing the behavior patterns and psychological development of boys and girls.” - Thompson

संवेगात्मक विकास पर स्व-मूल्यांकन प्रशन

(Self Evaluation questions on Emotional Development):-

1. शिशु की संवेगात्मक अभिव्यक्ति का पता कैसे चलता है?
2. बाल्यावस्था में संवेगों की तीव्रता में कमी क्यों होती है?
3. किशोरावस्था में संवेगात्मक परिवर्तन तीव्र क्यों होते हैं?
4. संवेगो की समग्र व्यक्तितत्व विकास में क्या भूमिका है?

1.3.5 चारित्रिक विकास (Development of Character) :-

कुछ परिभाषाएं (Some Definations)

1. स्थायीभाव मानसिक ढांचे में अर्जित प्रवृतियों का संगठन हैं। - रॉस
"A sentiment is an acquired organization of dispositions in the mental structure.” - Ross
2. स्थायीभाव किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति संवेगात्मक प्रवृतियों और भावनाओ को बहुत कुछ स्थायी और संगठित स्वरूप है। - वेलेनटाइन
"A sentiment is more or less permanent and organized system of emotional tendencies and impulses centered about some object or person.” - Valentine
3. स्थायीभाव, भावना की एकाकी दशा नहीं है वरन भावनाओ का संगठन है, जो वस्तु-विशेष के संबंध मे संगठित होती है और जिसमे स्थायीतत्व की पर्याप्त मात्रा होती है। - नन
“A sentiment is not a single state of feeling but a system of feelings organized with reference to a particular object or person.” - Nunn

1.3.5.1 संवेग, स्थायीभाव और चरित्र (Emotions, Sentiments, and Character) :-

सेम्युल स्माईल्स (Samuel Smiles) के अनुसार चरित्र आदतों का पुन्ज है । बोनहेम (Bonheim) कहते है कि 'सशक्त चरित्र का तात्पर्य इच्छाशक्ति की सशक्तता हैं। मेक्डुगल (McDougall) के अनुसार स्थायीभाव (Sentiments) चरित्र की ईकाईया है और चरित्र इन स्थायीभावो की एक व्यवस्था या संगठन है । डमीविल (Dumville) के अनुसार “चरित्र व्यक्ति की सभी प्रवृतियों का योग है”। वालेंटाइन (Valentine) के अनुसार स्थायीभाव (Emotions) किसी व्यक्ति वस्तु या विषयवस्तु के प्रति संवेगात्मक प्रवर्तियाँ या भावनाओ की बहुत कुछ स्थायी और संगठित व्यवस्था को कहते है। “स्थायीभाव एक अर्जित प्रवृति है”। यह व्यक्ति के पर्यावरण एवं विकास प्रक्रिया की देन है । स्थायीभाव स्थाई होते हैं तथा असाधारण घटना होने पर ही इनमें कोई पीरवर्तन आता है, जबकि संवेग पूर्णतया अस्थाई होते है तथा इनमें बदलती स्थिति में परिवर्तन होता रहता है। संवेगों में जहां निर्णय क्षमता कार्य नहीं करती है, बुद्धि की भूमिका नगण्य होती है वहीं स्थायीभाव के सृजन में विवेक व बुद्धि की पूरी पूरी भूमिका रहती है। देशभक्ति, नैतिक मूल्य, धार्मिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, आत्मसम्मान आदि कुछ प्रमुख स्थायीभाव है । आत्मसम्मान का स्थायीभाव सभी स्थायीभावों में सर्वोच्च स्थान रखता है और इसे स्वामी स्थायीभाव (Master Sentiments) भी कहते हैं । सामाजिक व नैतिक मूल्य के प्रति हमारी प्रतिक्रियाएँ व दृष्टिकोण इसी स्थायीभाव द्वारा स्वीकृत होकर संचालित होती है। इससे ही हमारे चरित्र संबंधी गुणों को दिशा मिलती है।

व्यक्ति के चरित्र निर्माण के कार्य का मूल आधार जन्म से ही प्राप्त मूल प्रवृत्तिया हैं। आयु, अनुभव व अधिगम के बढने के साथ ही इन मूल प्रवृत्तियो में बदलाव आते हैं और व्यक्तियों में आदतों का प्रादुर्भाव होता है । इससे व्यक्ति का व्यवहार नियंत्रित होता है । इसी प्रक्रिया में संवेगों का निर्माण होता है और ये संवेग व्यक्ति के व्यक्तित्व एवं चरित्र निमार्ण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । किसी व्यक्ति, वस्तु, या विषयवस्तु के प्रति केन्द्रित अनेक

संवेग जब मस्तिष्क में स्थायी स्थान बना लेते हैं तो व्यक्ति में उस व्यक्ति, वस्तु, या विषयवस्तु के प्रति एक स्थाईभाव का निर्माण हो जाता है। इस प्रकार निर्मित स्थायीभावों को संभालने का उत्तरदायित्व बुद्धि एवं आत्मसम्मान के स्थायीभाव का है । किसी भी व्यक्ति में उचित रूप से सगंठित इन अनेक स्थाईभावो की सरंचना को हम उस व्यक्ति का चरित्र कह सकते है जो की पूर्णतया अर्जित प्रवृति ही है। रॉस (Ross) के शब्दो मे "संगठित आत्म ही वास्तव में चरित्र हैं"।(Character is nothing but an organized self)किसी के भी चरित्र का अध्ययन करते समय उसकी आदतो, अभिप्रेरणाओं, संकल्पों, स्थायीभावों, बुद्धि, आत्मसम्मान. आत्मबोध. और व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों को समझना आवश्यक है । चरित्र से व्यक्ति का सामाजिक व्यवहार संचालित होता है। हम यह कह सकते हैं कि

"चरित्र वह व्यक्तिक संगठन या स्थिर मानसिक सरंचना हैं जो व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार को निर्धारित करता है" ।

"चरित्र उन सब प्रवृत्तियों का योग है जो एक व्यक्ति में होती हैं" । - डमविल

"Character is the sum of all tendencies which an individual possesses."

- Dumville

"चरित्र एक गतिशील धारणा है। यह व्यक्ति के दृष्टिकोणो और व्यवहार की विधियों का पूर्ण योग है" । - कारमाइकेल

"Character is a dynamic process.It is the sum total of the attitudes and overt ways of behaving of the individual". - Carmichael

"चरित्र दृष्टिकोणो और धारणाओ का स्थायी प्रतिमान है जो नैतिक व्यवहार के प्रकार और प्रकृति की बहुत कुछ भविष्यवाणी करता है"। - पेक व अन्य

"Character is persisting pattern of attitudes and motives ehich produces a rather predictable kind and quality of moral behavior".

- Peck & Others

1.3.5.2 शैशवावस्था में चारित्रिक विकास

(Development of Character during Infancy) :-

शैशवावस्था में शिशु में मात्र अस्थाई संवेग पाये जाते है जो किसी प्रकार की प्रवृति या आदत का निर्माण नही करते हैं । ये संवेग अधिकांशत: पीडा, उत्तेजना अथवा आनन्द की अनुभूति का परिलक्षण मात्र होते हैं जिससे किसी व्यक्ति, वस्तु या विषयवस्तु के प्रति कोई स्थायीभाव का निर्माण नहीं होता है । अत: यह कहा जा सकता है कि शिशु में चरित्र का निर्माण नहीं होता है । आयु के बढने के साथ बढ़ते अनुभव व वातावरण के प्रभाव में बालक द्वारा कुछ प्रवर्तियाँ अर्जित की जाती हैं जिससे उसमें स्थायीभाव निर्मित होने का अहसास होता है । परन्तु निरन्तर परिवर्तनशील होने के कारण इनमें स्थिरता बहुत कम होती है । बुद्धि और आत्मसम्मान की भूमिका भी नगण्य ही होती हैं । ऐसे में यह कहा जा सकता है कि इस अवस्था में हालाकि सही मायने में चरित्र का विकास नही होता है परन्तु व्यक्ति के चरित्र निर्माण में इस ज्ञान व अनुभव के अर्जन की बडी महत्त्वपूर्ण भूमिका है ।

1.3.5.3 बाल्यावस्था में चारित्रिक विकास

(Development of Character during Childhood)

बाल्यावस्था में संवेगों की अभिव्यक्ति होने लगती है । अनेक संवेग उत्पन्न होते हैं। शारीरिक. मानसिक व सामाजिक विकास के कारण संवेगों में कुछ हद तक स्थिरता आने लगती है।विद्यालय, परिवार, साथीसमूह एवं अन्य के साथ परस्पर व्यवहार के कारण अर्जित प्रवृत्तियां आदत का रूप लेने लगती है । कुछ विषयों में स्थायीभाव बनने लगते हैं। इन स्थायीभावों के निर्माण में बुद्धि व विवेक की सीमित भूमिका रहती है । परन्तु यह प्रवृत्तियां अर्जित करने की प्रारम्भिक अवस्था होती है जहां स्वयं बुद्धि और विवेक पूर्णतया विकसित व परिपक्व नहीं होते हैं। अधिकांश स्थायीभाव प्रतिक्रियात्मक होते हैं । इनमें परिवर्तन की अभी संभावना बनी रहती है । अनेक स्थायीभावों के होने के बावजूद इनमें संगठन व संरचना की कमी रहती है । हम यह कह सकते हैं कि इस अवस्था में चरित्र निर्माण की सामग्री एकत्रित होने लगती है । बालक का चारित्रिक विकास प्रारम्भ होने लगता है ।

1.3.5.4 किशोरावस्था में चारित्रिक विकास

(Development of Character during Adolescence) -

किशोरावस्था में बुद्धि और विवेक में परिपक्वता आती है । आत्मसम्मान का स्थायीभाव स्थापित हो जाता है । निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो जाता है । किसी व्यक्ति, वस्तु या विषयवस्तु के प्रति संवेग तार्किक होने लगते हैं । विद्यालय, परिवार, साथीसमूह एवं अन्य के साथ परस्पर व्यवहार के कारण अर्जित प्रवृत्तियां के साथ मिलकर मूल प्रवृत्तियां महत्त्वपूर्ण स्थायीभावों का निर्माण करती हैं । इन स्थायीभावों को संगठित करने में बुद्धि व आत्मसम्मान की भूमिका रहती है । और हम कह सकते हैं कि इस अवस्था के अंत तक व्यक्ति के चरित्र का प्रारमिक निर्माण हो जाता है जिसके आधार पर उसका सामाजिक व्यवहार संचालित होने लगता है । इस चरित्र में परिवर्तन की संभावना बहुत कम रहती है।

1.3.5.5 अच्छे चरित्र के लक्षण (Features of a good Character) -

बाउले व अन्य के अनुसार अच्छे चरित्र में निम्नांकित लक्षण पाये जाते है :

1. आत्म नियंत्रण (Self Control)
2. विश्वसनीयता (Reliability)
3. कार्य मे दृढता (Persistence in action)
4. कर्मनिष्ठा (Industry)
5. अंतर करने मे शुद्धता (Conscientiousness)
6. उत्तरदायित्य की भावना (Feeling of Responsiblity)

बाउले व अन्य के शब्दो में : चरित्र के ये गुण और लक्षण , विद्यालय -कार्य और सामाजिक जीवन दोनों मे प्रत्यक्ष रूप से बहुत महत्पूर्ण है। जिन छात्रो में ये गुण होते है, वे अपनी मानसिक शक्तियों का,जो भी उनमे से होती है,अधिकतम उपयोग करते है" ।

1.3.5.8 चारित्रिक विकास में शिक्षा की भूमिका

(Role of education in Development of Character)

इस बात का कोई महत्व नहीं है की शिक्षा कहा ओर किस प्रकार दी जाती है, बालक को दी जाने वाली शिक्षा को उसके चरित्र-निर्माण में अनिवार्य रूप से योगदान देना चाहिए"।

- स्किनर हैरीसन

“No Matter where it is found or how it takes place,all education must be made to contribute to the building of character.

-Skinner & Hariman

शिक्षा की सार्थकता सुयोग्य व उत्तरदायी समाज के निर्माण से ही सिद्ध होती है । और यह कार्य चरित्र निर्माण के बिना संभव नही है । विद्यालय, शिक्षक और शिक्षा बालकों के चारित्रिक विकास में निम्न प्रकार से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है :

1. मूल प्रवृतियो व संवेगो का उचित प्रशिक्षण: मूल प्रवृत्तियां चरित्र निर्माण की आधारशिला हैं । इनके उचित शोधन, प्रशिक्षण व उन्नयन से इनको उचित दिशा व दशा प्रदान की जा सकती हे जिससे संवेगों की उर्जा का उपयोग सकारात्मक चरित्र निर्माण में हो सके ।

2. इच्छा या संकल्प शक्ति का प्रशिक्षण : उचित निर्णय लेने की क्षमता व दक्षता सशक्त चरित्र निर्माण का बहुमूल्य तत्व है । और इच्छा व संकल्प शक्ति से ही इस क्षमता का विकास होता है । इच्छा व संकल्प शक्ति की दृढता बालक को चारित्रिक कमजोरियों को परास्त कर अच्छाईयां ग्रहण करने में सहायता करती है ।

3. अच्छी आदतों का विकास: विद्यालय के वातावरण शिक्षक और शिक्षा के स्तर से बालक में अच्छी आदतों को समावेश किया जा सकता है । बालक को अच्छे व बुरे में अन्तर की समझ. उसके चारित्रिक विकास के लिये अतिमहत्वपूर्ण होती है ।

4. उचित आदर्शों का विकास: अच्छे व ऊचे आदर्श व्यक्ति के मूल्य, बालक की मान्यता व आदतों को प्रभावित करते हैं । इसका सीधा प्रभाव उसके चरित्र निर्माण में पडता है। आदर्श व्यक्ति को दिशा प्रदान करते हैं । जितने अच्छे व ऊंचे जीवन मूल्य और आदर्श होगें उतना ही सशक्त और उत्तम उसका चरित्र होगा।

5. उचित स्थायीभावो का विकास व संगठन: चरित्र स्थायीभावों की व्यस्व्था एंव संगठन है। सकारात्मक व अनुकूल स्थायीभाव को अच्छी तरह से संगठित किया जाना चाहिये । विशेषकर आत्मसम्मान और आत्मगौरव के स्थायीभाव को बालक में ठीक प्रकार से विकसित किया जाने का प्रयत्न करना चाहिये । इसके लिये बालक की वयैक्तिकता, स्वतंत्रता, आत्मविश्वास को पूर्ण सम्मान दिया जाना चाहिये । उसे उचित प्यार व स्नेह का लाभ दिया जाना चाहिये । उत्तरदायित्व की समझ का विकास करने का प्रयत्न करना चाहिये।

6. सुझाव व चरित्र निर्माण: बालको पर सुझावों का गहरा प्रभाव पडता है । कहानियां संस्मरण, महान व्यक्तित्वों के जीवन वशतान्तों के माध्यम से चरित्र निर्माण का स्तर बढाया जा सकता है । स्वयं अध्यापक एक अच्छा उदाहरण बन सकते हैं ।

7. अनुकरण व चारित्रिक विकास: बालक अधिकांशत: अनुकरण से सीखते हैं । माता पिता, बडे लोग, सहपाठी, अध्यापक आदि का अनुकरण करना उन्हे भाता है । इसे हेतु घर व विद्यालय में स्वस्थ. सकारात्मक व प्रेरक वातावरण मिलना चाहिये जिसके अनुकरण से बालक का चारित्रिक विकास प्रबल हो सके ।

8. पुरस्कार व दण्ड को समुचित प्रयोग: जहां पुरस्कार एक सकारात्मक प्रेरणा का कार्य करता है वहीं दण्ड नकारात्मक व्यवहार है । अधिक दण्डात्मक व्यवहार बालक के मानसिक विकास एवं चारित्रिक विकास को प्रतिकूल प्रभावित कर सकता है परंतु दण्ड को सीमित व विवेकपूर्ण उपयोग कर चारित्रिक बुराईयों को बालक से दूर रखने का प्रयास अवांछित नही कहा जा सकता है । फिर भी दण्ड का उपयोग उसी अवस्था में किया जाना चाहिये जब पुरस्कार, प्रशंसा. समझाने बुझाने जैसे सकारात्मक उपाय प्रभावित नही कर पा रहे हों ।

9. नैतिक व मानवीय मूल्य की शिक्षा प्रदान करना: रोचक कहानियाँ, नैतिक संदेशयुक्त किस्से, महान व्यक्तियों के जीवन चरित्र के वृतान्त आदि के माध्यम से बालको में नैतिक व मानवीय मूल प्रतिपादित किये जा सकते हैं ।

10. सामाजिक विकास: समाज के आदर्श व मूल्यों को सीखकर बालक अपने सामाजिक कर्तव्य व उत्तरदायित्व का बोध करता है । अपने सामाजिक व्यवहार से उसमें परिवर्तन आते हैं जिससे उसका चरित्र प्रभावित होता है । सामाजिकता का विकास उसके रचनात्मक चरित्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण होता है । परिवार, विद्यालय व साथी समूह को इसमें पूरा पूरा सहयोग मिलना चाहिये ।

11. उचित मानसिक विकास: चारित्रिक विकास में बुद्धि एक महत्वपूर्ण संघटक है । संवेगों व स्थायीभावों को निर्माण व्यक्ति की मानसिक योग्यताओं व क्षमताओं पर निर्भर करता है। अत: बालक के सोचने विचारने की शक्ति, कल्पना शक्ति, स्मरण शक्ति, एकाग्रता आदि विभिन्न मानसिक शक्तियों के विकास के लिये समूचित व्यवस्था की जानी चाहिये ।

वस्तुत: चारित्रिक विकास एक सर्वागीण विकास होने के कारण बहुमुखी प्रयास मांगता है । चरित्र के विकास को प्रभावित करने वाले सभी तत्वों को पूरा पूरा ध्यान रखते हुए सुगठित और संतुलित योजना तैयार की जानी चाहिये तथा उसे पूर्ण गंभीरता, ईमानदारी और तत्परता के साथ क्रियान्वित किया जाना चाहिये ।

स्कीनर और हरीमन (Skinner & Hariman) ने इन्ही विचारों को अनुमोदित करते हुए कहा है

"ऐसा कोई पाठ्यक्रम या विधि नहीं है जोकि जादू के ज़ोर से चरित्र का निर्माण कर सके। इसके विपरीत घर, चर्च, खेलने के मैदान अथवा विद्यालय में होने वाले प्रत्येक अनुभव चारित्रिक विकास के लिए अवसर प्रदान करता है"

चारित्रिक विकास पर स्व-मूल्यांकन प्रशन

(Self-Evaluation questions on Character Development)

1. स्वामी स्थायीभाव क्या है ?
2. शैशवावस्था मे स्थायीभावो मे नगण्य का क्या कारण है ?
3. आत्मसम्मान का स्थायीभावो किस अधिक प्रभावित करता हैं ?
4. अच्छे चरित्र के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण कैसा होना चाहिए ?

1.4 सारांश (Summary)

मनुष्य एक ऐसा शरीरधारी प्राणी है जिसमें निरन्तर विकास होता रहता है । मनुष्य में निरन्तर आंतरिक व बाहरी परिवर्तन होते रहते हैं । जहां बाहरी परिवर्तन मुख्यत: उसके शारीरिक विकास से सबंधित होते हैं वहीं आंतरिक परिवर्तन का संबंध व्यक्ति के मानसिक, सवेंगात्मक एवं चारित्रिक विकास के रूप में होता है । विभिन्न आयामों में इन परिवर्तनों के आधार पर इनमें आपस में दूरगामी परिवर्तन भी होते हैं जोकि परिवर्तन की गति व दिशा निर्धारित करते हैं । जीवन की विभिन्न आवस्थाओं में ये परिर्वतन विशेष प्रकशति लिये हुए होते है जिनका सूक्ष्मता से ज्ञान होना, इन परिवर्तनों को नियंत्रित करने के लिये आवश्यक है । शैशवावस्था विकास की विभिन्न अवस्थाओं की आधारशिला होती है । इस अवस्था में तीव्र शारीरिक व मानसिक विकास होता है। सामाजिक, संवेगालक विकास की प्रक्रिया प्रारंभ होने लगती है । प्रमुखतया इस अवस्था में बालक के घर परिवार एवं आस पास का वातावरण का प्रभाव अधिक पडता है । परन्तु बाल्यावस्था में बालक अपने साथी समूह, विद्यालय से अधिक प्रभावित होते हैं । सामजिक मानसिक व शरीरिक के साथ ही उनके संवेगात्मक व चारित्रिक विकास में भी तीव्रता आती है । स्थायीभाव का निर्माण प्रारंभ होने लगता है । बाले में परस्पर विरोधी विचार प्रबल होते हैं । स्वभाव में उग्रता व उत्तेजना ज्यादा होती है । किशेरावस्था में कदम रखने के साथ ही जहां शारीरिक विसा अपने चरम पर पहु च जाता है वहीं मानसिक विकास भी अपनी उच्चतर सीमा पर होता है । सामाजिक सम्पर्क का दायरा व दृष्टिकोण व्यापक हो जाते हैं । बालक में आत्मनिर्णय व तर्क की प्रबलता होती है । साथ ही उत्तरदायितव का बोध तथा सामाजिक समरसता सहयोग आदि भावनाओं का भी विकास हो जाता है । विशेष तौर पर आत्मसम्मान जैसे स्वामी स्थायीभाव का स्थापित होना इस अवस्था का एक अत्यंत महत्तपूर्ण पक्ष है । इस अवस्था में तनाव. प्रतिस्पर्धा, स्वयं को समाज में सफल जताने की इच्छा विचित्र संवेग उत्त्पन्न करती है जिस हेतु अच्छे पथप्रदर्शक व मार्गदर्शकों का होना नितान्त आवश्यक हो जाता है । और इस सम्पूर्ण विकासात्मक प्रक्रिया में विद्यालय व शिक्षक की भूमिका सबसे ज्यादा अहम होती है । शिक्षा प्रक्रिया का लक्ष्य भी बालक में शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, संवेगात्मक व चारित्रिक उन्नति करके उसके समूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना है । अत: विद्यालय में अध्यापक को वे सब दशाएं उत्पन्न करनी चाहिये जोकि छात्रों के नैसर्गिक विकास और अभिवृद्धि को उत्तेजित करें । उसका स्वास्थ्य सुन्दर रहे उसके ज्ञान और विचारों में निरन्तर वृद्धि होती रहे, उसे संवेगात्मक स्थिरता प्राप्त हो और उसमें सामाजिक कुशलताओं की वृद्धि होती रहे । इन सब पहलुओं की देख-रेख करने का उत्तरदायित्व अध्यापक का ही है । अत: अध्यापक को बालक के स्वभावगत

परिवर्तनों से भली भाँति परिचित होना चाहिये। इनको समझे बिना वह बालक में शैक्षिक विकास लाने में सफल नही हो सकता है ।

1.4 शब्दावली (Glossary)

अधिगमयक	-	सीखने वाला
परिमाणात्मक	-	परिवर्तनों को व्यक्त करने वाला
परिपक्वता	-	वह अवस्था जहां -अभिवृद्धि रूक जाती है
आत्मगौरव	-	अपने को दिखलाने की प्रवृति
टोली आयु	-	हमउम्र के साथी
अधिनायकतंत्र	-	एकाधिपत्य शासन
उद्दीप्तावस्था	-	उत्तेजना का अनुभव
परिष्कृत	-	शुद्ध , साफ
स्वामी स्थायीभाव	-	सर्वोच्च स्थान वाला स्थायीभाव
स्थिरता	-	स्थायित्व
आत्मनियंत्रण	-	स्वंय पर काबू रखना
विश्वसनीयता	-	भरोसे के काबिल
कार्य दश्ढता	-	कार्य के प्रति लगन
मूल प्रवृति	-	व्यवहार को संचालित करने वाली जन्मजात प्रवृति
समलैंगिक	-	स्वयं के लिंग से संबंधित
विषमलैंगिक	-	स्वयं के लिंग से विरोधी लिंग से संबंधित
आत्मप्रेम	-	स्वयं के अंगों को देखकर व स्पर्श कर आनन्दित होना

1 .6 संदर्भ ग्रथ (References) :

1. Bigge and Hunt : Psychological Foundations of Education
2. Blair,Johns & Simpsons : Educational Psychology
3. Bowley & Others: Psychology
4. Carmichael,Leonard : Manual of Child Psychology
5. Cole,Luella : Psychology of Adolescence
6. Cole & Bruce : Educational Psychology
7. Crow & Alice : Educational Psychology
8. Crow & Crow : Educational Psychology
9. Drever,James : An Introduction of Psychology of Education
10. Dumville,Benjamine : The fundamentals of Psychology
11. Gates,Jersild & Others : Educational Psychology

12. Goodenough : Manual of Child
13. Hurlock, ElizabethB : Child Development
14. Jha, BN : Modern Educational Psychology
15. Kolesnik, Walter B: Child Development
16. Kuppuswamy,B:Advanced Educational Psychology
17. Mcdougall,William : An Introduction of social Psychology
18. Nunn,Sir Percy : Education : Its data & first Principle
19. Peck & Others : The Psychology of Character Development
20. Ross, James S : Groundwork of Educational Psychology
21. Ruth, Strang : Guided Study and Home work
22. Sawrey & Telford : Child Educational Psychology
23. Simpson, Robert G : Fundamentals of Education Psychology
24. Skinner & Hariman : Child Psychology
25. Sorenson, Herbert : Psychology in Education
26. Strang, Ruth : An Introduction to Child Study
27. Thompson, George G : Child Psychology
28. Thorndike and Hageb : Measurment & Evaluation in Psychology & Education
29. Valentine, CW : Psychology & Its bearing on Education

1.7 स्वपरख प्रशनों के उत्तर (Answers to Self-Evaluation Questions)

विकास की विमिन्न अवस्थाएँ (Different Stages of Development) -

1. प्रारंभिक प्राप्तियों तथा प्रतिमान सदैव बने रहते है ।

सम्पूर्ण मानसिक विकास का आधार तय हो जाता है ।

इस अवस्था को विकास अन्य अवस्थाओं से अधिक तीव्र होता है ।

2. यह वह अवस्था है जब आलक के व्यक्तित्व की नींव पडती है । बालक के दृष्टिकोण व आदर्श मूर्त होने लगते हैं ।

3. यह अवस्था जीवन को संकमण काल कहलाती है । इस अवस्था में सभी प्रकार के परिवर्तन यथा शरीरिक, मानसिक, सामाजिक व चारित्रिक परिवर्तन एक साथ होने लगते हैं जिसके कारण नवीन वातावरण में पुन: समायोजन स्थापित करना होता है ।

शारीरिक विकास (Physical Development) : -

1. शैशवकाल में हु आ शारीरिक विकास बालक के बाल्यावस्था व किशोरावस्था के समग्र विकास को अत्याधिक प्रभावित करता है । अत: इस अवस्था में शरीर के सही विकास पर पूर्णध्यान दिया जाना नितान्त आवश्यक है ।

2. इस अवस्था में बालक काफी हद तक समस्त कार्यो में आत्मनिर्भर हो जाता है । साथी समूह बन जाते हैं तथा किसी विशेष जिम्मेदारी के बोझ से रहित बालक स्वतंत्रता व स्वच्छन्दता के वातावरण में स्वयं अपनी जगह बनाने का प्रयास करता है ।

3. किशोरावस्था में शारीरिक विकास लगभग परिपक्व हो जाता है जिसमें आगे परिवर्तन की संभावना न्यून होती है । इसलिये इसे काष्ठावस्था भी कहते हैं ।

मानसिक विकास (Mental Development) : -

1 शिशु में स्वयं द्वारा सीखें गये कौशल को दिखाने व प्रशंसा प्राप्त करने की प्रवृति प्रबल होती है। वह हर छोटी से छोटी नवीन क्रिया को दिखाकर ध्यान आकश्ष्ट करना चाहता है ।

2 किशोरों में मानसिक विकास पूर्ण होने के कारण चिन्तन व तर्क प्रबल होता है परन्तु अनुभव की कमी तथा अतिउत्साह के कारण बहुधा पक्षपाती होता है ।

3 इस अवस्था में विशेषकर सरल साधारण चिन्तन, संयुक्त व जटिल वाक्यों को प्रयोग, एकाग्रता व रूचियों में वृद्धि दिखाई देने लगती है ।

4. शिक्षक समस्त कारकों को सही ढंग से समझकर ही बालक के समग्र विकास में एक सलाहकार व पथप्रदर्शक की भूमिका को अर्थपूर्ण निर्वहन कर सकता है ।

सामाजिक विकास (Social Development) : -

1 अपने आस पास के वातावरण व मित्र समूह के साथ अनुकूलन करने में बालक के मानसिक स्तर बहुत प्रभावित करता है । सही मानसिक स्थिति में अनुकूलन तीव्र, व्यापक व गहन होता है

2. इस अवस्था में ही सर्वप्रथम बालक अपने स्वयं से अलग अन्य के साथ सामंजस्य स्थापित करने लगता है । सही व उच्च सामाजिकरण की दिशा में यह पहला कदम होता है । इसी समूह से ही बालक सर्वप्रथम शिष्टाचार, अनुशासन, प्रतिस्पर्धा, सहनशीलता, आपसी सहयोग जैसे जीवन मूल्यों को प्रारभिक पाठ लेता है ।

3. इसी अवस्था में बालक अपने निकट समूह के अतिरिक्त आम समाज से व्यवहार स्थापित कर स्वयं के जीवन की राह खोजने लगता है । इस अवस्था में उसमें कर्तव्य, उत्तरदायितव का दबाव रहता है जिसे पूर्ण रकने में शिक्षक, माता पिता, अभिभावक व मित्र समूह को सही सशक्त मार्गदर्शन आवश्यक है ।

4. बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में में बालक अपने घर से भी ज्यादा समय अपने विद्यालय में शिक्षकों व साथी समूह के मध्य बिताता है जहां के वातावरण का प्रभाव स्थायी रूप से बालक पर पडता है । इस कारण से संभवतया विद्यालय ही बालक के जीवन को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला स्थान है ।

संवेगात्मक विकास (Emotional Development) :-

1 रोना, चिल्लाना, हाथ पैर फेंकना आदि शिशु में संवेगात्मक क्रिया को दर्शाते हैं ।

2 बाल्यावस्था में मानसिक विकास के कारण स्थिति की समझ बढती है जिसके कारण उत्तेजना में कमी आती है । साथ ही भाषा विकास के कारण भावनाओं की अभिव्यक्ति बोलकर हो जाती है इससें भी संवेगों की तीव्रता में कमी आती है ।

3 इस अवस्था में नवीन आदतें विकसित होती हैं तथा शारीरिक अभिवशिद्ध, ज्ञान, अधिगम, रूचियों में विकास के कारण संवेगों में तीव्रता आती है ।

4 संवगों की जटिल स्थायी व्यवस्था व्यक्ति में किसी विषय या वस्तु के प्रति स्थायीभाव का निर्माण करती है जो समय के साथ व्यक्ति के मानसिक व चारित्रिक विकास की दिशा तय करती है।

चारित्रिक विकास (Character Development) -

1. आत्मसमममान का स्थायीभाव समस्त स्थायीभावों में सर्वोच्च स्थान रखता है । सामाजिक व नैतिक मूल्यों के प्रति हमारी प्रतिक्रियायें व दृष्टिकोण इसी स्थायीभाव द्वारा स्वीक्रत हो संचालित होता हैं । यही स्वामी स्थायीभाव है ।

2. इस अवस्था में संवेगों की अनुभूति का परिलक्षण मात्र होता है । स्थायी भाव का निर्माण नहीं होता है ।

3 किशोरावस्था में मानसिक, शारीरिक व सामाजिक विकास में परिपक्वता आने के कारण तथा स्वयं आत्मनिर्भर हो निर्णय लेने की शक्ति को विकास होने के कारण इसी अवस्था में आत्मसम्मान का स्थायीभाव स्थापित होने लगता है ।

2 सौहार्दपूर्ण, सम्मानजनक, गुणवत्तापूर्ण स्वतंत्रता व आत्मविश्वास से परिपूर्ण वातावरण में अच्छा चारित्रिक विकास संभव है ।

1 .8 परीक्षा योग्य प्रशन (Unit End Questions)

1. विकास और अभिवृद्धि से क्या अभिप्राय है? विकास और अभिवृद्धि में अन्तर बताईये?

What is meant by Growth and Development? Differentiate between Growth and Development?

2. शैशवावस्था से किशोरावस्था तक बालक के शारीरिक विकास का वर्णन कीजिये और उसको प्रभावित करने वाले तत्वों का उल्लेख कीजिये ।

Describe the child's physical development from Infancy to adolescence, and mention the factors, which influence it?

3. बालकों के शारीरिक विकास में विद्यालयों के महत्त्व व भूमिका पर प्रकाश डालते हुए उचित शारीरिक विकास हेतु विद्यालय में आदर्श वातारण का वर्णन किजिये ।

Describe an ideal environment in schools for proper physical development of a child while throwing light on the importance and role of schools in the physical development of a child?

4. बालक के मानसिक विकास से आप क्या समझते है? बताईये ।

What do you understand by mental development of a child ? Explain

5. शैशवावस्था से किशोरावस्था तक बालक के मानसिक विकास का क्रमवार वर्णन कीजिये ।

Describe the process of child's mental development from infancyto adolescence.

6. उदाहरण के साथ समझाईये किं बालक के मानसिक विकास के क्रम का ज्ञान शिक्षक एवं विद्यालय के लिये किस प्रकार उपयोगी हो सकता है ।

Explain by example as to how the knowledgeof the process of child's mental development can be useful for the Teacher and the School.

7. वंशानुक्रम और वातावरण में से कौन सा कारक बालक के मानसिक विकास के लिये अधिक महत्वपूर्ण है? अलोचात्मक परिक्षण करते हुए बालक के मानसिक विकास को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों का भी वर्णन कीजिये।

Of the two factors, Heredity and Environment, Which is more important for the mental developmental of a child? Critically analyse the influence of the two and describe other factors influencing the mental development of the child.

8."सामाजिक अभिवृद्धि और विकास का अर्थ है स्वयं और दूसरों के साथ सहजता के साथ चल सकने की योग्यता में वृद्धि ।' सोरेन्सन के उक्त कथन की अपने शब्दों में व्याख्या करें" ।

"By social development and growth we mean the increasing ability to get along well with Oneself and others. "Elaborate in your own words the said statement of Sorenson.

9. शैशवावस्था से किशोरावस्था तक बालक के सामाजिक विकास की विशेषताओं का वर्णन कीजिये ।

Discuss the characterstics of child's social development from infancy to adolescence.

10. सामाजिक विकास से क्या तात्पर्य है? किसी व्यक्ति के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन करो ।

What is meant by Social Development? Describe the factors influencing the social development of a individual.

11. किशोरावस्था के आगमन का मुख्य चिन्ह संवेगात्मक विकास में तीव्र परिवर्तन है ।' कोल व ब्रूस के इस विचार को विस्तार से समझाईये ।

The Main sign of the arrival of adolescence is - rapid changes in the emotional development. Explain in detail this statement by Cole & Bruce.

12. शैशवावस्था से किशोरावस्था तक बालक के संवेगात्मक विकास का वर्णन कीजिये और उसको प्रभावित करने वाले तत्वों का उल्लेख कीजिये ।

Describe the child's emotional development from infancy to adolescence and mention the factors,which influence it.

13. किशोरों की कुछ संवेगात्मक समस्याओं का वर्णन किजिये । इनका समाना करने में आप छात्र की किस प्रकार सहायता कर सकते हैं?

Describe some emotional problems of adolescents.How would you help your pupil in facing these problems?

14. बालकों या किशोरो, के मुख्य संवेगों का उल्लेख करते हुए बताईये कि आप उनके संवेगात्मक विकास को उचित दिशा प्रदान करने के लिये क्या कर सकते हैं?

Describe the chief emotions of child or adolescents.What can you do to give proper direction to their emotional development?

15. "परिवार के बाद विद्यालय ही संभवत: वह दूसरा स्थान है, जो व्यक्ति की उन भावनाओं पर आधारभूत प्रभाव डालता है, जिनका निर्माण वह अपने और दूसरों के प्रति करता है।" जरशील्ड के

उक्त कथन की व्याख्या करते हुए व्यक्ति के संवेगात्मक विकास में विद्यालय की भूमिका का वर्णन कीजिये।

"Next to family, the school is probably the second place which influence those emotions of an individual which one creates in respect of oneself and others". Elaborate of on this statement of Jersild and describe the role of school in eh emotional development of an individual.

16. परिवार, विद्यालय और समाज की भूमिका पर विशेष प्रकाश डालते हुए बालक के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले तत्वो का वर्णन किजिये ।

Describe the factors influencing the emotional development of a child throwing special light on the role of family,school and society.

17. "स्थायीभाव, व्यक्ति के चरित्र और व्यक्तित्व के आधार होते हैं।" कैसे? अच्छे चरित्र व व्यतित्व के निर्माण में किस प्रकार के स्थायीभाव बालक में विकसित किये जाने चाहिये?

"Sentiments are the foundation of person's character and personality."How? What type of sentiments should be developed in a child to form good character and personality?

18. चरित्र का अर्थ स्पष्ट करते हुए अच्छे चरित्र की प्रमुख विशेषताओं को वर्णन कीजिये ।

Explain the meaning of Character and describe its main traits.

19. अच्छे चरित्र के लक्षण क्या हैं? विस्तार से बताऐं ।

What are the features of a Good Character? Explain in detail.

20. अध्यापक के रूप में बालकों का चरित्र निर्माण करने के लिये आप किन विधियों का प्रयोग करेगे?

Which methods will you adopt as a teacher for the character formation of children?

21. वंशानुक्रम और वातावरण में से कौन सा कारक बालक के चारित्रिक विकास के लिये अधिक महत्त्वपूर्ण है? आलोचत्मक परिक्षण करते हुए बालक के चारित्रिक विकास को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों का भी वर्णन कीजिये ।

Of the two factors, Heredity and environment, which is more important for the character development of a child? Critically analyse the influence of the two and describe other factors influencing the character development of the child.

22. विद्यालय, शिक्षक और शिक्षा बालको के चारित्रिक विकास में किस प्रकार से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है? विस्तार से उदाहरण के साथ बताईये ।

How do school, Teachers and education play an important role in the character development of children? Describe in details with sufficient examples.

इकाई : 2 (UNIT: 2)

अधिगमकर्ता की समस्याएँ एवं उनका प्रबन्धन अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा इसके विकासात्मक परिपेक्ष्य के निहितार्थ

(Learners Problems and their Management : Implications of Developmental, Perspectives for Learner's Behaviour, Curriculum and Instruction)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

2.0 उद्देश्य (Objectives)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

2.2 अधिगमकर्ता की समस्याए (Problems of Learner)

स्वपरख प्रशन (Check Your Progress)

2.3 अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन हेतु इसके विकासात्मक परिपेक्ष्य के निहितार्थ (Implications in the context of Learner's behaviour, Curriculum and Instruction)

2.3.1 अधिगमकर्ता के व्यवहार के निहितार्थ (Implications of Learner's behaviour)

2.3.2 अधिगमकर्ता के पाठ्यक्रम एवं अनुदेशन के निहितार्थ (Implications of Learner's , Curriculum and Instruction)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

2.4 सारांश (Summary)

2.5 शब्दावली (Glossary)

2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

2.7 स्वपरख प्रश्नों के उतर हेतु सुझाव (Hints for Self Learning Excercises)

2.8 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

2.0 उद्देयश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

(i) अधिगमकर्ता की समस्याओं को समझ सकेंगे ।

(ii) अधिगमकर्ता की समस्याओं में अन्तर कर सकेंगे ।

(iii) अधिगमकर्ता की समस्याओं से सम्बन्धित शब्दावली का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे ।

(iv) अधिगमकर्ता के व्यवहार से संबन्धित समस्याओं के प्रबन्धन का वर्णन कर सकेंगे ।

(v) अधिगमकर्ता के पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन से सम्बन्धित समस्याओं के प्रबन्धन की व्याख्या कर सकेंगे ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction) :

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की प्रथम धुरी अधिगमकर्ता होता है । अधिगमकर्ता को अध्ययन सामग्री के माध्यम से जानने का प्रयास किया जाता है । हर व्यक्ति की अपनी जन्मजात योग्यताएँ, वृद्धि, विकास की दिशाएँ तथा विशेषताएँ होती हैं । अधिगमकर्ता अपने शारीरिक व मानसिक विकास के साथ वातावरण के साथ समायोजन करता है परन्तु कभी-कभी अधिगमकर्ता स्वयं को वाताबरण के साथ सही ढंग से समायोजित नहीं कर पाता क्योंकि अधिगमकर्ता की अपनी कुछ समस्याएँ होती हैं जो उसके शरीर, मन तथा वातावरण से जुड़ी होती है । अधिगमकर्ता की समस्याओं को उसके व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन के सन्दर्भ में जानना अत्यन्त आवश्यक है ताकि अधिगम ज्यादा हो सके । अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर करने के लिए सीखने के अनुभवों पर ध्यान दिया जाना चाहिए जिसमें कक्षा का वातावरण सीखने में सहायक विषयवस्तु तथा निर्देशन व परामर्श को शामिल किया जा सकता है । शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की अन्तिम धुरी शिक्षक होता है इसलिए अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर करने में शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है । अर्थात शिक्षक द्वारा अधिगमकर्ता के व्यवहार को समझकर शिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए । अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर करने तथा उनके उचित प्रबन्धन के लिए आवश्यक है कि पहले उनकी समस्याओं को समझा जाये तद्परान्त उन्हें दूर करने के उपाय किये जायें ।

2.2 अधिगमकर्ता की समस्याए (Problems of learner)

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता का स्थान महत्वपूर्ण होता है । यह प्रक्रिया बिना अधिगमकर्ता के सम्पूर्ण नहीं हो सकती । अधिगमकर्ता के साथ समस्याएँ होने पर उसका अधिगम भी ठीक प्रकार नहीं होता है । अधिगमकर्ता की समस्याओं का असर उसकी शैक्षिक उपलब्धि पर भी पड़ता है । अधिगमकर्ता की कुछ समस्याएँ निम्न हैं -

1. समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ (problems related to adjustment) : -

अधिगमकर्ता की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है -

(i) विद्यालयी समायोजन से सम्बन्धी समस्याएँ

(problems related to adjustment in school)

(ii) सामाजिक समायोजन से सम्बन्धी समस्याएँ

(problems related to social adjustment)

(i) विद्यालयी समायोजन से सम्बन्धी समस्याएँ (Problems related to adjustment in school): स्कूल का वातावरण तथा शिक्षक व्यवहार कभी-कभी अधिगमकर्ता के लिए समस्या का कारण बन जाते हैं जिससे अधिगमकर्ता अपने आपको स्कूली, वातावरण में

समायोजित नहीं कर पाता । जैसे- शिक्षक का आवश्यकता से अधिक सख्त होना, स्वतंत्रता न देना, शारीरिक दण्ड देना आदि । इसी प्रकार विद्यालयी वातावरण जैसे- विद्यालयी पाठ्यक्रमों के सैद्धान्तिक पक्ष पर प्रयोगात्मक पक्ष (Practical aspect) की अपेक्षा बहुत अधिक ध्यान देना । सैद्धान्तिक वातावरण में अधिगमकर्ता मुख्यत: सुनने का कार्य करते हैं जिससे अधिगमकर्ता में ऊब उत्पन्न होती है ।

(ii) सामाजिक समायोजन से सम्बन्धी समस्याएँ (Problems related to social adjustment) : सामाजिक वातावरण में अधिगमकर्ता का परिवार के साथ सम्बन्ध तथा सामाजिक सम्बन्ध आते हैं । शोधों में पाया गया है कि जिन, बालक-बालिकाओं को पारिवारिक संघर्ष का सामना करना पड़ता है वे अन्य लोगों जैसे- मित्रों पड़ोसियों, आस-पास के लोगों के साथ भी ठीक ढंग से समायोजित नहीं हो पाते हैं । इसी प्रकार यदि अधिगमकर्ता किसी सामाजिक समारोह में भाग लेना चाहता है परन्तु इसकी अनुमति मॉ/बाप से न मिलने पर उसमें द्वंद उत्पन्न हो जाता है । माता-पिता द्वारा बच्चों से बहुत अधिक अपेक्षाएँ रखना, बहुत अधिक डाँट-डपट, रोक-टोक लगाने से बच्चे विकासात्मक कार्या में ठीक प्रकार से ध्यान नहीं दे पाते हैं ।

2. यौन व्यवहार तक शारीरिक परिवर्तन से सम्बन्धित समस्या.

(Problems related to Sex behaviour and Physical changes) :

किशोर बालक-बालिकाओं में यौन सम्बन्धी समस्याएँ भी पायी जाती हैं अर्थात इस उम्र के अधिगमकर्ता शारीरिक रूप से परिपक्व हो जाते हैं परन्तु मनोवैज्ञानिक रूप से नहीं । शारीरिक रूप से परिपक्व होने पर अधिगमकर्ता में निम्न परिवर्तन आते हैं- जैसे - लड़कियों में मासिक धर्म की (Menstruation) की शुरूवात होने पर वे शारीरिक व मानसिक रूप से परेशान रहने लगती हैं । इसी प्रकार लड़कों में स्वप्नदोष (Wet dreams) की समस्या उनके दिमाग में द्वंद की समस्या उत्पन्न कर देती है । इसी प्रकार बालक-बालिकाओं के शरीर में होने वाले विकास का भी प्रभाव उनके समायोजन स्तर को प्रभावित करता है । लडके, लड़कियों से अधिक आकर्षक दिखना चाहते हैं जबकि लड़कियों, लड़कों से अधिक आकर्षक दिखना चाहती हैं । लड़के, लड़कियाँ अपने-अपने समूह में शारीरिक संरचना (लम्बाई, मोटाई, रंग-रूप) की तुलना करते रहते हैं । अगर शरीर पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हो पाता है तब भी बालक बालिकाएँ चिन्ताग्रस्त रहते हैं।

इसी प्रकार बालक-बालिकाओं में यौन व्यवहार से सम्बन्धित समस्याएँ भी पाई जाती हैं - जैसे - यौन ग्रन्थियों के सक्रिय हो जाने पर जब शरीर को विशेष अनुभूति होती है तो बालक-बालिकाएँ इस अनुभूति की संतुष्टि हस्त-मैथुन आदि द्वारा करते हैं । साथ ही वे कुंठाग्रस्त हो जाते हैं और अपने जीवन को उद्देश्यहीन मानने लगते हैं । यौन शिक्षा के अभाव में शादी से पहले गर्भवती हो जाने पर बालिकाएँ या तो आत्महत्या का प्रयास करती हैं या अपने आपको गिरा हुआ समझकर तनावग्रस्त रहने लगती हैं जबकि किशोर इस कार्य को अनैतिक समझकर इसका बोझ अपने ऊपर लेने से मना कर देते हैं ।

3. नैतिकता से सम्बन्धित समस्या (Problems related to Morality) :

ज्यादातर बालक-बालिकाएँ स्वयं के लिए तथा दूसरों के लिए उच्च मानक निर्धारित कर लेते हैं जिनके पूरा न होने पर दूसरों से लड़ाई झगड़ा करते हैं जिससे सही /गलत का फैसला भी नहीं कर पाते । ऐसी स्थिति में सामाजिक समायोजन की समस्या उत्पन्न होती है ।

4. व्यवसायिक चुनाव से सम्बन्धित समस्या (Problems related to selection of Vocation) : किशोरावस्था आने पर अधिगमकर्ता के सामने व्यवसाय चुनाव सम्बन्धी समस्या आती है । अधिगमकर्ता के दिमाग में हर वक्त यह सवाल रहता है कि कौन सा कोर्स या व्यवसाय उसके लिए उपयोगी होगा परन्तु जब उसे मनमुताबिक कोर्स/ व्यवसाय मिल पाता है तो वह विद्रोही (rebellious) व आक्रामक (aggressive) हो जाता है । व्यवसाय चुनने या न चुनने की असमंजसपूर्ण स्थिति उसे काफी परेशान कर देती है । ऐसे निर्णय के लिए अधिगमकर्ता को उचित निर्देशन व परामर्श की आवश्यकता होती है ।

5. वित्त सम्बन्धित समस्या (Problems related to Finance)

किशोर बालक-बालिकाओं में आत्म-सम्मान की भावना बहुत अधिक होती है । वे अपने समूह में चर्चा का विषय बनना चाहते हैं । एक तरफ तो वे पैसा खर्च करना चाहते हैं दूसरी तरफ पैसों की प्राप्ति के विषय में सोचते रहते हैं । पैसों की प्राप्ति के लिए वे गलत कामों की तरफ भी मुड़ जाते हैं ।

6. मादक वस्तुओं के सेवन तथा आत्महत्या की समस्या (Problems related to drug use and suicide):

कभी-कभी बालक गलत साथ की वजह से मादक वस्तुओं का सेवन करना शुरू कर देता है तो वह शैक्षिक, पारिवारिक, नैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक रूप से समस्या बन जाता है । शोधों में देखा गया है कि किशोरों में आत्महत्या की भावना प्रबल होती है । इस उम्र में किसी चीज को खो देना, तेज बोलना, अपने अनुसार प्रतिक्रिया न पाना, विद्यालयी असफलता, पारिवारिक झगड़े, अपने समूह में विशिष्टता में कमी, बालक को आत्महत्या की तरफ मोड़ती है ।

7. आत्मनिर्भर से सम्बन्धित समस्या (Problems related to Independence) : किशोरावस्था बालक की वह अवस्था होती है जब बालक को न तो बड़ा माना जाता है और न ही छोटा । ऐसी स्थिति में शारीरिक रूप से विकसित होने पर भी वह पूरी तरह से आत्मनिर्भर नहीं हो पाता । शारीरिक, सामाजिक आवश्यकताओं के लिए अधिगमकर्ता माता-पिता व अपने बड़ों पर निर्भर करता है जिससे उसमें चिन्ता, भय, असुरक्षा की भावना पैदा हो जाती है साथ ही माँ/बाप द्वारा दिया जाने वाला सहारा भी अच्छा नहीं लगता ।

8. आदर्शवादिता से सम्बन्धित समस्या (Problems related to Idealism) : किशोरावस्था के बालक को स्वभाव से आदर्शवादी माना जाता है क्योंकि वह सब कुछ बदल डालने के बारे में सोचता रहता है । वह आदर्श समाज के सपने संजोता है । भ्रष्टाचार समाप्त करना चाहता है । वह कल्पना की उड़ान भरने लगता है । विध्वंसात्मक कार्यो के प्रति अपना रोष व्यक्त करता है । ऐसा सोचते रहने से वह बेचैन हो उठता है जिसके फलस्वरूप वह सांवेगिक व मानसिक संतुलन खो बेठता है।

उपरोक्त समस्याओं के विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि किशोरावस्था में अधिगमकर्ता ऐसे चौराहे पर खड़ा होता है जो सही/गलत दोनों रास्तों पर मुड़ सकता है इसलिए अधिगमकर्ता की समस्याओं को समझकर उन्हें पर्याप्त निर्देशन व परामर्श दिया जाना चाहिए ।

स्वपरख प्रश्न (Check Yours Progress)

01. अधिगमकर्ता की कुछ विशेष समस्याओं का उल्लेख कीजिए ।

(Explain some specific problems of learner)

02. अधिगमकर्ता की वृद्धि एवं विकास के स्वरूप से जुड़ी समस्याओं का वर्णन कीजिए ।

(Describe the problems related to the growth and development of the learners)

2.3 अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशक हेतु इसके विकासात्मक परिपेक्ष्य के निहितार्थ

(Implications of Developmental Perspectives for learner Behaviour, Curriculum and Instruction) :

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का प्रमुख पात्र अधिगमकर्ता होता है । यह वह नायक होता है जिसके व्यवहार में अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है परन्तु जब तक अधिगमकर्ता अपनी समस्याओं में उलझा रहता है तब तक उसे सिखाया नहीं जा सकता । अधिगमकर्ता किसी भी अधिगम परिस्थिति में अधिगम कर सके इसके लिए तीन प्रकार से कार्य किया जा सकता है । जैसे - सर्वप्रथम अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाया जाये । द्वितीय-अधिगमकर्ता का पाठ्यक्रम में उसकी आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाये जबकि तृतीय स्तर पर अधिगमकर्ता को शिक्षित, या अनुदेशन प्रदान करते समय भी विशेष ध्यान रखा जाये। अधिगमकर्ता को सिखाने के कार्य को क्रमबद्ध रूप से समझा जा सकता है । जैसे:-

2.3.1 अधिगमकर्ता के व्यवहार के निहितार्थ

(Implications of Learner's Behaviour) :

अधिगमकर्ता के व्यावहार के निहितार्थ को निम्न बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है -

(i) अधिगमकर्ता का स्वास्थ्य (Learner's Health) :

अधिगमकर्ता के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थय का प्रभाव उसकी प्राप्ति पर पड़ता है । यदि अधिगमकर्ता शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ है तो उसके द्वारा ग्रहण किया जाने वाला ज्ञान अधिक स्थायी होता है । अधिगमकर्ता को शारीरिक रूप से स्वस्थ बनाये रखने के लिए पाठ्य-सहगामी (Co-curricular activities) क्रियाओं का आयोजन किया

जाना चाहिए जबकि मानसिक स्वस्थता बनाने के लिए ब्रेन स्टोरमिंग (Brain storming), ट्यूटोरियल (Tutorial) आदि का आयोजन किया जाना चाहिए ।

(ii) अधिगमकर्ता की अभिक्षमताऐ (Learner's Potentialities) :

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की पूर्ण प्राप्ति अधिगमकर्ता की मूलभूत अभिक्षमताओं पर निर्भर करती है । ये अभिक्षमताएं उसकी रूचि, अभिरूचि तथा उसकी अभिवृत्ति होती है। ये अभिक्षमताएं ही अधिगमकर्ता को सीखने और न सीखने के लिए प्रेरित करती है, साथ ही अभिक्षमताओं के अन्तर्गत अधिगमकर्ता की शक्ति तथा सामर्थ्य व उसकी बुद्धि अर्थात किसी कार्य से संबन्धित समझ, पूर्व ज्ञान आदि भी आती है इसलिए अध्यापक का दायित्व बनता है कि वह अधिगमकर्ता की अभिक्षमताओं को पहचानकर उन्हें शिक्षण प्रदान करें । यदि शिक्षक अधिगमकर्ता की अभिक्षमताओं की प्रकृति व स्तर को जानकर शिक्षण प्रदान करता है तो अधिगमकर्ता सीखने की दिशा में तेजी से अग्रसारित हो सकेगा ।

(iii) अधिगमकर्ता की इच्छा-शक्ति एवं उपलब्धि अभिप्रेरणा :

(Learner's Will-power and Achievement Motivation) :

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता इस बात पर निर्भर करती है किं अधिगमकर्ता सीखने के लिए कितना तत्पर है व उसकी इच्छा-शक्ति कितनी दृढ है । दृढ इच्छा-शक्ति से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की हर बाधा को दूर किया जा सकता है । दृढ इच्छा-शक्ति के साथ अधिगमकर्ता में उपलब्धि के लिए अभिप्रेरित होना भी आवश्यक है । यदि अधिगमकर्ता सीखने के लिए अभिप्रेरित ही नहीं है तो वह अपनी शक्ति और सामर्थ्य का भी उपयोग नहीं करता है । अर्थात सीखने के लिए उपलब्धि अभिप्रेरणा स्तर का ऊँचा होना आवश्यक है । अधिगमकर्ता में दृढ इच्छा-शक्ति, तत्परता तथा अभिप्रेरणा प्रदान करने के लिए उचित शैक्षिक वातावरण, महापुरूषों के प्रसंग देना आवश्यक है तभी अधिगमकर्ता वांछित गुणों की प्राप्ति कर सकता है ।

(iv)अधिगमकर्ता का जीवन के प्रति दृष्टिकोण(Learner's Attitude towards life) : शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता बहुत कुछ इस बात पर भी निर्भर करती है कि अधिगमकर्ता का जीवन के प्रति क्या दृष्टिकोण है? वह अपने जीवन में किन लक्ष्यों को स्थान देता है? जीवन के प्रति दृष्टिकोण उसे विशेष कार्य में दक्षता प्रदान कर सकता है । यदि अधिगमकर्ता की जीवन शैली के अनुरूप उसे कार्य प्रदान किया जाता है तो वह उस कार्य को सफलतापूर्वक कर लेता है जिससे अच्छे परिणामों की प्राप्ति होती है ।

2.3.2 अधिगमकर्ता के पाठ्यक्रम एवं अनुदेशन के निहितार्थ :

(Implicatons for Learner's Curriculum and Instruction): _

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक तथा अधिगमकर्ता दोनों का ही स्थान महत्वपूर्ण होता है । अधिगमकर्ता के व्यवहार पर शिक्षक के व्यवहार, क्रियाकलापों का सीधा प्रभाव पड़ता है ।

पाठ्यक्रम के सैद्धांतिक तथा व्यवहारिक पक्ष के प्रस्तुतीकरण की जिम्मेदारी शिक्षक की होती है इसलिए पाठ्यक्रम कैसा हो? यह जानने से पहले शिक्षक के कौन से गुणों का प्रभाव अधिगमकर्ता पर पड़ता है, का जानना भी आवश्यक है जो कि निम्न प्रकार से है -

(i) अध्यापक का व्यक्तितत्व तथा व्यवहार :

अध्यापक के व्यक्तितत्व तथा व्यवहार का सीधा प्रभाव बालक पर पड़ता है । अध्यापक व्यक्तितत्व तथा व्यवहार द्वारा अधिगमकर्ता में पढने के प्रति रूचि अत्यन्त कर सकता है परन्तु इसके लिए शिक्षक का विषयवस्तु पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए ताकि वह अनुभवों को समग्र रूप से अधिगमकर्ता के समक्ष रख सके । अध्यापक की शारीरिक व मानसिक स्वस्थता भी शिक्षण की प्रभावशीलता पर अपना प्रभाव डालती है । जो शिक्षक शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं होते वे अपने व्यवहार को भी सन्तुलित नहीं कर पाते हैं जिसका विपरीत प्रभाव अधिगमकर्ता पर पड़ता है । जो अध्यापक अपनी कक्षा में जनतांत्रिक (Democratic) वातावरण प्रदान कर शिक्षण कार्य करता है तो निश्चित रूप से वह शिक्षक, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता को प्राप्त करता है ।

(ii) पाठ्यवस्तु का निर्माण एवं प्रस्तुतीकरण :

शिक्षक के अतिरिक्त पाठ्यवस्तु का प्रभाव भी अधिगमकर्ता पर स्थायी रूप से पड़ता है । पाठ्यक्रम या पाठ्यवस्तु शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य सम्प्रेषण का माध्यम होती है । पाठ्यक्रम के अनुसार ही शिक्षक अपनी पाठ योजना तैयार करता है ताकि पाठ्यक्रम के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके । अधिगमकर्ता जिस रूप में पाठ्यवस्तु को प्राप्त करेंगे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता का स्तर उसी प्रकार का होगा अर्थात पाठ्यवस्तु की गुणवत्ता पर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता निर्भर करती है इसलिए शिक्षकों द्वारा अधिगम अनुभवों को समायोजित रूप से प्रस्तुत करना चाहिए । जैसे - प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, प्रासंगिक, औपचारिक आदि । इसी प्रकार पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय अधिगमकर्ता की आयु अभिक्षमताऐ सामान्य बौद्धिक स्तर आदि को ध्यान में रखते हुए पाठ्यवस्तु का चुनाव करना चाहिए, साथ ही पाठ्यवस्तु को तार्किक क्रम में व्यवस्थित किया जाना चाहिए । अधिगमकर्ता का अधिगम तभी स्थायी होगा जबकि पाठ्यक्रम उचित रूप से संगठित तथा आयोजित हो अर्थात पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को संगठित पाठ्यवस्तु द्वारा प्रभावपूर्ण ढंग से प्राप्त किया जा सकेगा ।

(iii) प्रभावी विधियों एवं तकनीकों का प्रयोग :

शिक्षण अधिगम उद्देश्यों की प्रभावपूर्ण प्राप्ति तभी सम्मव है जबकि अधिगमकर्ता तक इन्हें प्रभावी विधियों तथा तकनीकी के माध्यम से पहुँचाया जाये । अनुदेशन प्रदान करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है :-

* अनुदेशन तकनीक इस प्रकार की हो जिससे अधिगमकर्ता की सभी ज्ञानेन्द्रियों (sensory organs) का इस्तेमाल हो सके । जैसे - देखना, सुनना, स्पर्श करना आदि ऐसा करने से अधिगमकर्ता ज्ञान को कुशलता से अर्जित कर सकेगा ।
* जो भी ज्ञान प्रदान किया जाये उसे अधिगमकर्ता के पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित किया जाये। इससे भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की प्रभावशीलता बढती है ।

* पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करने के लिए अधिगमकर्ता की आवश्यकतानुसार शिक्षण विधियों प्रविधियों तथा तकनीकी का इस्तेमाल किया जाये साथ ही उचित प्रतिपुष्टि व पुनर्वलन की व्यवस्था भी की जानी चाहिए । प्रतिपुष्टि व पुनर्वलन अधिगमकर्ता के अधिगम को प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।
* मनोवैज्ञानिक शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाये । विषयवस्तु के अनुरूप ही शिक्षण विधियों का उपयोग किया जाये । शिक्षण विधि विद्यार्थीकेन्द्रित हो तथा स्वयं ज्ञान प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित कर सके तथा अन्त: क्रिया की प्रबलता होनी चाहिए । ऐसे गुणों से युक्त शिक्षण विधि तथा तकनीकी, अधिगमकर्ता के अधिगम को स्थायी बनाती है ।
* अधिगमकर्ता को शिक्षण प्रदान करते समय द्रश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि उनका ध्यान केन्द्रित हो सके ।
* अधिगम विधि तथा तकनीक ऐसी हों जिसमें अभ्यास कार्य दोहराने की व्यावस्था भी हो । पुनरावर्ती से विषय की पकड़ मजबूत होती है तथा कक्षा में अनुशासन की समस्या भी नहीं आती ।

अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन से संबन्धित कारकों को ध्यान में रखकर किया गया शिक्षण अधिक प्रभावी होता है तथा अधिगम स्थायी होता है । उपरोक्त तीन कारकों के साथ ज्ञान उपलब्धि कक्षा के वातावरण पर भी निर्भर करती है । जैसे - शान्त, जनतान्त्रिक, निष्पक्ष, सहयोगपूर्ण, रचनात्मकता के उचित अवसर प्रदान करने वाला, अन्त:क्रियात्मक तथा सहयोगी वातावरण अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर कर उनके लिए उचित प्रबन्धन के अवसर प्रदान करता है । उपरोक्त वर्णन से निष्कर्ष निकलता है कि अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन का प्रबन्धन शिक्षक, पाठ्यक्रम, विधि तथा तकनीकी का सही उपयोग करके किया जा सकता है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

03. अधिगमकर्ता के व्यवहार सम्बन्धित समस्या के प्रबंधन का वर्णन कीजिए। (Enemurate the management or problems related to the behaviour of learners)

2.4 सारांश(Summary) :

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । अधिगमकर्ता के समुचित विकास के लिए उनकी समस्याओं को जानना आवश्यक है । अधिगमकर्ता की समस्यओं को समझकर इन्हें दूर करने का प्रयास करना चाहिए । अधिगमकर्ता की समस्याओं का निराकरण उसके व्यावहार पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन विधि में परिवर्तन लाकर किया जा सकता है । यदि अधिगमकर्ता के व्यावहारगत विशेषताओं को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का निर्माण कराया जाये तथा उचित अनुदेशन विधियों तथा तकनीकी का इस्तेमाल किया जाये तो अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर किया जा सकता है । जैसे - अधिगमकर्ता को उनके बुद्धिनुसार वातावरण दिया जाये, उचित समय पर यौन शिक्षा प्रदान की जाये, व्यावसायिक निर्देशन प्रदान किया जाये, संवेगों

तथा रूचि की पूर्ति की जाये, अध्यापक की विषयवस्तु पर स्वामित्व हो अध्यापक तथा अधिगमकर्ता दोनों ही शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ हों, अधिगमकर्ता को प्रतिपुष्टि तथा पुनर्वलन प्रदान किया जाये, नयी पाठ्यवस्तु को पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित करके प्रदान किया जाये, अधिगमकर्ता को अत्यधिक प्रतिस्पर्धा से दूर रखा जाये, अधिगमकर्ता के समुख आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किये जाये आदि ।

2.5 शब्दावली (Glossary)

1. समायोजन (Adjustment) - सीमित साधनों में सन्तुलित व्यावहार

2. पाठ्य सहगामी क्रियाएँ (Co-Curricular Activities) - पाठ्यक्रम को पोषित करने वाली क्रियाएँ

3. परामर्श (Counseling) - विचारों के आदान प्रदान से समस्या का हल निकालना

4. निर्देशन (Guidance) - स्वतंत्र रूप से समस्या समाधान योग्य बनाना

5. अनुदेशन (Instruction) - कक्षा शिक्षण

6. पुनर्वलन (Reinforcement) - जो प्रतिक्रिया की आवृत्ति को बढ़ा देता है

2.6 सन्दर्भ पुस्तके (Reference Books)

1.पाण्डेय, राम शकल (1998)	-	शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ ।
2.शर्मा, आर. ए. (2000)	-	अधिगम एवं विकास के मनावैज्ञानिक आधार, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ ।
3.सिंह, रामपाल, सिंह, एसडी एवं शर्मा, देबदत्त (1999)	-	व्यवहार मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा ।
4.मंगल, ए. के. एवं मंगल, शुभ्रा (2005)	-	विद्यार्थी विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया ,(2005) लॉयल बुक डिपो, मेरठ ।
5.पाण्डेय, कल्पलता	-	शिक्षा मनोविज्ञान भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि,
एवं श्रीवास्तव, एस. एस.(2007)	-	टाटा मैकग्रॉ हिल्स पब्लिकेशन, नई दिल्ली ।
6.Woolfolk, Anita (2006) Pearson Education Delhi.	-	Educational Psychology, Ninth Edition,
7.Pandey, K.P	-	Advance Educational Psychology,2nd Revised Edition, Konark Publishers Pvt. Ltd., New Delhi

2.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर हेतु सुझाव (Answer/suggestions to the Self learning Exercises) :

1. समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ. (विद्यालयी तथा सामाजिक)
2. यौन व्यवहार तथा शारीरिक परिवर्तन से सम्बन्धित समस्याएँ
3. नैतिकता से सम्बन्धित समस्याएँ
4. व्यवसायिक चुनाव से सम्बन्धित समस्याएँ
5. वित्त से सम्बन्धित समस्याएँ
6. मादक वस्तुओं के सेवन तथा आत्महत्या की समस्याएँ
7. आत्मनिर्भरता से सम्बन्धित समस्याएँ
8. आदर्शवादिता से सम्बन्धित समस्याएँ

02. यौन व्यावहार तथा शारीरिक परिवर्तन की समस्याएँ देखें (2.2.2)

(i) पाठ्य सहगामी क्रियाकलाप, Brain storming, tutorials, counseling

(ii) छात्र की अभि-क्षमताओं को पहचानकर अनुकूल शिक्षण

(iii) छात्रों की इच्छाशक्ति तथा उपलब्धि प्रेरणा (achievement motivation) के लिए उचित शैक्षिक वातावरण एवं महापुरुषों के प्रसंग।

2.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions) : -

1. अधिगमकर्ता की समस्याओं का विस्तृत वर्णन कीजिए ।
   (Describe the problems of learner in detail)
2. अधिगमकर्ता की समस्याओं का प्रबंधन किस प्रकार किया जा सकता है?
   (How the problems of learners can be managed)
3. अधिगमकर्ता के पाठ्यक्रम से सम्बन्धित समस्याओं का वर्णन कीजिए एवं उनका उचित प्रबंधन बताइये ।
   (Explain the problems of learners related to curriculum and their management)
4. अधिगमकर्ता की समस्याओं को दूर करने में शिक्षक की भूमिका की चर्चा कीजिए ।
   (Discuss the role of teacher in eliminating the problems of learners).
5. अधिगमकर्ता के व्यवहार, पाठ्यक्रम तथा अनुदेशन के निहितार्थ बताइये ।
   (Give the implications of learner's behaviour, curriculum and instruction)

इकाई 3 (**UNIT 3**)

अधिगम सिद्धान्त : व्यवहारवादी बनाम समग्रवादी सिद्धान्त: स्कीनर गाने, आसुबेल तथा पियाजे के सिद्धान्त तथा निर्मितवाद

(Learning Theories: Behaviouristic versus Holistic Theories: Theories of Skinner, Gagne Ausubel and Piaget and Constructivism)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

3.0 उद्देश्य (Objectives)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

3.2 अधिगम सिद्धान्त (Learning theories)

3.2.1 अधिगम का अर्थ (Meaning of Learning)

3.2.2 अधिगम सिद्धान्त (Learning theories)

3.2.3 व्यवहारवाद (Behaviourism)

3.2.3.1 आरम्भिक गतिविधियाँ: पावलाव, थार्नडाइक, स्किनर

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.2.3.2 अन्य प्रमुख सिद्धान्त : गुथरी, हल, गाने, आसुबेल

3.2.3.3 व्यवहारवाद की समीक्षा

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.2.4 संज्ञानात्मक सिद्धान्त (Cognitive Theories)

3.2.4.1 जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development of Jean Piaget)

3.2.4.2 पियाजे द्वारा प्रस्तुत विकास अवस्थाओं कि विशिष्टताओं का संक्षिप्त वर्णन

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.2.5 अनुभवात्मक अधिगम (Experiential Learning)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.2.6 निर्मितवाद (Constructivism)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.2.6.1 इतिहास

3.2.6.2 प्रकार

3.2.6.3 सिद्धांत

3.2.6.4 विशेषताएँ

3.3 अधिगम सिद्धान्तों का शिक्षण अधिगम अभ्यास में निहितार्थ
(Implications of Learning Theories in Teaching and Learning)

३.4 सारांश (Summary)

3.5 शब्दावली (Glossary)

3.6 संदर्भ ग्रंथ (Further readings)

3.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तरों/संकेतों हेतु सुझाव
(Answers/Suggestions to Self-Learning Exercises)

3.8 इकाई प्रश्न (Unit End Questions)

3.0 उद्देश्य (Objectives) :-

इस इकाई की समाप्ति पर आप निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति कर सकेंगे -

1. व्यवहारवाद के सिद्धान्त की व्याख्या कर सकेंगे।
2. स्कीनर, आसुवेल, गाने के योगदान की व्याख्या कर सकेंगे।
3. संज्ञानात्मक विकास तथा पियाजे के योगदान का विवेचन कर सकेंगे।
4. निर्मितवादी अधिगम सिद्धान्तों की व्याख्या कर सकेंगे ।
5. अधिगम सिद्धान्तों का शिक्षण में उपयोगिता, महत्व की व्याख्या कर सकेंगे ।

3.1 प्रस्तावना (Introduction) :-

मनोवैज्ञानिकों, दार्शनिकों एवं शोधकर्त्ताओं ने अनेक वर्षों में अधिगम के अर्थ, व्यक्ति कैसे सीखता है तथा ज्ञान की प्रवर्ती के बोध के लिए निरंतर प्रयास किये है। शिक्षक, अधिगम की क्या अवधारणा बनाते हैं तथा वे अधिगम का कक्षा में किस प्रकार प्रयोग करते हैं, ऐसी पूर्वधारणायें शिक्षण अधिगम प्रविधि को प्रभावित करती है। यह सत्य है कि शिक्षक इस प्रश्न के उत्तर से अत्यधिक लाभान्वित हुए हैं कि व्यक्ति किस प्रकार सीखते हैं यह क्षेत्र अधिगम मनोविज्ञान कहलाता है और अनेक शोधकर्त्ताओं ने इस क्षेत्र में योगदान दिया है। प्रत्येक शोधकर्त्ता ने इस विषय में कि अधिगम किस प्रकार होता है, अन्तर्दृष्टि प्राप्त की है और अधिगम में कैसे सुधार किया जाये, जैसे प्रश्नों के उत्तर ढूंढने का प्रयास किया है। प्रारंभ में ऐसे प्रयास किस प्रकार अधिगम होता है? साधारण थे, किन्तु आज इस क्षेत्र का गहन अध्ययन सम्भव बन पड़ा है तथा मस्तिष्क आधारित शोध और अधिगम का सहसम्बन्ध स्थापित किया जा चुका है। इस दिशा में संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण योगदान है। आज हम यह समझते हैं कि अधिगम के समय छात्र के मस्तिष्क में क्या होता है। आज यह स्पष्ट हो गया है कि सभी छात्र स्वभाव से सीखने के लिए प्रेरित रहते हैं, अधिगम एक सक्रिया एवं सामाजिक प्रक्रिया है, जो पूर्व ज्ञान को नवीन अनुभवों से जोड़कर, बाहर की दुनिया का अर्थ बनाती है। अर्थ ढूंढना ही अधिगम है। छात्र पांचों संवेदी ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग से, किया द्वारा, अनुभव ग्रहण करते हैं। अर्थपूर्ण दैहिक क्रियायें, छात्रों को वह अनुभव देती है जो चिन्तन एवं भाषा विकास के लिए महत्वपूर्ण है। छात्रों में पारस्परिक संप्रेषण द्वारा, वार्तालाप तथा गुणवत्ता वाले साहित्य के अध्ययन से भाषा का विकास होता है। कक्षा में उपलब्ध अनुभव भाषा और चिन्तन के पैटर्न

विकसित करने में सहायक होते हैं। शैक्षिक उपलब्धि के लिए सामाजिक विकास, प्रेरणा, स्व-सम्मान तथा समय की आवश्यकता होती है तथा यह अधिगम वातावरण द्वारा उपलब्ध होते हैं। इस इकाई में अधिगम सिद्धान्तों के प्रमुख बिन्दुओं तथा उनसे संबन्धित मनोवैज्ञानिकों एवं संबंधित अधिगम विशिष्टताओं पर परिचर्चा की जायेगी। यह स्पष्ट है कि कोई भी अधिगम परिप्रेक्ष्य छात्र के पूर्व ज्ञान को ध्यान में रख कर ही पूरा हो सकता है। इसी प्रकार, छात्र के लिए अनुभव एक ऐसा कारक है जो प्रमुख अधिगम परिप्रेक्ष्यों को जोड़ता है। इस इकाई में उन महत्वपूर्ण बिन्दुऔं को पहचाना जायेगा जो शिक्षक को शिक्षण - अधिगम के लिए सक्षम बनाते हैं।

3.2 अधिगम सिद्धान्त (Learning theories)

3.2.1 अधिगम का अर्थ **(Meaning of Learning) :-**

अधिगम हमारे प्रत्येक कार्य, चिन्तन तथा अन्त:किया में सम्मिलित है। अधिगम में साधारण प्रत्यास्मरण से लेकर बौद्धिक योग्यताओं, संज्ञानात्मक कौशल तथा भावनात्मक मनोवृत्ति के विकास तक सम्मिलित है। यह योग्यतायें नवीन अनुभवों को प्राप्त करने के लिए एक आधार है तथा नवीन संरचनाओं को भविष्य में अधिगम हेतु प्रोत्साहित करती है।

अधिगम वह प्रविधि है जिससे व्यक्ति में अनुभव द्वारा व्यवहार में रूपांतर होता है। अधिगम जन्म से प्रारंभ होकर मृत्यु तक निरंतर होता रहता है। यह धीमी गति से अथवा द्रुत गति से हो सकता है। यह अनजाने में/अनभिज्ञता में (unknowingly) अथवा जानकारी में होता है। शिक्षा, अभिप्रेरणा, प्रशिक्षण एवं अभ्यास द्वारा अधिगम में वृद्धि होती है तथा वांछित व्यवहार परिवर्तन संभव बन पड़ा है। क्या आप स्पष्ट कर सकते हैं कि अधिगम क्या है? अधिगम सिद्धान्त क्या है? विज्ञान के अधिगम में सुधार हेतु क्या आवश्यकतायें हैं? अधिगम की अनेक परिभाषाएं हैं जैसे -

साधारण शब्दों में अधिगम व्यवहारगत परिवर्तन है जो अनुभव से घटित होता है।

अधिगम व्यवहार परिवर्तन है, जो अनुभव तथा अभ्यास द्वारा होता है (गिलमर, 1970)

अधिगम एक प्रविधि है जिसमें सजीव अनुभव के परिणाम स्वरूप व्यवहार परिवर्तन करता है

(गेज एवं बर्लनाइनर)

अधिगम स्वभाव, ज्ञान तथा अभिवश्त्ति अधिग्रहण करना है। इसमें कार्य को नवीन ढंग से करना, बाध्यताओं पर विजय प्राप्त करना और नवीन परिस्थितियों में समायोजन सम्मिलित है। यह व्यक्ति में क्रियाशील है। (क्रो एवं क्रो)

रचनात्मक परिपेक्ष में, सीखना ज्ञान के निर्माण की एक प्रक्रिया है। छात्र सक्रियाता से पूर्वज्ञान में उपलब्ध सामग्री के आधार पर नवीन अनुभवों द्वारा, ज्ञान का निर्माण करते हैं। इस ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया का एक भाग सामाजिक पक्ष भी है जिसमें शिक्षक तथा सहपाठी सम्मिलित हैं। जटिल कार्य के लिए आवश्यक ज्ञान समूह परिस्थितियों में निहित होता है। निर्मिति यह संकेत देती है कि हर विद्यार्थी व्यक्तिगत एवं सामाजिक तौर पर अर्थ निर्माण करता है। अर्थ निर्माण अधिगम है। छात्र की सक्रिय व्यस्तता को सुनिश्चित करके, संवाद, प्रश्न पूछना, प्रयोग और चिन्तन से अधिगम निश्चित किया जा सकता है।

3.2.2 अधिगम सिद्धान्त **(Learning Theories) :-**

अधिगम सिद्धान्त उन परिस्थितियों का वर्णन एवं व्याख्या करते हैं जिनसे अधिगम घटित होता है अथवा नहीं होता है। अधिगम सिद्धान्त एक सामान्य संप्रत्यय है जो समस्त जीवों पर लागू होता है। यह सिद्धान्त समस्त परिस्थितियों पर तथा समस्त अधिगम कश्त्यों पर व्यवहारगत प्रतिरूप लागू होता है। यह स्वीकारा गया है कि शिक्षण सिद्धान्त की तुलना में, अधिगम सिद्धान्त अधिक व्यापक है। वास्तव में शिक्षण प्राय: अधिगम सिद्धान्त पर आधारित होता है इसलिए अधिगम, शिक्षण की तुलना में अधिक सर्वव्यापक है। इसलिए एक महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि शिक्षक किस प्रकार अधिगम को समझते हैं और उसको किस प्रकार अभ्यास में लाते हैं।

अधिगम क्षेत्र में अनेक शोध किये गये हैं। जिनको समझकर शिक्षण में उन्नयन संभव बन पड़ा है। अधिगम मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का अध्ययन हमारे शिक्षण को एक नवीन दिशा देने में सहायक होगा। अधिगम सिद्धान्तों के अवबोधन हेतु कुछ महत्वपूर्ण कार्यो का वर्णन आवश्यक है।

अधिगम सिद्धान्तों को मोटे तौर पर दो प्रमुख खेमों में वर्गीकृत किया गया है : व्यवहारवादी और समग्रवादी। इसके अन्य नाम भी इस प्रकार है -

संयोजनवादी (Connectivist) - संज्ञानात्मक (Cognitivist) ।

इन सिद्धान्तों की सहायता से शिक्षण में अनुभव सम्भव बन पड़ा है । इनका ज्ञान हमारे शिक्षण को नई दिशा देने में सहायक होगा ।

3.2.3 व्यवहारवाद **(Behaviourism)** विशेषताएँ :-

इनके अन्तर्गत आने वाले सिद्धान्तों की कुछ सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

1. अधिगम किसी उद्दीपक (stimulus) का किसी अनुक्रिया (response) के साथ संयोजन (connection) स्थापित करना है। व्यवहार स्वाभाविक अनुक्रियाओ से आरम्भ होते हैं तथा नवीन व्यवहार अनुभवों के माध्यम से नये उद्दीपक अनुक्रिया बन्धन बढ़ते हैं।
2. इन्होंने अपने निष्कर्षों को प्राप्त करने में वैज्ञानिक अवलोकन विधि (Scientific Observations) का प्रयोग किया जिसमें परिणामी व्यवहार-परिवर्तन का वस्तुनिष्ठ अवलोकन तथा मूल्यांकन किया जा सकता है।
3. इसकी मुख्य विधि अनुकूलन प्रक्रिया (conditioning) है।
4. व्यवहार के निर्धारण में वंशानुक्रम की अपेक्षा वातावरण अधिक महत्वपूर्ण है।

3.2.3.1 आरम्भिक गतिविधियाँ :-

(अ) पावलाव का आद्य अनुकूलन सिद्धान्त -

व्यवहारवादी सिद्धान्त का आभास इवान पावलाव (Evan Pavlov) के कुत्तों के उपर किये गये प्रयोगों से मिलता है। पावलाव स्वयं तो मनोवैज्ञानिक नहीं थे वह एक जीव वैज्ञानिक थे तथा लार के अध्ययन पर उन्हें नोबेल पुरस्कार मिला था परन्तु उनके लार पर किये कुत्तों पर प्रयोग ने व्यवहारवादी विचारधारा का पोषण किया। इस प्रयोग से यह ज्ञात हुआ कि यदि स्वाभाविक उद्दीपक (S) के साथ-साथ किसी कृत्रिम उद्दीपक को

कई बार लाया जाय तो जो प्रतिक्रिया स्वाभाविक उद्दीपक से होती थी वही स्वाभाविक उद्दीपक की अनुपस्थिति में कृत्रिम उद्दीपक से होगी।

उदाहरण के लिए भूखे कुत्ते को भोजन देने से उसके मुख में लार आना स्वाभविक है, अर्थात भोजन लार की प्रतिक्रिया का स्वाभाविक उद्दीपक है। परन्तु यदि भोजन के साथ-साथ या उससे कुछ पहले एक घंटी बजाई जाये और यह प्रक्रिया कई बार दोहराई जाये तो भोजन की अनुपस्थिति में घंटी बजने से ही लार आ जायेगी। इस प्रकार S-R में एक सम्बन्ध बन जाता है। इस प्रकार की संयोजन प्रक्रिया क्रिया की व्याख्या में पावलाव मास्तिष्क में होने वाली कियाओं की भी कल्पना करता है। इस प्रकार इसका सिद्धान्त S-R के स्थान पर S-O-R कहना अधिक उचित होगा। पावलाव के सिद्धान्त को आद्य अनुकूलन की सिद्धान्त की संज्ञा दी गई।

(ब) थार्नडाइक का भूल सीख का सिद्धान्त -

प्रथम शिक्षा के प्रोफेसर (Professor of Education) थार्नडाइक ने इस दिशा में आगे कार्य करते हुए भूल और सीख (trial and error) का यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया। इसे संयोजनवाद (Theory of connectionism) भी कहा जाता है। इसके अनुसार किसी प्रतिफल के लिए व्यक्ति कई अनुक्रियायें करता है। जो क्रिया उसे उस प्रतिफल को प्राप्त करने में सहायक होती है उसके साथ उसका S-R सम्बन्ध (connection) बन जाता है। वांछित प्रतिफल के कारण उस व्यवहार की पुनरावृत्ति उसके प्रति बढ जाती है। इस सिद्धान्त की पुष्टि के लिए थार्नडाइक ने बिल्लियों पर कई प्रयोग किये। एक भूखी बिल्ली को एक कटहरे में बन्द कर दिया गया तथा उसके बाहर उसकी पकड़ से दूर एक मछली रख दी गई। कटहरे को इस प्रकार बनाया गया था कि उसकी चिटकनी पर पैर पड़ते ही वह खुल जाये। बिल्ली मछली को देख कर उसे पाने के लिए उछलती-कूदती है, इस उछल-कूद में उसका पैर उस चिटकनी पर पड़ जाता है. कटहरा खुल जाता है तथा उसे उसका भोजन मछली मिल जाती है। इस प्रयोग को कई वार दोहराने पर उसके प्रयत्नों की संख्या कम होती गई और अन्त में उसने पहली बार में चिटकनी को खोल कर मछली प्राप्त कर ली।

थार्नडाइक ने इन प्रयोगों के आधार पर 3 प्रमुख नियमों की रचना की :

1. तत्परता का नियम **(Law of readiness)** :- यदि कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए शारीरिक तथा मानसिक रूप से तत्पर है तो वह कार्य उसके लिए संतोषप्रद होगा।

2. प्रभाव का नियम **(Law of effect)** :- यदि किसी स्थिति और अनुक्रिया के बीच संयोग से कोई ऐसा संयोग बनता है जो व्यक्ति को संतुष्टि देता है तो यह उस संयोग को दृढ़ करेगा। व्यक्ति संतोष देने वाले कार्य को बार-बार करेगा। यदि संयोग खिजाने वाली स्थिति पैदा करता है तो उसकी शक्ति घट जायेगी।

3. अभ्यास का नियम **(Law of exercise)** :- इस नियम के दो उप-भाग है -

(i) प्रयोग का नियम (Law of use) - जब कोई परिवर्तनीय संयोग एक स्थिति और अनुक्रिया के बीच बनता है, समान स्थिति में उस संयोग की शक्ति बढती है।

(ii) जब कुछ समय तक परिवर्तनीय संयोग नहीं बनता तो उसकी शक्ति घट जाती है। इसका आशय यह हुआ जब कोई कार्य बार-बार किया जाता है तो वह संयोग दृढ हो जाता है परन्तु जिसका अभ्यास नहीं किया जाता वह धीरे-धीरे विस्मृत हो जाता है।

इन नियमों का कक्षा शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान है। प्रभावी शिक्षण के लिए (अ) शिक्षक को छात्रों को तत्पर करना चाहिए। आरम्भिक विषय का परिचय विषयवस्तु की प्रष्ट भूमि का प्रभावी रूप से प्रस्तुत करके बालकों को विषय को सीखने के लिए प्रेरित करेगा। (ब) शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए छात्रों को विषय से सम्बन्धित रूचिकर उदाहरण दें, शाब्दिक अच्छे उत्तरों पर शाबाश इत्यादि पुरस्कार दें। शिक्षण उनके मानसिक स्तर के अनुरूप करें, व्यक्तिगत भिन्नता पर ध्यान दें तथा शिक्षण में नवीनता एवं रोचकता लायें। (स) दिये गये ज्ञान को दृढ करने के लिए शिक्षक को उसका विभिन्न स्थितियों में अभ्यास कराना चाहिए। उसे पूर्व ज्ञान के साथ जोड़ना चाहिए तथा उसका आगे उपयोग आने वाली परिस्थिति की ओर इंगित करना चाहिए। अभ्यास के लिए गह कार्य सीखे हुए ज्ञान की पुष्टि में काफी सहायक हो सकते हैं।

इस प्रकार थार्नडाइक के अधिगम के नियम के प्रयोग से शिक्षण काफी उद्देश्यपूर्ण. अभिप्रेरित और लक्ष्य उन्मुख हो सकता है।

(स) स्किनर का सक्रिय अनुबंधन अनुकूलन का सिद्धान्त :-

(**Theory of Operant condition**)

व्यवहारवाद का नाम वाटसन के नाम से जुड़ा है। वाटसन मनोविज्ञान को भौतिक विज्ञानों के समकक्ष करने में रुचि रखते थे इसलिए वह व्यवहार के केवल उन पक्षों के अध्ययन पर बल देते थे जिनका अवलोकन किया जा सके, मापन किया जा सके तथा मूल्यांकन किया जा सके। अधिगम के अन्तर्गत जो गतिविधियाँ मस्तिष्क में हो रही है उनका उसने अधिगम के अध्ययन में कोई स्थान नहीं दिया इसलिए उसका सिद्धान्त S और R के बीच केवल उन घटकों का अध्ययन है जिनका अवलोकन, मापन तथा मूत्यांकन किया जा सके।

स्किनर पूर्णत: व्यवहारवादी है इसलिए इनके सिद्धान्त में केवल S और R का सम्बन्ध है बीच में कोई O नहीं है। इसी प्रकार यद्यपि इनके सिद्धान्त को अनुकूलन सिद्धान्तों के साथ रखा जाता परन्तु यह पावलाव के अनुकूलन सिद्धान्त से काफी भिन्न है। सबसे बड़ी भिन्नता यह है कि पावलाव का सिद्धान्त S-R पर स्किनर सिद्धान्त R-S के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। पावलाव के सिद्धान्त में व्यक्ति निष्क्रिय है। इस पर क्रिया किये जाने पर ही वह प्रतिक्रिया करता है। यह सक्रिय नहीं निष्क्रिय है। उसको उससे अनुक्रिया (response) प्राप्त करने के लिए किसी उद्दीपक का होना आवश्यक है। स्किनर इस 'बिना उद्दीपक के कोई अनुक्रिया नही की धारणा (no stimulus-no response) के प्रति विद्रोह करता है उसके अनुसार व्यवहारिक जीवन में हम सदैव वातावरण से कोई

उद्दीपक आने का इंतजार नहीं कर सकते। व्यक्ति अक्सर वातावरण को अपने पहल से चलाता है। बहु त बार हमारी अनुक्रियाओं का कोई प्रत्यक्ष उद्दीपक नहीं होता अर्थात वह स्वयं वातावरण को परिचालित करता है, जो बदले में उसकी क्रिया के प्रति अनुक्रिया करता है। यदि इस अनुक्रिया को किसी प्रतिफल से पुनर्बलित (reinforce) किया जाता है तो उस किया की भविष्य में आवृत्ति (frequency) बढ जाती है।

उदाहरण के लिए यदि किसी छात्र को खेल के मैदान में कोई कीमती घड़ी मिलती है और वह उसे शिक्षक के पास लाकर देता है 'क्यों, कैसे इससे मतलब नहीं और शिक्षक उसको कक्षा के सामने शाबाशी देकर कहता है. "देखो यह कितना ईमानदार लडका है।" शिक्षक की इस अनुक्रिया से उस बालक में ईमानदार होने की प्रेरणा मिल सकती है क्योंकि उसकी ईमानदारी की क्रिया को पुनर्वलित किया गया। इस प्रकार की घटनाओं से बालकों में वांछित आदतों का विकास किया जा सकता है। यदि बालकों के अच्छे व्यवहार को पुनर्वलित किया जाता है तो वह अच्छे गुणों को आत्मसात करेंगे। जैसे गुणों को पुनर्बलित किया जायेगा वैसे गुण विकसित होंगे। यहाँ सकारात्मक तथा नकारात्मक पुनर्वलन में अन्तर करना आवश्यक है: सकारात्मक पुनर्वलन वह उद्दीपक है जिसकी उपस्थिति किसी व्यवहार के भविष्य में होने की सम्भावना बड़ा देती है। जैसे प्रशंसा, कक्षा में अच्छा रैंक इत्यादि।

नकारात्मक पुनर्वलन वह उद्दीपक है जिसके हटा लेने से किसी अनुक्रिया की भविष्य में होने की सम्भावना बढ जाती है। जैसे यदि कोई गलत व्यवहार करता है, तो शिक्षक का यह आश्वासन कि यदि वह उस गलत व्यवहार को स्वीकार करता है तथा उसे भविष्य में नहीं दोहराता है तो उसे शारीरिक दण्ड नहीं दिया जायेगा तो उसमें किसी गलत व्यवहार पर आत्ममंथन की आदत पड़ सकती है।

इस सिद्धान्त पर अभिकमित अधिगम (programmed learning) की नींव पड़ी। स्किनर इस विधि के जनक कहलाते हैं। इसमें ज्ञात अधिगम से वांछित अधिगम के बीच की कड़ी को इतने छोटे-छोटे सरल से जटिल पदों में विभक्त कर दिया जाता है जिसमें एक पद के सीखने के बाद दूसरे पद पर बढना लगभग निश्चित हो जाता है। इस प्रकार क्रमवार बढते हु ए विषयी वांछित अधिगम तक पहुँच जाता है। प्रत्येक पद पर सही उत्तर 'सफलता' विषयी के अगले प्रयत्न के लिए पुनर्वलित करती है।

शिक्षण की दृष्टि से, इस सिद्धान्त के अनुसार प्रभावी अधिगम के लिए (अ) अधिगम सामग्री को इस प्रकार नियोजित किया जाय है कि असफलता की अपेक्षा सफलता प्राप्त करने की कहीं अधिक सम्भावना हो। (ब) विषयी को सफल अधिगम पर तुरन्त प्रतिपुष्टि मिलना चाहिए (स) विषयी को अपनी गीत से सीखने देना चाहिए।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

01. पावलाव और थार्नडाइक के सिद्धांतों मे क्या समानता है?
02. थार्नडाइक और स्किनर के सिद्धांतों मे क्या भिन्नता है?
03. पाठ योजना (Lesson Planning) के निर्माण में थार्नडाइक के नियम कहाँ-कहाँ लागू होते हैं?

3.2.3.2 अन्य प्रमुख सिद्धान्त : -

स्किनर की तरह अन्य कई मनोवैज्ञानिकों ने व्यवहारवादी सिद्धान्त को अपनी ही तरह कुछ उसमें परिवर्तन प्रस्तुत किया। व्यवहारिक दृष्टि से सभी सिद्धान्तों को यह प्रस्तुत करना न ही आवश्यक है न ही वांछित, इसलिए यहाँ केवल उन्हीं लोगों के सिद्धान्तों का प्रस्तुतीकरण होगा जिनका शिक्षण अधिगम में योगदान है जैसे -

(अ) गुथरी (Guthrie) का संस्पर्शी अनुकूलन (Contiguous conditioning) का सिबान्त: गुथरी यद्यपि व्यवहारवादी विचारधारा से प्रभावित थे परन्तु उन्होंने अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में काफी अलग रास्ता अपनाया। थार्टन (Thorton) के साथ बहुत सी बिल्लियों के लगभग 800 थार्नडाइक के तरीके वाले कटहरे से भागने के तरीकों का अध्ययन करके यह देखा कि हर बिल्ली का कटहरे से भागने का अपना तरीका था जिसको उसने सदैव अपनाया जब भी उसे उस कटहरे में बन्द किया गया।

अक्सर बिल्लियों ने कटहरे से छुटकारा पाने पर प्रस्तुत खाने पर ध्यान नहीं दिया परन्तु भोजन में रूचि न लेने पर भी जब उसे कटहरे में फिर रखा गया उसने भागने का पुराना तरीका ही अपनाया तथा उसी तेजी तथा विधि से वह कटहरे के बाहर भागी।

इस प्रकार के अध्ययन से उसने अधिगम का जो सिद्धान्त बनाया उसके मुख्य बिन्दु यह थे-

1. जिन उद्दीपकों के संयोजन (combination) से कोई क्रिया हुई थी, उस संयोजन के फिर से दोहराने पर वही क्रिया होगी।"जो भी देखा जा रहा है वह इस बात का संकेत होता है कि क्या किया जा रहा है"(Guthrie 1952,1959)
2. अधिकतर व्यवहारवादी मानते हैं कि अधिगम की शक्ति उसके बार-बार की आवृत्ति के अनुरूप होती है परन्तु गुथरी के अनुसार, उद्दीपक पैटर्न अनुक्रिया के अपने पहले संयोजन में ही अपनी पूरी संयोजन शक्ति प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार वह अन्य व्यवहारिकवादियों की आवृत्ति सिद्धान्त से पूर्णत: असहमति व्यक्त करता है।
3. पहली वाली अनुक्रिया की पुनरावृत्ति के लिए पुरस्कार या पुनर्वलन आवश्यक शर्त नही है। उसके लिए संस्पर्शता (contiguity) और अभिनवता के नियम (recency) अधिगम व्यवहार की व्याख्या के लिए पर्याप्त है। पुरस्कार या पुनर्वलन एक यांत्रिक व्यवस्था है जो पहली अधिगम को तीव्रता प्रदान नहीं करता, वह केवल उद्दीपक - स्थितियों में परिवर्तन के कारण अधिगम को नष्ट होने, भूल जाने की सम्भावना से बचाना है।
4. भूलना, उद्दीपक अनुक्रिया संयोजन का समय बीतने के साथ निष्क्रिय क्षीण होना नही है। वह उस मध्य में अन्य घटनाओं के सक्रिय बाधा डालने के कारण होता है।
5. गुथरी दण्ड की भूमिका को स्वीकार करता है परन्तु इस बात पर बल देता है कि दण्ड तभी प्रभावशाली होगा जब वह दण्ड वाली उद्दीपक से नई अनुक्रिया ला सके। दण्ड भिन्न प्रकार की अनुक्रिया करने पर बाध्य करता है और इस प्रकार निरोधक अनुकूलन (inhibitory conditioning) का कार्य करता है।
6. वह प्रेरणा (motivation) और उत्प्रेरक (drive) अधिगम में महत्वपूर्ण स्थान देता है क्योंकि यह व्यक्ति को लक्ष्य तक पहुँचने तक सक्रिय रखते हैं।

शैक्षिक निहितार्थ (**Educational Implications**) :-

1. अधिगम एक ही संयोजन में पूरा हो जाता है इसीलए हमें बडी सतर्कता से छात्रों से वांछित अनुक्रिया को प्राप्त करने के लिए उद्दीपन स्थितियों शिक्षण नीतियों का संगठन करना चाहिए।

2. यदि छात्र को उन्हीं परिस्थितियों में परीक्षा ली जाये जिसमें उसे पढाया गया है तो उसके सफल होने की अधिक सम्भावना है जिससे सीखने के समय के संयोजनों का वह महत्तम उपयोग कर सके। परन्तु उद्दीपन स्थितियों का सदैव सर्वसम होना बहुत कठिन है, इसलिए दिये गये ज्ञान का विभिन्न स्थितियों में अभ्यास कराया जाये। यदि किसी वांछित अधिगम को लाने के लिए जितनी अधिक उद्दीपकों, प्रेरणाओं तथा उत्प्रेरकों का सहारा मिल सके उतना ही अधिगम स्थायी होगा तथा उसमें कम बाधा आयेगी।

(ब) हल **(Clark L. Hull)** का व्यवस्थित व्यवहार सिद्धान्त **(Hull's systematic Behavioural Theory)** - इसके कुछ प्रमुख बिन्दु इस प्रकार है :-

1. हल ने गुथरी के संस्पर्शी सिद्धान्त तथा थार्नडाइक के यांत्रिक प्रकार की मस्तिष्क क्रियाओं को नकारते हुए अपने सिद्धान्त में S-R के बीच मध्यस्थ चरों की अवधारणा प्रस्तुत की। ये वह प्रक्रियाएँ है जो कि सक्रिय रूप से मस्तिष्क में चलती रहती हैं परन्तु सीधे तौर पर उनका अवलोकन नहीं हो पाता।

2. हल के अनुसार गुथरी से भिन्न, अधिगम एक ही बार में पूरा नहीं हो जाता।

यह बार-बार के पुनर्वलन की प्रक्रिया जैसे भोजन प्राप्त करने या दर्द से छुटकारा पाने के द्वारा सिद्ध (stamped) किया जाता है। स्कीनर की तरह यह पुनर्वलन कुछ भी, जो किसी अनुक्रिया के होनेकी आवृत्ति की सम्भावना को बढा दे नहीं है"। हल के अनुसार, पुनर्वलन व्यक्ति की किसी आवश्यकता उत्प्रेरक (drive) या उत्प्रेरक-उद्दीपकों (drive-stimulus) को उत्पन्न होने बाले तनाओं को घटाती है। यदि कोई अनुक्रिया या प्रतिक्रिया प्यास से उत्पन्न तनाव को मिटाती है तो वह भविष्य में S-R (प्यास-पानी पीना) के संयोजन की पुनरावृत्ति करेगी।

उत्प्रेरक, उद्दीपक वह उद्दीपक है जो विशिष्ठ रूप से किसी उत्प्रेरक के साथ आते हैं जैसे प्यास उत्प्रेरक के साथ गले, होठों तथा मुंह में शुष्कता का होना।

पहले आवश्यकता, फिर उत्प्रेरक और अन्त में हल ने उत्प्रेरक-उद्दीपकों पर बल दिया, क्योंकि आवश्यकता या उत्प्रेरक की अपेक्षा उत्प्रेरक-उद्दीपक को कम करना एक आसान काम है। यह एक तीव्र प्रक्रिया है। आवश्यकता तथा उत्प्रेरक को कम करने में काफी समय लगता है। प्यास-उत्प्रेरक को लीजिए, पानी दिया जायेगा, गले से होता हुआ पेट में जायेगा, तब खून में तब उसका अन्तर्ग्रहण (ingestion) दिमाग में पहुँचकर प्यास-उत्प्रेरक को कम करेगा इसलिए व्यक्ति के पुनर्वलन को उत्प्रेरक-उद्दीपकों के माध्यम से अधिक अच्छा समझा जा सकता है।

पुनर्वलन की पुनरावृत्ति (repetition) S-R के बीच बने संयोजन को उतरोत्तर दृढ करती है, अन्त में वह आदत बन जाती है। इस प्रकार हल अधिगम को आदत-निर्माण के रूप में देखता है।

शैक्षिक निहितार्थ (**Educational Implications**) :-

1. हल के सिद्धान्त का सबसे बड़ा योगदान, अधिगम को छात्रों की आवश्यकताओं से जोड़ना है। उसके अनुसार आवश्यकता, उत्प्रेरणा या उत्प्रेरक-उद्दीपक से व्यक्ति क्रियाशील होता है, व्यवहार करता या सीखता है। आवश्यकतायें अधिगम प्रक्रिया को आरम्भ करती है

तथा पुनर्वलन उसको दृढ़ करता है इसलिए किसी भी शिक्षण प्रक्रिया में पर्याप्त मात्रा में उपयुक्त प्रेरणा तथा पुनर्वलन वाले प्रोत्साहन होने चाहिए।

2. पुनर्वलन में केवल पुरस्कार या संतुष्टि ही नहीं दर्द या दण्ड से छुटकारा भी शामिल है। इसी प्रकार पुनर्वलन में उसने पुनर्वलन की तीव्रता की अपेक्षा उसकी आवृत्ति पर बल दिया।

3. उसने शिक्षण योजना बनाने में छात्रों की आयु का ध्यान रखते हुए व्यक्तिगत भिन्नताओं पर ध्यान देने पर जोर दिया।

4. हल ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में नीचे लिखी श्रंखला क्रम की वकालत की -

अ उत्प्रेरक (drive) - जो छात्र को अनुक्रिया कराने के लिए आवश्यक है।

ब संकेत (clue) - जिसके प्रति उसे छात्र को निश्चित सपने अनुक्रिया करना है।

स किसी क्रिया को करने या सीखने के लिए निर्धारित अनुक्रिया।

द पुरस्कार - छात्र की वांछित अनुक्रिया को पुरस्कृत या पुनर्बलित करना चाहिए जिससे वह, वह सीखे जो वह चाहता है।

(स) गाने का अधिगम सिद्धान्त **(Gagne's Theory of Learning)** -

गाने एक (विभिन्न दर्शनग्राही) उदारवादी व्यवहारवादी है। इनके अनुसार अधिगम मानव मनोवृत्ति (disposition) या क्षमता (capacity) में उस परिवर्तन को दर्शाता है जो केवल अभिवृद्धि प्रक्रिया (maturation) के कारण नहीं होता तथा जिसे सुरक्षित रखा जा सकता है।

सभी प्रकार के अधिगमों को इन दिशाओं या संघटकों के (components) पाँच वर्गों में बांटा जा सकता है।

1. शाब्दिक सूचनाएँ **(Verbal Information)** - जो शब्दों के माध्यम से अपने लिए या दूसरों को संचारित की जाती है।
2. बौद्धिक कुशलतायें **(Intellectual skills)** - जैसे विभेदीकरण (discrimination), अवधारणा निर्माण (Concept formation), नियम-अधिगम (Rule learning) अर्थात सामान्यीकरण।
3. संज्ञानात्मक नीतियाँ **(Cognitive strategies)** - जो अधिगमक (Learner) को उसे अपने व्यक्तिगत या सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करने (जैसे ध्यान देने में, सीखने में, याद रखने में और समस्या समाधान) में सहायक होती है।
4. मनोचालक कुशलतायेँ **(Psycho-motor skills)**
5. अभिवृत्तियाँ **(Attitude)** - जो उसे भावात्मक क्षेत्र में परिवर्तन लाने में सहायक होती है जैसे वस्तुओं व्यक्तियों या घटनाओं के प्रति मनोवृत्ति। गाने के सिद्धान्त के अन्य बिन्दु इस प्रकार है -

अ. गाने के अनुसार सभी अधिगम एक स्तर के नहीं होते। उसने उन्हें आठ वर्गो में बांटा जो एक अनुक्रम में व्यवस्थित थे। ये अनुक्रम इस प्रकार हैं - (i) सिगनल अधिगम (Signal Learning)- जैसे लाल बत्ती देखकर वाहन को रोक देना (ii) S-R यांत्रिक प्रकार का अधिगम (iii) श्रंखला बनाना (Chaining) - जिसमें दो या उससे अधिक S-R अधिगम

की chain बनती है (iv) शाब्दिक संयोजन (Verbal association) - अधिगमक शाब्दिक संयोजन बनाकर S-R प्रकार की श्रंखलाबद्ध अनुक्रियायें (शब्द) बोलता है (v) बहु ल विभेदीकरण (Multiple-discrimination) - काफी समान दिखने वाले उद्दीपकों के प्रति विभिन्न अनुक्रियायें करना सीखता है। (vi) अवधारणा अधिगम (Concept learning) - उद्दीपकों के समूह के लिए एक उभयनिष्ठ (common) अनुक्रिया करना सीखता है (vii) नियम अधिगम (rule learning) - दो या उससे अधिक अवधारणाओं का संयोजन करके नियम बनाना सीखता है जैसे प्यासा होने पर पानी की आवश्यकता होती है (viii) समस्या समाधान (problem solving) - इस उच्च स्तरीय अधिगम में मानसिक या संज्ञानात्मक क्रियायें शामिल होती हैं।

इस प्रकार के अनुक्रम में एक प्रकार का अधिगम पहले वाले अधिगम का पूर्वापेक्षित है। बिना पहले वाले अधिगमों में प्रवीण (master) हु ए बिना वस्तुतः अधिगम नहीं हो सकता। इस प्रकार गाने (Gagne) ने शिक्षण के उपयुक्त संगठन तथा अनुक्रम (sequencing) के लिए एक यथार्थ आधार प्रस्तुत किया।

ब. प्रत्येक प्रकार पर स्तर के अधिगम के लिए विभिन्न प्रकार की आंतरिक एवं बाहय स्थितियां या घटनाएं पहले से होना आवश्यक है। आंतरिक स्थितियों में व्यक्ति के पहले वाले अधिगम (पूर्व ज्ञान) शारीरिक सहनशक्ति (stamina) मानसिक तथा संवेगात्मक स्वभाव (स्थिति)। बाहय स्थितियों में वातावरण के वह घटक आते हैं जो उसके अधिगम को बाहर से प्रभावित कर सकते हैं जैसे शिक्षण-अधिगम नीति (strategy), चिन्तन कुशलता को बढाने के अवसर, कार्य करने की नवीन विधियाँ तथा समस्या समाधान के अवसर।

शैक्षिक निहितार्थ **(Educational implication)** :-

शिक्षण योजना निम्नलिखित चरणों में भली-भांति व्यवस्थित की जानी चाहिए। जैसे “n-भुजाओं वाली बन्द आकृति में सम-कोणों (rt-angles) की गणना में यह चरण इस प्रकार हो सकते हैं -

1. छात्रों का विषयवस्तु पर ध्यान आकर्षित करना - n भुजाओं वाली बन्द आकृति में कितने सम कोण होंगे? उत्तर न जानने के कारण छात्रों में इस प्रश्न का उत्तर जानने की उत्प्रेरणा (motivation) होगी।
2. उद्देश्य की घोषणा - आज हम यह पता लगायेंगे कि n भुजाओं वाली बन्द आकृति में कितने सम कोण होंगे?
3. पूर्व ज्ञान को याद दिलाना **(recall of prior learning)** - एक त्रिकोण में कितने समकोण होते हैं? ...2 सम कोण
4. उद्दीपक का प्रस्तुतीकरण (presenting stimulus) - 5 भुजाओं वाली बन्द आकृति में कितनी भुजाएँ हैं? - (5) इसमें कितने कोण हैं? - (5). यह ज्ञात करना है कि इनका योग कितने सम कोण होगा।
5. अधिगम का निर्देशन **(Guiding learning)** - इसमें कितनी त्रिभुज बन सकते हैं।

आइये देखें, -----3 त्रिभुज

अर्थात 5 से 2 कम । ------ हॉ

एक त्रिकोण में कितने सम कोण होते हैं ? ------- 2

इसलिए 5 भुजाओं बाली आकृति में कितने सम कोण होंगे?

2 (5-2) समकोण =10 - 4 सम कोण = 6 सम कोण

6. छात्रों से काम कराना (Elicit performance) :- उन्हें 4, 6, 7 इत्यादि भुजाओं वाली आकृत्तियों में सम कोण ज्ञात करवायें।

7. प्रतिपुष्टि (provide feedback) - उनके उत्तरों की समीक्षा करना।

8. उनकी उपलब्धि का आकलन करना (Assess performance) - उपलब्धि पर अंक देना तथा उनकी गलतियों को सुधारने में सहायता देना।

9. सामान्यीकरण द्वारा उनके प्राप्त अधिगम को स्मरण रखने तथा उसका स्थानान्तरण (transfer) में सहायता करना -

n- भुजाओं वाली आकृति में (2n-4) rt.Angles होंगे। इसका सामान्यीकरण तथा गृह कार्य द्वारा अभ्यास (स्मरण के लिए)।

उपरोक्त प्रस्तुतीकरण से गाने (Gagne) के गतिशील उपागम (dynamic approach) का आभास मिलता है। इस दिशा में उसका सिद्धान्त अधिगम के सभी पक्षों का समावेश करता है।

(द) आसुबेल, डेविड का अधिगम सिद्धान्त (**Ausubel's Theory of Learning**) :

यह एक शैक्षिक मनोवैज्ञानिक है तथा उन्होंने अधिगम पर एक उपयोगी परिपेक्ष प्रस्तुत किया है। जोसेफ नावक (Joseph Novak) के शोधों से अतिरिक्त समर्थन प्राप्त करते हुए आसुबेल ने अधिगमको (Learners) को उपयुक्त संज्ञानात्मक संरचना बनाने के लिए एक शिक्षण प्रक्रिया प्रस्तुत की है। संज्ञानात्मक विकास, विशिष्ठ अवधारणाओं (concepts) के ढांचे (frame work) और व्यक्ति द्वारा पूर्व में प्राप्त की अवधारणाओं के समाकलन (integration) पर निर्भर करता है।

प्रत्येक व्यक्ति अपने ज्ञान का अपनी तरह से संगठन करता है। इस ज्ञान की संरचना विशिष्ठ अवधारणाओं के ढांचे के रूप में होती है। आसुबेल शाब्दिक अधिगम का पक्षधर है और उसका विश्वास है कि 11-12 आयु के बाद छात्रों के लिए यह सबसे प्रभावी अधिगम विधि है पर वह यह भी मानता है कि इस आयु के पहले छोटे बालकों को प्रत्यक्ष अनुभव देना अधिक उपयुक्त है क्योंकि उनके पास वस्तुओं को तोड़ने-मोड़ने (manipulate) करने के लिए काफी समय होता है। परन्तु आखिरकार (eventually) छात्र अपने मानसिक संरचना में ही नवीन ज्ञान को पूर्व ज्ञान के साथ सम्बन्धित करना सीखते हैं इसलिए गाने की तरह आसुबेल भी कहता है कि अधिगमक पहले से क्या जानता है, यह उसके अधिगम को प्रभावित करने का सबसे बड़ा अकेला कारक है। उसका पता लगाइये और उसके अनुसार पढाइये।

अधिकांश वर्तमान मनोवैज्ञानिक, शाब्दिक अधिगम (जो शिक्षकों के द्वारा अपने भाषण (प्रवचन) में दिया जाता है) का छात्रों में अधिगम को सुनिश्चित करने के लिए अनुपयुक्त या अप्रभावशाली मानते हैं, परन्तु आसुबेल इस मत से असहमति प्रकट करता है।

आसुबेल के अनुसार अधिगम का मतलब है कि व्यक्ति के संज्ञानात्मक संरचना में वर्तमान में जो पहले से है उसमें नई संरचनाओं को शामिल करना। यह प्रक्रिया इस क्रम में चलती है -

1. शाब्दिक सूचना को पहचानना
2. नवीन सूचना को पुरानी सूचनाओं से सम्बन्धित करना
3. इसके फलस्वरूप अर्थपूर्ण अधिगम अर्जित करना।

   उदाहरण के लिए यदि हम सममुज त्रिभुज (equilateral triangle) की अवधारणा छात्रों को देना चाहते हैं तो हम पहले त्रिभुज की अवधारणा जिसे छात्र पहले से जानते हैं, से आरम्भ करेंगे।

   उसके बाद उनके सामने विभिन्न प्रकार के त्रिभुजों को प्रस्तुत करके उनमें से एक समभुज त्रिभुज निकाल कर उसकी विशेषतायें बताते हैं कि यह ऐसा त्रिभुज है जिसकी सभी भुजायें बराबर हैं। इस प्रकार छात्र अपने त्रिभुज सम्बन्धी पूर्व अधिगम में नई स्थिति का समावेश करके समभुज त्रिभुज की अबधारणा समझता है और इस प्रकार नये-पुराने अधिगमों को समेकित (integrate) करने का कार्य शिक्षक का है (छात्र का नही), जिससे वह छात्रों को अर्थपूर्ण अधिगम की ओर ले जाता है परन्तु इस प्रकार का अधिगम खोज (discovery) नही है जैसा ब्रूनर (Bruner) मानता है।

आसुबेल विधि से प्राप्त अधिगम के कई लाभ हैं, जैसे- इस विधि से कम समय में तथा कम साधनों से अधिक ज्ञान दिया जा सकता है।

इस प्रकार की अर्थपूर्ण शाब्दिक अधिगम की प्रक्रिया की व्याख्या करने के लिए आसुबेल इन मूल अवधारणाओं (key concepts) की सहायता लेता है।

1. सन्निवेशक (**Subsumer**) - यह एक अवधारणात्मक संरचना है जिसमें उच्च स्तरीय अवधारणायें अन्य विचारों को सन्निवेश (subsume) करती है। सन्निवेशक का कार्य नई सामग्री को अर्थपूर्ण रूप से इस अवधारणात्मक ढांचे में समाविष्ट (incorporate) करना है। इन नई सूचनाओं को अपने में सन्निवेश (subsume) करके नई संज्ञानात्मक ढांचे (सन्निवेशक) का निर्माण दो मुख्य तरीकों से किया जाता है -

(अ) व्युत्पत्ति सन्निवेशन (**derivative subsumation**) द्वारा -

   इसमें सन्निवेशन, पहले वाली संरचना से व्युत्पन्न (derive) किया जाता है जैसे मानव की अवधारणा से व्युत्पन्न : स्त्री-पुरूष। ऐसे सन्निवेशन सरल तथा जल्दी सीख लिए जाते हैं।

(ब) सह सम्बन्धी सन्निवेशन (**corelational subsumption**) -

   इसमें पहले की सूचना में परिवर्तन करके नई सूचना प्राप्त की जाती है जैसे यदि नई सूचना चमगादड़ (Bat) की है तो पुरानी सूचना, "स्तनधारी थल-चरीय होते हैं, में चमगादड़ (जो नभ चरीय होते हुए भी स्तनधारी है) को स्तनधारियों के समूह में शामिल करने के लिए पूर्व सूचना में परिवर्तन करना पड़ेगा।

शैक्षिक निहितार्थ (**Educational implications**) :-

1. कक्षा शिक्षण के शाब्दिक अधिगम में नये विचारों को सामान्य (अमूर्त) से विशिष्ठ (मूर्त) विधि के द्वारा अधिक अच्छी तरह प्रस्तुत किया जा सकता है। इसका आशय यह हुआ कि छात्रों के सामने एक अवधारणात्मक ढांचा (structure) रखा जाये जिसके आधार पर नये विचारों को रखा जाये जिनका बाद में विस्तार किया जा सके। इसे अग्रिम व्यवस्थापक (advanced organizer) के रूप से वर्णित किया गया है। यह मुख्य विचारों को प्रस्तुत करता है तथा उनके बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार आसुबेल के शिक्षण को निगमनात्मक शिक्षण (deductive teaching) की संज्ञा दी जा सकती है।

अग्रिम व्यवस्थापक (advanced organizer) दो प्रकार के हो सकते हैं :-

(i) तुलनात्मक **(Comparative)**- यह व्युत्पन्न सन्निवेशन (derived subsumption) पर आधारित है, जिसमें सीधी तुलना का प्रयोग किया जाता है, जैसे यदि मानव की पाचन तंत्र प्रणाली को बताने के पहले मनुष्य और पशुओं की पाचन तंत्र प्रणाली की तुलना की जाये।

(ii) व्याख्यात्मक **(expository)** - इसमें सीधी तुलना की अपेक्षा परोक्ष तुलना पर बल दिया जाता है। यदि पाचन तंत्र तथा श्वसन तंत्र में तुलना करना है तो नये सन्निवेशक को वर्तमान सन्निवेशक की एक प्रशाखा के रूप में प्रस्तुत करना होगा।

(iii) नई सूचनाओं के देने के पहले छात्र के पूर्व संज्ञानालक संरचना का ज्ञान शिक्षक के लिए आवश्यक है।

3.2.3.3 व्यवहारवाद की समीक्षा -

1. व्यवहारवादी सिद्धान्त को अत्यधिक यांत्रिक माना गया है। इसमें व्यक्ति को एक मशीन की तरह माना गया है जो सही नहीं है।

2. यह सिद्धान्त व्यक्ति की आंतरिक दशा पर उपयुक्त ध्यान नहीं देता जैसे- यह मस्तिष्क की गहराई तक नहीं जाता उसकी भी संवेगों, चिन्तन तथा क्रियाओं को प्रत्यक्ष व्यवहार के संदर्भ में ही व्याख्या (explain) करता है। केवल प्रत्यक्ष व्यवहार को ही महत्व दिया जाता है।

3. व्यवहारवादी सिद्धान्त केवल सरल प्रत्यक्ष अधिगम कश्तों के लिए ही अन्तर्दृष्टि देते हैं। सक्रिय पुनर्वलन, मानव व्यवहार में सृजनता, उत्सुकता (curiousity), स्वत: प्रवृत्ति (spontaneity) जैसे तत्वों को अपने सिद्धान्त में पर्याप्त स्थान नहीं देते।

4. इनमें वंशानुक्रम (आनुवंशिक विरासत) (genetic-inheritence) का कोई स्थान नहीं है।

5. इस पर यह भी शंका जताई जाती है कि इनके द्वारा अधिकांश पशुओं पर नियंत्रित किये प्रयोगों से प्राप्त निष्कर्ष क्या जटिल मानव प्रवर्ती पर लागू हो सकते हैं?

इस प्रकार व्यवहारवादी सिद्धान्त मानसिक क्रिया को एक मशीन की तरह मानने से, अधिगम प्रक्रिया को मानव प्रकश्ति से वंचित कर देते हैं ।

फिर भी छात्रों में वांछित आदतों को डालने तथा अभिकमिक अधिगम (programmed learning) में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

04. सारांश में गुथरी के सिद्धान्त के प्रमुख बिन्दु बताइये ।
05. शिक्षण में हल के सिद्धान्त की भूमिका ?
06. गाने के सिद्धान्त के मुख्य बिन्दु ?
07. आसुबेल और गाने के सिद्धान्तों में समानता और भिन्नता?

3.2.4 संज्ञानात्मक सिद्धान्त **(Cognitive Theories)**

इन पर मनोविज्ञान की समग्रवादी विचारधारा (Gestalt School of Psychology) का गहरा असर पड़ा है। इसके प्रवर्तकों में वरदाइमर (Wertheimer), कोफका (Koffka) और कोहलर (Kohler) हैं जिन्होंने अपने परीक्षण से सूझ का सिद्धान्त (insight theory) प्रतिपादित की।

3.2.4.1 जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त **(Cognitive Development Theory of Jean piaget) :-**

जीन पियाजे का जन्म 9 अगस्त 1896 में स्विटजरलैंड में हुआ था। उनकी मृत्यु 16 सितम्बर, 1980 को हुई। सन् 1950 के आसपास इनकी आनुवांशिकी ज्ञानमीमांसा को संयुक्त राज्य अमेरिका में शिक्षा व मनोविज्ञान के क्षेत्र में काफी महत्व दिया जाने लगा।

जीन पियाजे और उनके साथियों ने संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development) के मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में पांच दशकों तक कार्य किया है। संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का अर्थ है कि एक व्यक्ति किस प्रकार आयु के साथ-साथ चिन्तन करना और सीखने की योग्यता प्राप्त करता है। संज्ञानात्मक विकास का ज्ञान सामान्यत: किशोर अवस्था तक संबंघित है। बालक जन्म से कैसे सीखता है, अधिगम कैसे कृत्य (Learning tasks) बनाने में अन्तर्दृष्टि देता है? पियाजे ने इस प्रविधि का वर्णन किया है जिससे विद्यार्थी के मस्तिष्क में मानसिक संरचनाओं के बनने से ज्ञान संग्रहित करने तक की प्रक्रिया का वर्णन किया है।

प्रो0 जीन पियाजे ने मानव विकास के अध्ययन में जीव विज्ञान सिद्धान्तों का उपयोग किया है और उन्होंने मनोविज्ञान में विभिन्न जीव विज्ञान की शब्दावली का प्रयोग किया है। उनके सिद्धान्त को अवस्था सिद्धान्त (Stage Theory) कहा गया है। पियाजे ने बालकों और किशोरों के संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development) को चार अवस्थाओं में विभाजित किया है, संवेदी बुद्धि विकास अवस्था, पूर्व संकार्य अवस्था, मूर्त संकार्य अवस्था तथा औपचारिक संकार्य अवस्था। उनका विश्वास था कि प्रत्येक बालक को इन अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है और कोई बालक इन अवस्थाओं को छोड़ नहीं सकता। यद्यपि बालक भिन्न-भिन्न गति से इन अवस्थाओं को पूरा करते हैं।

संज्ञानात्मक विकास अवस्थाएँ (Stages of Cognitive Development): -

- संवेदी बुद्धि विकास अवस्था (Sensory motor stage)
- पूर्व संकार्य अवस्था (Pre-operational stage)
- मूर्त संकार्य अवस्था (Concrete operational stage)

-	औपचारिक संकार्य अवस्था (Formal operational stage)

पियाजे के संज्ञानात्मक विकास का संप्रत्यय

(Concept of Piaget's Cognitive Development Theory) :

योजनाएँ (Schemes) :

प्रो0 पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त ने यह स्पष्ट किया है कि बालक और किशोर अपने चिन्तन और व्यवहार को किस प्रकार व्यवस्थित करते हैं और जब वे बड़े होते है तो उनके चिन्तन और व्यवहार में किस प्रकार का परिवर्तन होता है। पदार्थो के सम्पर्क के समय, बालक जो व्यवहार का पैटर्न प्रयोग में लाता है उसे योजना (Scheme) कहते हैं। योजना सरल एवं जटिल दोनों प्रकार की होती है। योजना कम्प्यूटर की भांति है जो कार्यकर्ता द्वारा संसार से व्यवहार के लिए निर्मित करते है। कम्प्यूटर कार्यक्रम की भांति, प्रत्येक योजना समस्त पदार्थ एवं घटनाओं को समान रूप से संसाधित (processing) करते हैं।

आत्मीकरण (**Assimilation**) -

जब योजना को नवीन पदार्थ पर प्रयोग में लाया जाता है तब आत्मीकरण घटित होता है। आत्मीकरण मूलतः वह प्रविधि है जिसमें नवीन पदार्थ अथवा घटना, वर्तमान योजना में संयोगी (समाविष्ट) होती है। यह उसी प्रकार है जैसे कम्प्यूटर में नवीन आंकड़े डाले जाते हैं। आत्मीकरण के पदार्थ और घटना वर्तमान योजना के अनुरूप अथवा उपयुक्त होनी चाहिए इसलिए आत्मीकरण मात्र, नवीन सूचना लेना ही नहीं है इसमें निवेष का छानना (Filter) होना तथा रूपान्तरण भी होता है, जिससे निवेष अनुरूप हो जाये।

अनुकूलन (**Accommodation**) -

कभी-कभी वर्तमान योजना कार्य नहीं करती। प्रो0 पियाजे ने अनुकूलन/स्थायीकरण संप्रत्यय का प्रयोग, वर्तमान योजना के परिवर्तन का वर्णन करने के लिए किया है जो नवीन पदार्थ के अनुरूप होता है।

संतुलीकरण (Equilibration) -

पियाजे का मत है कि जब बालक अपने वातावरण को अच्छी तरह जान लेते हैं तो प्रभावी अनुकूलन होता है। पियाजे ने इस, अनुकूलन प्रक्रिया को संतुलीकरण कहा है। जब कोई व्यक्ति अनुभव का आत्मीकरण करता है और इस प्रक्रिया में ज्ञान की संरचना का समायोजन अथवा स्थानीयकरण करता है उसे संतुलीकरण कहते हैं। आत्मीकरण मात्र वातावरण पर ही निर्भर नहीं है किंतु इसमें उस व्यक्ति के पूर्व स्थित संज्ञानत्मक संरचना पर भी निर्भर होते हैं।

नीचे चित्र में विकास प्रक्रिया के विभिन्न भाग दिखाये गये हैं जिसमें छात्र द्वारा वातावरण से इश्न का आत्मीकरण किया गया है। यह पूर्व स्थिति संज्ञानत्मक संरचना से अन्तःक्रिया करती है और इसके परिणाम से यह संरचना परिवर्तित होती है अर्थात स्थानीयकरण हो गया है जिसके परिणामस्वरूप विकसित संज्ञानात्मक संरचना को बनना है । छात्र का आत्मीकरण करना मात्र वातावरण पर निर्भर नहीं करता अपितु छात्र के वर्तमान संज्ञानात्मक संरचना पर भी निर्भर करता है । यदि इनमें अनुभव एवं वर्तमान संज्ञानात्मक संरचना में असंगत अत्याधिक है तो आत्मीकरण नहीं होगा । इस प्रकार का अधिगम जिसमें छात्र और वातावरण किया करते हैं संतुलीकरण (Equilibration) अथवा अनुकूलन (Adaptation) होता है उसमें छात्र सक्रिय रहकर स्वयं के ज्ञान का निर्माता है ।

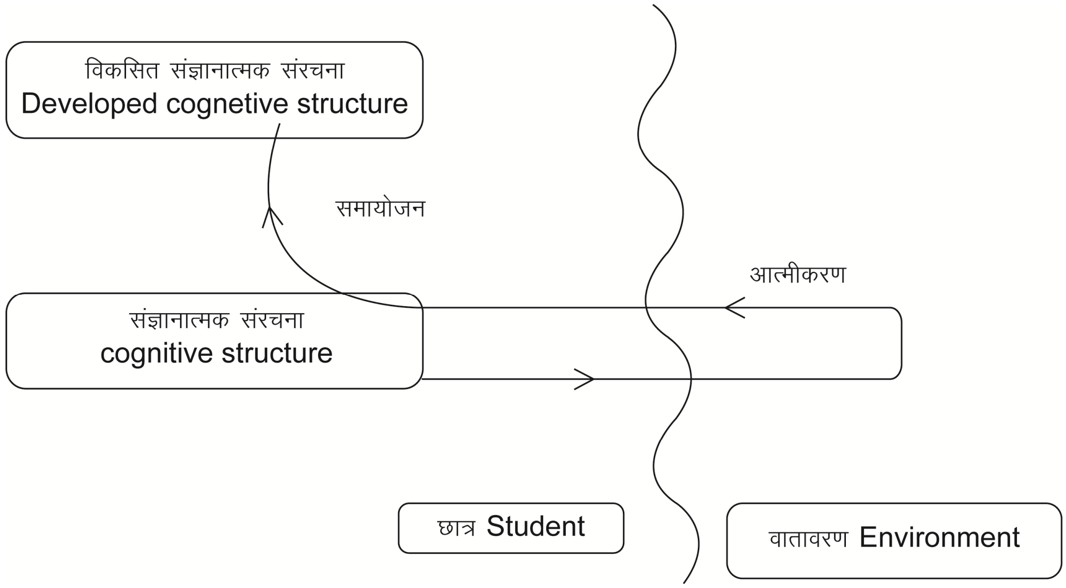

चित्र. 3.1 संज्ञानालक संरचना

संदर्भ - रोसोलिड ड्राइवरसम (1988) पृ० 52

3.2.4.2 पियाजे द्‌वारा प्रस्तुत संज्ञानात्मक विकास अवस्थाओं की विशिष्टताओं का संक्षिप्त वर्णन-

(1) स्‌वेदात्मक बुद्धि विकास अवस्था (Sensory motor stage) जन्म से दो वर्ष यह विभेद एवं नामांकन करने की अवस्था है -

1. मुख्यत: बाह्य उद्दीपन से निर्देशित है ।
2. बालक में भाषा ज्ञान नहीं होता है ।
3. क्रिया के बाद चिन्तन होता है ।
4. प्रत्यक्ष ज्ञान एवं गामक क्रियाओं से प्रभावित है ।
5. इस अवस्था के अंत तक माता-पिता, जानवरों आदि में विभेद कर सकता है और नाम जानता है।
6. इस अवस्था में दिशा का स्व-विकसित ज्ञान होता है।
7. समय-वर्तमान
8. जगह-आसपास
9. रूचिकर अनुभवों को बढाने का प्रयास करता है।

(ii) पूर्व संकाय अवस्था (Pre-operational stage) 2 से 7 वर्ष, यह अन्तर्ज्ञान अवस्था है बालक उद्दीपन सीमित है।

1. संकाय नहीं कर सकता किन्तु भाषा विकसित होती है।
2. इस अवस्था को पूर्व संकाय अवस्था इसलिए कहा गया है कि बालक मानसिक प्रक्रिया नहीं कर सकता।
3. अमूर्त चिन्तन नहीं कर सकता।
4. स्वकेन्द्रित है।

5. विपरीत दिशा में चिन्तन नहीं होता।

6. सामान्यत: बोधात्मक ज्ञान प्रेरणा पर किया करता है।

7. स्थिर चिन्तन होता है।

8. समय - वर्तमान भविष्य एवं भूतकाल में सोच सकता है किन्तु सीमित होता है।

9. जगह- घर, आंगन और पड़ोस ।

(iii) <u>मूर्त संकार्य अवस्था (Concrete operational Stage)</u> 7 से 12 वर्ष में, बालक मूर्त संकार्य करने योग्य होता है -

छात्र विभिन्न संकार्य कर सकता है जैसे संयुक्त करना, पृथक करना, भाग देना, घटाना, पुनरावृत्ति करना विश्लेषण करना, चरों के प्रति सजग, वर्गीकरण करना तथा नापना आदि।

(iv) <u>औपचारिक संकार्य अवस्था (Formal Operational Stage)</u> 12-15 वर्ष अमूर्त अभिव्यक्ति का विकास -

1. हायपोथेटिकल एवं प्रोविजशनल चिन्तन पर कार्य कर सकता है ।
2. संश्लेषण कर सकता है।
3. स्वचिन्तन का मूल्यांकन कर सकता है।
4. कल्पना कर सकता है।
5. अमूर्त चिन्तन कर सकता है।
6. नैतिकता पर प्रश्न कर सकता है।

जीन पियाजे का योगदान (**Contributions of Jean Piaget**)

पियाजे ने जेनेवा में जैनेटिक एवं एफिसटेमोलोजी संस्थान में लगभग पांच दशक तक सहयोगियों के साथ शोध द्वारा यह जानने का प्रयास किया कि मानव में बुद्धि विकास किस प्रकार होती है तथा उस विकास के क्रम का भी अध्ययन किया। पियाजे का मत है कि एक बालक और वयस्क में भौतिक अंतर के साथ-साथ उनके सामाजिक, अन्त:क्रिया, कार्य करने की आदत, जिम्मेदारी तथा स्वनिदेशन आदि में भी अन्तर होता है। बालक और वयस्क के चिन्तन में अन्तर होता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

8. जीन पियाजे द्वारा प्रस्तुत विभिन्न विकास अवस्थाओं का संक्षिप्त वर्णन करें ।

3.2.5 अनुभवात्मक अधिगम सिद्धान्त (experiential learning theory) :-

अनुभवात्मक अधिगम एक अभ्यास क्षेत्र के रूप में अत्यन्त व्यापक है । सन 1987 में अनुभवात्मक अधिगम पर प्रथम अन्तर्राष्टीय सम्मेलन, लंदन में हुआ था जिसमें इसकी व्याख्या व्यापकता से की गई थी जिसमें अर्थ अभ्यास तथा विचार से इसका अध्ययन किया गया था । अधिगम के परिप्रेक्ष्य में अनुभवात्मक अधिगम एक प्रविधि है जिसमें शिक्षार्थी अपने अनुभव पर चिंन्तन करता है और इसमें से नवीन अधिगम अथवा अन्तदृष्टि प्रकट होती है । सामान्यत: अनुभवात्मक अधिगम को अधिगम प्रतिमान के रूप में परिभाषित किया जाता है जो अनुभव से प्रारम्भ होकर अनुभव पर चिन्तन, व्याख्या, विश्लेषण तथा मूल्यांकन की जाती है । यह अवधारणा है कि हम अनुभव से कभी-कभी सीखते हैं किन्तु अनुभव को मापन से, अपने अर्थ में

समझने से यह एक अर्थपूर्ण अधिगम हो जाता है । इस प्रकार की प्रविधि से बोध होता है । अनुभवात्मक अधिगम के सैदान्तिक नियम, छात्रों और शिक्षकों के लिए इस सिद्धान्त को अधिगम विधि स्वीकारा गया है । यह प्रविधि छात्रों को अपने अनुभव पर चिन्तन का अवसर देता है । डेरिड कोल के अनुसार अनुभवात्मक अधिगम सिद्धान्त, अधिगम के संज्ञानात्मक प्रविधियों का वर्णन करते हैं । विशिष्टता- यह सिद्धान्त अधिगम में आलोचनात्मक चिन्तन पर बल देते हैं । यह सत्य है कि अधिगम में अनुभव का महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु अनुभव पर विवेचनात्मक चिन्तन अत्यन्त आवश्यक है । संज्ञानात्मक तथा मानववादी शोध ने अधिगम में अनुभव को अधिक बल दिया है किन्तु अनुभव पर चिन्तन आवश्यक है । डेविड कोल ने इस परिप्रेक्ष्य में अधिगम चक्र (learning cycle) विकसित किया है ।

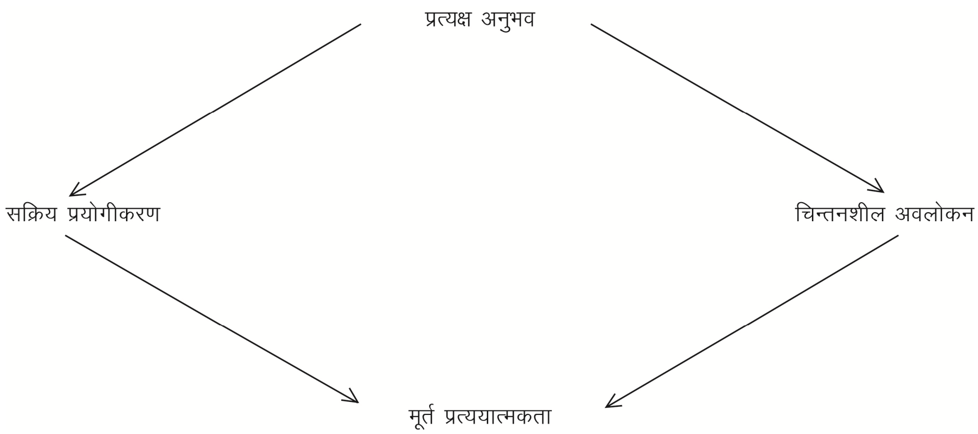

डेविड कोल के अनुसार प्रभावी अधिगम में चार योग्यतायें सम्मिलित हैं, जैसे - प्रत्यक्ष अनुभव की योग्यतायें, चिन्तनशील अवलोकन करने की योग्यतायें, मूर्त प्रत्ययात्मकता की योग्यतायें तथा प्रयोग करना ।

पाठ्यचर्या विकसित करने वाले शिक्षाविदों का मत है कि विषयवस्तु को संगठित आसपास के वातावरण से प्रारम्म करके दूर के वातावरण के संदर्भ में संगठित किया जाये अर्थात विषयवस्तु इस प्रकार संगठित की जाये कि छात्र अमूर्त अनुभवों से पूर्व मूर्त अनुभव प्राप्त करे । यह मनोवेज्ञानिक कारक, अनुभवात्मक अधिगम सिद्धान्त के विषयवस्तु संगठन के लिए उपयोगी है जिसमें विषयवस्तु अनुमव बोध ज्ञान एवं व्यवहार को अपने साथ मिलाती है ।

प्रो. कोल ने अपनी पुस्तक एक्सपेरीएंशियल लर्निंग: एक्सपीरियंस एज ए सोर्स ऑफ लर्निंग एण्ड डेवलपमेन्ट (Experiential learning : experience as a source of learning and development) (1984) - इस प्रविधि का विवेचन किया है । प्रो. कोल अनुभवात्मक अधिगम को समग्र एकीकृत प्रविधि मानते हैं । कोल का कार्य जान डीवी तथा पियाजे के योगदान पर आधारित है इसलिए कोल की अभिधारणा है कि विषयवस्तु का अनुभवात्मक सिद्धान्तों पर संगठन, अधिगम को एक संप्रेषण (Transaction) अनुक्रम में प्रेरित करता है जिसमें मूर्त अनुभव, चिन्तनशील अवबोधन, अमूर्त संप्रत्ययात्मक अवधारणा तथा क्रियात्मक प्रयोग सम्मिलित है। अनुभवात्मक अधिगम से छात्र क्रियात्मकता द्वारा नवीन

संप्रत्यय निर्मित करते हैं। अनुभवात्मक अधिगम सदैव चिन्तन को अधिगम का आधार मानते हैं जिसमें क्रिया द्वारा अधिगम अनुभव मिलते हैं।

> **स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)**
>
> 09. अनुभवात्मक अधिगम का क्या अर्थ है ?

3.2.6 निर्मितवाद **(Constructivism) :-**

निर्मितवाद क्या है? (What is constructivism ?)

निर्मितवाद का आधार दर्शन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा है। निर्मितवाद की पृष्ठभूमि संज्ञानात्मक मनोविज्ञान तथा मस्तिष्क आधारित शोध का अधिगम पर प्रभाव है। यह शोध शिक्षक के विकास और परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण अन्तदृष्टि उपलब्ध कराती है।

निर्मितवाद एक अधिगम सिद्धान्त है। व्यक्ति द्वारा एक सक्रिय, विकास की मानसिक प्रविधि द्वारा, ज्ञान का निर्माण किया जाता है। व्यक्ति अर्थ और ज्ञान का निर्माता तथा सृष्टिकर्ता है। निर्मितवाद का केन्द्रीय भाव यह है कि मानव अधिगम का निर्माण होता है तथा व्यक्ति पूर्व ज्ञान के आधार पर अनुभव द्वारा, नवीन ज्ञान का निर्माण करते हैं। इसकी दो प्रमुख धारणायें हैं, प्रथम- व्यक्ति नवीन बोध, पूर्वज्ञान के आधार पर बनाते हैं, दूसरा-अधिगम एक सक्रिय प्रविधि है।

फोसनोद (1996) के अनुसार निर्मितवादी अधिगम सिद्धान्त के आधार के अनुसार - ज्ञान को अस्थायी, विकासशील, आंतरिक निर्मित तथा सामाजिक, सांस्कृतिक, मध्यस्थ होना, माना गया है। ज्ञान का निर्माण किया जाता है। ज्ञान का स्थानान्तरण नहीं होता। अधिगम के लिए क्रिया आवश्यक है तथा अधिगम को संदर्भ से अलग नहीं किया जा सकता। निर्मितवादी अधिगम एक खोज आधारित अधिगम है, सहकारिता आधारित अधिगम है। निर्मितवाद में प्रश्न पूछने की प्रविधि, अन्वेषण तथा चिन्तन निहित है। इस अधिगम सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति संसार का बोध और ज्ञान विभिन्न अनुभवों द्वारा तथा उन पर चिन्तन करके निर्मित करते हैं।

> **स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)**
>
> 10. निर्मितवाद को परिभाषित करें।

3.2.6.1 निर्मितवाद का संक्षिप्त इतिहास **(A brief history of Constructivism)**

निर्मितवाद का आधार दर्शन, समाजशास्त्र, संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, मानवशास्त्र तथा शिक्षा है। सर्वप्रथम, निर्मितवादी दार्शनिक गिएमबेटिस्टा विको (Giambatista Vico) ने सन् 1710 में चर्चा की- "यदि कोई व्यक्ति किसी प्रकरण को समझा सकता है अथवा व्याख्या कर सकता है तो वह उस प्रकरण को जानता है। "मैनुअल कांट (Manual Kant) ने इस विचार का और विस्तार किया, मानव निष्क्रियता से ज्ञान प्राप्त करने वाला नहीं है" व्यक्ति सक्रियता से ज्ञान प्राप्त करते हैं, जिसे वह पूर्व आत्मीकृत ज्ञान से जोडते हैं और स्वयं की व्याख्या का निर्माण करके इस ज्ञान को अपना बनाते हैं।

यह स्पष्ट है कि निर्मितवाद को गेएमबेटिस्टा विको ने सर्वप्रथम अधिगम का दर्शन माना। उनके अनुसार मानव जो स्वयं निर्माण करते हैं, उसका ही उन्हें बोध होता है।

जॉन डीवी के अनुसार शिक्षा क्रिया आधारित है। ज्ञान और कौशल उस परिस्थिति से प्रकट (emerge) होते हैं जिससे व्यक्ति अनुभव के आधार पर अर्जित करता है। इसमें व्यक्ति के लिए अर्थ एक महत्व होता है। यह परिस्थिति किसी सामाजिक संदर्भ में स्थित होती है जैसे कक्षाकक्ष, जिसमें छात्र सामग्री को सीखने में उपयोग करें और उस स्थान को सीखने वालों का समुदाय बना दें।

जीन पियाजे (Jean Piaget) का निर्मितवाद अधिगम में छात्र की सक्रियाता और बालकों का संज्ञानात्मक विकास आधारित है। अधिगम का मूल आधार खोज (discovery) है।

रूस के मनावैज्ञानिक लेव वाइगोटस्की (Lev Vygotsky) अधिगम के सामाजिक पक्ष पर बल देते हैं। वान ग्लेसरफेल्ड (Von Glaserfeld) रेडिकल निर्मितवाद (redical constructivism) पर बल देते हैं। अनुभव के व्यवहार्थ व्याख्या के प्रति एक गतिशील अनुकूलन की एक प्रविधि को ही जानना है।

3.2.6.2 **विभिन्न प्रकार के निर्मितवाद (Different types of constructivism**)-

विभिन्न प्रकार के निर्मितवाद अलग-अलग दृष्टिकोण (Points of view) प्रस्तुत करते हैं। एक संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

1 संज्ञानात्मक निर्मितवाद (**Cognitive Constructivism**) -

निर्मितवाद के समस्त क्षेत्र में संज्ञानात्मक निर्मितवाद को सबसे सरल और सबका आधार माना गया है। इसकी उत्पत्ति प्रो0 जीन पियाजे (Jean Piaget) के कार्य में हुई जिन्हें निर्मितवाद का पथ प्रदर्शक स्वीकारा गया है। संज्ञानात्मक निर्मितवाद के अनुसार,

"व्यक्ति द्वारा ज्ञान का निर्माण सक्रियता से होता है, वह वातावरण से निष्क्रियता से ज्ञान प्राप्त नहीं करता है।"

संज्ञानात्मक निर्मितवाद को वान ग्लेसरफेल्ड (Von Gleserfeld,1990) ने तुच्छ निर्मितवाद (Trivial Constructivism) भी कहा है। इसमें व्यक्ति का पूर्व ज्ञान, सक्रियता से नवीन ज्ञान निर्माण के लिए अनिवार्य है। इसी प्रकार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को मौखिक ज्ञान स्थानांतरण से अधिगम नहीं होता।

2 मूलभूत निर्मितवाद **(Radical Constructivism**) -

मूलभूत निर्मितवाद वान ग्लेसरफेल्ड (Von Gleserfeld,1990) द्वारा समर्थित है जिसे निम्न शब्दों में व्यक्त किया जाता है :- "ज्ञान प्राप्त करना, अनुभव की एक गतिशील अनुकूलन व्यवहार अपंइसमद्ध व्याख्या है। ज्ञातकर्ता, अनिवार्य रूप से वास्तविक संसार के ज्ञान का निर्माण नहीं करता।" पूर्व अनुभवों से निर्मित, मानसिक संरचनायें लगातार आने वाले अनुभवों पर एक पद्धति लगाती है। यहां पर व्यक्ति निर्माणकर्ता है।

3 सामाजिक निर्मितवाद (**Social Constructivism**) -

शैक्षिक वातावरण में लेव वोगोटस्की (Lev Vygotsky) के कार्य से सामाजिक निर्मितवाद विकसित हुआ है। विशिष्टतया, वोगोटस्की ने छात्रों के साथ-साथ अन्य अधिगम में व्यक्तियों की भूमिका पर बल दिया है। साथ ही अधिगम में समुदाय की

भूमिका को भी अहम माना है। यह व्यवहारवादी तथा जीन पियाजे के विचार से हटकर है जिसमें अधिगम को एक व्यक्तिक प्रविधि माना है।

"व्यक्ति के सामाजिक संसार में वे सब सम्मिलित हैं जैसे शिक्षक, मित्र. प्रशासन अधिकारी तथा जो क्रिया में भाग लेते है, जो उस व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। इसमें सहभागिता अधिगम तथा विषय में व्यापक सामाजिक सहयोग सम्मिलित है।" इस प्रविधि में छात्र के लिए अर्थपूर्ण संदर्भ में शिक्षण सम्मिलित है तथा कक्षा में व्याख्या लघु समूह सहयोग तभी अर्थपूर्ण क्रिया उपयोगी है।

4 सांस्कृतिक निर्मितवाद (**Cultural Constructivism**) -

अधिगम परिस्थिति से तात्कालिक सामाजिक पर्यावरण से परे सांस्कृतिक संदर्भ के प्रभाव है जैसे धर्म, आचार विचार, भाषा आदि, इसलिए हमें मस्तिष्क का एक नया अर्थ लेना चाहिए। मस्तिष्क मात्र व्यक्तिक सूचना संसाधित करने वाला नहीं है अपितु यह एक जैविक (biological) विकासशील प्रणाली है जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक प्रभावों का भी समावेश होता है।

5 विवेचनात्मक निर्मितबाद **(Critical Constructivism)-**

विवेचनात्मक निर्मितवाद, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण में, निर्मितवाद को देखते हैं किन्तु इसमें विवेचनात्मक पक्ष को मिला दिया जाता है जिससे निर्मितवाद को एक विषयक (referent) के रूप में सफल बनाया जा सके ।

3.2.6.3 निर्मितवादी अधिगम के सिद्धान्त **(Principles of Constructivist Learning)-**

निर्मितवादी अधिगम सिद्धान्त का आधार है व्यक्ति का अनुभव है जिससे व्यक्तिक अर्थ का उत्पादन होता है। निर्मितवाद को ज्ञात करने के सिद्धान्त के रूप में स्वीकारा गया है जो शिक्षण अधिगम प्रविधि की जटिलता को पूर्ण रूप से स्पष्ट करते हैं। इसमें शिक्षक की भूमिका व्यक्ति के पूर्व ज्ञान तथा सीखने में सम्बन्ध स्थापित करना है। निर्मितवादी अधिगम सिद्धान्त का मत है कि व्यक्ति का पूर्व ज्ञान की उसके नवीन ज्ञान को ज्ञात करने तथा बोध में प्रमुख भूमिका है।

"प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के लिए नियम"अथवा "मानसिक प्रतिमान"उतपन्न करता है जिनका प्रयोग अनुभवों के बोध करने में होता है। अत: अधिगम मात्र मानसिक प्रतिमान में नवीन अनुभवों का सामंजस्य नहीं है। मिलर और ड्राईवर (1987) के अनुसार, "निर्मितवादी अधिगम प्रविधियां ज्ञान के व्यक्तिक एवं सामाजिक संरचना अथवा निर्माण स्वीकारती है।

1. अधिगम प्रासंगिक है - हम अमूर्त तथा पारलौकिक मस्तिष्क में पृथक तथ्य एवं सिद्धान्त
2. नहीं सीखते। हम हमारे अन्य ज्ञान, विश्वास, भय आदि के सह-सम्बन्ध में सीखते हैं। अधिगम एक सक्रिय प्रविधि है जिसमें छात्र संवेदी निवेश का प्रयोग करता है और उसमें अर्थ का निर्माण करता है। अधिगम ज्ञान की निष्क्रिय स्वीकृति नहीं है जो "बाहर दूर" विध्यमान है, किन्तु अधिगम छात्र को संसार की सक्रियता में सम्मिलित करता है।
3. अधिगम में दोनों, अर्थ का निर्माण करना तथा अर्थ की प्रणाली का निर्माण सम्मिलित है।
4. अर्थ का निर्माण मानसिक है। यह मस्तिष्क में होता है। निर्मितवादी अधिगम प्रक्रिया में व्यक्ति वातावरण से अनुभव आधारित अर्थ का निर्माण करते हैं जिसमें दैहिक एवं

मानसिक क्रियायें सम्मिलित हैं। मात्र दैहिक क्रियायें पर्याप्त नहीं है। दैहिक एवं मानसिक क्रियाओं को जॉन डीवी ने चिन्तनशील किया कहा है।

5. अधिगम में भाषा सम्मिलित है। हम जिस भाषा का प्रयोग करते हैं वह अधिगम को प्रभावित करती है। वागटस्की के अनुसार भाषा और अधिगम साथ-साथ जुड़े हु ए हैं।
6. अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया है अधिगम अन्ततोगत्वा सम्बन्धों का संयोजन है। हमारा अधिगम घनिष्ठता से दूसरे मानव से संबन्धित है। शिक्षक, छात्र साथी, छात्र परिवार एवं परिचित वक्ति से सम्बन्ध।
7. अधिगम में पूर्व ज्ञान आवश्यक है - नवीन ज्ञान का आत्मीकरण पूर्व ज्ञान आधारित होता है इसलिए शिक्षण अधिगम में पूर्व ज्ञान का पहचानना अत्यन्त आवश्यक है। नवीन ज्ञान, निर्मित पूर्व ज्ञान संरचना पर आधारित होती है।
8. सीखने में समय लगता है - अधिगम तत्कालिक नहीं है महत्वपूर्ण अधिगम के लिए हमें विचारों को पुन: देखना होता है, चिन्तन करना होता है, परीक्षण करना होता है और उनका उपयोग करना होता है।
9. अधिगम प्रक्रिया में अभिप्रेरणा एक मूलभूत आवश्यकता है।
10. निर्मितवादी अधिगम में सहभागिता आवश्यक है। यह सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य देता है।
11. इस अधिगम प्रविधि में छोटे समूह में परिचर्चा अर्थपूर्ण है। निर्मितवादी अधिगम में विषयवस्तु के संदर्भ में अनुदेशन वास्तविक जीवन परिस्थितियों के समीप होना चाहिए।
12. निर्मितवादी अधिगम में छात्रों के पूर्व अनुभव एवं रूचि अत्यधिक महत्वपूर्ण है।
13. निर्मितवाद सर्वथा संज्ञानात्मक अधिगम तक सीमित नहीं है। इसमें बोध अनुभव, सुख, चिंता तथा व्यक्तिक पहचान भी महत्वपूर्ण है।
14. निर्मितवाद का उद्देश्य छात्रों द्वारा स्वयं ज्ञान का निर्माण करना है इसलिए स्वमुल्यांकन (निर्माणात्मक मूल्यांकन) अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

3.2.6.4 निर्मितवाद की विशेषतायें (Characteristics of Constructive)-

निर्मितवाद के सिद्धान्त	छात्र की भूमिका
अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है	छात्र की भूमिका छात्र अधिगम के लिए स्वयं उत्तरदायी है।
पूर्व ज्ञान एवं नवीन अनुभव अधिगम जनित करते हैं	अधिगम में छात्र की सक्रिय सहभागिता आवश्यक है ।
अधिगम में अनुभव की एक प्रमुख भूमिका है	अधिगम के लिए छात्र से वार्ता आवश्यक है ।
अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया है	छात्र में अधिगम हेतु चिन्तन आवश्यक है ।
अधिगम संदर्भित है	अधिगम के लिए छात्र को अति संज्ञान (metacognition) का सहारा लेना पडता है ।
अधिगम बोध एवं निथादन पर केन्द्रित है	अधिगम में छात्र कम्प्यूटर एवं अन्य शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रयोग करता है ।

अभिप्रेरणा अधिगम की कुंजी है।	

निर्मितवादी अनुदेशन के उद्देश्य	शिक्षक की भूमिका
निरमितवादी अधिगम तर्क अंतर्दृष्टि, तार्किक, चिंतन, समस्या समाधान, योग्यता, बोध तथा चिंतन विकास पर बल देते हैं।	शिक्षक छात्र के ज्ञान निर्माण का सरलीकरण करने वाला है। शिक्षक ज्ञान निर्माण में मार्गदर्शक है। शिक्षक मुक्तचिंतन उपलब्ध करने में सहयोगी है। शिक्षक अधिगम में संज्ञानत्मक सहायता करने वाला है जैसे सुझाव देना, मार्गदर्शन करना और शिक्षण सामग्री उपलब्ध करना। शिक्षक अधिगम का मूल्यांकन करने वाला है। यह मूल्यांकन निर्माणात्मक एवं सतत होना चाहिए।

स्वपरख प्रश्न **(Check Your Progress)**

11.0 निर्मितवाद का सिद्धांत स्पष्ट करें

3.3 अधिगम सिद्धान्तों का शिक्षण अधिगम अभ्यास में निहितार्थ :- (Implications of principles of learning in practices of teaching and learning) :-

समय-समय पर विकसित अधिगम सिद्धान्तों का शिक्षण-अधिगम अभ्यास पर सदैव प्रभाव बना रहा है जिससे शिक्षण में सुधार तथा अधिगम में वृद्धि हुई है।

1 व्यवहारवाद, व्यक्ति में दृष्टिगोचर व्यवहार परिवर्तन को अधिगम स्वीकारते हैं जबकि संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक मस्तिष्क में मानसिक प्रविधियों द्वारा संप्रत्ययात्मक परिवर्तन को अधिगम स्वीकारते हैं। प्रो0 गाने- "अधिगम की पारिस्थितिक व्यवहारवादी मानसिक प्रविधियों के अस्तित्व को मना नहीं करते किन्तु उन्हें अधिगम का अद्रश्य संकेत मानते हैं। व्यवहारवादी अधिगम सिद्धान्त ने शिक्षण को एक सुव्यवस्थित प्रविधि देना व्यक्त किया है। प्रो0 गाने ने व्यवहारवादी अधिगम सिद्धान्त और संज्ञानात्मक अधिगम सिद्धान्त को मिलाकर सूचना संसाधित (Information processing) कहा है। इसमें अधिगम के समय होने वाली क्रिया को आंतरिक संसाधन कहा है। प्रो0 जीन पियाजे द्वारा संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाओं का अध्ययन तथा मस्तिष्क शोध एवं संज्ञानात्मक

मनोविज्ञान द्वारा अधिगम में व्यक्ति की सक्रियता, सीखने में नवीन अनुभव एवं पूर्व ज्ञान द्वारा बहाय वातावरण के अर्थ ढूंढना आदि सराहनीय है।

इस समस्त प्रयास में संज्ञानात्मक अधिगम और मस्तिष्क शोध का प्रभाव अत्यधिक प्रभावी रहा है। जिसमें संज्ञानात्मक, मनोवैज्ञानिक अधिगम को मस्तिष्क प्रविधियों से जोड़ते हैं, जिसमें अधिगम, व्यक्ति के मानसिक संरचनाओं में एक परिवर्तन माना गया है। नवीन बोध, पूर्व ज्ञान एवं नवीन अनुभवों को आधार मान कर नवीन अर्थ ग्रहण करना है। अभ्यास में ऐसी शिक्षण रणनीतियों को प्रयोग में लाना चाहिए जो अधिगम पर्यावरण को सृजन करता है जिसमें छात्र नवीन ज्ञान निर्मित करते हैं। शिक्षण के लिए निहितार्थ कुछ आधार निम्नलिखित हैं -

1. यदि अधिगम इस पर आधारित है कि सूचना मानसिक स्तर पर किस प्रकार साधित होती है जो छात्रों के संज्ञानात्मक प्रविधियों को समझना महत्वपूर्ण है।
2. छात्रों के संज्ञानात्मक विकास का स्तर जानना आवश्यक है और विषयवस्तु तथा शिक्षण विधियाँ उनके उपयुक्त हो।
3. छात्र जो सीखते हैं उसे आयोजित करें।
4. पूर्व ज्ञान के संदर्भ में नवीन अनुभवों द्वारा नवीन ज्ञान का निर्माण किया जाता है, इसलिए छात्रों का पूर्व ज्ञान निश्चित करना आवश्यक है।
5. कक्षा छात्र केन्द्रित, क्रिया आधारित, अन्त: क्रियात्मक हो जिसमें प्रजातांत्रिक अधिगम हो तथा छात्र स्वायतत्ता से स्वयं अधिगम का निर्माण कर सके।
6. कक्षा में पूर्व ज्ञान के उपयोग को प्रोत्साहित किया जाये जिससे अनुभवों द्वारा नवीन ज्ञान निर्माण हो।
7. शिक्षक एवं छात्र पारस्परिक सहयोग, निर्णय लेना तथा संधिवार्ता की प्रविधि अपनाये।
8. समस्त अधिगम प्रक्रिया में अधिसंज्ञानात्मक योग्यताओं के विकास (development of metacognitive abilities) पर बल दिया जाये और निर्माणात्मक मूल्यांकन (Formative evaluation) को महत्व दिया जाये।

एक निर्मितवादी शिक्षक होना (**On becoming a constructivist teacher**) -

1. शिक्षण को मात्र ज्ञान का स्थानांतरण नहीं माना जाता।
2. यदि अधिगम पूर्व ज्ञान आधारित है तो शिक्षकों को छात्रों के पूर्व ज्ञान को पहचान कर, उन्हें नवीन अनुभव उपलब्ध कराने होंगे।
3. शिक्षकों को छात्रों को अधिगम में व्यस्त करना होगा तथा छात्रों के वर्तमान ज्ञान को पहचान कर आगे लाना होगा।
4. यदि नवीन ज्ञान क्रियात्मकता से निर्मित होती है तो इसके निर्माण के लिए समय की आवश्यकता है। पर्याप्त समय की उपलब्धता, छात्रों के नवीन अनुभवों पर चिन्तन का सरलीकरण करता है तथा पूर्व ज्ञान के विश्व परिदृश्य संदर्भ में, नवीन विश्व परिदृश्य का बोध कराती है।
5. शिक्षक रटने के लिए नहीं किन्तु बोध के लिए शिक्षण करते हैं।
6. शिक्षक, छात्र केन्द्रित अधिगम वातावरण सृजन करते हैं।
7. शिक्षक ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़ते हैं।

8. शिक्षक स्वयं के शिक्षण में कथन कम करते हुए संवाद, व्याख्या करना, प्रश्न पूछना, समस्या समाधान विधि का प्रयोग, खोज विधि का प्रयोग करते हैं।

3.4 सारांश (Summary) :-

1. व्यवहारवादी अधिगम सिद्धान्त में स्वीकारते हैं कि मानव व्यवहार सीखा जा सकता है। इस सिद्धान्त में प्रत्यक्ष (overt) व्यवहार पर बल दिया जाता है तथा वांछित व्यवहार का पुनर्वलन किया जाता है। व्यवहारवादी अधिगम शिक्षक निर्देशित, नियंत्रित विधि है। इस विधि में मस्तिष्क में होने वाली क्रियायें, चिन्तन, सृजनात्मकता, समस्या समाधान, योग्यतायें तथा कल्पना, विकास करने में कम पडती है।
2. प्रो. बी. एफ. स्कीनर के अनुसार अधिगम किसी वांछित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यवहार को संगठित करने की विधि है। यह संगठन व्यवहार के परिणामस्वरूप होता है। प्रारम्भ में व्यक्ति निरूद्देश्य अनिवार्यत: (random) ढंग से करता है किंतु कोई विशिष्ठ व्यवहार को पुरुस्कृत करने से इस व्यवहार की पुनरावृति होती है, इसे सकारात्मक पुनर्वलन कहते है।
3. प्रो. गाने ने सूचना प्रविधि का एक व्यवहार का मॉडल विकसित किया है जिसमें सात आंतरिक प्रविधियों को पहचाना है जिनसे सफल अधिगम घटित होता है।
4. संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में, अधिगम के समय छात्र के मस्तिष्क में घटित होने वाली क्रियाओं पर बल दिया जाता है। इस विधि में सूचना प्रविधि और निर्मितवादी अधिगम सिद्धान्त सम्मिलित है।
5. प्रो0 पियाजे के अनुसार, अधिगम एक प्रविधि है जिसमें व्यक्ति संज्ञानात्मक प्रविधियों से स्वयं अर्थ निर्मित करता है। ज्ञान निर्माण, आत्मीकरण, अनुकूलन तथा संतुलीकरण की एक आंतरिक प्रविधि है।
6. प्रो0 पियाजे ने इस प्रविधि का वर्णन किया है जिससे व्यक्ति के मस्तिष्क में, मानसिक संरचनाओं के बनने से, ज्ञान संग्रहित होता है। पियाजे का विकासात्मक अवस्था सिद्धान्त (Developmental stage theory), उनकी विकासात्मक अवस्थाओं के संभावित आयु से जुड़ी हुई है। संज्ञानात्मक विकास (Cognitive development) का अर्थ है कि एक व्यक्ति किस प्रकार, आयु के साथ-साथ, चिन्तन करना और सीखने की योग्यता प्राप्त करता है। संज्ञानात्मक विकास की अवस्थायें निम्नलिखित हैं -

संवेदी बुद्धि विकास अवस्था	-	जन्म से 2 वर्ष
पूर्व संकार्य अवस्था	-	2 वर्ष से 7 वर्ष
मूर्त संकार्य अवस्था	-	7 वर्ष से 12 वर्ष
औपचारिक संकार्य अवस्था	-	10 वर्ष से वयस्क होने तक

7. अनुभवात्मक अधिगम एक प्रविधि है जिसमें छात्र को अनुभव के साथ-साथ चिन्तनशील अवलोकन, मूर्त प्रत्ययात्मकता, सक्रिया प्रयोगीकरण तथा मूल्यांकन सम्मिलित है। मात्र अनुभव ग्रहण करना, अधिगम को प्रभावी नहीं बनाता, किन्तु अनुभव पर चिन्तन करना तथा सक्रिय प्रयोगीकरण अधिगम को सफल बनाते हैं।

8. निर्मितवाद का प्रमुख विचार है मानव अधिगम का निर्माण होता है तथा व्यक्ति पूर्व ज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान निर्मित करते हैं। निर्मितवाद में व्यक्ति पूर्व ज्ञान पर नवीन बोध का निर्माण करते हैं जो बहाय वातावरण से अनुभव द्वारा होता है। निर्मितवाद के अनुसार अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है। यह एक सामाजिक प्रक्रिया भी है।
9. विविध अधिगम सिद्धान्तों द्वारा शिक्षण में उन्नयन और अधिगम में सुधार हुआ है।

3.5 शब्दावली (Glossary): -

व्यवहारवाद - व्यक्ति में बाहय व्यवहार का विकास व्यवहारवाद है वांछित व्यवहार का पुनर्वलन किया जाता है। इस अधिगम सिद्धान्त के अनुसार मानव व्यवहार सीखे जा सकते हैं।

सूचना संसाधित अधिगम सिद्धान्त :-

यह अधिगम सिद्धान्त अधिगम का संज्ञानात्मक द्रष्टिकोण है जिसमें मानव चिन्तन को एक कम्प्यूटर द्वारा सूचना, संसाधित करने के बराबर माना जाता है। संज्ञानात्मक सूचना संसाधित सिद्धान्तवादी ध्यान, स्मशती एवं अधिगम को स्पष्ट किया है।

जीन पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त :-

पियाजे द्वारा बालको के बौद्धिक विकास की अवस्था सिद्धान्त कहा है। संज्ञानात्मक विकास चार विभिन्न अवस्थाओं में होता है। पियाजे के सिद्धान्त में आत्मीकरण, अनुकूलन तथा संतुलीकरण विभिन्न क्रियाएँ हैं।

निर्मितवाद अधिगम सिद्धान्त :-

निर्मितवाद एक अधिगम सिद्धान्त है। अधिगम एक सक्रिय प्रविधि है। अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया भी है। व्यक्ति सक्रियता से, बाहय वातावरण से अनुभवों द्वारा, पूर्व ज्ञान के आधार पर अर्थ ढूंढता है। अर्थ ढूंढना ही अधिगम है।

3.6 संदर्भ ग्रंथ (Further Readings) :-

- Martin,Jr.Ralph,et al.(1994). Teaching Science for All Children. Boston:Allen and Bacon.
- Dongiamas,Martin(1998).A journey into Constructivism.
- Gagne,Robert M.(1968). Conditions of Learning.
- Furth, Hans G (1969).Piaget and Knowledge. New Jersey,Prentice Hall, Inc.
- Vaidya,N.(1991).Jean Piaget with Love and understanding. New Delhi,Oxford and IBH Company.

- Gardner,Howard(1993). Frames of Mind: The Theory of Multiple Intelligence.
- Elliote, S. T. Kratchwill, J. Litlefield, J. Cook and J. Travers (2000)-Educational Psychology: Effective Teaching, Effective Learning. Boston:McGraw hill.
- Gage, N. L., Berliner, David C(1974) Educational psychology. Rand McNally Collins Company.
- John, Saoy (2007) Constructivism and Learner Centered Approach in Education EDUTRACS, Vol.6No.5,13-15.
- Kolb, David A. (1984) Experiential learning - Experience as the source of learning and Development. New Jersey: Prentice Hall.
- Henry, Jane(1989), Meaning and Practice in Experiential Learning, in Weil,Susan, and McGill, Ian (1989) Making sense of experiential Learning. Milten Keynes: Open University.
- Tyler, R. (2002)- Teaching for Understanding in Science : Constructivist / Conceptual change Teaching Approaches. Australian Science Teachers Journal, 48(40,30-35).
- Ishri, Drew K. (2000) Constructivist views of Learning in Science and Mathematics.
- Burbules, NicholasC.(2000)Constructivism: Moving Beyond the Impasse. Published in Constructivism in Education, D. C. Philips (ed) university of Chicago Press.
- Ausubel, David P.(1968) Educational psychology: A Cognitive View, New York: Holt, Rinehart and Winston, INC.

01. दोनों मस्तिष्क की क्रियाओं को अपने सिद्धान्त में स्थान देना है ।
02. थार्नडाइक में किया सउदेश्य है (मछली प्राप्त करना), स्किनर में बेतरतीब (at random) है ।
03. तत्परता का नियम, पाठ प्रस्तावना में, प्रभाव का पाठ को रोचक बनाने में तथा अभ्यास का नियम अधिगम को स्थायी वनाने में ।
04. देखें 3.2.3.2 - शैक्षिक निहितार्थ
05. देखें 3.2.3.2 भाग ब
06. गाने द्वारा आंतरिक अधिगम प्रविधियाँ इस प्रकार है: ध्यान आकर्षण, चयनित अवबोधन, संकेतकी, उत्तर उत्पादन, संज्ञानात्मक रणनीति, प्रत्याशा ।
07. देखें 3.2.3.2 का स और द भाग

08. संवेदन बुद्धि विकास अवस्था, पूर्व संकार्य अवस्था, मूर्त संकार्य अवस्था, औपचारिक संकाय अवस्था ।

09. व्यक्ति सक्रिय रहकर बहाय वातावरण से अनुभव प्राप्त करके उस पर चिन्तन करते हुए नई संरचनायें बनाता हैं ।

10. निर्मितवाद वह अधिगम प्रक्रिया है जिसमें छात्र सक्रियता से अनुभव आधारित नवीन ज्ञान निर्माण करते हैं ।

11. अधिगम सक्रियता से होता है, अधिगम में पूर्व ज्ञान और वर्तमान ज्ञान मिलकर नवीन ज्ञान का निर्माण करते है ।

3.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End questions) :-

1 व्यवहारवाद को परिभाषित कीजिये, व्यवहारवादी अधिगम सिद्धान्त की पांच विशिष्टतायें लिखिये । (Define behaviourism. Write five characteristics of Behaviouristic theory of learning).

2 प्रो0 पियाजे द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिये । प्रो0 पियाजे द्वारा किये गये संज्ञानात्मक विकास की चार अवस्थाओं की संक्षिप्त चर्चा करे । (Explain the meaning of Piagetian Theory of Cognitive Development. Discuss in brief the four stages of cognitive development given by Piaget).

3. प्रो0 पियाजे द्वारा दिये गये संज्ञानात्मक विकास की चार अवस्थाओं की विशिष्ठताओं को लिखिये । (Write characteristics of the four stages of Cognitive development given by Piaget).

4. निर्मितवाद का क्या अर्थ है? निर्मितवाद के सिद्धान्तों की परिचर्चा कीजिये ।
(What is the meaning of constructivism ? Discuss the principles of constructivism)

5. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिये :-
   1 राबर्ट एम. गाने द्वारा दी गई आन्तरिक अधिगम प्रक्रिया ।
   2 अनुभवात्मक अधिगम ।
   3 आसुबेल का योगदान ।

   Write notes on:
   1 Internal Learning process given by Robert M.Gagne.
   2 Experiential Learning.
   3 Ausubel and his contribution.

इकाई 4 (UNIT 4)

व्यक्तियों एवं प्रोढ़ों की अधिगमशैली

(Learning Style of Individuals Adults)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

4.0 उद्देश्य (Objectives)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

4.2 अधिगम सामग्री का स्वरूप (nature of Learning Material)

4.3 अधिगमशैली (Learning Style)

4.3.1 समग्र बनाम खण्ड विधि (Whole vs Part method)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.3.2 समूहित बनाम वितरित विधि (Massed vs Speced Learning Method)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.3.3 पठन बनाम प्रपठन विधि (Reading vs Recitation Method)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.3.4 प्रत्यय मान चित्रण (Concept Mapping)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.3.5 बी-स्वत:शोध विधि (V- Heuristic Method)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.4 सारांश (Summary)

4.5 शब्दावली (Glossary)

4.6 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)

4.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to Self-Learning Exercises)

4.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions)

4.0 उददेश्य (Objectives) :

इस इकाई को अध्ययन करने के बाद आप

(i) विभिन्न प्रकार की अधिगम शैलियों से परिचित होंगे (उनका प्रत्यास्मरण कर सकेंगे तथा

(ii) उनकी विशेषताओं को समझ सकेंगे

(iii) उनमें विभिन्नीकरण कर सकेंगे

(iv) उनके उपयुक्त प्रयोगों का निर्णय ले सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना (Introduction) :

हमने इकाई - 5 में अधिगम को प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत कारणों - जैसे व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक परिपक्वता उसमें सीखने की प्रेरणा तथा सीखने के लिए सहायक वातावरण का अध्ययन किया परन्तु इनके साथ - साथ प्रभावी अधिगम काफी कुछ अधिगम सामग्री के तथा उपयुक्त सीखने की शैली (Style of Learning) पर भी निर्भर करता है इसलिए शिक्षक को व्यतिगत कारकों के साथ यह भी ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार की अधिगम सामग्री किस तरीके (Style) से अधिक प्रभावी ढंग से सीखी जा सकती है। इस इकाई का ज्ञान आप को इस प्रकार निर्णय लेने में सहायक हो सकता है और इस प्रकार आप के शिक्षण को अधिक प्रभावी बना सकता है।

4.2 अधिगम सामाग्री का स्वरूप (Nature of Learning Material):-

इसमें दो पक्षों पर विचार करें : (i) अधिगम सामग्री की मात्रा (लम्बाई). (ii) अधिगम सामग्री का संगठन (Organisation) तथा संसक्ति (coherence).

अधिगम सामग्री जितनी लम्बी हो उसे सीखना तथा याद रखना सरल नहीं होगा। इसी प्रकार अधिगम सामग्री जितनी ही संगठित और सशक्त होगी उतना ही जल्दी सीख ली जायेगी तथा काफी समय तक याद रहेगी। परन्तु ये दोनों पक्ष स्वतंत्र नहीं है। यदि अधिगम सामग्री काफी संगठित तथा सशक्त (Organised and coherent) हैं तो लम्बी होते हुए भी जल्दी याद हो जायेगी तथा काफी समय तक याद रहेगी। इसका उल्टा बिखरी असंगठित अधिगम सामग्री जैसे (non-sense syllables) छोटी होते भी अधिक समय तक शायद ही याद रहे। सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित अधिगम सामग्री का अधिगम बिखरी सामग्री की अपेक्षा सीखना अधिक सरल होता है।

एक प्रयोग (Gate p.367) में छात्रों को दो श्रृंखलाएँ प्रस्तुत की गई। एक X में सामग्री में कोई योजनाबद्धता (संगठन नहीं का), दूसरी Y में घटक किसी स्कीम के अनुसार रखे गये थे-

X	Y
3	7
17	9
19	12
21	16
35	21
41	27

ये श्रृंखलाएँ बारी-बारी से छात्रों को 2 सेकण्ड तक दिखाकर हटा ली गई।

इसमें यह देखा गया कि X को सीखने का औसत 3.2 दोहरान (Repetition) था जब कि Y में केवल 1.4 था।

ऐसे प्रयोगों से यह देखा गया कि घटकों के किसी भी प्रकार के समूहीकरण (Grouping) से अधिगम में सुविधा होती है परन्तु कोई समूहीकरण किसी दूसरे की अपेक्षा अधिक पर्याप्त (adequate) हो सकता है।

4.3 अधिगम शैली (Learnaing Style) :

इसके अन्तर्गत इन प्रमुख शैलियों (विधियों) को लेंगे -

(i) समग्र बनाम खण्ड विधि (Whole vs part Method)

(ii) समूहित बनाम वितरित विधि (Massed vs Distributed Method)

(iii) पठन बनाम स्वर-पाठ विधि (Reading vs Recitation Method)

(iv) अवधारणा-मान चित्रण (Concept Mapping)

(v) वी-आरेखण (V- Diagramming)

4.3.1 समग्र बनाम खण्डविधि (whole vs Part Method) :

इस चुनाव की समस्या 1920's में आई जब गेस्टालटवादी विचाराधारा ने संबंधवाद (Connectionism) की चुनौती दी। इसके पहले व्यवहारवाद (behaviourism) के प्रभाव कारण खण्डश: अधिगम (placement learning) का उपागम (approach) ही प्रमुख रहा। इसमें व्यक्ति एक-एक तत्वों (elements) से सीखना आरम्भ करता है. अन्त में इन तत्वों को समग्र के रूप में एकत्रित करता है। इस प्रकार का परमाणुवादी उपागम (atomistic approach) काफी पहले से चला आ रहा था जिसको थार्नडाइक (Thorndike) ने अपने प्रयोगों से सैद्धान्तिक सहारा देकर वैज्ञानिक तर्क प्रदान किया।

आप किसी कविता को थोड़ा - थोड़ा करके खण्ड विधि से याद करते हैं या पूरी कविता को बार-बार दोहराकर समग्र विधि से याद करते हैं, इसमें कौन श्रेष्ठ है इसका कोई सीधा-साधा उत्तर नहीं है।

यहाँ समग्र और 'खण्ड की व्याख्या करना आवश्यक है। हम घटकों के समूह को तभी समग्र कहेंगे जब उनमें पारस्परिक सम्बंध होगा या संगठन होगा। यहाँ एक स्वतंत्र संरचना (Pattern) है जो अपने आप में ऐसी एकता है जो उसके विभिन्न खण्डों से ऊपर उठकर है। इसका उल्टा पूरी स्थिति में एक घटक है जो समग्र को अर्थ प्रदान करने के लिए तो आवश्यक है परन्तु जिसका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। समग्र को किसी निर्बाध (absolute) रूप में नहीं देखा जा सकता। यदि किसी मदों के समूह को एक इकाई के रूप में बार-बार दोहराया जाता है तो भी उसे सक्रिय समग्र नहीं कहा जा सकता जब तक उसके घटकों में कोई स्थानीय (Spatial) सामायिक (temporal) या वैचारिक/काल्पनिक (ideational) सुव्यवस्थित क्रम न हो।

उपरोक्त समग्र और खण्ड की भिन्नता को ध्यान में रखते हुए ही उनका श्रेष्ठता के बारे में देखना अधिक उचित होगा।

यद्यपि संबंधवादी (connectionvists) समेत अधिकांश शिक्षा मनोवैज्ञानिक सभी प्रकार की अधिगम सामग्री के लिए समग्र विधि का पक्ष लेते हैं परन्तु यह श्रेष्ठता परिस्थितिजन्य लगती है।

समग्र विधि की श्रेष्ठता इन स्थितियों में अधिक प्रभावी लगती है -

(i) सीखने वाली सामग्री या क्रियाओ में किसी सीमांतक संगठन और संसक्ति (coherence) है। परन्तु केवल संरचना में ही संगठन तथा संसक्ति होना काफी नहीं है, अधिगमक को इस प्रकार की संरचना को क्रियात्मक रूप से पहचान में ही समग्र की श्रेष्ठता निर्भर करेगी इसीलिए कुशाग्र बुद्धिवाले या सृजनात्मक छात्र सामान्य बुद्धिवाले छात्रों की अपेक्षा समग्र विधि का अधिक प्रभावी प्रयोग कर सकते हैं क्योंकि उनमें अधिगम सामग्री को समग्र रूप से समझने तथा उसके निहित विचारों में सार्थक सम्बन्ध देखने की अधिक क्षमता होती है।

जब तक अधिगमक में यह क्षमता नहीं होगी समग्र विधि की खण्ड विधि से श्रेष्ठता संदिग्ध रहेगी|

(ii) जब व्यक्ति को पूरी अधिगम सामग्री का आभास हो जाता है तो उसके विश्लेषण की भूमिका बहु त भिन्न होती है तो वह प्रत्येक खण्ड को इस प्रकार देखता है कि वह समग्र में कहां फिट होता है|

(iii) जो व्यक्ति खण्ड विधि से सीखना आरम्भ करते हैं अक्सर अपनी उपलब्धि के किसी बिन्दु पर समग्र विधि की ओर बढते हैं। उदाहरण के लिए जो व्यक्ति टंकन (type writing) में परंपरागत विधि ध्यान: पहले अक्षर (letter) पर फिर शब्द (word) पर फिर वाक्यांश (phrase) फिर वाक्य (sentence) की ओर बढता है। अक्सर एक ऐसी स्थिति पर आ जाते हैं जहाँ वे चाहे जितना अभ्यास करें टाइपिंग की गति नहीं बढती या यूँ कहिये उसकी प्रगति में अधित्यका (plateu) आ जाती है। ऐसी स्थिति में अक्सर 'टाइपिस्ट यह अनुभव करता है कि वह अक्षरों का शब्दों पर ध्यान न देकर सीधे-सीधे वाक्यों को टाइप कर रहा है। जब यह स्थिति आती है तो प्रगति बहु त तेज हो जाती है क्योंकि यह पूर्णत: भिन्न (समग्र) उपागम (approach) की तरफ बढता है तथा उसकी प्रगति की मार्ग में आई अधित्यका (plateu) समाप्त हो जाती है तथा प्रगति बहु त तेज हो जाती है।

(iv) परन्तु इसके विपरीत लम्बी तथा कठिन अधिगम सामग्री में सामान्यत: समग्र विधि श्रेष्ठ नहीं होती क्योंकि यहाँ अधिगम की स्थिति को समग्र रूप से समझना तथा उसके अर्थ और संगठन को समझना सरल नहीं होता। ऐसी स्थिति में खण्ड विधि अधिक हो सकती है। लम्बी और कठिन अधिगम सामग्री में किफायती तरीके (economically) से कौशलपूर्वक सीखने के लिए उसे उप-भागों में बाँटना पड़ सकता है परन्तु यहाँ पूर्णत: खण्ड विधि नहीं होगी। ऐसी स्थिति में अक्सर प्रगतिशील खण्ड विधि अधिक लाभदायक हो सकती है। इसमें अधिगम सामग्री को खण्डों में बाँट दिया जाता है पहले एक खण्ड सीखा जाता है फिर दूसरे खण्ड को सीखकर पहले वाले अधिगम से संबन्धित कर दिया जाता है। उसके बाद तीसरा खण्ड सीख कर पहले दोनों से मिल जाता है, इसी प्रकार क्रमशः

(v) इसके अतिरिक्त -

(अ) समग्र या खण्ड विधि की श्रेष्ठता अधिगमक की प्रेरणा सहनशक्ति तथा वर्तमान अधिगम की उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्व पर भी काफी कुछ निर्भर करती है|

(ब) जो व्यक्ति जिस अधिगमशैली (Style) का सफलतापूर्वक अभ्यास करता आया उसके प्रयोग में ही उसकी दक्षता बढती जाती है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
01 प्रगतिशील खण्ड विधि की अवधारणा स्पष्ट कीजिए। यह कब प्रयोग की जाती है

कुछ छात्र अपने अध्ययन को योजनाबद्ध तरीके से पूरे सत्र में अंतरालन (spacing) करते हँ तो कुछ अंतिम परीक्षा (final examination) के कुछ पहले तक कोई विशेष ध्यान नहीं देते फिर सचेत होकर सारी पढाई को हजम (assimilate) करने का प्रयत्न करतेहैं।

प्रथम प्रकार के प्रयत्न को वितरित अधिगम (distributed learning) के अन्तर्गत रखेंगे। इसमें अधिगम में छोटी अवधि के क्रमिक (successive) प्रयत्न तथा समीक्षा होती है। बीच-बीच में आराम या अन्य कोई अन्य क्रिया हो सकती है जो निर्धारित अधिगम से भिन्न होती है। दूसरी विधि समूहित विधि (massed learning) के अन्तर्गत आयेगी। इसमें एक बार या लम्बी अवधि तक निरन्तर रटना या पठन किया जाता है।

अंतिम परीक्षा में दोनों विधि से पढे छात्रों के परिणाम समान रूप से अच्छे हो सकते हैं इसलिए कौन सी विधि किस स्थिति में अधिक प्रभावी होगी (स्थायी अधिगम की दृष्टि से) इसके लिए कई कारकों पर ध्यान देना होगा।

(i) भूलने का वक्र (Curve of forgetting)

हम जानते हैं कि आरम्भिक अधिगम के बाद भूलने की गति अपेक्षाकृत अधिक तेज होती है इससे मैकडोनाल्ड (Bigge Hunt page 464) प्रायोगिक प्रमाणों के आधार पर सुझाव देता है कि आरम्भिक अधिगम के तुरन्त बाद से अंतरालिक (spaced) परन्तु प्राय: (frequent) समीक्षा और बाद में लम्बी अंतरालों में उसके संस्पर्श (brush-up), जब तक अधिगम सामग्री को याद रखने की आवश्यकता है। सीखने का सबसे अच्छा उपागम है।

परन्तु समीक्षा (review) का आशय रटना नहीं है। यदि अरम्भिक अधिगम को नवीन अधिगम से जोड़ते रहा जाय या उसका अधिक व्यवहारिक स्तर (sophisticated level) पर अर्थ निर्णय (interpretation) किया जाय तो समीक्षा और अधिक प्रभावी होगी।

यह भी देखा गया है कि उपरोक्त भूलने का वक्र मुख्यत: जटिल संवेदी चालक अधिगम (sensori motor learning) या ऐसे शाब्दिक अधिगम पर लागू होता है जो अर्थपूर्ण नहीं होते या जिसके सीखने में बहुत कम आंतरिक अभिप्रेरणा होती है। अतिवांछित (most desirable) अधिगम में यह वक्र लगभग समतल (flat) होता है जिसमें अधिक अभ्यास करने की आवश्यकता नहीं होती।

इसी प्रकार पूर्णत: प्रत्यास्मरण (recall) पर आधारित अधिगम में, संज्ञान (recognition) पर आधारित वक्र की अपेक्षा अधिक तेजी से गिर कर आती है।

(ii) निरंतर लम्बे समय तक अभ्यास के कारण उत्पन्न ऊबन (boredom) ध्यान को कम कर देती है जिससे अभ्यास मात्र दोहराना रह जाता है।

यह ठीक है कि सीखने की प्रेरणा में शारीरिक थकान अधिगम को वांछित नहीं करती परन्तु इस की भी एक सीमा है। थकान या ऊबन इतनी तीव्र हो सकती है कि उच्च स्तरीय प्रेरणा भी मन्द पड़ जाये. परन्तु प्रेरणा के अभाव में सरल अधिगम भी ऊबाउ (bore) लग सकता है। इसी प्रकार केवल रटने वाले अधिगम में थकान तथा ऊबन जल्दी आती है।

(iii) समूहित अधिगम में सामान्यत: बार-बार अधिगम सामग्री को दोहराने की प्रवृत्ति होती है परन्तु ऐसे अधिगम में कुछ समय बाद एक अधित्यका (plateau) आ जाता है जिसके आगे और अभ्यास का प्रगति पर प्रभाव नगण्य हो जाता है। प्रगति प्राप्त करने के लिए कुछ अंतराल की आवश्यकता होगी। अंतरालन (spacing) इस प्रकार अधिगम प्रक्रिया को त्वरित करती है।

इस प्रकार अंतरलिका वितरित विधि, समूहित विधि की अपेक्षा, अधिकांश स्थितियों में अधिक प्रभावी लगती है पर उसे और प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित तत्व काफी लाभदायक हो सकते हैं।

(अ) पूर्व प्रभावी निरोध (Retroactive inhibition) जो दी हुई अधिगम सामग्री क्रिया के विभिन्न भागों के बीच दखल (interference) के कारण होता है। अधिगम सामग्री की लम्बाई, समूहित अभ्यास तथा विभिन्न भागों की समानता के साथ बढता जाता है इसलिए ऐसी स्थिति में अभ्यास अवधि छोटी होनी चाहिए तथा अंतराल लम्बा होना चाहिए।

(ब) रटने (memorization) में कठिन तथा जटिल बोधात्मक (perceptual) चालक अधिगम (psycho-motor learning) में अंतराल छोटा बारम्बार (सप्ताह में एक से अधिक बार) होना चाहिए। संगठित, रूचिकर अधिगम में बिना प्रेरणा को कम किये बिना लम्बा अभ्यास अधिक प्रभावी होगा।

(स) ऊपर से थोपी गई अंतराल की अपेक्षा स्वेच्छा से चुना अंतराल अधिक प्रभावी होगा क्योंकि व्यक्ति की रूचि एवं प्रेरणा उसमें बनी रहेगी।

(द) अधिक्य अधिगम (over learning) भी स्मरण-वक्र (retention curve) को अनिश्चित काल तक उच्च स्तर पर रखती है।

स्वपरखप्रश्न (Check Your Progress)

02 अंतरालिक वितरित विधि को और श्रेष्ठ बनाने के लिए क्या-क्या करना चाहिए?

4.3.3 पठन बनाम प्रपठन विधि (Reading and Recitation method):

प्रपठन (recitation) अधिगम विधि में पहले कुछ आरम्भिक पठन (readiang) होता है उसके बाद उसका प्रत्यास्मरण (recall) होता है, जहाँ प्रत्यास्मरण में भूल जाते है या गलती करते है अधिगम को जल्दी से देखकर ठीक कर लिया जाता है (जैसा अक्सर ड्रामा में स्टेज के

पीछे से होता है, जब अभिनेता अपने dialogue भूल जाता है तो उसका अनुबोधन (prompting) करते हैं)।

तीसरी कक्षा से लेकर आठवी कक्षा तक के छात्रों तथा व्यक्तिगत प्रौढों पर एक प्रयोग (Gates p.387) में पठन के साथ प्रपठन विधि, निरर्थक अक्षरों (nonsense syllables) तथा जीवनी के रूप में अधिगम सामग्री में केवल बार-बार पढने (दोहराने) की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ पाई गई|

एक अन्य सामान्य विद्यालय स्थितियों में पाँचवीं और छठी कक्षाओं पर किये गये प्रयोग में छात्रों ने निरर्थक अक्षरों के साथ-साथ, वर्तनी वाले शब्दो (spelling words), गणितीय तथ्यों (arithmetical facts) और अंग्रेजी शब्दावली (English Vocabulary) भी सीखी। इसमें प्रपठन (recitation) पर 20% से 80% तक समय दिया गया परन्तु छात्रों को राय दी गई कि वे तभी प्रत्यास्मरण करें जब उन्हें यह विश्वास हो जाय कि उन्होंने पूरी अधिगम सामग्री सीख ली है। उसके बाद उन्हें प्रत्यास्मरण करने को कहा गया। जहाँ वह भूल गये, उत्तरो को देख लेने दिया गया। छात्र 10 मिनट तक यह प्रक्रिया करते रहें। उस विधि को जिसमें सबसे अधिक समय प्रपठन पर लगा उसमें सबसे अच्छे परिणाम आये परन्तु 60% और 80% प्रपठन की श्रेष्ठताओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

इस प्रकार के प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकले -

1. सामान्य विद्यालयी स्थिति में, चाहे जितना कम समय प्रपठन (recitation) पर दिया गया हो, प्रपठन विधि केवल पठन विधि से श्रेष्ठ है।
2. यह श्रेष्ठता अर्थपूर्ण तथा निरर्थक दोनों प्रकार की अधिगम सामग्रियों में समान रूप से पाई गई।
3. तुरन्त के प्रत्यास्मरण की अपेक्षा विलम्बित (delayed) प्रत्यास्मरण में प्रपठन विधि की श्रेष्ठता कहीं अधिक थी। इस प्रकार की श्रेष्ठता के संभावित कारण इस प्रकार चिन्हित किये गये -
   - (i) कार्य करने के लिए प्रपठन (recitation) विधि तात्कालिक लक्ष्य प्रस्तुत करती है।
   - (ii) यह विधि परिणामों का सटीक (exact) ज्ञान देती है जिससे प्रयत्न किफायती (economical) दिशा में निर्देशित होता है।
   - (iii) यह विधि सही अनुक्रिया की पुष्टि करती है तथा आत्मविश्वास उत्पन्न करती है।
   - (iv) यह विधि स्वतंत्र एवं उग्र (aggressive) दृष्टिकोण का पोषण (favour) करती है।
   - (v) यह अधिगम सामग्री को संसक्त प्रतिक्रिया संरचना (coherent response pattern) के रूप में संगठित करने को पोषित करती है।
   - (vi) यह विधि उस स्थिति पर विशेष ध्यान देती है जो जीवन प्रस्तुत करता है इसलिए अधिगम की परिस्थितियों को इस प्रकार व्यवस्थित करती है कि व्यक्ति समय की मांग के अनुसार प्रक्रिया करना सीखे।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)	
03	प्रपठन विधि की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
04	प्रपठन विधि की श्रेष्ठता के कारण बताइए।

4.3.4 प्रत्यय मानचित्रण (Concept Mapping) :

जब किन्हीं वस्तुओं या घटनाओं में निहित नियमित्तताओं (regularities) को कोई नाम दिया जाता है तो वह नाम उसका प्रत्यय (Concept) कहलाता है। उदाहरण के लिए ऐसी वस्तुएँ जिनमें 'सीट (Seat) होती है, 'पाये होते है' जो बैठने के काम आती है,' जैसी नियमितताएं होती हैं उसके प्रत्यय को हम कुर्सी का नाम देते हैं।

अपने वातावरण एवं संस्कृति के माध्यम से बालक इस प्रकार के ऐसे बहुत से प्रत्यय (Concepts) सीखते हैं जिनकी रचना सदियों (Centuries) में जाकर हुई। इस प्रकार के प्रत्ययों के सीखने तथा निर्माण करने की प्रक्रिया को त्वरित करने में विद्यालय का योगदान काफी महत्वपूर्ण है परन्तु नूतन (recent) है।

नन्हा शिशु अपने चारों ओर के वातावरण से आने वाले कोलाहल (noises) से उसका पोषण करने वाले माता-पिता की आवाजों तथा अन्य प्रमुख घटनाओ से आनेवाली आवाजों में विभेदीकरण सीख लेता है उसकी इनके स्वरों के प्रति उसकी अनुक्रियाएँ जो चिल्लाहट (cries) के रूप में होती है, इन प्रमुख घटनाओ में देखी गई नियमित्तता का संकेत है। इस प्रकार की नियमित्तताओं (regularities) को छाँटना (sortout), उन्हें पहचानना तथा उन्हें कोई लेवल (label) देने की जन्मजात क्षमता उसे बोलना सिखाती है और यह कार्य शिशु सामान्यतः तीन वर्ष के अन्दर सीख लेता है। यह एक अविश्वसनीय कमाल (incredible feat) है क्योंकि कई तरह से व्यक्ति की जीवन का सबसे कठिन पर आवश्यक कार्य है। जब तक बालक अपने अनुभवों से इन प्रथम प्रत्ययों (concepts) की रचना नहीं कर लेता जैसे पेड़, वर्षा, जाड़ा, गाय, वर्षगाँठ इत्यादि जैसे लेवल वाले नियमित्तताओ को पहचानकर तथा उनका लेवल नही दे पाता है। अपनी भाषा में प्रयोग नहीं कर सकता। सामान्यतः छोटे बच्चे नये लेवलों (labels) को सीखने तथा उनमें निहित नियमित्तताओं को समझने के लिए इतने उत्सुक होते हैं कि अक्सर माता-पिता तथा अन्य बड़े उनके खोजी प्रश्नों से खीज जाते हैं।

उसके बाद बालक उन भाषा नियमों को सीखना शुरू करते हैं जो प्रत्यय लेबल (concept labels) के साथ संयोजित कर के घटनाओं या वस्तुओं को अधिक सुस्पष्ट अर्थ प्रदान करते हैं।

दूध (प्रत्यय),

मुझे दूध

प्लीज मुझे पीने के लिए कुछ दूध दीजिए।

विद्यालय में प्रवेश लेने के पहले बालक सामान्यतः बहुत से ऐसे प्रत्यय तथा उनके भाषायी नियम सीख लेते हैं जो उनके विद्यालयी अधिगम में अहम् भूमिका निभाते हैं। यही नहीं वह घटनाओं और वस्तुओं को इस प्रकार संगठित करना सीख लेते है जो उन्हें नवीन

नियमित्तताओं को देखने योग्य बनाती है तथा उन लेबलो (labels) को पहचानने में सहायक होती है जो उनका प्रतिनिधित्व करती है।

किसी भी शैक्षिक अनुभव में या अनुभव के परिवर्तन में सोचना, महसूस करना तथा क्रिया करना निहित होता है। शिशु, विद्यालयी बालक, विद्वान, नौसिखिया सभी कोई समान अनुभव कर सकते हैं परन्तु उनके अर्थ बहुत अधिक भिन्न हो सकते हैं। शिक्षक का कार्य अनुभव के अर्थ को सक्रिय रूप से बदलना है। उसका उद्देश्य छात्र को अपने अनुभवों पर विचार करना (reflect) तथा नवीन अधिक शक्तिशाली अर्थो की रचना करना है इसलिए केवल सोचना और क्रिया करना पर्याप्त नहीं है, महसूस करना (feeling) भी इसके साथ आवश्यक है। जब तक अधिगमक अधिगम कार्य के अर्थ को नहीं समझेगा उसे अपनी योग्यता पर विश्वास नहीं होगा।

प्रत्यय मानचित्र (concept maps) उन प्रत्ययों (जो कथन (propositions) के रूप में होते हैं), के बीच अर्थपूर्ण सबन्ध प्रस्तुत करते हैं। प्रस्ताव दो या उससे अधिक ऐसे प्रत्ययों के बीच होते हैं जो अर्थ देने वाले शब्दों से जुडे होते हैं, जैसे भैस काली है, घास हरी है, रेलगाडी चल रही है, इत्यादि |

जीवन के अरम्भिक के कुछ प्रत्ययों (concepts) जिन्हें शिशु खोज विधि से सीखता है को छोड्कर, अधिकांश प्रत्ययों के अर्थ उन जोड़ने वाले शब्दों के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं जिनमें वह सन्निहित (embedded) होते हैं। यद्यपि वास्तविक अनुभव प्रत्यय-अधिगम (concept-learning) में सहायक होते हैं। उनके लेवल में निहित नियमित्ताओं (regularities) को औपचारिक कथनों (proposition) से अतिरिक्त अर्थ मिलता है। जैसे - त्रिभुज में तीन भुजाएँ और तीन कोण होते हैं में त्रिभुज प्रत्यय को अधिक सुस्पष्टता मिलती है।

प्रत्यय मान चित्र (concept map) एक ऐसी ही योजनाबद्ध विधा है जिसके द्वारा किसी प्रस्तावों की संरचना (a frame work of proposition) में निहित प्रत्ययों के अर्थों को प्रस्तुत किया जाता है।

Concept maps की कुछ अन्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

1 ये छात्रों एवं शिक्षकों को किसी विशिष्ट अधिगम कार्य में प्रयुक्त कुछ उन प्रमुख विचारों को स्पष्ट करते? जिन पर ध्यान देना आवश्यक है।

2 ये ऐसा पथ मार्ग (road map) प्रस्तुत करते हैं जिनके सहारे हम कथनों (propositions) के प्रत्ययों के बीच सम्बन्ध (अर्थ) स्थापित कर सकते हैं।

3. ये अधिगम कार्य की समाप्ति पर हमने क्या सीखा इसका योजनाबद्ध सारांश भी प्रस्तुत कर सकते है।

4 जब नवीन प्रत्ययों (concepts) या प्रत्यय अर्थों को व्यापक, अधिक समावेशी प्रत्ययों के अन्तर्गत सन्निहित/सम्मिलित (subsume) कर लिया जाता है तो अर्थपूर्ण अधिगम बड़ी सुगमता से आगे बढता है इसलिए प्रत्यय मानचित्र को श्रेणीबद्ध होना चाहिए अर्थात अधिक सामान्य, अधिक समावेशी प्रत्ययों को मानचित्र के सबसे ऊपर होना चाहिए, उसके नीचे कमश: अधिक विशिष्ट, कम समावेशी को नीचे की ओर क्रमबद्ध करना चाहिए। नीचे बन्द आकृति वाली ज्यामितिक आकृतियों और उनसे संबन्धित प्रत्ययों को दर्शाया गया है।

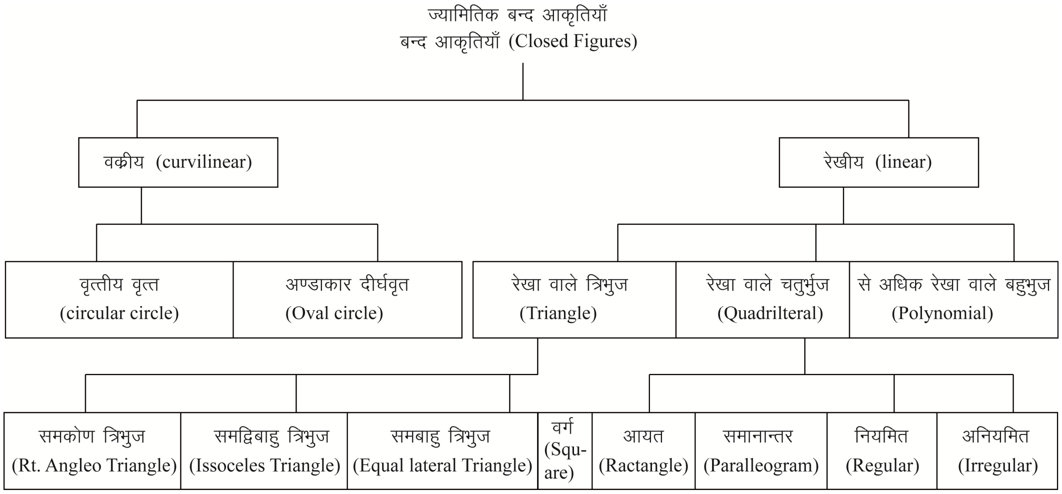

आरेख 4.2 - ज्यामितिक बन्द आकृतियाँ

5. प्रत्यय मानचित्र प्रत्ययों (concepts) को प्रत्यक्ष (externalise) करने की तकनीक हैं।

निश्चय रूप से प्रत्यय मानचित्र के निर्माण की प्रक्रिया में हम नये प्रत्यय सम्बन्धों का भी विकास कर सकते हैं। विशेषकर जबकि हम सक्रिय रूप से प्रत्ययों के बीच ऐसे कथनों (proposition) की रचना ढूँढते हैं जिनको पहले सम्बन्धित नहीं समझा गया था।

प्रत्यय मानचित्र उन प्रत्ययों और कथनों का स्पष्ट (explicit) प्रत्यक्ष, प्रतिनिधित्व (representative) है जिन्हें व्यक्ति धारण करता है। छात्र और शिक्षक अपने आपसी विचार विमर्श से यह निर्धारित कर सकते हैं कि

- क्यों एक विशेष कथनीय संयोजन (propositional linkeage) अच्छी या वैध (valid) है?
- प्रत्ययों के बीच में, क्या कोई संयोजन (linkeage) छूट गया है या कोई भ्रांति है?
- प्रत्ययों को (जहाँ आवश्यक हो) नवीन अर्थ दिये जाये।

अधिगम का बंटवारा नहीं होता, यह एक व्यक्तिगत जिम्मेदारी है परन्तु अर्थों पर बहस हो सकती है। साझेदारी हो सकती है, समझौता और सहमति हो सकती है। इस प्रकार कक्षा शिक्षण में प्रत्यय मानचित्रण एक उपयोगी सामाजिक कार्य कर सकता है जिस से हम प्रत्यय के अर्थो को मिल-बैठकर निर्धारित करते हैं।

इस प्रकार प्रत्यय मानचित्रण शिक्षण अधिगम पाठ्यक्रम और अभिशासन (governance) में अपनी भूमिका निभा सकते हैं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

05. प्रत्ययमान चित्र छात्रों को किस प्रकार सहायक होते हैं?

06. प्रत्ययमान चित्रों के संभावित उपयोग बताइये?

4.3.5. वी-स्वत: शोध विधि (V - Heuristic Method)

यह विधि न केवल नये ज्ञान को कैसे प्राप्त किया गया। इस प्रकार यह हमें सिखाती है कि हम कैसे सीखें (Learn how to learn)? आज की शिक्षा में इस प्रकार की स्वत: शोध

(heuristic) विधि पर बहुत बल दिया जा रहा है। ज्ञान की अपेक्षा उस की प्राप्ति की प्रक्रिया (process rather than product of knowledge) पर अधिक बल दिया जा रहा है।

इसको एक साधारण उदाहरण से अधिक स्पष्ट कर रहे हैं -

V-स्वत: शोध विधि का एक उदाहरण :-

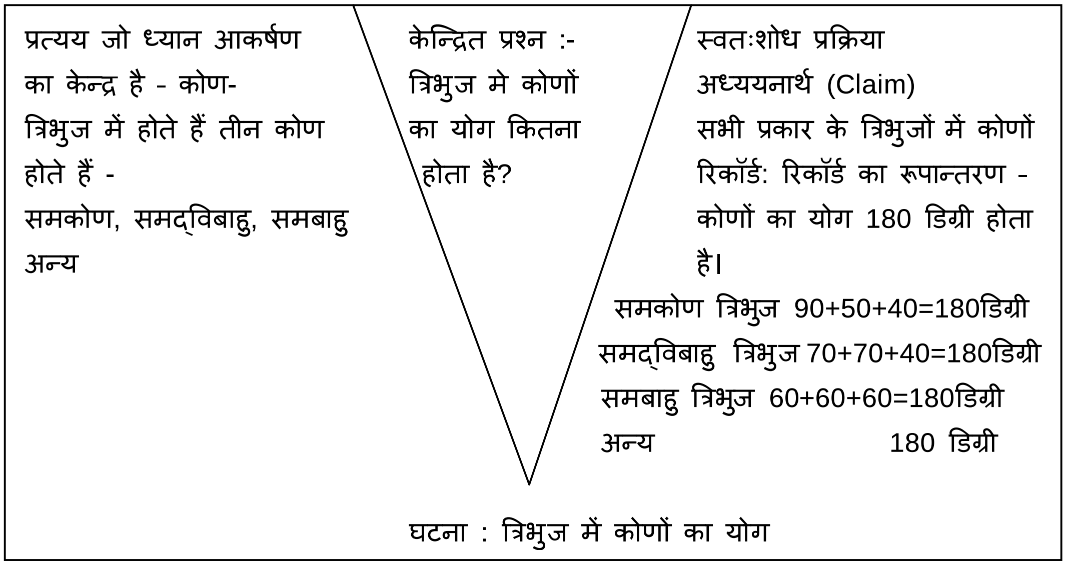

उपरोक्त उदाहरण में घटना त्रिभुज में कोणों का योगमूल में है इसलिए V-के नीचे रखा गया है। केन्द्रित प्रश्न “त्रिभुज में कोणों का योग कितना होता है?" छात्र को चिन्तनशील होने के लिए प्रेरित करता है।

इसको जानने के लिए हम

1. प्रश्न में निहित प्रत्ययों: कोण तथा त्रिभुज का प्रत्यय-चित्रांकण करते है जैसा ऊपर बांई तरफ दिखाया गया है।
2. कोणों के योग को, विभिन्न प्रकार के त्रिभुजों में ज्ञात करते हैं : समकोण त्रिभुज, समद्विबाहु त्रिभुज, समबाहु त्रिभुज तथा अन्य में - जैसा रिकार्ड में दिखाया गया है।
3. अध्ययनार्थ:- सभी कोणों का प्रत्येक प्रकार के त्रिभुज में योग 180 डिग्री होता है।

जब हम ज्ञान का निर्माण करने जा रहे हैं तो हमें घटनाओं या वस्तुओं का अवलोकन करने के लिए तथा उसका रिकार्ड बनाने के लिए प्रत्ययों का प्रयोग करना पड़ता है। हम किस प्रकार का रिकार्ड बनाये, यह एक या अधिक केन्द्रक प्रश्नों पर (focused questions) भी निर्भर करेगा । विभिन्न केन्द्रक प्रश्न घटना के विभिन्न पक्षों पर केन्द्रभूत होते हैं । उपरोक्त उदाहरण में हमने "त्रिकोण के कोणों के योग कितना होगा' केन्द्रक प्रश्न के रूप में लिया है इसलिए हमारे record में विभिन्न प्रकार के त्रिभुजों में कोणों के योग का record होगा।

रिकार्डो के रुपान्तरण (transformation) का उद्देश्य उसे उस रूप में रखना है जिससे हम अपने केन्द्रक प्रश्न का उत्तर प्राप्त कर सकें । छात्र आपस में या और शिक्षक के साथ चर्चा

करके रिकार्ड से सर्वमान्य उत्तर प्राप्त कर सकते हैं । यहाँ छात्रों को कुछ सृजनात्मकता की आवश्यकता होगी।

v- स्वत: शोध (V-heuristic) के उपयोग:-

1. विज्ञान प्रयोग शाला के अतिरिक्त ट.स्वत: शोध विधि का प्रयोग कई अन्य समस्याओं को समझने में भी एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में किया जा सकता है ।
2. हम अपने स्वत: शोध की प्रक्रिया का विश्लेषण करके यह देख सकते हैं कि हम कहाँ गलती करके वांछित उत्तर नहीं पा रहे है ।

   यहाँ लेखक को एक पुराना उल्लेख ध्यान में आता है : एक राजा ने अपने लड़के को ज्योतिष में शिक्षा दिलाई । परीक्षा स्वरूप उसने अपनी मुट्ठी में एक हीरे की अंगूठी बन्द कर के लड़के से प्रश्न किये -

   मेरी बन्द मुट्ठी में किस आकार की वस्तु है ?

   उत्तर था : गोल (अंगूठी गोल थी)

   वह किस धातु की है ?

   उत्तर था : पत्थर (हीरे की थी)

   क्या हो सकती है ?

   उत्तर था : चक्की का पाट।

   यहाँ गलती कहाँ हुई ? विश्लेषण में, क्योंकि मुट्ठी में चक्की के पाट, ऐसी पड़ी वस्तु नहीं आती ।

2. अनुदेशन कार्यक्रमों (instructional programmes) की रूपरेखा बनाने में भी ट. विधि काफी उपयोगी हो सकती है । जैसे- कार्यकम में किस प्रकार के ज्ञान को सम्मिलित किया जाये (न सम्मिलित किया जाये) तथा उसके लिए, किस प्रकार की रणनीति (strategy) बनाई जाये।

3. अधिगम की उपरोक्त शैलियों (Styles) का न केवल छात्रों (बालको) के लिए उपयोग है, शिक्षक (प्रौढ) भी इसका प्रयोग अपने अनुदेशन कार्यक्रम का निर्माण करने तथा कक्षा शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए कर सकते हैं। छात्रों के सहयोग से बनाये ऐसे प्रोग्राम न केवल प्रभावी होंगे छात्रों के लिए रोचक भी होंगे।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

07 v - स्वत: शोध की संकल्पना को स्पष्ट कीजिए?

08 v- स्वत: शोध छात्र तथा शिक्षकों दोनों के लिए किस प्रकार उपयोगी है? -

4.4सारांश (Summary) :

प्रभावी अधिगम, अधिगम सामग्री के स्वरूप के अतिरिक्त बहुत कुछ अधिगम शैली (Style) पर निर्भर करता है । जैसे सुव्यवस्थित, सुसंगठित अधिगम सामग्री को सीखना तथा स्थायी रखना अपेक्षाक्रत सरल होता है परन्तु उपयुक्त अधिगम शैली के चुनाव में अधिगम के स्वरूप को देखते हुए निर्णय लेने होंगे । जैसे -

1. यद्यपि समग्र बनाम खण्ड विधि में अधिकांश शिक्षा मनोवैज्ञानिक सभी प्रकार की अधिगम सामग्री के लिए समग्र विधि का पक्ष लेते हैं परन्तु उसकी यह श्रेष्ठता परिस्थिति जन्य लगती है । समग्र विधि की श्रेष्ठता एवं अधिकतर सुसंगठित एवं संसक्ति (coherent) अधिगम सामग्री में अधिक अपेक्षित है, शर्त है कि अधिगमक सामग्री की इन विशेषताओं के प्रति सचेत है। अक्सर खण्ड विधि से आरम करने वाले (जैसे टाइपिंग में) समग्र विधि (letter से word या sentence पर आ जाते है)
   लम्बी तथा कठिन सामग्री में खण्ड विधि अधिक उपयुक्त लगती है परन्तु विधि का चुनाव अधिगमक की प्रेरणा सहनशक्ति तथा अधिगम में उसकी आवश्यकता पर भी निर्भर करता है ।
2. समूहित बनाम वितरित विधियों में से चुनाव करने में प्रायोगिक प्रमाणों के आधार पर सुझाव दिया गया है कि आरम्भिक अधिगम के तुरन्त बाद (क्योंकि भूलने की गति बहुत तेज होती है) अंतरालिक (spaced) परन्तु प्राय: (frequent) समीक्षा और बाद में लम्बी अंतरालों में समीक्षा सीखने का सबसे उपयुक्त उपाय है ।
3. इसी प्रकार पठन और प्रपठन विधियों में से चुनाव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए: यद्यपि प्रपठन (recitation) विधि सभी स्थितियों में श्रेष्ठ पाई गई परन्तु कई कारणों से तुरन्त प्रत्यास्मरण की अपेक्षा विलम्बित (delayed) प्रत्यास्मरण में यह कही अधिक श्रेष्ठ है।
4. प्रत्यय मान चित्रण (concept mapping) विधि भी अधिगम को अधिक प्रत्यक्ष, अर्थपूर्ण, विचारशील तथा सृजनात्मक बनाने में काफी सहायक है । यही नहीं (i) यह छात्रों एवं शिक्षकों को किसी विशिष्ट अधिगम कार्य में कुछ उन प्रमुख विचारों को स्पष्ट करते हैं जिन पर ध्यान देना आवश्यक है। (ii) ऐसा पथ मार्ग (road map) प्रस्तुत करते हैं जिनके सहारे कथनो में प्रयुक्त प्रत्ययो के बीच सम्बन्ध (अर्थ) स्थापित कर सकते हैं तथा (iii) कार्य की समाप्ति पर क्या सीखा गया, इसका योजनाबद्ध सारांश प्रस्तुत कर सकते हैं।

5. बी-स्वत: शोधविधि (V-Heuristic Method) न केवल नये ज्ञान को प्राप्त करने में सहायक होती है, यह हमें यह भी सीखाती है कि कैसे सीखें (Learning how to learn) ?

विज्ञान प्रयोगशाला के अतिरिक्त इस विधि का प्रयोग कई अन्य समस्यओ के समझने में भी शक्तिशाली उपकरण के रूप में किया जा सकता है । जैंसे- (I) स्वत: शोध प्रक्रिया का विश्लेषण करके हम देख सकते हैं कि निष्कर्ष निकालने में हमने कहाँ त्रुटि की है (ii) अनुदेशन कार्यक्रम के निर्माण में भी यह काफी उपयोगी हो सकती है ।

4.5 शब्दावली (Glossary)

1. समग्र विधि (Whole method) - इसमें अधिगम सामग्री को समग्र रूप से सीखा जाता है परन्तु घटकों के समूह को तभी समग्र कहेंगे जब उनमें पारस्परिक संबंध हो, एक प्रकार की एकता हो ।
2. खण्ड विधि - इसमें घटकों के समूह में घटक, समूह को अर्थ प्रदान करता है, परन्तु उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता।
3. समूहित विधि - इसमें समूर्ण अधिगम सामग्री को बार-बार दोहराया जाता है ।
4. वितरित विधि - इसमें सामग्री की छोटे-छोटे टुकड़ों तथा अन्तराल में समीक्षा की जाती है।
5. पठन विधि - पूरी अधिगम सामग्री को बार-बार दोहराया जाता है ।
6. प्रपठन विधि - एक बार सीखकर, पूरी सामग्री का बिना देखे प्रत्यास्मरण किया जाता है, जहाँ भूल जाते हैं, सामग्री को देखकर ठीक कर लिया जाता है ।
7. प्रत्यय मानचित्रण - कथनों में सन्निहित प्रत्ययों के बीच अर्थपूर्ण संबन्ध प्रस्तुत करने, जैसे- भैंस काली होती है ।
8. v.स्वत:शोध विधि - ज्ञान की उत्तप्ति के साथ-साथ उसके प्राप्त होने की प्रक्रिया भी प्रदान करती है ।

4.6 संदर्भ ग्रंथ (References) :

1. Blair, G.M., Jones, R.S., Simpson, R.H.: Eduactional Psychology (2nd. Ed.); The Macmillan Company, New York, 1962.
2. Bigge, M.L. and Hunt, M.P: Psychology Foundation of education; Haper & Row Pub., New York.(1968).
3. Gates, A.I., Jersild, A.T., McConnell, T.R. and Challman, R.C.: Educational Psychology (3rd Ed.); The Macmillan Co., New York, 1948.
4. Novak, J.D. and Gowin, D.B.(1994): Learning How to Learn: Cambridge University Press, New York.

4.7 स्वपरख प्रश्न के उत्तर / हेतु सुझाव (Answer to Self Learning Exercises)

01 प्रगतिशील खण्ड विधि में अधिगम सामग्री को क्रमिक खण्डों में बाँट दिया जाता है फिर पहला खण्ड सीखा जाता है, फिर दूसरा खण्ड सीखकर पहले वाले खण्ड से सम्बन्धित कर दिया जाता है, फिर तीसरा खण्ड सीख कर पहले वाले से सम्बन्धित किया जाता है । इस प्रकार क्रमश: यह जब अधिगम सामग्री लम्बी या / और कठिन होती है ।

02 (1) पूर्व प्रभावी निरोध (Retroactive inhibition) को न्यूनतम करने के लिए अभ्यास अवधि छोटी तथा अंतराल लम्बा करना चाहिए |

(ii) रटने में कठिन तथा जटिल बोधात्मक चालक अधिगम (Perceptual psycho Metor Learning) में अंतराल छोटा, बारम्बार (सप्ताह में एक से अधिक बार) होना चाहिए|

(iii) ऊपर से थोपे अंतराल की अपेक्षा स्वेच्छा से चुना अन्तराल अधिगमक की रूचि और प्रेरणा को बनाये रखेगा ।

03 प्रपठन विधि (recitation method) में पहले कुछ आरंभिक पठन होता हैं फिर उसका प्रत्यास्मरण होता है, जहाँ भूल जाते हैं अधिगम सामग्री को देखकर ठीक कर लिया जाता है ।

04 प्रपठन विधि- (1) कार्य करने के लिए तत्कालिक लक्ष्य प्रस्तुत करती है । (ii) परिणामों का सटीक ज्ञान देकर अधिगम को किफायती बनाती है। (iii) सही अनुक्रियाओं की पुष्टि करती है। (iv) स्वतंत्र एवं उग्र दृष्टिकोण का पोषण करती है। (v) अधिगम सामग्री को coherent response pattern के रूप में संगठित करने को प्रेरित करती है ।

05 प्रत्यय मानचित्र उन प्रत्ययों को प्रत्यक्ष (externalize) करने की तकनीक है जिनको व्यक्ति धारण करते हैं ।

06 प्रत्यय मानचित्रण के संभावित उपयोग; (i) अधिगम कार्य में प्रयुक्त प्रमुख विचारों को स्पष्ट करने में (ii) कथनों के प्रत्ययों के बीच संबंध स्थापित करने में, (iii) अधिगम में क्या सीखा, उसका सारांश प्रस्तुत करने में (iv) अधिगम को अर्थपूर्ण एवं सुगम बनाने में, (v) प्रत्ययों को स्पष्ट करने में।

07 v - स्वत: शोध विधि ज्ञान प्राप्ति के साथ प्राप्त करने की प्रक्रिया को भी प्रत्यक्ष करने की विधि है ।

08 v-स्वत: शोध विधि समस्याओं को समझकर उसका निदान ढूँढने की एक शक्तिशाली उपकरण है जिसमें पूरी प्रक्रिया का विश्लेषण करके उपयुक्त विधियों द्वारा प्रक्रिया की गलतियों को सुधारा जा सकता है ।

4.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions) :-

1. समग्र एवं खण्ड अधिगम विधियों की अवधारणाओं को स्पष्ट करते हुए उन स्थितियों का वर्णन कीजिए जिनमें वे अधिक श्रेष्ट हैं ?
2. समूहित एवं वितरित विधियों की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए ? उनकी सापेक्ष श्रेष्ठता पर प्रकाश डालिए ।
3. पठन तथा प्रपठन विधियों का वर्णन कीजिये । प्रपठन विधि सामान्यत: क्यों श्रेष्ठ होती है ?
4. प्रत्यय मानचित्र के उपयोग बताइये। कोई समावेशी (inclusive) प्रत्यय लेकर उसका मानचित्रण प्रस्तुत कीजिए ।

5. v- स्वत: शोध विधि क्या है ? यह छात्र के अधिगम को कैसे रूचिकर एवं प्रभावी बनाती है ? स्पष्ट करें ।

इकाई 5 (UNIT 5).

अधिगम के प्रकार, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक, अधिगम कार्य

(Type of Learning, Factors Affecting Learning, Learning Tasks)

इकाई की रूपरेखा (Structures) :-

5.0 उद्देश्य (Objectives)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

5.2 अधिगम के प्रकार (Types of Learning)

5.2.1 संज्ञानात्मक अधिगम (Cognitive Learning)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.2.1.1 संज्ञानात्मक अधिगम का वर्गीकरण

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.2.2 मनोवृत्यात्मक अधिगम (Affective or Attitudinal Learning)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.2.2.1 अवधारणा एवं परिभाषा

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.2.3 कौशलात्मक या मनोचालक अधिगम (Conative or psychomotor leaning) -

परिभाषा एवं विशेषतायें

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.3 अधिगम का - जीवन में समन्वय

5.4 अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting learning)

5.4.1 शारीरिक कारक

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.4.2 मनोवैज्ञानिक कारक

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.4.3 सामाजिक कारक

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.4.4 वातावरणीय कारक

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

5.5 अधिगम कार्य (Learning tasks)
5.5.1 अधिगम कार्य की कुछ गतिविधियाँ
स्वपरख प्रश्न (Cheak Your Progress)
5.5.2 उत्तम अधिगम कार्यों की विशेषतायें
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
5.6 सारांश (Summary)
5.7 शब्दावली (Glossary)
5.8 संदर्भ ग्रंथ (Further reading)
5.9 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to self-learning Exercise)
5.10 परीक्षायोग्य प्रश्न (Unit end questions)

5.0 उद्देश्य :-

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- अधिगम के प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे
- अधिगम के प्रकारों की व्याख्या कर सकेंगे
- अधिगम के प्रकारों को प्रदर्शित करने वाली शब्दावली को पहचान सकेंगे
- अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों की सूची बना सकेंगे
- अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्गीकरण कर सकेंगे
- इनका ध्यान रखते हुए कक्षा अध्यापन में अधिगम के लिए अनुकूल गतिविधियों एवं स्थितियों को पहचान सकेंगे
- विविध अधिगम कार्यो का वर्णन कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना :-

अधिगम में व्यवहार परिवर्तन होता है, परन्तु सभी व्यवहार परिवर्तन अधिगम के कारण नहीं होते। आयु के साथ व्यक्ति में शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन होते हैं जिन्हें हम परिपक्वता (Maturation) की संज्ञा देते हैं। ये व्यवहार परिवर्तन का एक कारण बन सकते हैं, इसी प्रकार किसी आकस्मिक घटना से अक्षम होने के कारण व्यक्ति में व्यवहार परिवर्तन हो सकता है। मादक पदार्थो के सेवन से भी कुछ समय के लिए व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन आ सकता है। परन्तु यह सभी परिवर्तन अधिगम की श्रेणी में नहीं आते।

- अधिगम एक अपेक्षाकश्त-स्थायी अनुभवजन्य व्यवहार परिवर्तन है जो किसी क्रिया या प्रतिक्रिया के कारण होता है।
- जब व्यवहार को पूर्व नियोजित दिशा में मोड़ा जाता है तो यह शिक्षा के अन्तर्गत आता है। शिक्षा का लक्ष्य छात्र को रचनात्मक जीवन के लिए तैयार करना है। इसलिए यह बालक के व्यवहार में पूर्व निर्धारित पाठ्यक्रम तथा अन्य सह पाठ्यगामी क्रियाओं द्वारा वांछित परिवर्तन लाने का प्रयत्न करती है।

- शिक्षक के रूप में इस प्रयास में आप सफल हो इसके लिए आपको अधिगम की अवधारणा के साथ-साथ अधिगम के प्रकार, उसको प्रभावित करने वाले कारकों तथा अधिगम कार्यों को समझाना उपयोगी होगा|

5.2 अधिगम के प्रकार (Type of Learning)

अधिगम (सीखना) जिसे हमने अनुभवजन्य व्यवहार परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया उसमें व्यक्ति को जैसे निर्णय प्रक्रिया (decision making), कौशल (skills) इत्यादि सभी प्रकार के व्यवहार परिवर्तन शामिल हैं। शिक्षा में जब छात्र वांछित परिवर्तन दर्शाते हैं तो हम कहते हैं कि इस दिशा में अधिगम हु आ। यदि एक विद्‌यार्थी गणित का वह समीकरण हल करने में असफल रहा जिसे अन्य विद्‌यार्थी हल कर पा रहे हैं तो आप कहेंगे कि वह उसे सीखने में असमर्थ रहा। यदि एक अन्य उदाहरण द्‌वारा करने पर वह सफलतापूर्वक उस समीकरण को हल कर लेता है तो आप कहते है कि वह उस समीकरण को हल करना सीख गया। इस प्रकार यदि एक विद्‌यार्थी किस पुष्प के चित्र के रेखांकन में असफल रहता है तो हम कहते हैं कि उसे चित्र के विभिन्न पक्षों जैसे आकृति (Shape), अनुपात (Proportion), दिशाविधि (directionality) दृश्य-विवेधिकरण (visual discrimination) को सीखना होगा। नई भाषा को सीखने के लिए उच्चारण का अनुकरण एबं शब्दावली आवश्यक है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अधिगम या सीखने का वास्तविक अर्थ ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति इत्यादि का अर्जन करना तथा उसके आधार पर व्यवहार करना है ।

उपरोक्त आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि चूंकि अधिगम के लक्ष्य (goals), प्रतिफल (outcomes) और विषयवस्तु इत्यादि भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, इन्हें अध्ययन के लिए हम मोटे तौर पर तीन वर्गों में बाँट सकते हैं:

- संज्ञानात्मक अधिगम (Cognitive Learning)
- भावात्मक एवं मनावृत्यात्मक अधिगम (Affective and Attitudinal Learning)
- मनोचालक अधिगम (Conative or Psychomotor Learning)

यद्‌यपि प्रत्येक अधिगम में इन तीनों का कम या अधिक मात्रा में योगदान होता है हम इनको अलग-अलग कुछ विस्तार से लेंगे -

5.2.1 <u>संज्ञानात्मक अधिगम :-</u>

संज्ञान (Cognition) शब्द का सामान्य अर्थ 'बोध' होता हैं। दैनिक जीवन में आपके आस-पास रखी वस्तुओं, व्यक्तियों तथा घटना का आपको बोध होता है। 2 वर्ष का एक बच्चा चश्में को देखकर उसे आँखों पर रखने का प्रयत्न करता है, क्योंकि उसने घर के किसी वयस्क को ऐसा करते देखा हैं। ढाई-तीन वर्ष के बालक से यदि कहा जाय कि 'बेटा मुझे मेरा चश्मा लाकर दीजिए, तो आपको अनेक वस्तुओं, पेन, चाबी, मोबाइल के बीच से चश्मा उठाकर बालक देगा। इन दोनों में सही एवं वांछित अनुक्रिया (desired response) उसके अधिगम का घोतक है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

विचार करें - (01)

(i) 2 वर्ष के बालक ने चश्मे का सही स्थान एवं उपयोग कैसे सीखा - प्रेक्षण से/प्रशिक्षण से

(ii) ढाई-तीन साल का बच्चा 4-5 वस्तुओं में से चश्मे की पहचान कैसे कर सका ? परीक्षण/प्रशिक्षण/श्रवण एवं प्रेक्षण |

व्यक्तियों एवं घटनाओं के निरीक्षण-प्रेक्षण (Observation) से बालक विशिष्ट शब्द के साथ विशिष्ट वस्तु का संबंध जुड़ते देखते हैं। इस प्रकार ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बँधा हुआ या ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर बुद्धि द्वारा संग्रहण एवं विश्लेषण भी साथ-साथ होता रहता है ।

इस प्रकार तथ्यों का ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्षीकरण (Perception), प्रेक्षण (Observation), पुनर्स्मरण (recall), एवं विश्लेषण द्वारा सीखने को संज्ञानात्मक श्रेणी में रखते हैं। उदाहरण के लिए भाषा ध्वनियों, अक्षरों, वर्णों की लिपि रूप में पहचान, विज्ञान विविध तत्त्वों के प्रतीकों के लिखित रूपों Ca -केल्शियम, Na-सोडियम इत्यादि की पहचान एवं बोध तथा उपयोग अर्जित करना संज्ञानात्क अधिगम के उदाहरण है।

अत: सूचनाओं, तथ्यों, घटनाओं के प्रत्यक्षीकरण एवं विश्लेषण की योग्यता से होने वाला व्यवहार परिवर्तन, संज्ञानात्मक अधिगम कहलाता है।

कक्षा शिक्षण में विविध विषयों के पाठ्यक्रम के अध्यापन के समय होने वाली अधिगम प्रक्रिया में संज्ञानात्मक अधिगम सबसे अधिक होता हैं।

5.2.1.1 संज्ञानात्मक अधिगम का एक श्रेणीकरण इस प्रकार भी किया गया है-

संज्ञानात्मक अधिगम का एक श्रेणीकरण इस प्रकार भी किया गया है-

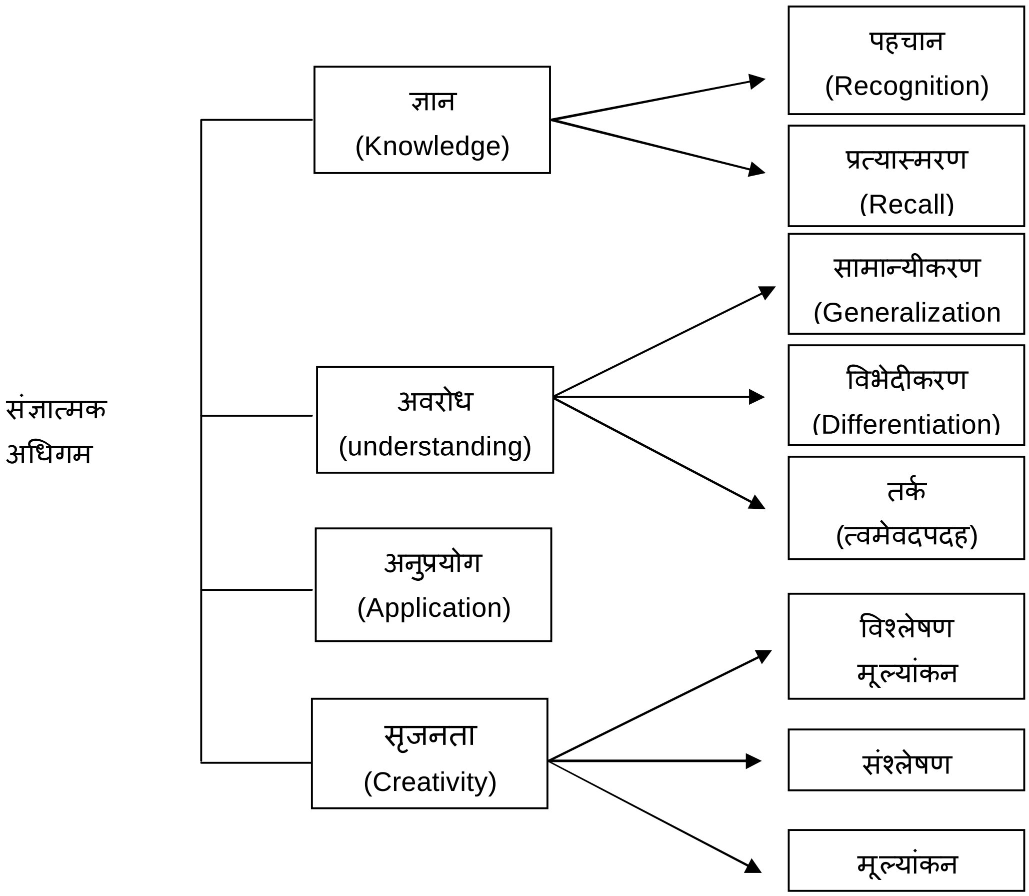

आरेख 5.1 संज्ञात्मक अधिगम का श्रेणीकरण

ज्ञान (Knowledge)

(i) पहचान (Recognition)

उदाहरण - भारत को स्वतंत्रता कब मिली, सही उत्तर पर गोला बनाइये'

1947

1948

1949

1950

(ii) प्रत्यास्मरण (Recall)

उदाहरण - उपरोक्त प्रश्न को यहाँ इस रूप में लिख सकते हैं

भारत को स्वतंत्रता किस वर्ष मिली?

अवबोध (Understanding)

(i) सामान्यीकरण (Generalisation)

उदाहरण गाय, शेर, घोड़ा, कुत्ता, में क्या समानता हैं,

सबसे उपयुक्त उत्तर पर निशान लगाइये

अ. सभी थलचर हैं

ब. सभी जीवधारी हैं

स. सभी चौपाये हें

द. सभी हर जगह पाये जाते हैं

(ii) विभेदीकरण (Differentiation)

उदाहरण निम्नलिखित जीवधारियों का जलचर, थलचर तथा उभयचर में वर्गीक्रत कीजिए मगर, मछली, मेढ़क, बाज, तोता, खरगोश, गाय, कुत्ता

(iii) तर्क (Reasoning)

उदाहरण गाय सबसे सर्वप्रिय जानवर है क्योंकि वह-

अ. दूध देती है

ब. बहु त सीधी होती हैं

स. उसका सब उत्पाद मनुष्य के काम आता है

उ. वह बहु त उपयोगी है

अनुप्रयोग (Application) :-

उदाहरण छात्र गणित के ज्ञान का उपयोग दिन-प्रतिदिन के लेन-देन में करता है।

विश्लेषण, संश्लेषण, मूल्यांकन :--

उदाहरण : छात्र विश्लेषण, सश्लेषण मूल्यांकन का प्रयोग सृजनात्मक चिन्तन में करता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

02 संज्ञानात्मक अधिगम को परिभाषित कीजिए

03 ऊपर ज्ञान एवं अवबोध के उदाहरणों में सबसे उपयुक्त बताइये |

अभिवृत्यात्मक अधिगम (Attitudinal Learning)

अभिवृत्ति या मनोवृत्ति (attitude) का सामान्य अर्थ है, एक दृष्टिकोण, विशिष्ट रूझान या स्ववृत्ति। यह दृष्टिकोण ही वस्तुओं, घटनाओं, व्यक्तियों के प्रति हमारे व्यवहार को एक दिशा प्रदान करता है। प्राय: आपने पानी से आधे भरे गिलास का उल्लेख सुना होगा जिसे लोग आधे खाली गिलास के रूप में और कुछ लोग आधे भरे गिलास के रूप में देखते हैं - इस स्थिति को क्रमश: नकारात्मक अभिवृत्ति (negative attitude) व सकारात्मक अभिवृत्ति (positive attitude) उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। व्यक्ति द्वारा लिए जाने वाले निर्णय एवं तद्नुसार किए जाने वाले व्यवहार उसकी मनोवृत्ति से प्रभावित होते हैं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

04 विचार करें - पर्यावरण में अनगिनत पेड़-पौधे हैं। यहाँ विविध प्रजातियों के पशु- पक्षी भी रहते हैं। मैनें इस पृथ्वी पर जन्म लिया है अत: पृथ्वी मेरी माता है। संतान का अधिकार है कि वह अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए माँ से कुछ न कुछ प्राप्त करता रहे अत: पर्यावरण या प्रकृति माँ से सब कुछ लेते रहने का अधिकार मेरा है। अत: इसके संरक्षण की जिम्मेदारी भी मेरी है।

सही विकल्प को चुनिए- उपरोक्त भाव प्रकृति के प्रति (i) शोषण की मनोवृत्ति (ii) स्वार्थी व संकीर्ण मनोवृत्ति (iii) दायित्वपूर्ण व सकारात्मक मनोवृत्ति दर्शाता है।

मनोवृत्ति या अभिवृत्ति को "readiness to act in one way rather than another" के रूप में परिभाषित करते हैं- अर्थात् अभिवृत्ति व्यक्ति की किसी एक विशिष्ट दिशा में कार्य करने की तत्परता है। पारिवारिक, विद्यालयी अथवा सामाजिक वातावरण के प्रभाव से व्यक्ति विविध मनोवृत्तियाँ (attitudes) अर्जित करता है। विद्यालय के प्रांगण में नल खुला है और पानी बह रहा है; कुछ विद्यार्थी वहाँ खेल रहे हैं और आप देखते हैं कि एक विद्यार्थी दौड़कर उस खुले नल को बंद करता है। यद्यपि कुछ विद्यार्थी उसके खेल छोड़कर जाने पर उससे नाराज हो जाते हैं। यहाँ उस विद्यार्थी की मनोवृत्ति प्रदर्शित हो रही है, जो उसने पारिवारिक अथवा सामाजिक वातावरण से अर्जित की होगी। इसी प्रकार राष्ट्रप्रेम, कर्तव्यनिष्ठा के भाव वातावरण के प्रभाव से सिखाए जा सकते हैं। आप एक विषय शिक्षक के रूप में विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति (scientific attitude) भी विकसित कर सकते हैं।

ध्यान दें- मनोवृत्यात्मक अधिगम जानकारियों, तथ्यों, घटनाओं को सुनना, पढ़ना, याद रखना या दुहराना मात्र नहीं हैं, अपितु उच्च स्तर पर विशिष्ट वाँछित (desirable) मनोवृत्ति या भावों के विकास के साथ उस विशिष्ट दिशा में कार्य करने की तत्परता विकसित करना है।

भाषा साहित्य अथवा इतिहास के पाठ्यक्रम में सम्मिलित ऐतिहासिक प्रसंगों के अध्यापन के समय अथवा यदि विज्ञान जेसे विषयों के अध्यापन में भी आवश्यक में अध्यापक, विद्यार्थियों के भावात्मक विकास के उद्देश्यों के अनुरूप शिक्षण करते हैं तो विद्यार्थियों की भावानुभूति में होने वाला वांछित परिवर्तन मनोवृत्यात्मक अधिगम होता है।

महारानी लक्ष्मीबाई के जीवन चरित्र पर आधारित कविता 'झाँसी की रानी' (हिन्दी) अथवा स्वतंत्रता संग्राम की गाथा (इतिहास) के अध्यापन के लिये एक अध्यापक द्वारा निर्धारित इन शिक्षण उद्देश्यों को ध्यानपूर्वक पढ़े-

- विद्यार्थी युद्ध के मैदान में महारानी लक्ष्मीबाई के साहस का अनुमान लगा सकेंगे।
- विद्यार्थियों में महारानी लक्ष्मीबाई के रणकौशल के प्रति प्रशंसा भाव विकसित होगा।
- महारानी लक्ष्मीबाई के झाँसी राज्य के प्रति गौरव भाव के अनुसार विद्यार्थियों में मातृभूमि के प्रति गौरव का भाव विकसित करने में सहायता मिलेगी।

विज्ञान विषय में जड़ों के रूपान्तरण के अन्तर्गत खाद्य संग्रह के कारण होने वाले रूपान्तरण (गाजर, मूली, चुकन्दर) के अध्यापन में मनोवृत्यात्मक अधिगम हेतु भावात्मक विकास के उद्देश्य इस प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं-

- प्रकृति में विद्यमान जैव विविधता का अनुमान लगा सकेंगे।
- अपने आसपास के पर्यावरण में उपस्थित जैव-विविधता के अन्य उदाहरण खोजने में रूचि लेंगे।
- 'पौधों द्वारा संग्रहित भोजन का लाभ अन्य जीव (खरगोश, मनुष्य) ले सकते हैं। इस तथ्य से प्रकृति की उदारता के प्रति आदर भाव विकसित होगा।
- स्वयं के प्रयास से अर्जित सम्पत्ति में से जरूरतमंदों के लिए कुछ अंश समर्पित करने का भाव जागृत करने में सहायता मिलेगी।

5.2.2.1 मनोवृत्यात्मक अधिगम की परिभाषा:-

इस प्रकार मनोवृत्यामक अधिगम को रुचि,सोच या दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन के कारण होने वाला व्यवहारिक परिवर्तन (behavioral change) कह सकते हैं।

(व्यक्ति के दृष्टिकोण व तत्परता में होने वाले परिवर्तनों से उसके निर्णय भी तदनुरूप प्रभावित होते हैं।)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

05 यहाँ प्रस्तुत शब्दावली में से मनावृत्यात्मक अधिगम (Attitudinal Learning) को प्रदर्शित करने वाली शब्दावली को पहचान कर लिखें-

याद रखना, दुहराना, ध्यानपूर्वक सुनना, लिखना, स्वीकार करना, गणना करना, निर्धारण करना, प्रत्यास्मरण करना, सहभागिता करना, पसंद करना।

उपरोक्त शब्दावली में से वे शब्द जो विद्यार्थी की रूचि, दृष्टिकोण ब व्यवहार तत्परता(behavioral readiness) में परिवर्तन दर्शाते हैं वे मनोवृत्यात्मक अधिगम को सूचक होंगे।

06 मनोवृत्यात्मक अधिगम को परिभाषित करिए-

5.2.3 कौशलात्मक या मनोचालक अधिगम (Conative Learning or Psychomotor) : कौशल शब्द का सामान्य अर्थ है मनोचालक निपुणता।

तीन वर्ष का एक बालक अपने जूते की डोरी बाँधना सीखता है। वह इस कार्य को डोरी उलझाए बिना सम्पन्न कर लेता है साथ ही कार्य की गति भी उसकी आयु के अनुरूप है तब हम कहेंगे कि बालक ने कुशलतापूर्वक डोरी बाँध ली है। अत: किसी गतिविधि को बिना किसी त्रुटि के अपेक्षित स्तर पर सम्पादित करना दर्शाता हे कि व्यक्ति ने उस कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया।

जीवन के विविध क्षेत्रों में व्यक्ति को अनेकानेक ऐसे कार्य करने होते हैं जिन्हें वह सीखता है जैसे लिखना, रूमाल की तह करना, वाहन चलाना, श्यामपट्ट पर लिखना, मानचित्र या

अन्य रेखाचित्र बनाना, विज्ञान प्रयोगशाला में विविध कार्य करना इत्यादि। इन कार्यो को यद्यपि अभ्यस्त व्यक्ति सहजता से पूर्ण कर लेते हैं तथापि हम पाते है कि समान आयु स्तर के तथा समान क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों की कार्यकुशलता में अंतर दिखता हैं। वास्तव में उपरोक्त वर्णित कार्यो का ऊपरी तौर पर विचार रखें तो इनमें मात्र हस्तकौशल का उपयोग दिखता है परन्तु सूक्ष्मता, से विचार करें तो अनेक, योग्यताओं का उपयोग इन कार्यो में होता है। वाहन चलाने में वाहन के उन भागों जिनका संचालन किया जाना है, की (i) पहचान (ii) संचालन का क्रम (iii) हाथों से पकड़ने की पद्धति, (iv) हाथों / पेरों का दबाव, (v) समस्त क्रियाओं में समन्वय (coordination), (vi) क्रिया की समयावधि का अनुमान, (vii) नेत्र-समंजन (eye coordination) इत्यादि बिन्दु महत्वपूर्ण है। चिंत्राकन में आकृति का दृश्य बोध (visual form perception), अनुपात, क्रम पैंसिल पकड़ने की योग्यता, पैंसिल चलाने पर नियंत्रण इत्यादि बिन्दु महत्वपूर्ण हैं।

अत: यह आवश्यक होता है कि व्यक्ति इनको कुशलतापूर्वक करने के लिए इनको सीखे अर्थात् इनमें अधिगम की क्रिया हो।

5.2.3.1 कौशलात्मक अधिगम को परिभाषित करना-

उपरोक्त आधार पर हम कह सकते है कि क्रियात्मक व्यवहारों में वाँछित परिवर्तन दर्शाने वाला अधिगम कौशलात्मक अधिगम (Conative Learning) है।

यहाँ यह स्पष्ट करना है कि कौशलात्मक अधिगम किसी कार्य को करने के लिए यांत्रिक रूप में हाथ-पैरों को हिलाना मात्र नहीं है । पूर्व में वर्णित वाहन चालन संबंधी विश्लेषण से स्पष्ट है कि कार्य में बौद्धिक व माँस पेशीय क्षमताओं के साथ ही इच्छा शक्ति तीनों का उचित समन्वय (co-ordination) आवश्यक है। इसीलिए अँग्रेजी में प्रयुक्त Psychomotor (मनोगत्यात्मक) शब्द से कौशलात्मक अधिगम की प्रकृति का सही संकेत मिलता है। अत: कौशलात्मक अधिगम को मनोगत्यात्मक अधिगम भी कहा जा सकता है।

इस प्रकार कौशलात्मक (मनोगत्यात्मक) अधिगम को परिभाषित करने के लिए हम कह सकते है कि मनोगत्यात्मक योग्यताओं के समन्वय से किसी क्रियात्मक व्यवहार में होने वाला वाँछित परिवर्तन कौशलात्मक अधिगम या मनोगत्यात्मक अधिगम है।

आप देखेंगे कि कुछ शिक्षक विषयवस्तु के स्तर पर विदद्वान होते हुए भी मानचित्र अथवा अपने विषय सम्बन्धी चित्रांकन में अपेक्षित कौशल नहीं दर्शाते। इसी प्रकार कई बार रसायन शास्त्र के प्रयोगों को उच्च उपाधिकारी शिक्षक की अपेक्षा रसायन शास्त्र प्रयोगशाला के सहायक अधिक कुशलता से प्रदर्शित करते हैं।

अत: कौशलात्मक अधिगत के सबन्ध में यह तथ्य भी महत्वपूर्ण हैं-

(i) एक ही कार्य करने में विविध व्यक्ति समान स्तर की क्षमता नहीं दर्शाते है।

(ii) एक ही व्यक्ति की विविध कार्यो को करने की क्षमता का स्तर भिन्न हो सकता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

07 मनोचालक (कौशलात्मक अधिगम) को परिभाषित करिये

08 यहाँ दिए गए उदाहरणों में से मनोगत्यात्मक श्रेणी के अधिगम को दर्शाने वाली शब्दावली पहचानिए-

परिभाषित करना, रेखाचित्र बनाना, व्याख्या करना, मिट्टी के खिलौने बनाना, प्रयोग हेतु उपकरण व्यवस्थित करना, खिलौने बनाने की मिट्टी तैयार करना।

5.3 अधिगम का जीवन में समन्वय (Co-ordination of learning in life)

कौशलात्मक अधिगम व्यक्ति के जीवन में संज्ञानात्मक तथा मनोवश्त्यात्मक अधिगम की तरह ही महत्त्वपूर्ण है। इसके अभाव से व्यक्ति की कार्य दक्षता व सफलता प्रभावित होती है। अपने जीवन काल में व्यक्ति आरंभ से लेकर वयस्क अवस्थ तक अनेक कार्य सीखता है। बाल्यकाल में टुथब्रश पकड़ना-घुमाना, शर्ट के बटन लगाना, रिबन बाँधना इत्यादि कार्य सीखते हुए विकास के क्रम में वह इन कार्यो को अत्यन्त सरल श्रेणी में रख अन्य जटिल कार्यो का कौशल अर्जित करता है। अत: विविध कार्यो की जटिलता आयु बुद्धि व व्यक्ति के संदर्भ में भिन्न-भिन्न होती है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि व्यक्ति के सर्वागीण विकास की दृष्टि से संज्ञानात्मक, कौशलात्मक व मनोवश्त्यात्मक तीनों प्रकार के अधिगम का संयोजन महत्वपूर्ण है । कुछ व्यवहारों में संज्ञानात्मक अधिगम का प्रतिशत अधिक दिखेगा जैसे पाठ्यक्रम सम्बन्धी अधिकांश अधिगम में देखते हैं, परन्तु वहाँ भी कुछ प्रतिशत कौशलात्मक अधिगम तथा मनोवश्त्यात्मक अधिगम का दिखाई देता है जैसे लिखना, चित्रांकन करना, मानचित्र का रूचिपूर्वक समझना इत्यादि। इस प्रकार सभी व्यवहारों में तीनों प्रकार के अधिगम कम या अधिक प्रतिशत के समन्वय के रूप में दिखाई देते हैं।

5.4 अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing Learning)

अधिगम को सामान्यत: व्यवहार परिवर्तन (change behaviour) के रूप में परिभाषित किया जाता है। चूंकि व्यक्ति का व्यवहार अनेक कारकों से प्रभावित होता है अतएव अधिगम भी अनेक कारकों से प्रभावित होगा। अधिगम के प्रभावित होने का सरल अर्थ है कि व्यक्ति के अधिगम का स्तर प्रभावित होगा। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि कुछ कारक या परिस्थितियाँ ऐसी हैं. जो अधिगम का अपेक्षित स्तर प्राप्त करने में सहायक हो सकती हैं और कुछ कारक या

परिस्थितियाँ ऐसी हो सकती हैं. जो अधिगम के अपेक्षित स्तर को प्राप्त करने में बाधक बन सकती है।

अधिगम को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों को हम इस प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं-

अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक
- → शारीरिक (Physical)
- → मनोवैज्ञानिक (Psychological)
- → सामाजिक (social)
- → वातावरणीय (Environmental)

5.4.1 शारीरिक कारक- व्यक्ति की शारीरिक अवस्था से संबंधित अनेक बिन्दु अधिगम को कम या अधिक स्तर पर प्रभावित करते हैं-

(i) आयु (Age) - सामान्यत: किसी कक्षा में औसत रूप से समान आयु वर्ग के विद्यार्थी होते हैं, परन्तु कभी-कभी कुछ विद्यार्थी विशेषकर आरंभिक कक्षाओं में अपेक्षित व अनुरूप आयु स्तर न होने के कारण अधिगम में अपेक्षित स्तर नहीं दर्शा पाते। ऐसी स्थिति उच्च कक्षाओं की अपेक्षा पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक कक्षाओं में अधिक देखी जा सकती है जब लेखन अथवा वाचन संबंधी आवश्यक परिपक्वता व गतिवाही योग्यताओं का पर्याप्त विकास विद्यार्थी में न हुआ हो। इसी तरह किशोरावस्था में संवेगात्मक विचलन के कारण अनेक विद्यार्थी अपेक्षित अधिगम स्तर अर्जित नहीं कर पाते।

(ii) शारीरिक स्वास्थ्य (Health) - यदि इस समय आप तीव्र सर दर्द का अनुभव कर रहे हों तो स्वाभाविक है कि आप को इस अध्ययन सामग्री के सीखने में बाधा आएगी, क्योंकि चित्त की एकाग्रता अधिगम कार्य पर केन्द्रित नहीं हो पा रही है। इस प्रकार की अनेक स्थितियाँ हो सकती है, अत: यदि विद्यार्थी अपेक्षित स्तर का अधिगम दर्शाने में असफल हो तो शिक्षक एवं अभिभावक विचार करें कि विद्यार्थी का स्वास्थ्य स्तर अनुकूल है या नहीं। स्वास्थ्य के संदर्भ में आहार दिनचर्या इत्यादि भी ध्यान देने योग्य बिन्दु हैं।

(iii) थकान (Fatigue) - सामान्य रूप से शारीरिक थकान की स्थिति अधिगम में बाधक होती है संभव है कि आपकी कक्षा में कुछ ऐसे विद्यार्थी हों जिन्हें विद्यालय समय के पूर्व या पश्चात घर पर अर्थार्जन के लिए शारीरिक श्रम करना पड़ता हो (ऐसी स्थिति में आपका भावात्मक सहयोग व सकारात्मक दृष्टिकोण भी अधिगम के लिए प्रेरित करने में पर्याप्त सहायक होगा।) इसके अतिरिक्त विद्यालय के आरंभिक कालखण्डों की तुलना में अंतिम कालखण्ड में लगभग सभी विद्यार्थी थकान का अनुभव कर सकते है।

(iv) विकलांगता - यदि रसायनशास्त्र प्रयोगशाला में प्रायोगिक कार्य सीखना है और विद्यार्थी के पैरों में विकलांगता है तो स्वाभाविक है कि वह इस कार्य को अन्य विद्यार्थियों की तरह सरलता से नहीं कर पाएगा अत: शिक्षक के रूप में आपको उसके लिए विशेष व्यवस्था का विचार करना पड़ सकता है (इस बात की विशेष सावधानी रखते हुए कि वह विद्यार्थी किसी भी दया का या उपहास का पात्र न बने।)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)	
09	अब आप स्वयं को विद्यार्थी के रूप में रखकर-उन परिस्थितियों का अनुमान लगाईए जो अधिगम में सहायक हैं एवं अधिगमन में बाधक हैं तथा दोनों प्रकार की (सहायक एवं बाधक) एक-एक परिस्थिति के एक-एक शब्द में लिखें।
10	आरंभिक कालखंडों की स्थिति के समाधान के रूप में 3-4 वाक्यों में अपना विचार लिखिए ।

5.4.2 मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological factors) -अधिगम को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक कारक व्यक्ति की बुद्धि (Intelligence), चित्त (consciouness) व अहं (ego) से संबन्धित होते हैं।

(i) बुद्धि (Intelligence) - प्रतिभाशाली, सामान्य अथवा मंदबुद्धि विद्यार्थी के विवरण में आप विस्तार से अध्ययन करेंगे साथ ही आपने अपनी कक्षा में प्रतिभाशाली एवं सामान्य या औसत बौद्धिक स्तर के विद्यार्थियों के व्यवहार को देखा भी होगा। बुद्धि स्तर एवं अधिगम का धनात्मक सम्बंध है अर्थात बुद्धिस्तर के अनुरूप ही अधिगम स्तर कम या अधिक होता है (दक्ष व अनुभवी शिक्षक अपने विद्यार्थियों के बुद्धि स्तर के अनुकूल अधिगम स्थितियाँ निर्मित कर कक्षा के सभी विद्यार्थियों को अपेक्षित अधिगम स्तर पर लाने में सफल रहते हैं।)

(ii) रुचि (Interest) - यह सामान्य मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि रूचिकर कार्य को सीखने के लिए व्यक्ति अधिक एकाग्रता दर्शाता है। अत: रूचि एवं अधिगम भी धनात्मक रूप से संबंधित हैं। अत: आवश्यक है कि विद्यार्थियों के आयु स्तर के अनुरूप अधिगम स्थितियों को रूचिकर बनाने के लिए शिक्षक प्रयत्न करें - छोटी कक्षाओं में गीत, कविता कथा-कथन. चित्र, खेल के माध्यम से विषय-वस्तु सम्प्रेषित करना प्रभावी होता है तथा माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में चिन्तनपरक प्रश्नों के माध्यम से अधिगम में सहभागिता का अनुपात बढ़ाने पर विद्यार्थियों का रूचि स्तर सामान्य रूप से बढ़ाया जा सकता है।

(iii) अभिवृत्ति (Attitude) - सकारात्मक अभिवृत्ति (positive attitude) अधिगम को बढ़ाती है तथा नकारात्मक अभिवृत्ति (negative attitude) अधिगम में बाधक बनती हैं; किन्हीं कारणों से यदि विद्यार्थियों में किसी प्रकार की नकारात्मक अभिवृत्ति शिक्षक, विषय, विद्यालय, सहपाठियों के प्रति दिखाई देती है, तो आप अपने सकारात्मक दृष्टिकोण एवं विवेक से विद्यार्थी में सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सकते है - परिणामस्वरूप विद्यार्थी का अधिगम स्तर भी बढ़ेगा ।

(iv) अभिक्षमता (Aptitude) - अभिक्षमता या अभिरूचि के कारण ही व्यक्ति किसी कार्य विशेष में समान प्रशिक्षण के उपरान्त अन्य किसी व्यक्ति की तुलना में अधिक दक्षता दर्शाता है । अभिक्षमता के मानक परीक्षणों अथवा सामान्य परिचायक लक्षणों एवं अभिभावको से चर्चा के आधार पर आप एक शिक्षक के रूप में विद्यार्थी को उसकी

अभिक्षमता के अनुरूप विषय व पाठ्यक्रम चुनने में मार्गदर्शन व सहायता दे सकते हैं, ताकि वह अपेक्षित अधिगम स्तर प्राप्त कर सके।

(v) संवेग (Emotions) - मानवीय संवेगों के - कारण व्यक्ति कभी-कभी असंतुलित व्यवहार दर्शाता है: जैसे चिड़चिड़ाहट, क्रोध की स्थितियाँ विद्यार्थी के अधिगम में बाधक होंगी। इसके विपरीत प्रसन्नता का वातावरण अधिगम में सहायक होगा। अत: शिक्षक के रूप में आप अपने विद्यार्थियों से झुंझलाहट, क्रोध का व्यवहार करने के स्थान पर धैर्य व स्नेह का व्यवहार कर उन्हें सांवेगिक प्रबंधन (emotional management) सिखा सकते हैं साथ ही अधिगम में सहायक परिस्थिति निर्माण करने में सफल भी होंगे।

(vi) अभिप्रेरणा (Motivation) - अभिप्रेरणा अधिगम को प्रभावित करने वाला सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है। आप परीक्षा में श्रेष्ठ प्रदर्शन करने के लिए संकल्पित हैं तो आप थकान, अरूचि, अस्वस्थता की बाधाओं को सम्पूर्ण इच्छाशक्ति से पार कर जाएँगे। क्योंकि आंतरिक रूप से आप का स्व व अहं (ego) आपको प्रेरित कर रहा है। बाल्यकाल में व्यक्ति बाहय अभिप्रेरणा (external motivation) से अधिक प्रभावित होता है, परन्तु विकास के साथ बहाय के स्थान पर आतंरिक प्रेरणा (internal motivation) या स्व-प्रेरणा (self motivation) अधिक प्रभावी होती है। इसीलिए छोटे बच्चे किसी प्रकार के वस्तु-रूप पुरस्कार (reward) से अधिक प्रेरित होते हैं परन्तु स्थायी प्रभाव आंतरिक या स्व प्रेरणा से ही होता है । अत: शिक्षक एवं अभिभावक धीरे-धीरे विद्यार्थियों की स्वप्रेरणा को पुष्ट करे यह अधिक उचित होता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

11 दिए गए उदाहरणों में से बहाय प्रेरणा की स्थितियों को पहचानिए -

(i) गृह कार्य पूर्ण करने पर टॉफी मिलेगी, यह पता होना

(ii) अर्द्धवार्षिक परीक्षा में श्रेष्ठ आने पर वार्षिक परीक्षा में भी इसका लाभ मिलेगा यह सोचकर विद्यार्थी द्वारा अर्द्धवार्षिक परीक्षा से ही अच्छी तैयारी करना।

(iii) कक्षा के विद्यार्थियों द्वारा श्रेष्ठ परिणाम दर्शाने पर शिक्षक को विशिष्ट पुरस्कार दिए जाने की घोषणा के कारण शिक्षक द्वारा अच्छा अध्यापन करना।

अभिप्रेरणा से जुड़े कुछ अन्य महत्वपूर्ण कारक एवं उनका प्रभाव :-

धनात्मक प्रभाव	ऋणात्मक प्रभाव
प्रशंसा	निंदा
पुरस्कार	दण्ड
आत्म प्रतिष्टा	प्रतिद्वंदिता

उपरोक्त कारक अधिगम को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। अत: शिक्षक के रूप में आप धनात्मक प्रभाव वाले कारकों का अधिक उपयोग करेंगे तो आपके विद्यार्थी का अधिगम स्तर बढ़ाने में आपकी भूमिका अधिक प्रभावी होगी।

अधिक शरारती या उद्दण्ड विद्यार्थी को प्राय: उसे अपमानित करने वाले दण्ड जैसे 'कान पकड़कर खड़े रहो 'कक्षा के बाहर खड़े रहो' दिया जाता है। इसके स्थान पर यदि आप उसके व्यक्ति के किसी अच्छे गुण जैसे तबलावादन, सहयोग का भाव इत्यादि को ढूँढ़ने का प्रयास कर उसकी प्रशंसा करिए। 'उस गुण अथवा व्यवहार में वह अन्यों से श्रेष्ठ हैं' - यह प्रतिष्ठापूर्ण स्थिति उसके सामने निर्मित करने से वह विद्यार्थी धीरे-धीरे उद्दण्डता करना कम करेगा. क्योंकि उसे अपनी प्रतिष्ठापूर्ण स्थिति को हानि पाहुचाने का खतरा स्वयं ही दिखाई देगा।

5.4.3 सामाजिक कारक (Social factor) - व्यक्ति जीवन की विविध अवस्थाओं में विविध प्रकार के मानवीय सामाजिक सम्बन्धों के दायरे में रहता है। परिवार के बाहर विशेष रूप से यह सम्बंध प्रभावी रूप से दिखाई देते है । इसीलिए विद्यालय को समाज का लघुरूप भी कहते हैं -

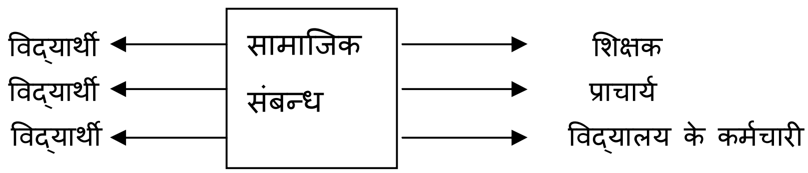

उपरोक्त सम्बन्धों की विविध प्रकार के भावों व व्यवहारों से अभिव्यक्ति होती है - मित्रता, सहयोग, स्नेह, साझा, आदर, जैसे भावों के साथ ईर्ष्या, द्वेष, असहयोग, अनादर जैसे नाकरालक भाव भी पनप सकते हैं। स्पष्ट है कि इसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव विद्यार्थी के अधिगम स्तर पर पड़ेगा।

इसी के साथ परिवार के सदस्यों, अभिभवाकों से प्रोत्साहन, स्वावलम्बन, आत्मविश्वास को प्रेरित करने वाला व्यवहार प्राप्त करने वाले विद्यार्थी का अधिगम स्तर उसी के समकक्ष बौद्धिक क्षमता, सुविधा रहते हुए उपरोक्त सांवेगिक (emotional) वातावरण से वंचित विद्यार्थी की तुलना में अच्छा होगा।

विद्यार्थी के सामाजिक वातावरण में व्याप्त सामाजिक मानदण्ड जैसे बालक-बालिका में लिंग भेद, जाति-भेद का भी अधिगम स्तर पर अप्रत्यक्ष व आंशिक नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है. परन्तु एक दक्ष व अनुभवी शिक्षक अपनी सुनियोजित शिक्षण गतिविधियों एवं व्यवहार से विद्यार्थी के अधिगम स्तर पर उपरोकत तत्वों के प्रभाव को न्यून कर सकता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

12 विद्यार्थी के अधिगम स्तर पर सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव डालने वाले भावों को शब्द सूची के रूप में लिखिए|

5.4.4 वातावरणीय कारक (Environment factor):-

विद्यालय एवं कक्षा का वातावरण अधिगम को प्रभावित करते है। इनमें से प्रथम दो बिन्दुओं पर शिक्षक का प्रत्यक्ष नियंत्रण नही होता है परन्तु शिक्षक कक्षा-कक्ष एवं विद्यालय

परिसर की स्वच्छता के लिए विद्यार्थियों से चर्चा कर उनकी सहभागिता से विद्यालय परिसर को सुव्यवस्थित एवं स्वच्छ रखने की पहल कर सकते हैं।

5.5 अधिगम कार्य (Learning Task)

अधिगम कार्यो की चर्चा करने पर एक महत्वपूर्ण तथ्य पर ध्यान केन्द्रित होता है - अधिगम कार्य के रूप में किसी एक कार्य की चर्चा नहीं की जा सकती, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के औसत जीवन काल में अनेकानेक कार्यो का अधिगम होता है - यह अवश्य संभव है कि कार्य की प्रकृति (nature of task) अधिगमकर्ता की व्यक्तिक विशेषताओं (Individual characteristics of the learner) को ध्यान में रखते हुए उस प्रकार के कार्यो में अपेक्षित दक्षता प्राप्त करने हेतु किस प्रकार के प्रयास अनुकूल होंगे; यह विचार किया जाए। प्रस्तुत शीर्षक में विशेष रूप से शिक्षक की दृष्टि से अनुकूल कुछ अधिगम कार्यो का संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है। इसी के साथ उसका मनोवैज्ञानिक आधार भी प्रस्तुत है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

13 विद्यार्थी के अधिगम पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले वातावरणीय कारकों की सूची बनाइए -

Guilford (1959) द्वारा प्रस्तुत प्राज्ञ की संरचना (structure of intellect) के आधार पर संज्ञान (cognition), स्मृति (memory), अपसारी चिन्तन (divergent thinking) अपसारी चिन्तन (convergent thinking) व मूल्यांकन (evaluation) की प्राज्ञ संक्रियाओं (intellectual processes) के माध्यम से व्यक्ति का प्रत्यास्मरण (recall) व समझ (understanding) स्तर का अधिगम होता है।

एक उदाहरण द्वारा इसे समझा जा सकता है - एक बच्चा -

- पेन वस्तु का नाम सीखता है
- पेन वस्तु को पहचान सकता है
- पेन वस्तु का उपयोग किन-किंन कार्यो के लिए हो सकता है यह बता सकता है । (समझ)
- कई प्रकार के पेन सामने रखें हो तो अपने कार्य के लिए उपयुक्त पेन का चुनाव कर सकता है। (मूल्यांकन)

स्पष्ट है कि मूलांकन के द्वारा निर्णय लेने की योग्यता अर्जित करता है।

इसी प्रकार यदि यहा कहा जाए कि - व्यक्ति पेन द्वारा लिख सकता है तो वह कौशालात्मक अधिगम दर्शा रहा है।

यदि कहा जाए कि -व्यक्ति पेन द्वारा पर्यावरण संरक्षण पर अपने विचार लिख रहा है तो वह मनोगत्यात्मक अधिगम भी दर्शा रहा है।

इस प्रकार यह भी तथ्य ध्यान देने योग्य है कि संज्ञानात्मक, कौशालात्मक एवं मनोवश्त्यात्मक तीनों प्रकार के अधिगम का संयोजन विविध कार्यो व व्यवहारों में व्यक्त होता है। जैसा कि पूर्व में कहा गया है (देखें 5.3), किसी व्यवहार में संज्ञानात्मक अधिगम प्रमुखता से

दिखेगा कुछ व्यवहारों में कौयलात्मक या मनोगम्यात्मक अधिगम की प्रमुखता दिख सकती है। वस्तुतः इस आधार पर अनुकूल अधिगम कार्यो के लिए एक शिक्षक योजना बना सकता है। इसमें महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि अधिगमकर्ता की प्राज्ञ योग्यता, गतिवाही योग्यता तथा संवेगात्मक विशेषताओं (intellectual abilities, motor abilities and emotional characteristics) का अधिकतम उपयोग जब होगा, तब होने वाला अधिगम उच्चकोटि का व स्थायी प्रकृति का होगा। अर्थात् अधिगमकर्ता की सक्रिय सहभागिता (active participation) होने पर ही अधिगम का स्तर निश्चित तौर पर अच्छा होगा।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
14 सही विकल्प चुनिए -अच्छे निष्पादन (achievement) के लिए अधिगम कार्य में अधिगमकर्ता की सक्रिय सहभागिता एक आवश्यक/सामान्य स्थिति है।

5.5.1 अधिगम कार्यो के रूप में कुछ गतिविधियाँ -

यह उचित होगा कि कुछ विशिष्ट गतिविधियों को अधिगम कार्यो के रूप में विकसित किया जाए जो विद्यार्थी की अधिगम दक्षता तथा अधिगम स्तर को बढ़ा सकते हैं यहीं कुछ प्रमुख गतिविधियों का उल्लेख किया जा रहा है जो अनुकूल अधिगम कायों के रूप में विविध स्तरों पर आवश्यकतानुसार प्रयोग में लाए जा सकते हैं -

- शिशु अवस्था में प्रायोगिक कार्यो का अभ्यास जैसे - मिश्रित रेगों व आकार के मोतियों में से निर्देशानुसार मोती चुनकर अलग करना. किसी बर्तन में द्रव व ठोस बिना गिराए भरना व उँडेलना, कागज मोड़कर विविध आकृतियाँ बनाना, आँख बंद कर ध्वनियाँ पहचानना, लक्ष्य निर्धारित कर गेंद फेंकना इत्यादि।
- प्राथमिक कक्षाओं से ही प्रयोजना कार्य (project work) के रूप में पाठ्यक्रम सम्बन्धी विषयवस्तु (theme) जैसे त्यौहार, प्रांतीय वेशभूषा, फसलें इत्यादि के आधार पर चित्र-संकलन, जानकारी संकलन, कतरन-संकलन प्रभावी परिणाम दर्शाएँगे।
- संज्ञानात्मक, व मनोगत्यात्मक अधिगम की दृष्टि से शिक्षक सदैव विविध प्रकार के प्रश्नों का उपयोग करते हुए अध्यापन करें तो लाभदायक होगा। प्रत्यास्मरण स्तर से मूल्यांकन स्तर तक के क्रमशः चुनौतीपूर्ण या चिन्तन परक (thought provoking) प्रश्नों की सहायता से पाठ की प्रस्तुति में विद्यार्थी की सक्रिय मानसिक सहभागिता रहती है। प्रश्नों के उत्तर के रूप में व्यक्त विचार का मूल्यांकन भी विद्यार्थीयों से ही करवाने पर, चर्चा का वातावरण निर्मित किया जा सकता है।
- इस प्रकार की अध्यापन योजना में अपेक्षित स्तर का अधिगम संभव है । इस उद्देश्य से- संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान, (concept attainment model) सूचना प्रक्रम (information processing), मूल्य-विश्लेषण प्रतिमान (value analysis model) भूमिका निर्वहन (role playing) प्रयोजना (project), पद्धति, मस्तिष्क विप्लव (brain storming) इत्यादि शिक्षण पद्धतियों को समझना व उपयोग सीखना शिक्षक के लिए सहायक होगा।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
15 उपयुक्त अधिगम कार्यो की योजना बनाने में शिक्षक के लिए सहायक शिक्षण प्रतिमान व पद्धतियाँ है?

संक्षिप्त उदाहरण - कक्षा पंचम में गणित विषय के अध्यापन में 'बिल' की अवधारणा तथा उस पर आधारित गणनात्मक प्रश्नों की अधिगम दक्षता विकसित करने के लिए व्याख्यान अथवा श्यामपट्ट पर प्रादर्श हल प्रस्तुत करना एक असफल विधि होगी। इसके स्थान पर बिल की अवधारणा के लिए, एक सामान्य कागज के टुकड़े. कागज पर लिखी कोई सूचना, कागज पर लिखा कोई संदेश, आमंत्रण पत्र, बधाई पत्र, दुकानदार से ग्राहक को दी गयी साधारण रसीद व बिल के नमूने प्रस्तुत कर उनकी विशेषताएँ पूछते हुए किसी कागज को बिल कब कहेंगे, इस उत्तर तक लाया जाए तत्पश्चात् विविध उत्तरों के सार रूप में बिल की अवधारणा या संकल्पना (concept) प्रस्तुत की जाए। विद्यार्थियों से घर पर खरीदी जाने वाली विविध वस्तुओं से बिल संकलित कर उनमें प्रस्तुत सूचनाओं का विश्लेषण करवाया जाए, समूहों में भूमिका निर्वहन (role playing) द्वारा वस्तु खरीदने के बिल बनाकर देने की गतिविधि करवायी जा सकती है (योग, गुणा, भाग की गणितीय संक्रियाएँ अपेक्षित योग्यता के रूप में है) यदि कुछ विद्यार्थी इनमें दक्ष न हों तो उन्हें पृथक अभ्यास करवाना उचित होगा।)

5.5.2 उत्तम अधिगम कार्यो की विशेषताएँ

(Special features of Apropriate Learning Task)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अधिगम दक्षता में वृद्धि करने के लिए अधिगमकर्ता (learner) की प्रत्यक्ष सक्रिय सहभागिता वाली गतिविधियाँ अधिगम कार्य के रूप से प्रभावी होती है। दूसरे शब्दों में उत्तम अधिगम कार्य में अधिगमकर्ता की समस्त ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग सम्मिलित होता है।

Shar व Schluep (शार व श्लुएप - 2002) के अनुसार उपयुक्त अधिगम कार्य (appropriate learning task) की विशेषताएँ -

- अधिगमकर्ता को सूचनाओं की प्राप्ति, विश्लेषण व निष्कर्ष निकालने में सक्रिय रहने के लिए प्रेरित करता हो (encourages learner to actively process the information)
- सीखे जाने वाले कार्य या अवधारणा के बहाय स्वरूप की अपेक्षा अर्थ पर अधिगमकर्ता का ध्यान केन्द्रित करने में सहायक हो (supports learners to focus on meaning rather than appearance)
- सीखे जाने वाले कार्य या अवधारणा के प्रति अधिगमकर्ता की समझ विकसित करने में सहायक हो (supports understanding of meaning rather than structural aspects)
- अधिगमकर्ता के स्वयं के अनुभव से सूचना या जानकारी निर्मित करने व उसके समन्वय करने में सहायक हो (supports learners to construct and integrate the information to their own experience)

इसे संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

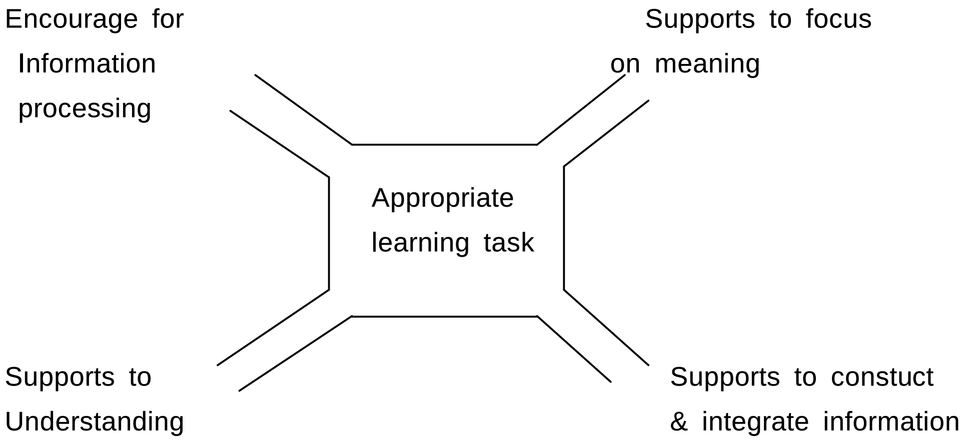

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

16 उपयुक्त अधिगम कार्यो की विशेषताएँ लिखिए -

5.6 सारांश -

अधिगम के प्रमुख तीन प्रकार हैं - (i) संज्ञानात्मक (cognitive), (ii) मनोवृत्यात्मक (attitudinal), (iii) कौशलात्मक या मनोगत्यात्मक (conative or psychomotor)

- व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की दृष्टि से तीनों प्रकार का अधिगम महत्वपूर्ण हैं।
- अधिगम के तीनों प्रकारों का संयोजन (कम या अधिक प्रतिशत में) विविध व्यवहारों में दिखाई देता है।
- अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों में वे समस्त स्थितियाँ सम्मिलित होंगी, जो अधिगम के अपेक्षित स्तर को प्राप्त करने में सहायक या बाधक होंगी।
- अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों को प्रमुख चार वर्गो में वर्गीकश्त किया जा सकता है - (i) शारीरिक (ii) मनोवैज्ञानिक (iii) सामाजिक (iv) वातावरणीय
- प्रत्येक व्यक्ति के औसत जीवन काल में वह अनेक कार्यों व व्यवहारों को सीखता है।
- अच्छे अधिगम कार्य में अधिगमकर्ता की प्राज्ञ योग्यता, गतिवाही योग्यता तथा संवेगात्मक विशेषताओं का उपयोग होते हुए उसकी सक्रिय सहभागिता होना आवश्यक है।

5.7 शब्दावली (**glossary**)

यद्यपि प्रस्तुत सामग्री में प्रयुक्त प्रमुख शब्दों की व्याख्या यथास्थान की गयी है फिर भी पाठ्यक्रम के अधिगमकर्ताओं की सुविधा के लिए कुछ शब्दों के सरल अर्थ यहाँ प्रस्तुत हैं -

व्यावहारिक परिवर्तन (*Behavioral changes*) : व्यक्ति में होने वाले वे परिवर्तन जिन्हें उसके किसी व्यवहार की अभिव्यक्ति से पहचाना, देखा या मापा जा सके। जैसे - विद्यार्थी मानचित्र में उत्तर/दक्षिण दिशा की स्थिति का वर्णन कर सकते हैं। यहाँ वर्णन कर सकने की योग्यता विद्यार्थी द्वारा मौखिक या लिखित व्यवहार से अभिव्यक्त होगी अत: यह अपेक्षित है कि एक दक्ष शिक्षक अपने विद्यार्थियों के लिये निर्धारित अधिगम लक्ष्यों का इस प्रकार के व्यावहारिक परिवर्तनों के रूप में विचार व निर्धारण कर सके।

तत्परता (*Readiness*) : किसी कार्य को करने के लिए व्यक्ति तत्काल क्रियाशील होने के लिए मन से तैयार होता है। यहीं मात्र ज्ञान व कौशल होना पर्याप्त नहीं है अपितु व्यक्ति के संवेगों में अनुकूल परिवर्तन होने पर उसकी इच्छा शक्ति भी कार्यरत होती है।

प्राज्ञ की सरंचना (*Structure of Intellect*) : बुद्धि की अवधारणा समझाने के लिए Guiford (1959) ने त्रिआयामी अवधारणा के रूप में इसे व्यक्त किया। इसके अन्तर्गत चार प्रकार की अन्तर्वस्तु (content), पाँच प्रकार की संक्रियाओं तथा छ: प्रकार के उत्पाद के आधार पर समस्त बौद्धिक व्यवहार समझाए गए हैं बुद्धि की अवधारणा के अंतर्गत आप इसे विस्तार से पढ़ेंगे -

(अतिरिक्त अध्ययन के लिए देखें - माथुर एस. एस. - शिक्षा मनोविज्ञान)

शिक्षण प्रतिमान (*Model of Teaching*) : यहाँ प्रतिमान (Model) शब्द के प्रचलित अर्थ - वस्तु रूप प्रतिमान के रूप में न लें। शिक्षण प्रतिमान विस्तुत एक शिक्षण योजना है जिसमें मनावैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित क्रमबद्ध व दुहराने योग्य सोपान होते हैं, जिनका उद्देश्य अधिगमकर्ता में कुछ निश्चित (वांछित परिवर्तन) लाना होता है।

(विस्तृत अध्ययन के लिए पढ़े - शिक्षण प्रतिमान - सनसनवाल सिंह)

5.8 संदर्भ ग्रंथ

Hillgard E.R. & Bowler H.G: Theories of I =Learning,Appleton-
Century crofts Education Division New York.1996

Mathur S.S.: Educational Psychology, Vinod Pustak Mandir, Agra, 2001

Sansanwal, D.N. and Singh P,; Shikshan Pratimaan, Society for Eduction Research and Development, Baroda, 1991

Sharma B.N.: Shiksha Manovigyan, Sahitya Prakashan, Agra, 2001

Sharma R.A.: Mappan Evam Mulyaankan, Loyal Book Depo Meerut, 2001

Website Reference:

Shar&Schluep: Learning Tasks, NetTel @ Africa, Network for Capacity Building And Knowledge Exchange in ICT Policy, Regulation and Applications.

5.9 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/सुझाव (Answers/Suggestions to Self-Learning Exercises)

01 सही विकल्प

(i) प्रेक्षण से (ii) श्रवण व प्रेक्षण से

02 संज्ञानात्मक अधिगम की प्रस्तुत परिभाषा (5.2.1) के आधार पर अपने उत्तर को परखें।

03 1947, स

04 दायित्वपूर्ण सकारात्मक मनोवृत्ति

05 ध्यानपर्वूक सुनना, स्वीकार करना, निर्धारण करना, सहभागिता करना, पसंद करना

06 मनोवृत्यात्मक अधिगम की प्रस्तुत परिभाषा (5.2.2.1) के आधार पर अपने उत्तर को परखें।

07 5.2.3.1 पर आधारित परिभाषा दें

08 रेखाचित्र बनाना, मिट्टी के खिलौने बनाना प्रयोग हेतु उपकरण व्यवस्थित करना, खिलौने बनाने की मिट्टी तैयार करना।

09 अधिगम में सहायक व बाधक परिस्थितियाँ कई हो सकती हैं अत: अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों के वर्गीकरण (5.4) के संपूर्ण विवरण में प्रस्तुत विविध कारकों के आधार पर अपने उत्तर को परखें|

10 आरंभिक कालखंडों में कठिन विषयों का अध्यापन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित नही होता हैं -

इस सूत्र पर अपने समाधान को विश्लेषित कर अपने उत्तर को परखें।

11 (i) और (ii)

12 सकारात्मक: सहयोग, प्रशंसा, नकारात्मक: दण्ड, कक्षा के सामने अपमानित करना

13 विद्यालय का उपयुक्त भौतिक वातावरण तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण

14 एक आवश्यक स्थिति है।

15,16 छात्रों की क्षमता, अभिवृति तथा कक्षा एवं विद्यालय का वातावरण और देखें 5.5.1

5.10 परीक्षा योग्य प्रश्न **(Unit-end Question)**

1. अधिगम और परिपक्वता में क्या अन्तर है? क्या सभी व्यवहार परिवर्तन अधिगम की श्रेणी में आते है? उदाहरण देकर स्पष्ट करें।
2. संज्ञानात्मक अधिगम को सरलतम से उच्चतम स्तर की श्रंखला बनाइये। क्या कोई अधिगम उसके पहले के अधिगम के बिना सम्भव है? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए

3. मनोवृत्यात्मक अधिगम की अवधारणा स्पष्ट कीजिए। मनोवृत्यात्मक अधिगम छात्र के कक्षा समायोजन में किस प्रकार सहायक है?
4. मनोचालक अधिगम को परिभाषित कीजिए। क्या वाक्यपटुता (Verbal Skill) मनोचालक अधिगम के अर्न्तगत रखी जा सकती है? तर्क दें।
5. उदाहरण देकर स्पष्ट करे कि व्यक्तियों के अधिकतर व्यवहारों में संज्ञानात्मक मनोवृतात्मक तथा मनोचालक सभी प्रकार के अधिगम शामिल होते हे?
6. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों का संक्षिप्त में वर्णन करें उत्तर की पुष्टि उपयुक्त उदाहरणो से करें
7. अधिगम को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक कारकों की उदाहरण सहित व्याख्या- करें
8. प्रभावी शिक्षण में आप किन अधिगम कार्यो को संतुलित या उपयुक्त कहेगें? अपने उत्तर को तर्कपूर्ण बनाइये।

इकाई 6 (UNIT 6)

अधिगमकर्ता की विशेषताएं, आवश्यकताएं एवं अभिप्रेरणा (Learner's Characterstics, Needs and Motivation)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

6.0 उद्देश्य (objectives)

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

6.2 अधिगमकर्ता की विशेषताएं (Characteristics of Learning)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.3 आवश्यकताएं (Needs)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.4 अभिप्रेरणा: अर्थ (Motivation: meaning)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.5 अभिप्रेरणा: की परिभाषाएं (Motivation: Definition)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.6 अभिप्रेरणा से समेकित पद (Motivation Related steps)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.7 अभिप्रेरणा के प्रकार (Kind of motivation)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.8 अभिप्रेरणा की विधियाँ (Methods of motivation)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.9 शिक्षा में अभिप्रेरणा का महत्व (Importance of motivation in Education)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

6.10 सारांश (Summary)

6.11 शब्दावली (Glossary)

6.12 संदर्भ पुस्तकें (References for Further reading)

6.13 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर हेतु सुझाव (Hints to self-assesment questions)

6.14 मूल्यांकन (Unit Ends Questions)

6.0 उद्देश्य (Objectives) -

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

- अधिगमकर्ता की विशेषताओं का वर्णन कर सकेगे।
- आवश्यकताओं का अर्थ समझ सकेंगे।
- मॉस्लो द्वारा दिए गए आवश्यकताओं के कम की व्याख्या कर सकेंगे।

- अभिप्रेरणा के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
- अभिप्रेरणा की परिभाषाओं का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- अभिप्रेरणा से संबन्धित शब्दावली का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- अभिप्रेरणा के विभिन्न प्रकारों में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
- अभिप्रेरणा की विभिन्न विधियों का नवीन परिस्थितियों में उपयोग कर सकेंगे।
- शिक्षा में अभिप्रेरणा के महत्व (भूमिका) को समझ सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना (Introduction):-

अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक निरन्तर चलती रहती है। अधिगम शब्द हमारे मस्तिष्क में आते ही हमारे सामने विद्यालय आते हैं जिन्हें हम अधिगम के मन्दिर (Temple of Learning) कहते हैं। किन्तु अधिगम को केवल विद्यालयों तक सीमित करना उचित नहीं है क्योंकि व्यक्ति जीवन के हर कदम पर सीखता है। अधिगम का अर्थ है व्यवहार में परिवर्तन। यह परिवर्तन सापेक्षिक रूप से स्थायी होता है तथा अभ्यास, अनुभव या क्रिया से प्राप्त होता है।

व्यवहार में परिवर्तन अभ्यास या अनुभव के कारण हो सकता है। एक व्यक्ति प्रारम्भ में जब टाइप करना सीखता है तो वह टाइप मशीन पर देखकर टाइप करता है। धीरे-धीरे वह अभ्यास के द्वारा बिना टाइप मशीन को देखे टाइप करने लगता है। इसका अर्थ है कि अभ्यास के द्वारा उसके व्यवहार में परिवर्तन हो गया और यह परिवर्तन स्थायी है तो इसे हम अधिगम (Learning) कहेंगे। अधिगम की प्रक्रिया में अधिगमकर्त्ता का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अधिगम को प्रभावी बनाने के लिए अधिगमकर्त्ता (Learner) की विशेषताओं (Characteristics) तथा उसको प्रभावित करने वाले कारकों को ध्यान में रखना शिक्षक के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

6.2 अधिगमकर्त्ता की विशेषताएँ (Characteristics of Learners)

किसी भी अधिगम में सफलता के लिए अधिगमकर्त्ता (Learner) में ये विशेषताएँ होनी चाहिए:-

1 शारीरिक-मानसिक कार्य क्षमता (Physical and mental potentiality) जैसे -

(i) परिपक्वता (Maturation) :-

अधिगमकर्त्ता की परिपक्वता का सीधा प्रभाव उसके अधिगम पर पडता है: दो वर्ष के बालक को तार्किक चिन्तन नहीं सिखाया जा सकता न ही उसे टाइप करना सिखाया जा सकता है।

(ii) शारीरिक-मानसिक स्थिति एवं स्वास्थ्य (Physical - mental health): - शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होने पर ही व्यक्ति अधिगम के प्रयास में सफल

हो सकेगा। चिन्ता भी इसमें अहम भूमिका निभाती है। चिन्ताग्रस्त व्यक्ति की अधिगम सफलता संदिग्ध है।

आयु भी सीखने की प्रक्रिया और गति को प्रभावित कर सकती है।

(iii) मानसिक योग्यता स्तर (Level of Mental abilities)-

इसमें दो आयाम बहुत अहम् है :

(अ) बुद्धि-स्तर (Level of Intelligence)

मन्द बुद्धि बालक को माध्यमिक रतर तक शिक्षा देना लगभग असम्भव होगा। I.I.T, P.M.T, Higher medical courses के लिए कम से कम 115 I.Q. होना आवश्यक है।

(ब) अभिरूचि (Aptitude)-

अभिरूचि एक ऐसी योग्यता है जो किसी विशिष्ट दिशा में प्रशिक्षण के द्वारा, सफल होने का द्योतक है परन्तु यह भी अक्सर होता है कि किसी भी व्यक्ति में एक से अधिक क्षेत्र में अभिरूचि हो सकती है।

2 सीखने की इच्छा (Desire to learn)

इसे प्रेरणा के अन्तर्गत भी रखा जा सकता है। शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अधिगमकर्त्ता उसको सीखने के लिए उत्सुक है। दूसरे शब्दों में, अधिगमकर्त्ता किसी ज्ञान को सीखने के लिए कितना उत्प्रेरित है। सीखने की इच्छा (प्रेरणा) सफल अधिगम के लिए नितान्त आवश्यक (must) है। यह कहावत बिल्कुल सटीक है कि आप "घोड़े को पानी के पास ले जा सकते हैं परन्तु बिना इच्छा के उसे पानी नहीं पिला सकते।" इस प्रकार की अभिप्रेरणा के कारण अधिगमकर्त्ता को अधिगम के प्रति इन कारणों से रूचि बनी रह सकती हैं जिसके कारण सफल अधिगम की अधिक सम्भावना है।

(i) अधिगम के प्रति एकाग्रचित्तता (Concentration)-
अधिगमकर्ता एकाग्रचित्त होकर अधिगम के प्रति रूचि लेगा। ऐसा ज्ञान न केवल रूचिकर होगा इसको अधिक स्थायी होने की भी सम्भावना है।

(ii) अधिगमकर्त्ता में अधिगम के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति (attitude) होगी जो उसे अधिगम में अन्त तक रूचि बनाए रखेगी।

(iii) अधिगमकर्त्ता को अपने प्रयास तथा सफलता के प्रति आत्मसंतोष होगा जो किसी भी बाहय पुरस्कार से कहीं अधिगम मूल्यांकन होता है।

3 उपयुक्त वातावरण (Proper Environment):-

व्यक्ति में उपरोक्त विशेषताओं के बाद भी यदि वातावरण उसके प्रतिकूल है तो वह उसकी सफल अधिगम पर प्रश्नचिन्ह लगा सकता है। एक ऐसी बालिका का उदाहरण मिलता है जिसने केवल स्वप्रयत्न से माध्यमिक बोर्ड परीक्षा में सभी विषयों में विशेष योग्यता (distinction) प्राप्त किया। 10+2 की विज्ञान पाठ्यक्रम में उच्च प्रथम श्रेणी प्राप्त की परन्तु जैसा अक्सर होता है बालिका शिक्षा को अधिक महत्व नहीं दिया जाता, उसे M.B.B.S.

प्रतियोगिता में दुबारा बैठने का अवसर नहीं मिला। इससे न केवल वह M.B.B.S. होने से वंचित रह गई, गहरे विषाद (depression) के कारण उसने आत्महत्या कर ली।

उपरोक्त विशेषताओं का अलग-अलग वर्णन किया गया, परन्तु यह अलग-अलग काम नहीं करती। इनका व्यक्ति के अधिगम में अन्योन्य क्रियात्मक (Interactive) प्रभाव पड़ता है। तीनों मिलकर अधिगम में सफलता को निर्धारित करते हैं परन्तु अन्य विशेषताओं के समान रहते शायद अभिप्रेरणा की भूमिका कहीं अधिक होती है। सामान्य क्षमता तथा प्रतिकूल वातावरण के होते हुए भी अक्सर दृढ़ संकल्प (जो अभिप्रेरणा से ही उत्पन होता है) वाले व्यक्ति सफलता के शिखर तक पहुंचते देखे गये हैं। महात्मा गाँधी, स्वामी विवेकानन्द, गोपाल कृष्ण गोखले, वीर सावरकर कुछ ऐसे ही व्यक्ति थे।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

01. अधिगमकर्त्ता की किन्हीं दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए तथा उनकी अधिगम की सफलता में भूमिका 'दर्शाइये।
Describe any two characteristics of learner and mention their role in successful learning

6.3 आवश्यकतायेँ (Needs)-

बर्नार्ड के अनुसार. "आवश्यकता किसी चीज की कमी है जिसकी अनुभूति, प्राणी या उसकी उपजातियों (Species) के कल्याण (welfare) की समृद्धि को बढायेगी या उसके सामान्य व्यवहार को सुसाध्य बनायेगी।

(According to Barnard, A need is the lack of something which if present would tend to the further the welfare of the organism or of the species or facilitate its usual behaviour)."

इस प्रकार कहा जा सकता है कि जब तक बीज की आवश्यकता की पूर्ति नही होती है तब तक वह तनाव में रहता है। व्यक्ति के दिखने वाले व्यवहार के आधार में आवश्यकता ही होती है। आवश्यकतायेँ ही किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित करती है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा इन आवश्यकताओं को दो भागों में बांटा गया हैं - शारीरिक तथा मानसिक। शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति का परिणाम सन्तुष्टि होता है जबकि मानसिक आवश्यकतायेँ व्यक्ति के व्यवहार के निर्धारण में महत्वपूर्ण होती हैं। इन्हें कभी भी पूर्णत: सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता।

मर्रे तथा मोस्लो के द्वारा आवश्यकताओं की व्याख्या की गई है परन्तु मॉस्लो के सिद्धान्त को अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में अधिक उपयोगी माना गया है। मॉस्लो द्वारा अपने अभिप्रेरणा सिद्धान्त (Moslow's Theory of Motivation) में आवश्यकताओं को क्रमानुसार वर्गीकृत किया गया है। मॉस्लो (1954) द्वारा आवश्यकताओं को पाँच भागों में विभाजित किया गया है :-

❖ शारीरिक आवश्यकतायेँ (Physiological Needs) -

शारीरिक आवश्यकताओं के अन्तर्गत भूख, प्यास तथा कामवासना जैसी आवश्यकतायें आती हैं। इन्हें प्राथमिक स्तर (Primary level) की आवश्यकतायें कहा जाता है। इनकी सन्तुष्टि होने पर ही उच्च स्तर (Higher level) की आवश्यकतायें उत्पन्न होती हैं।

❖ सुरक्षा की आवश्यकतायें (Safety Needs) -

शारीरिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के साथ सुरक्षा की आवश्यकतायें उत्पन्न होने लगती है। अर्थात भूख और प्यास की आवश्यकतायें पूरी होने के बाद व्यक्ति का घर आदि की आवश्यकतायें उत्पन्न होती है।

❖ स्नेह तथा स्नेह सम्बन्ध की आवश्यकतायें (Need of Belongingness) -

शारीरिक तथा सुरक्षा की आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के उपरान्त स्नेह तथा सम्बन्ध की आवश्यकतायें उत्पन्न होती है। व्यक्ति समाज में अपना स्थान व मित्र बनाना चाहता है। वह चाहता है कि लोग उसे स्नेह दें। सामान्यत: इन आवश्यकताओं की सन्तुष्टि समाज में हो जाती है।

❖ सम्मान की आवश्यकतायें (Esteem Needs) -

सम्मान की आवश्यकताओं को उच्च स्तर (Higher level) की आवश्यकता माना जाता है। इस प्रकार की आवश्यकताओं में आत्मसम्मान की इच्छा प्रबल होती है। इसमें व्यक्ति स्वतन्त्र (Independent) रहना चाहता है। वह नेतृत्व (Lead) करना चाहता है तथा सम्मान व स्वामित्व भी चाहता है। शारीरिक (Physical), सुरक्षा (Safety) तथा स्नेह व सम्बन्ध (Belongingness) की आवश्यकताओं की पूर्ति के उपरान्त ही सम्मान की आवश्यकतायें उत्पन्न होती है। इसके अन्तर्गत आत्मसम्मान (Self respect), सफलता (Success) तथा आत्मविश्वास (Self Confidence) आते हैं। ऐसा माना जाता है कि यदि सम्मान की आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती तो व्यक्ति हीन भावना का शिकार हो जाता है।

❖ आत्म यथार्थीकरण की आवश्यकतायें (Need of Self Actualization) -

उपरोक्त चारों प्रकार की अर्थात शारीरिक, सुरक्षा स्नेह तथा सम्बय एवं सम्मान की आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के उपरान्त ही आत्म यथार्थीकरण की आवश्यकता जाग्रत होती है।

मॉस्लो द्वारा दिए गये मानवीय आवश्यकताओं के क्रम में प्रथम तीन - शारीरिक आवश्यकतायें, सुरक्षा की आवश्यकतायें तथा स्नेह तथा सम्बन्ध की आवश्यकताओं को निम्न स्तर की आवश्यकतायें माना जाता है जबकि सम्मान की आवश्यकता तथा आत्म यथार्थीकरण की आवश्यकता को उच्च स्तर की आवश्यकतायें माना जाता है।

मॉस्लो द्वारा दिया गया मानवीय आवश्यकताओं का क्रम शिक्षण में अधिक उपयोगी है परन्तु यह निश्चित करना कठिन है कि किन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अभिप्रेरणा की कौन सी विधि उपयोगी है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

02. मॉस्लो द्वारा दी गई उच्च स्तर की मानवीय आवश्यकताओ को संक्षेप में बताइये।

Discribe higher level human needs given by Moslow in short.

6.4 अभिप्रेरणा (Motivation)

अधिगम के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति उसके लिए मानसिक रूप से तैयार हो क्योंकि यदि विद्यार्थी मानसिक रूप से तैयार नहीं होगा तो सम्भव है कि अधिगम बहुत कम हो। अत: अधिगम के लिए समुचित मानसिक सक्रियता आवश्यक है और मानसिक सक्रियता अभिप्रेरणा के कारण होती है।

जीवन तथा अध्ययन के हर क्षेत्र में अभिप्रेरणा एक महत्वपूर्ण कारक है। अभिप्रेरणा के कारण ही मानव ने एवरेस्ट पर विजय प्राप्त की है, चांद पर पहुंच चुका है और चांद पर पहुंचना उसके लिए आगे अभिप्रेरणा का काम कर रहा है कि वह उन अन्य ग्रहों पर भी खोज करे जिसके लिए मानव आज प्रयासरत है। हम सबका दिन प्रतिदिन का अनुभव है कि विद्यार्थी परीक्षा के दिनों में अथक परिश्रम करते हैं और सारी रात बैठकर अध्ययन करते हैं। उनको सारी रात बैठकर अध्ययन करने के लिए आने वाला परीक्षा परिणाम अभिप्रेरित करता है। यहां कहने का तात्पर्य है कि जीव द्वारा की जाने वाली किसी भी क्रिया में अभिप्रेरणा की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

अभिप्रेरणा का अर्थ (Meaning of Motivation) -

अभिप्रेरणा अंग्रेजी भाषा के Motivation शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। जिसका अर्थ है Move, Motor या motion. इस प्रकार कहा जा सकता है कि अभिप्रेरणा में गतिशील होना आवश्यक है। हम कोई कार्य क्यों करते हैं? इसका अर्थ अभिप्रेरणा में निहित है। अभिप्रेरणा वह शक्ति है जो मनुष्य को किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित करती है।

अभिप्रेरणा के शाब्दिक अर्थ में किसी कार्य को करने की उत्तेजना (Stimulation) होती है। व्यक्ति के द्वारा किए जाने वाले कार्यो को सम्पादित (Execute) करने के लिए कोई न कोई उद्दीपक (Stimulus) अवश्य होता है। यह उद्दीपक ही हमें क्रिया (Activity) करने के लिए अभिप्रेरित (Motivate) करता है। उद्दीपकों को दो भागों में बांटा जा सकता है - आन्तरिक (Internal) तथा बाह्य (External), अभिप्रेरणा के शाब्दिक अर्थ में बाह्य उद्दीपकों (External Stimulus) को लिया जाता है जबकि मनोवैज्ञानिक अर्थ में केवल आन्तरिक उद्दीपकों (Internal Stimulus) को ही महत्व दिया जाता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

03. अभिप्रेरणा का अर्थ बताइये।
Give the meaning of Motivation.

6.5 अभिप्रेरणा की परिभाषायें (Definitions of Motivations)

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरणा की परिभाषाएँ दी हैं। उनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्न हैं :-

❖ बर्नार्ड के अनुसार, "जिस उद्देश्य के प्रति पहले कोई आकर्षण नहीं था, उस लक्ष्य के प्रति कार्य की उत्तेजना ही अभिप्रेरणा है।"

According to Bernard, “Motivation is the Stimulation of an action towards a particular objective where previously there was a little or no attraction towards the goal.

❖ एवरिल के अनुसार, "अभिप्रेरणा का अर्थ है - सजीव प्रयास (vitalised effort) यह कल्पना को क्रियाशील बनाती है, मानसिक शक्ति के गुप्त और अज्ञात स्त्रोतों को जाग्रत और प्रयुक्त करती है, यह हृदय को स्पन्दित करती है, यह निश्चय, अभिलाषा एवं अभिप्राय को पूर्णतया मुक्त करती है, यह बालक में कार्य करने, सफल होने और विजय पाने की इच्छा को प्रोत्साहित करती है।"

According to Averill, “Motivation means vitalized effort. It fires the imagination, it arouses and taps hidden and undreamed sources of intellectual energy, it impassions the heart, it releases the flood gates of determination, ambition and purpose, it inspires in child the will to do, to achieve, to overcome.”

❖ गेट्स तथा अन्य के अनुसार, "अभिप्रेरक, प्राणी के भीतर की वे शारीरिक और मनोवैज्ञानिक दशाएँ हैं जो उसे विशेष प्रकार की क्रिया करने के लिए प्रेरित करती है।"

According to Gates & other, “Motivation are conditions-physiological and psychological within the organism that disposes it to act in certain ways.'

❖ थॉमसन के अनुसार, "प्रेरणा विद्यार्थी में रूचि उत्यन्त करने की एक कला है, ऐसी रूचि जो या तो छात्र में है ही नहीं या इस रूचि का उसे आभास ही नहीं है।"

According to Thomson, “Motivation is the art of arousing certain interest in the child, where there has been no such interest or where it is unfelt by the child।“

❖ गुड के अनुसार, "प्रेरणा क्रिया को आरंभ करने, जारी रखने एवं नियंत्रित रखने की प्रक्रिया है।"

According to Good, “Motivation is the process of arousing, sustaining and regulating activity.”

❖ स्किनर के अनुसार, "प्रेरणा सीखने के लिए राजमार्ग है।"

According to Skinner,”Motivation is the super-highway to learing."

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सीखने के लिए प्रेरणा एक राजमार्ग का कार्य करती है। यह किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिए कार्य की उत्तेजना है। यह एक सजीव प्रयास है जो बालक में कार्य करने, सफल होने तथा विजय पाने की इच्छा को जाग्रत करती है। ये वे शारीरिक तथा मनोवेज्ञानिक दशाएँ हैं जो व्यक्ति को विशेष प्रकार की क्रिया करने के लिए प्रेरित करती है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

04. अभिप्रेरणा की विभिन्न परिभाषए दीजिए। (Give various definitions of motivation.)

6.6 अभिप्रेरणा से संबन्धित पद (Terms related to motivation)

अभिप्रेरणा के सन्दर्भ में निम्न पदों को बार-बार प्रयोग किया जाता है :-

❖ आवश्यकता (Needs) -

आवश्यकता एक ऐसी अवस्था है जिसमें मानव किसी प्रकार की कमी को महसूस करता है। इस कमी को दूर करने के लिए वह कुछ क्रियाएं करता है। इन क्रियाओं के द्वारा वह कमी को दूर कर सन्तुष्टि (Satisfaction) का अनुभव करता है। जैसे व्यक्ति को सर्दी लगने पर वह गर्म कपडों की कमी महसूस करता है, तो वह गर्म कपडे प्राप्त करने की कोशिश क्रियाओं के माध्यम से करता है और जब वह गर्म कपड़े प्राप्त कर लेता है तो उसे सन्तुष्टि की प्राप्ति होती है।

❖ चालक (Drive) -

व्यक्ति के अन्दर आवश्यकता अनुभव होने पर उसकी आवश्यकता की पूर्ति हेतु उसमें क्रियाशीलता बढ़ जाती है। इसके फलस्वरूप वह पहले की अपेक्षा अधिक सक्रिय (Active) दिखाई देने लगता है। इसी अवस्था को चालक (Drive) कहा जाता है। चालक दो प्रकार के होते हैं - शारीरिक चालक (Physical Drive) तथा मनोवैज्ञानिक चालक (Psychological Drive) जैसे- सर्दी लगने पर सर्दी चालक उत्पन्न होता है तो यह एक प्रकार का शारीरिक चालक है जबकि परीक्षा में उच्च अंक प्राप्त करने की आवश्यकता से उच्च अंक चालक की उत्पत्ति होती है और यह मनोवैज्ञानिक चालक के अन्तर्गत आता है।

बाहय प्रेरक (Incentives) -

वह लक्ष्य-वस्तुएं (Goal objective) जो व्यक्ति के व्यवहार को अभिप्रेरित करती हैं और व्यवहार को अपनी ओर खींचती है वह बाह्य प्रेरक (Incentive) कहलाते हैं। सकारात्मक बाह्य प्रेरकों की प्राप्ति से तथा नकारात्मक बाह्य प्रेरकों से बचने से व्यक्ति सुख की अनुभूति करता है।

आज की दुनिया में आन्तरिक उत्प्रेरको (drives) और उनकी सन्तुष्टि की अपेक्षा अभिप्रेरणा अपेक्षित बाह्य उत्प्रेरको (Incentives) के रूप में हो गई है। जैसे - प्यास न होने पर भी शीतल पेय, चाय, बच्चों के लिए कुरकुरे, टॉफी स्वादिष्ट भोजन (भले ही भूख न हो) इत्यादि। इस प्रकार वेतन, बोनस, लम्बी छुट्टी सामाजिक दृष्टि से सम्मानजनक नौकरी, नेतागिरी इत्यादि।

जैविक अभिप्रेरणाओं (biological motives) में भी समस्या आ जाती है ऐसा देखा गया कि समान भूख वाले चूहों में भी जिन्हें सामान्य की अपेक्षा अधिक स्वादिष्ट भोजन मिला। उन्होंने सामान्य भोजन वालों की अपेक्षा कहीं अधिक खाया।

अभिप्रेरणा में बाहय प्रेरक व्यक्ति को अपनी ओर खींचते हैं जबकि आन्तरिक प्रेरक उसे बाहय क्रिया की ओर ढकेलते हैं।

❖ प्रेरक (Motive) -

आवश्यकता चालक तथा प्रोत्साहन के मिलने पर ही प्रेरक बनता है। प्रेरक को यदि सूत्र के रूप कहा जाए तो:

आवश्यकता + चालक + प्रोत्साहन = प्रेरक

Need + Drive = Motivation

प्रेरक एक ऐसी अवस्था है जो व्यक्ति को एक दिशा में कार्य करने के लिए बाध्य करती है। जैसे सर्दी लगने पर व्यक्ति में सर्दी चालक सक्रिय होता है तथा गर्म कपड़े मिलने पर उसकी सर्दी की आवश्यकता पूरी होती है। इस स्थिति में प्रेरक वह अवस्था है जो व्यक्ति को गर्म कपड़े प्राप्ति हेतु गर्म कपड़े ढूंढने हेतु बाध्य करती है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

05. अभिप्रेरणा से संबन्धित पद 'प्रेरक' को स्पष्ट कीजिये। (Explain the term 'Motive' related to motivation)

6.7 अभिप्रेरणा के प्रकार (Type of Motivation):

हम किसी भी कार्य को तभी कर पाते है जब हम उसके लिए अभिप्रेरित होते हैं। यह अभिप्रेरणा कैसे उत्पन्न होती है, इस सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरणा के दो प्रकार बताए हैं -

❖ आन्तरिक या प्राकृतिक अभिप्रेरणा (Internal or Natural Motivation) :

आन्तरिक या प्राकृतिक अभिप्रेरणा से तात्पर्य उस अभिप्रेरणा से है जिसमें व्यक्ति कार्य इसलिए करता है क्योंकि कार्य पूर्ण होने पर उसे सन्तुष्टि मिलती है। इस कार्य को करने के लिए उसे अपने अन्दर से अभिप्रेरणा मिलती है। इस प्रकार की अभिप्रेरणा को देखना संभव नहीं है। इस प्रकार की अभिप्रेरणा व्यक्ति के आन्तरिक तत्वों जैसे रूचि, आवश्यकता आदि पर निर्भर करती है।

स्वार्ज (1977) के अनुसार, "आन्तरिक अभिप्रेरणा से तात्पर्य व्यक्ति के भीतर से उत्पन्न उस दबाव से होता है जो उसे एक निश्चित दिशा में व्यवहार करने के लिए प्रेरित करता है।"

According to Schwartz (1977), "Intrinsic motivation is the pressure from within the person to behave in certain ways."

❖ बाहय या अप्राकृतिक अभिप्रेरणा (Extrinsic or Unnatural Motivation) :

बाहय अभिप्रेरणा से तात्पर्य वैसी अभिप्रेरणा से है जिसके द्वारा हम किसी ऐसे कार्य को भी करते हैं जिसमें भले ही हमारी रूचि न हो किन्तु उसमें हमें कुछ प्राप्ति अवश्य हो रही हो। यह बाहय अभिप्रेरणा वातावरणजनित होती है। जैसे - हम कक्षा में स्थान प्राप्त करने के लिए, दण्ड से बचने के लिए, प्रशंसा पाने के लिए, सम्मान प्राप्त करने के लिए, पुरस्कार प्राप्त करने के लिए कोई कार्य करते हैं, तो ये सभी बाहय अभिप्रेरणा के उदाहरण होंगे।

स्वार्ज (1977) के अनुसार, "बाह्य अभिप्रेरणा वह प्रोत्साहन होता है जो व्यक्ति कोई बाहर से उस व्यक्ति द्वारा दिया जाता है जो एक निश्चित दिशा में व्यवहार करने के लिए प्रेरित करता है।"

According to Schwartz (1977),"Extrinsic motivation is an incentive provided from outside the individual to encourage him to behave in ways desired by the person who provide the incentive."

कक्षा कक्ष शिक्षण में शिक्षक को विद्यार्थियों हेतु दोनों प्रकार की अभिप्रेरणा का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया में आन्तरिक तथा बाह्य दोनों ही अभिप्रेरणाएँ आवश्यक है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

06. प्राकृतिक अभिप्रेरणा से आप क्या समझते हैं?
What do you mean by natural motivation?

6.8 अभिप्रेरणा करने की विधियाँ (Methods of Motivating)

जैसा कि हम जानते हैं कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में अभिप्रेरणा एक आवश्यक तत्व है। विद्यार्थियों को बिना अभिप्रेरित किए हुए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया (Teaching-Learning Process) का सुचारू रूप से चलना संभव नहीं है इसलिए आवश्यक है कि कक्षा शिक्षण के समय शिक्षक अपने विद्यार्थियों को समय-समय पर अभिप्रेरित करता रहे। कभी-कभी शिक्षक को अपने विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने में समस्या आती है। इन समस्याओं से निबटने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरित करने की कुछ विधियाँ बताई हैं। उनमें से कुछ प्रमुख निम्न है :

❖ कक्षा का शैक्षिक वातावरण (Learning Enviroment of the class) :

वातावरण जिसमें हम रहते हैं उसका प्रभाव हमारे उपर पड़ता है। इसी प्रकार हम जिस कक्षा में पढते हैं उसके वातावरण का भी प्रभाव हमारे उपर पड़ता है। यह प्रभाव हमारे व्यक्तित्व के किसी एक क्षेत्र पर नहीं पड़ता बल्कि यह हमारे समूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। इसी प्रकार कक्षा कक्ष में शिक्षक की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। यदि शिक्षक के अपने विद्यार्थियों सम्बन्ध मधुर होंगे तो विद्यार्थी पूरा मन लगाकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भागीदारी करेंगे और यदि इसके विपरीत शिक्षक का व्यवहार कठोर होगा तो विद्यार्थी उस कक्षा में डर से पढाई करेंगे तथा इसमें अधिगम की सम्भावना पहली परिस्थिति की तुलना में कम होगी। अत: स्पष्ट है कि कक्षा का स्वस्थ वातावरण विद्यार्थियों को उनके लक्ष्य की ओर अभिप्रेरित करता है।

❖ नवीन शिक्षण विधियाँ (Innovative Teaching Methods) :

कभी-कभी विद्यार्थी शिक्षक के पढाने से उबने लगता है क्योंकि वह एक ही तरीके से पढाता रहता है तो विद्यार्थी सन्तुष्ट नहीं हो पाते हैं। इस असन्तुष्टि का परिणाम अनुशासन की समस्याओं के रूप में हमारे सामने आता है। इस स्थिति में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया बाधित होती है। शिक्षक को इस बाधा को दूर करने के लिए अपने शिक्षण कार्य हेतु नवीन विधियों का प्रयोग करना चाहिए ताकि विद्यार्थियों में पाठ्यवस्तु के प्रति उस्तुकता बढे और वे अध्ययन हेतु अभिप्रेरित हो सके। अत: विद्यार्थी की अभिप्रेरणा हेतु शिक्षक को नवीन शिक्षण विधियों के द्वारा

शिक्षण कार्य सम्पादित करना चाहिए। जैसे - (i) कक्षा शिक्षण-अधिगम को वातावरण की समस्याओं से जोड़ना तथा समाधान विधि पर चर्चा करना (ii) करके सीखना (Learning by doing): निर्देशित खोज विधि (guided discovery approach) इत्यादि।

❖ पुरस्कार एवं दण्ड (Reward & Punishment) :

पुरस्कार प्राप्त करना हर विद्यार्थी चाहता है किन्तु दण्ड मिलना किसी भी विद्यार्थी को अच्छा नहीं लगता है। यहाँ कहने का तात्पर्य है कि पुरस्कार तथा दण्ड ऐसे अभिप्रेरक है जो विद्यार्थी के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। पुरस्कार प्राप्त करने के लिए प्रत्येक विद्यार्थी कार्य करता है लेकिन शिक्षक का कर्तव्य है कि वह विद्यार्थी में पुरस्कार के प्रति लालच न उत्पन्न होने दे बल्कि उनमें पुरस्कार के प्रति सकारात्मक अभिवृति का विकास करे। आधुनिक मनोवैज्ञानिक दण्ड को अमानवीय मानते हैं। दण्ड एक नकारात्मक अभिप्रेरणा है और जहाँ 'तक संभव हो दण्ड का प्रयोग नहीं करना चाहिए। शिक्षक को पुरस्कार तथा दण्ड दोनों का उपयोग अभिप्रेरणा की एक विधि के रूप में बड़ी सावधानी से करना चाहिए। कई बार गलत तरह से दिया गया पुरस्कार विद्यार्थी के लिए हानिकारक हो सकता है जबकि कई बार दिया गया दण्ड पुरस्कार की तुलना में अधिक लाभदायक हो सकता है। जैसे- प्रतिभाशाली बालकों के लिए उनके लिए चुनौती का कार्य कर सकते हैं तथा उनके अधिगम को और निखार सकते हैं।

❖ प्रगति का ज्ञान (knowledge of progress) -

प्रत्येक विद्यार्थी उसके द्वारा किए गए कार्यो के परिणाम के विषय में सदैव उत्सुक रहता है क्योंकि इस परिणाम में विद्यार्थियों की प्रगति की जानकारी रहती है। यदि विद्यार्थी के परिणाम धनात्मक है अर्थात वह प्रगति कर रहा है तो यह उसके लिए एक सकारात्मक अभिप्रेरक के रूप में कार्य करेगा। अत: शिक्षक को विद्यार्थी द्वारा किए गए कार्यो के धनात्मक बिन्दु तथा त्रुटियाँ (Errors) बता देनी चाहिए ताकि विद्यार्थी अपनी प्रगति के विषय से परिचित रहें तथा अभिप्रेरित होकर और अच्छे से कार्य करें।

❖ प्रतियोगिता एवं सहयोग (Competition & Co-operation) -

कक्षा में विद्यार्थी हमेशा प्रतियोगिता की दृष्टि से कार्य करते हैं। यदि यह प्रतियोगिता स्वस्थ दृष्टिकोण से विद्यार्थियों के मध्य है तो इससे अच्छी अभिप्रेरणा की और दूसरी कोई विधि नहीं है। कक्षा में प्रतियोगिता दो प्रकार से होती है - पहली- विद्यार्थियों के मध्य प्रतियोगिता तथा दूसरी- स्वयं द्वारा पूर्व में किए गए कार्यो से प्रतियोगिता। पहली तरह की प्रतियोगिता में सदैव एक खतरा रहता है कि विद्यार्थी एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में अनुचित साधनों यथा नकल आदि का उपयोग न करने लगें। अत: यहाँ यह आवश्यक है कि शिक्षक एकल प्रतियोगिता के स्थान पर समूह प्रतियोगिता का कक्षा में अधिक उपयोग करें। इससे विद्यार्थियों में समूह को सहयोग करने की भावना तथा लोकतान्त्रिक भावना का विकास होगा। अत: शिक्षक को अपनी कक्षा में इस विधि को बहु त सावधानी से उपयोग करना चाहिए।

❖ आकांक्षा का स्तर (Level of Aspiration) :-

मनोवेज्ञानिको के अनुसार एक विद्यार्थी भविष्य में जो बनना चाहता है वह उसकी आकांक्षा का स्तर है। कई बार ऐसा भी होता है कि विद्यार्थी जो बनना चाहता है और वह आज जो है. उन दोनों स्थितियों में अन्तर पाया जाता है। इस स्थिति में यह आवश्यक है कि विद्यार्थी को इस अन्तर को समाप्त करने के लिए या तो कठिन परिश्रम करना पड़ेगा या अपनी आकांक्षा

में बदलाव करना पड़ेगा। अत: शिक्षक को चाहिए कि वह विद्यार्थी के स्वयं के स्तर तथा आकांक्षा के स्तर में तालमेल बैठाए ताकि विद्यार्थी कार्य से विमुख न हो जाये।

❖ असफलता का भय (Fear of failure) :-

असफलता एक ऐसी स्थिति है जिसे कोई भीं कार्य करने वाला व्यक्ति पसन्द नहीं करता है। अत: शिक्षक को विद्यार्थियों को असफलता का भय भी कभी-कभी दिखाते रहना चाहिए ताकि वे कार्य के प्रति अभिप्रेरित होते रहें।

❖ प्रशंसा एवं निन्दा (Praise & Blame) :-

प्रशंसा एवं निन्दा कक्षा शिक्षण में महत्वपूर्ण अभिप्रेरक के रूप में कार्य करते हैं। किन्तु ये दोनों अभिप्रेरक विद्यार्थियों को कितना अभिप्रेरित करते हैं यह अभिप्रेरित करने वाले व्यक्ति के उपर निर्भर करता है किन्तु यदि प्रशंसा एवं निन्दा छोटे-छोटे से कार्यो के लिए शिक्षक द्वारा की जाने लगेगी तो इसका विद्यार्थियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। शिक्षक को विद्यार्थियों के वांछित व्यवहारों के लिए प्रशंसा करनी चाहिए ताकि उन वांछित व्यवहारों की पुनरावृति होती रहे जबकि अवांछनीय व्यवहारों के लिए शिक्षकों को विद्यार्थियों की निन्दा करनी चाहिए ताकि विद्यार्थी भविष्य में अवांछनीय यवहारों की पुनरावृत्ति न करें। अभिप्रेरणा की प्रशंसा तथा निन्दा विधि की प्रभावशीलता शिक्षक के उपर निर्भर करती है। अत: शिक्षक को इस विधि का उपयोग कक्षा में बहु त सावधानी से करना चाहिए। शिक्षक यदि उपरोक्त विधियों को कक्षा में सावधानी से उपयोग करेगा तो निश्चित रूप से विद्यार्थी अभिप्रेरित होंगे। इन विधियों की प्रभावशीलता शिक्षक पर निर्भर करती है। यदि शिक्षक इन विधियों का उपयोग विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने के लिए उचित रूप से करेगा तो निश्चित रूप से ये विधियाँ फलदायी होगी।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

07. पुरस्कार एवं दण्ड विद्यार्थी को कैसे अभिप्रेरित करते हैं ?
How praise and punishment motivates the students?

6.9 शिक्षा में अभिप्रेरणा का महत्त्व (Importance of Motivation in Education)

शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वागीण विकास करना है। शिक्षा विद्यार्थी को इस योग्य बनाती है कि वह स्वयं सीख सके। स्वयं सीखने के लिए विद्यार्थी का अभिप्रेरित होना आवश्यक है। अब समस्या यह उत्पन्न होती है कि विद्यार्थी अभिप्रेरित कैसे हो ? इसीलिए एण्डरसन ने कहा है कि "अधिगम तभी अच्छा हो सकता है जबकि यह अभिप्रेरित हो।" अत: अभिप्रेरणा शिक्षा तथा अधिगम दोनों के लिए महत्वपूर्ण है। इसका महत्व निम्न बिन्दुओं में और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है :-

❖ अभिप्रेरणा मार्गदर्शन में सहायक है (Motivation helps in guidance):

आज यह एक आम समस्या है कि विद्यार्थी विद्यालय के कायों में रूचि नहीं लेते हैं। इसका एक महत्वपूर्ण कारण है कि उन्हें सही मार्गदर्शन नहीं मिल पाता है। अत: अभिप्रेरणा के

माध्यम से विद्यार्थियों को मार्गदर्शन दिया जा सकता है ताकि विद्यालय के कार्यो में विद्यार्थी रूचि लेने लगे।

❖ अभिप्रेरणा चरित्र निर्माण में सहायक है (Motivation helps in character building):

ऐसा कहा जाता है कि चरित्र यदि चला गया तो सब कुछ चला गया। शिक्षक को विद्यार्थियों में अच्छी आदतों का विकास करना चाहिए। शिक्षक को विद्यार्थियों को चरित्र निर्माण के लिए अभिप्रेरित करते रहना चाहिए। शिक्षक यदि विद्यार्थियों को चरित्र निर्माण के लिए अभिप्रेरित कर रहा है तो उसे स्वयं भी उच्च चरित्र वाला होना चाहिए क्योंकि वह विद्यार्थियों का आदर्श होता है।

❖ अभिप्रेरणा द्वारा मानसिक विकास संभव-

(Mental development with the help of Motivation)

शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष ऐसी स्थितियां उत्पन्न कर देता है जिससे वे सीखने के लिए तत्पर हो जाते हैं। ये स्थितियां ही अभिप्रेरकों के रूप में कार्य करती हैं। विद्यार्थी पुरस्कार प्राप्ति की आशा में शैक्षिक कार्या में अधिक से अधिक भाग लेते हैं जो उनके मानसिक विकास में बढावा देती है।

❖ अभिप्रेरणा अनुशासन की समस्या दूर करती है :-

(Motivation avoids the problem of indiscipline)

वर्तमान में अनुशासन की समस्या विद्यालय प्रशासन के समक्ष सबसे बड़ी एवं एक महत्वपूर्ण समस्या है। विद्यार्थी अनुशासित नहीं रहते, इसका कारण अभिप्रेरणा की कमी है। शिक्षक को विद्यार्थियों को यह बताना चाहिए कि अनुशासित रहकर उन्हें क्या-क्या लाभ हो सकते हैं ताकि विद्यार्थी अभिप्रेरित होकर अनुशासित रहें। आवश्यकता पड़ने पर शिक्षक को इसके लिए नकारात्मक अभिप्रेरणा का उपयोग भी करना चाहिए।

❖ अभिप्रेरणा रूचियों के विकास में सहायक है :-

(Motivation helps in the development of Interest)

विद्यार्थी किसी कार्य को करने के लिए जब तक अभिप्रेरित नहीं होंगे तब तक वे उस कार्य को सीख नहीं सकेंगे। अत: आवश्यक है कि किसी भी कार्य को कराने से पूर्व या किसी पाठ्यवस्तु को पढाने से पूर्व शिक्षक को विद्यार्थियों में अभिप्रेरणा के माध्यम से रूचि उत्पन्न करनी चाहिए ताकि उनमें रूचि का विकास हो और वे आसानी से अधिगम कर सकें।

❖ शिक्षण विधियों में सुधार (Improvement in Teaching methods)

शिक्षक को अध्यापन कार्य करने से पूर्व विद्यार्थियों को पाठ को पढने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए। इसके लिए शिक्षक को अपनी शिक्षण विधि में सुधार करना चाहिए और ऐसी शिक्षण विधि का चयन करना चाहिए जो विद्यार्थियों को अभिप्रेरित कर सके।

❖ विद्यार्थियों के व्यवहार पर नियन्त्रण करने में सहायक -

(Helps in controlling the behaviour of students):

कुछ विद्यार्थी कक्षा में स्वभावत: ऐसी क्रियाएं करते हैं जो कि अवांछनीय होती हैं। ऐसी स्थिति से निबटने के लिए शिक्षक को अभिप्रेरकों का सहारा लेना पड़ता है। शिक्षक को इन अभिप्रेरकों का उपयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए ताकि वह विद्यार्थियों के व्यवहार को नियन्त्रित कर उसे एक सकारात्मक दिशा में मोड़ सके।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

08. विद्‌यार्थी को मार्गदर्शन में अभिप्रेरणा किस प्रकार सहायक हैं ?

How motivation helps in guiding the students?

6.10 सारांश (Summary) :-

व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन अधिगम कहलाता है। यह परिवर्तन अभ्यास या अनुभव के कारण हो सकता है। अधिगम की प्रक्रिया में अधिगमकर्त्ता का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अधिगमकर्ता की कुछ अपनी विशेषताएँ होती हैं जैसे - सीखने की इच्छा, एकाग्रचित्तता, उसकी अभिव्यक्ति, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, आत्मसन्तोष परिपक्वन, चिन्ता, बुद्धि आदि। शिक्षक को शिक्षार्थी की इन विशेषताओं को ध्यान में रखकर अपने शिक्षण को सम्पादित करना चाहिए। व्यक्ति का जो व्यवहार दिखाई देता है, उसका आधार आवश्यकताएं होती हैं। आवश्यकताएं ही किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित करती है। मॉस्लो द्‌वारा अपने अभिप्रेरणा सिद्धान्त में आवश्यकताओं को क्रमानुसार वर्गीकरण किया गया है। सन्तुलित जीवन जीने के लिए इन आवश्यकताओं की पूर्ति आवश्यक है। जीवन तथा शिक्षा के क्षेत्र में अभिप्रेरणा एक महत्वपूर्ण विषय है। सीखने के लिए अभिप्रेरणा एक राजमार्ग का कार्य करती है। यह किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिए कार्य की उत्तेजना है अर्थात अभिप्रेरणा द्‌वारा व्यक्ति किसी विशेष प्रकार की क्रिया को करने के लिए प्रेरित होता है। अभिप्रेरणा में आवश्यकता, बालक, प्रोत्साहन तथा प्रेरक शब्द बार-बार प्रयोग किए जाते हैं। अभिप्रेरणा बाह्य तथा आन्तरिक दो प्रकार की होती है। विद्‌यार्थियों को अभिप्रेरणा की विभिन्न विधियों जैसे- कक्षा का वातावरण, नवीन शिक्षण विधियां, पुरस्कार एवं दण्ड, प्रतियोगिता एवं सहयोग आदि के द्‌वारा अभिप्रेरित किया जा सकता है। अधिगमकर्त्ता के सर्वागीण विकास के लिए उसे अभिप्रेरित करना आवश्यक है क्योंकि अभिप्रेरणा उसके चरित्र निर्माण, मानसिक विकास आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

6.11 शब्दावली (Glossary) :-

1.	अभिवृत्ति (Attitude)	-	किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति एक प्रकार का झुकाव
2.	चालक (Drive)	-	जो व्यवहार करने के लिए उत्तेजित करता है
3.	बुद्धि (Intelligence)	-	वातावरण से समायोजन करने की क्षमता
4.	परिपक्वन (Maturation)	-	स्वत: होने वाला विकास
5.	मानसिक स्वास्थ्य (Mental Helath)	-	जो मानसिक क्रियाओं को सन्तुलित रखता है
6.	अभिप्रेरणा (Motivation)	-	किसी दिशा में कार्य करने की उत्सुकता
7.	आवश्यकता (Need)	-	आवश्यकता - चालक - अभिप्रेरणा

8.	आत्म यथार्थीकरण (Self Actualization)	-	नहित क्षमताओं का पूर्ण विकास
9.	उद्दीपक (Stimulus)	-	प्रतिक्रिया का कारक

6.12 सन्दर्भ पुस्तकें (Further reading) :-

1. भटनागर ए. बी. भटनागर, मीनाक्षी एवं भटनागर, अनुराग: अधिगमकर्त्ता का विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।
2. पाण्डेय. कल्पना एवं श्रीवास्तव, एस. एस. (2007) : शिक्षा मनोविज्ञान- भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि, टाटा मैक्ग्राहिल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. पाण्डेय, राम शकल: शिक्षा मनोविज्ञान, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।
4. शर्मा, आर. ए. अधिगम एवं विकास के मनोवेज्ञानिक आधार, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ।
5. Cattel R.B. (1957) Personality and Motivation, New York, Harcourt।
6. Moslow, A.H. (1945). Motivation and Personality, New York, Harper & Row
7. Panday, K.P. (1988). Advance Education Psychology, Konark Publishers, Pvt। Ltd., Delhi.
8. Woolfolk, Anita (2006). Education Psychology, Pearson Education Delhi.

6.13 स्वपरख प्रश्नो के उत्तर/ सुझाव (Answer/ Hints to self learning exercise)-:

01. (i) शारीरिक, मानसिक क्षमता (ii) सीखने की इच्छा (iii) उपयुक्त वातावरण

02 (i) सम्मान की आवश्यकता (ii) आत्म यथार्तीकर्ण की आवश्यकता

03. (i) किसी कार्य को करने की उत्तेजना (Stimulation, disposition)

04. किसी कार्य के लिए (i) सजीव प्रयास (ii) तैयार करना
(iii) उत्तेजित करने, जारी रखने और नियंत्रित रखने की प्रक्रिया (IV) राजमार्ग

05. आवश्यकता + प्रोत्साहन + चालक + प्रेरक

06. वह अभिप्रेरण जो अपने आप को संतुष्टि देती है।

07. पुरुस्कार सकारात्मक अभिवश्ति अभिवति का विकास करता है तथा दण्ड नकारात्मक प्रेरणा है,परन्तु मेधावि छात्रो को चुनौती देकर उस सकारात्मक रूप से अभिप्रेरित कर सकती है।

08. उन्हे उपयुकत दिशा मे निर्देषित करती है

6.14 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit end Question)

01. अधिगमकर्ता की विशेषताओ का विस्तार से वर्णन कीजिए।

02. मास्लो द्वारा दिया गया मानवीय आवशयकताओ के क्रम की व्याख्या कीजिए।
Explain the hirarchy of human needs given by Maslow

03. अभिप्रेरण से आप क्या समझते है? इसकी विभिन्न परिभाषाऐ दीजिए।
What do you mean by motivation? Give its different definations

04. अभिप्रेरण के विभिन्न प्रकार विस्तार से बताइये।
Give different type of motivation in detail

05. आप अपने विद्यार्थीयों को अभिप्रेरित करने के लिए किन विधियों का उपयोग करेगें?
Which methods of motivation would you use to motivate your students

06. अभिप्रेरण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिये क्यों महत्वपूर्ण है?
Why motivation is important for teaching learning process

इकाई 7 (Unit 7)

अवधान, स्मृति, रुचि

(Attention,memory,interest)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

7.0 उद्देश्य (Objective)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

7.2 अवधान (Attention)

- 7.2.1 अवधारणा एवं उसका स्वभाव
- 7.2.2 चयनित प्रक्रियाओं को प्रभावित करने वाले तब
- 7.2.3 शिक्षण में अवधान का महत्व एवं प्रयोग
- स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

7.3 स्मृति (Memory)

- 7.3.1 स्मृति का जीवन में महत्व
- 7.3.2 स्मृति की अवधारणा एवं विशेषताएं
- 7.3.3 भूलना (Forgetting)
- 7.3.4 स्मृति में सहायक तत्व
- स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

7.4 रूचि (Interest)

- 7.4.1 रूचि की अवधारणा एवं विशेषताएं
- 7.4.2 रूचियों का उदगम एवं विकास
- 7.4.3 शिक्षण में रूचि तथा अभिवत्ति का महत्व
- स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

7.5 सारांश (Summary)

- 7.5.1 अवधान (Attention)
- 7.5.2 स्मृति (Memory)
- 7.5.3 रूचि (Interest)

7.6 शब्दावली (Glossary)

7.7 संदर्भ ग्रन्थ (Further Readings)

7.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer to Self-Learning Exercises)

7.9 परीक्षण योग्य प्रश्न (Unit End Question)

7.0 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप अवधान, स्मृति तथा रूचि की अवधारणाओं को समझ सकेंगे:-

(i) इनके बीच सम्बन्धों को स्पष्ट कर सकेगें।

(ii) छात्रों के अधिगम में इनके महत्व को बता सकेंगे।

(iii) शिक्षक अपने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए इनका कैसे प्रयोग कर सकते है इसको स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षक का कार्य छात्रों को रचनात्मक जीवन के लिए तैयार करना है इसलिए वह उनके अधिगम को पूर्व निर्धारित दिशा में मोड़ने का प्रयत्न करता है। परन्तु इसके लिये आवश्यक है कि जो वह कक्षा में करता है छात्र केवल उस पर ध्यान (अवधान) ही न दे उसमें रूचि लेकर स्मृति में धारण भी करें तभी शिक्षक का शिक्षण इस प्रक्रिया में सफल होगा।

इस इकाई में दिये तथ्य आपको अपने शिक्षण में अपने छात्रों का ध्यान प्राप्त करने उसमें रूचि लेने तथा उसे अपने स्मृति में उतारने में सहायक हो सकते हैं।

7.2 अवधान (Attention)

7.2.1 अवधान की अवधारणा (Concept of Attention) एवं स्वभाव :-

अवधान (Attention) संवेदी प्रक्रिया (Sensory process) और प्रत्यक्षीकरण के बीच की कड़ी है।

संवेदना	अवधान	प्रत्यक्षीकरण
Sensation	Attention	Perception

किसी भी क्षण हमारे संवेदी अंगों पर बहुत से उद्दीय सक्रिय होते है फिर भी उनमें से केवल कुछ ही ऐसे होते है जिनका हम स्पष्ट रूप से प्रत्यक्षीकरण करते है। जब हम कोई काम कर रहे होते हैं तो हमारे परिपेक्ष (background) में कई प्रकार की ध्वनियां हो सकती है। हम उनके प्रति अवगत नहीं होते (हमें उनका आभास नहीं होता) यधपि कान पर उनका निवेश होता रहता है। अवधान प्रत्यक्षीकरण की उस प्रक्रिया को कहते है जो किसी निवेश (input) का अपने चेतन अनुभव या चेतना में शामिल करने के लिए चयन करती है। प्रत्यक्षीकरण की यह चुनावी प्रक्रिया किसी संवेदी अंग के लिए रास्ता साफ कर देती है। इस प्रकार यह प्रभाव जो संवेदी यंत्र पर अभी हावी है यह उस समय के लिए अन्य सभी संवेदी प्रभावों को बन्द कर देता है। उस समय के लिए हावी संवेदी प्रभाव सब पर भारी पड़ता हें बाद में निश्चय ही कोई अन्य संवेदी उद्दीपक प्रभावी हो सकता है। ऐसे तथ्यों को हम कहते है कि हम कुछ स्थिति पर ध्यान दे रहे हैं।

अवधान हमारे अनुभव के क्षेत्र को केन्द्र बिन्दु (focus) और पार्श्व (margin) में विभाजित करता है। परन्तु हमारे अवधान के परास में केवल थोड़े से ही मद आ सकते है। जिन घटनाओं को हम स्पष्ट साफ देखते है वह हमारे अनुभव (experience) को केन्द्र बिन्दु (focus) होती है। अन्य मद (item) उनसे मिले हुए या एक तरफ कुछ दूर ऐसे होते है जिनका हम केवल धुंधली तरह से प्रत्यक्षीकरण करते है। हम उनकी उपस्थिति से अवगत तो होते है पर केवल अस्पष्ट रूप से। इसके अतिरिक्त और भी कई चीजें हो सकती है जिन्हें हम अनुभव कर या नहीं भी कर सकते है। यह हमारे अवधान क्षेत्र से पूर्णत: बाहर होती है।

एक उदाहरण से इसे ओर स्पष्ट करते है।

मान लीजिए आप क्रिकेट का मैच देख रहे है उस समय आपके अवधान का केन्द्र बिन्दु बैट करने वाला तथा गेंद फैंकने वाला (bowler) होता है। बाकी लोग अन्य खिलाड़ी (fielder) दर्शक इत्यादि उसके पार्श्व में होता है तथा चुंगम जो आप चबा रहे है हो सकता है कि वह अवधान से पूर्णत: बाहर हो।

7.2.2 अवधान की चयनित प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले तत्व :-

अवधान वास्तव में चयनित (selective) होता है परन्तु इस चयन में वह चंचल या ढुलमुल होता है। चेतना का प्रवाह शायद ही सौम्य (placid) या अबाध हो यह इधर-उधर भटकता सा लगता है तथा कभी एक दिशा में अधिक समय तक नहीं रहता। जेम्स ज्वायस (James Joyse) तथा यूजीन ओनील (Eugne O'Neil) ऐसे कुछ वर्तमान लेखकों ने ढुलमुलपन को बहुत अधिक महत्व दिया है परन्तु ध्यान से देखने पर यह बहुमूर्तिदर्शी स्वभाव (Kaleidoscopic nature) एक सुव्यवस्थित यंत्र माना गया। इसके कुछ निर्धारक है जिनके आधार पर अवधान का चयन होता है। बोरिग लेंगफेलड बेल (Boring Langfield Weld) 1963 pages 219-20 ने ऐसे अवधान पोषक 6 निर्धारकों का वर्णन किया है जैसे-

1. उद्दीपक की तीव्रता (intensity of stimulus) - यह अवधान प्राप्त करने का अकेला सबसे महत्वपूर्ण निर्धारक है तथा आवाज (जैसे धमाके इत्यादि) तेज प्रकाश (चकचौंध करनेवाली) तीव्र वेदना इत्यादि। इनमें से प्रत्येक उपयुक्त प्रतिक्रिया की अपेक्षा रखती तथा सामान्यत: कोई न कोई प्रतिक्रिया होती ही है। ऐसा तीव्र उद्दीपक सामान्य वातावरण में परिवर्तन उत्यन्त करते है इसलिए प्रत्यक्षीकरण का स्रोत बनते है। परन्तु जब यह कुछ समय तक बने रहते है या दोहराये जाते है तो वह सामान्य वातावरण का भाग बन जाते है इनकी अवहेलना होती है, उन पर ध्यान नहीं जाता। तीव्र गति या उद्दीपक में एकाएक परिवर्तन भी अवधान का कारक बन सकता हैं। परन्तु तेज गति से जाता रॉकेट, सन्नाटे की अपेक्षा अवधान पाने से अधिक प्रबल है। कनफुसकी (whisper) पर शायद हमारा ध्यान आकर्षित न कर सके परन्तु जोर का शोर सदा ध्यान आकर्षित करता है।

2. उद्दीपक की नवीनता (Novelty of the Stimulus) :-

   उद्दीपक नवीनता भी एक प्रकार से वातावरण में परिवर्तन लाती है, इसलिए उस पर ध्यान जाना लगभग निश्चित है। तीव्रता के समय अवधान प्राप्त करने का यह भी महत्वपूर्ण स्रोत हैं स्थानीय महिलाओं के झुंड में एक विदेशी महिला बड़ी जल्दी ध्यान आकर्षण कर लेती हे। लीक से हटकर कोई नया चटपटा संगीत फौरन ध्यान खींचता है।

3. उद्दीपक की बारम्बारता (Frequency of Stimulus):-

   उद्दीपक का बारम्बार दोहराया कई प्रकार से अवधान प्राप्त करने में सहायक हो सकता है जैसे:-

   (i) एक प्रकार से बारम्बार दोहराया उद्दीपक तीव्र उद्दीपक की तरह काम करता है। एक बार के स्थान दो बार दोहराये उद्दीपक की अवधान को आकर्षित करने की अधिक सम्भावना है। यदि यह तीसरी बार भी दोहराया जाये तो उसकी अवधान की सम्भावना और अधिक होगी।

(ii) हो सकता है कि किसी ध्वनि पर हमारा ध्यान न जाये पर सतत् दोहराने पर वह हमारा ध्यान आकर्षित कर लेती है क्योंकि पहले बार आने वाला उद्दीपक हमको उसके दोहराने पर उसके प्रति सजग करता है। कभी-कभी किसी नये चटपटे गीत पर हमारा ध्यान नहीं जाता पर जब वह कई बार सुना जाता है तो हमारा ध्यान उसके प्रति स्वत: चला जाता है।

(iii) कोई उद्दीपक जब नियमित रूप से प्रस्तुत किया जाता तो अक्सर एक प्रकार से ऐसी अपेक्षा (expectation) उत्पन्न करता है जो इतनी बलवान होती है कि यदि दोहराये जाने वाला उद्दीपक पहले वाले से कुछ भिन्न भी है तो भी वह उसे पहले वाली उद्दीपक की भांति ही दिखाई पड़ता है। जैसे सिनेमा में डुप्लीकेट का प्रयोग या Proof reader का किसी शब्द की गलत वर्तनी (Spelling) को भी सही पढ़ना।

(iv) बार-बार दोहराना स्वयं में अवधान पोषक हो सकता है। यदि किसी कारण पहले आने वाले उद्दीपक पर ध्यान न जाये बार-बार उसके दोहराने पर वह अवधान पाने में सफल हो जाता है। फिर भी बार-बार दोहराने का प्रभाव मुख्यत: संयोग के कारण नहीं होता। उद्दीपक के पार्श्व में होने के कारण दोहराने वाला आखिरकार अवधान के केन्द्र बिन्दु में लाने में सफल होता है। फिर भी बार-बार दोहराने का प्रभाव मुख्यत: संयोग के कारण नहीं होता। दोहराने से पार्श्व में रहने वाला उद्दीपक आखिरकार केन्द्र बिन्दु में आने में सफल होता है।

4. अभिप्राय (Intention):-

किस समय कौन सा अनुभव हमारा अवधान प्राप्त करे। यह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि पहले से हमारी उसके प्रति क्या रूझान या अभिवृति है। जब हम भीड़ में अपने किसी साथी को ढूंढ रहे हो तो सामने पड़ने पर उस पर हमारा ध्यान तुरंत चला जाता है। वह भीड़ में सबसे अलग दिखता है। जब कार की कुंजी जो अपने निश्चित स्थान पर नहीं मिलती, को ढूंढते है तो सामने पड़ने पर हमारा ध्यान उस पर तुरन्त चला जाता है। अभिप्राय एक बार से अपेक्षित अनुभव का पूर्वाभ्यास (rehearsal) है। जब वह अनुभव आता है. वह एक पुराने मित्र से मिलने के समान होता है। (boring ut al. p.220)

5. अभिप्रेरणा (motivation):-

वह सारी आन्तरिक शक्तियां जिन्हें अभिप्रेरणा के रूप में संग्रहित किया जा सकता है प्रत्यक्षीकरण में शक्तिशाली चयनात्मक एजेन्ट का कार्य कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए यौनाकर्षण अन्य कारकों की अपेक्षा बड़ी तेजी से अवधान प्राप्त करता है। इसलिए T.V. पर तथा अन्य विज्ञापनों में सुन्दर बालाओं का खुल कर प्रयोग किया जाता है। भूखे व्यक्ति के लिए भोजन की गंध, इत्र के गंध से अधिक आकर्षक लगता है। इस प्रकार व्यक्तिगत, भौतिक एवं सामाजिक प्रेरक अवधान प्राप्त करने में अहम भूमिका निभा सकते है।

6. पूरी प्रत्यक्षीकरण की संरचना में किसी विशेष उद्दीपक का योगदान :-

किसी भी आकृति में उसके किसी भाग की स्वयं में चयन होने का संयोग बहुत कम होता है। जब उसे किसी वस्तुओं की योजना में महत्वपूर्ण भूमिका दी जाती हे तो वह एकाएक उभर कर सामने आ जाता है।

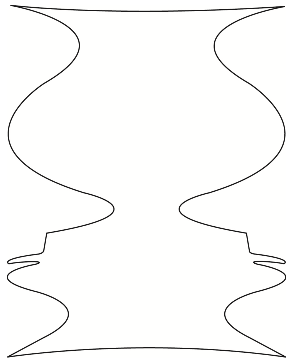

चित्र : 7.1 प्रत्यक्षीकरण में अभिवृत्ति / अभिप्राय

उपरोक्त आकृति में जब हम उसे एक पीकदान के रूप में देखते है तो अर्थहीन लकीरें उभर कर उसको पीकदान का रूप देती है। परन्तु हम उन्हें दो जुड़वा बच्चों के रूप में देखते है तो यह लकीर उस जुड़वा आकृति के बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

7.2.3 शिक्षण के अवधान का महत्व एवं उसका प्रयोग :-

एक गतिशील शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक और छात्रों के बीच सक्रिय पारस्परिक क्रिया होती रहती है। जिस कक्षा में केवल शिक्षक बोलता रहता है या श्यामपट्ट पर लिखता रहता है ओर छात्र चुपचाप सुनते रहते है या श्यामपट्ट पर लिखे हुए की नकल करते रहते है अधिगम की दृष्टि प्रभावी नहीं हो सकता।

कक्षा शिक्षण में छात्र को बराबर सक्रिय रखने के लिए शिक्षक को उनका अवधान सतत् प्राप्त करना आवश्यक होता। उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो गया होगा कि अवधान किन-किन विधियों से प्राप्त किया जा सकता है फिर भी इन्हें यहाँ दोहराना सामयिक होगा।

किसी भी पाठ-योजना में प्रस्तावना, प्रस्तुतीकरण, अभ्यास तथा सारांश प्रमुख भाग होते है। प्रस्तावना का कार्य छात्रों को पाठ विषय पर ध्यान आकर्षण करना होता है जिसे थार्नडाइक की भाषा में Law of readiness (तत्परता का नियम) कह सकते है। यहाँ शिक्षक ऐसे नवीन अनुभव या समस्याएं उपस्थित करता है जो छात्रों का ध्यान आकर्षित करते है तथा वे आगे आने वाली कक्षा गतिविधियों को सीखने में रूचि लेते है।

इसी प्रकार प्रस्तुतीकरण के फौरन बाद शिक्षक उसका अभ्यास करते' करते है। कई बार भिन्न रूपों में विषय सामग्री को दोहराने से छात्र के ध्यान में वह सामग्री बैठ जाती है।

इन सबके बीच शिक्षक आवश्यक तथ्यों पर बराबर जोर देकर या श्यामपट्ट पर रेखांकित करके सामग्री को तीव्रता प्रदान करता है अवधारणाओं में छिपे बिन्दुओ को प्रकाश में लाता है उन पर उनका ध्यान आकर्षित करता है पाठ को वातावरण को उन प्रकरणों से जोड़ने का प्रयत्न करता है जिनमें रूचि होती है जैसे फिल्मों में कुछ अच्छे सामयिक गाने या दृश्य इत्यादि।

स्वपरख प्रश्न (check your progress)

01 उद्दीपक, सवेदना, अवधान तथा प्रत्यक्षीकरण मे क्या सम्बन्ध है। क्या इनमें कोई श्रेणीकरण है

02 किसी उद्दीपक का बार-बार दोहराना किस प्रकार अवधान प्राप्त करने में सहायक होता है।

03 क्या निश्चित रूप से अवधान एक मनमौजी ढुलमुल प्रक्रिया है ?

04 अभिप्रेरणा अवधान प्राप्त करने में किस प्रकार सहायक है ?

7.3 स्मृति (Memory)

7.3.1 स्मृति का जीवन में महत्व (Importance of memory in life):-

बिना स्मृति के जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। मानव ही नहीं पशु में भी जीवन प्रवाह अबाध रूप से चलता रहे इसके लिए उसने अभी-अभी क्या किया है उसका याद रखना नितान्त आवश्यक है। मनुष्य के लिए तो यह और भी अधिक महत्वपूर्ण है। आप किसी परिचित व्यक्ति से बात कर रहे है इसका अर्थ है -

(1) यह व्यक्ति पहले से आपकी स्मृति में है।

(2) आप उसके साथ बोलने में आप शब्दों को एक व्याकरणीय क्रम को याद करके बोल रहे हैं।

(3) आपने अभी जो कहा उसमें दिलचस्पी ले रहे है नहीं तो आपकी वार्ता व्यर्थ हो जायेगी।

कदाचित आप इस सब प्रक्रिया के प्रति सजग नहीं होते, यह स्वत: होती लगती है, परन्तु स्मृति की यह प्रक्रिया चलती रहती है।

इस प्रकार हम देखते है कि अपने तथा दूसरों के साथ व्यवहार को सहज रूप से प्रतिपादित करने के लिए स्मृति एक आधारभूत तत्व है।

(4) बिना स्मृति के कुछ भी सीखा नही जा सकता। इसके अभाव में किसी स्थिति के हर बार घटित होने पर बार-बार पुरानी प्रतिक्रिया होती रहेगी। प्राणी हर प्रयास से आरम्भ करेगा। परन्तु स्मृति के कारण प्राणी में अभ्यास की प्रगति के साथ वर्तमान परिमार्जन भी चलता रहता है। पहले जिन उद्दीपकों के प्रति हम उदासीन थे उनके प्रति अनुक्रिया करने लगते है अभीष्ट अनुक्रियाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जाती है उन पर लगने वाली शक्ति कम होती जाती है। क्योंकि वह धीरे-धीरे स्वत: होती जाती है परन्तु जिस क्रियाओं से उपेक्षा मिलती है वह विलुप्त होती जाती है।

7.3.2 स्मृति की अवधारणा एवं विशेषताएं (concept and charecterstics of memory):-

स्मृति की अवधारणा में तीन प्रमुख तत्व आते है:- आने वाली सूचनाओं को कूट करना (code) करना उनको संचित रखना तथा समय पर पुन: प्राप्त करना (retrieval)। परन्तु यह सब सदैव उसी प्रकार चेतन में नहीं होता जैसे किसी कविता या भाषण को याद करना (रटना) हम बहुत सी सीखी हुई क्रियाओं को स्वचालित ढंग से करते है हमको उनका आभास नहीं होता।

पेशीय क्रियाओं (muscle activities) के संदर्भ में यह विशेष रूप से सत्य है जैसे कार चलाते समय हमारे हाथ और पैर स्थिति के अनुरूप स्वत: कार्य करते रहते है। जब हम स्मृति की बात करते है तो सामान्यत: लम्बे अवधि की स्मृति (long term memory) के बारे में बात करते है। कूट (coding) और संग्रहण का कार्य याद करने वाली सामग्री के उपयुक्त संगठन से सरलीकृत कर लिया जाता है। कुछ संगठन तो स्वयं याद करने वाली सामग्री में निहित होती है कुछ जिसको हम व्यक्ति परक (subjective) संगठन कहते है, वह सूचनाओं पर जब हम उनको संग्रहण के लिए कूटकरण (coding) कर रहे होते है तो उन पर आरोपित की जाती है। कूट करते समय प्रतिकृतियों (Images) का निर्माण विशेषकर मूर्त प्रतिकृतियों का सूचनाओं के संग्रहित करने में सहायक हो सकता है। कूट करते समय याद करने वाली सामग्री रचनात्मक प्रक्रियाओं द्वारा बहुधा रूपान्तरित कर दी जाती है। तब हम हम रूपान्तरित सूचना को याद करते है जिसको कूट (encode) किया गया था ना कि वह सूचना जो वास्तव में हमें प्रस्तुत की गई थी।

सूचनाओं की पुन: प्राप्ति (retrieval) में कुछ पुन: प्राप्ति करने वाले संकेतक (cues) सहायक होते है। ये स्मृति की संग्रह शाखा से उपयुक्त भाग को खोजने में सहायक होते है। जब कूटकरण (encoding) काफी विस्तृत तथा प्रचुर (rich) होता है तो पुन: प्राप्ति काफी अच्छा होता है। जब कोई सूचना किसी विस्तृत परिपेक्ष से आती है तो उससे पुन: प्राप्ति के संकेतक आसानी से प्राप्त हो जाते है।

7.3.3 भूलना:-

हर स्मृति के साथ भूलना भी लगा रहता है। भूलने के अभिप्राय है जो कुछ सीखा है उसे प्रतिधारित न कर पाना। स्मृति की भांति विस्मृति या भूलने भी सीखने की प्रक्रिया का आवश्यक अंग है अभ्यास से विराम काल में शुद्ध और अशुद्ध दोनों प्रकार की अनुक्रियाए अंशत: विस्मृति हो जाती है परन्तु हर स्थिति में उनकी गति समान नहीं होती। जैसे शुद्ध की अपेक्षा शुद्ध अनुक्रियाओं में अधिक शीघ्रता से विलुप्त होती है। शुद्ध अशुद्ध अनुक्रियाओं का अभिप्राय ऐसी अनुक्रियाओं से है जो सूचना का अति महत्वपूर्ण अंग नहीं है।

सम्यक रूप से सीखने वाली विषय वस्तु की धारणा-शक्ति अच्छी होती है। इसी प्रकार शीघ्र सीखने वाले व्यक्तियों की अवधारणा शक्ति भी अच्छी होती है। इसलिए ऐसा लगता है कि सम्यक अवगमन में सहायक होने वाली प्रत्येक वस्तु सम्यक धारणा में सहायक होती है।

भूलने के कई कारण हो सकते है जैसे :-

1 वह सूचना कूट और संग्रहित ही नहीं की गयी। उस पर ध्यान ही नहीं दिया गया।

2 उसको ठीक प्रकार से कूट (encode) और रिहर्सल नहीं किया गया। रिहर्सल का अर्थ है सूचना के मदों को जोर से या मौन होकर दोहरा कर नही अवधान के केन्द्र में नहीं रखा गया। कूट (encode) के समय जो सूचना हमें स्मृति में रखना है घटना है या जिसको आपने पढा है, वह रूपान्तरित (modify) हो जाती है। कूट करते समय जो रचनात्मक प्रक्रियाएं उस समय कार्य कर रही है यह जो स्मृति में संग्रहित है उसे विकृत कर देती है और हम उन विकृतियों को याद रखते है। उदाहरण के लिए जब हम कुछ पढते हैं या सुनते है हम वास्तव में जो शब्द उसमें प्रयोग किये उन पर पूरा ध्यान नहीं देते, हम केवल उसका सार या अर्थ रखते है जिनकी रचना कूट करते समय होती है। इस प्रकार

हम जो कुछ हमें याद रखना है उनका केवल कुछ भाग कूट करते है वास्तव में यह दोषयुक्त याद भूलना नहीं है। हम उसी को याद रखते है जिसको कूट किया गया है जबकि हम समझते है कि हम भूल जाते है क्योंकि जो याद रहता है वह उस घटना का परिशुद्ध प्रस्तुतीकरण नहीं है।

3. नवीन चीजों का सीखना पूर्व सीखे गये चीजों की स्मृति को बाधित करती हे। इसको पूर्व प्रभावी-निरोध (retroactive-inhibiton) की संज्ञा दी जाती है। नवीन घटनाएं, पूर्व के बाद में बाधक बन सकती है। इसी प्रकार पूर्व की घटनाएं बाद की घटनाओं को याद करने में बाधक हो सकती है। इसे हम प्रति-प्रभावी निरोधक (Proactive-inhibition) कहते है।

4. कभी-कभी भूलना सूचनाओं की पुन: प्राप्ति (retrieval) मे कुछ समस्याओं के कारण हो सकती है जैसे -

   हम जानते है कि पुन: प्राप्ति में संग्रहित सामग्री का संगठन तथा पुन: प्राप्ति के संकेतक (cues) जो संग्रहित सामग्री को ढूंढने में काफी सहायक होते है। बिना उपयुक्त संकेतकों के जिस को हम याद करना चाहते है वह याद नही आती अर्थात् हम उसे भूल जाते है। कभी-कभी जब हम याद करने का प्रयत्न छोड़ देते है तथा अन्य कार्य में लग जाते है, तो वह हमें याद आ जाती है ऐसा लगता है कि वह नई क्रियाएं हमें याद करने का अवसर देती है या पुन: प्राप्ति का संकेतक देती है। संवेगात्मक कारक भी पुन: प्राप्ति में बाधक हो सकते है।

7.3.4 स्मृति में सहायक तत्व (Elements help for in memorning):-

बहु त सी पुस्तकें या अखबारों में दिये फार्मूले, स्मृति को सुधारने की दिशा में दिए जाते है। इन फार्मूलों से जो भी सफलता मिलती है उनका श्रेय अंतत: सीखने की दक्षता में बुद्धि को दिया जा सकता है। किसी सामग्री को केवल रटने से स्मृति में कोई सुधार होने वाला नहीं। सीखने में कुछ सम्यक् सिद्धान्तों का प्रयोग करने पर भी स्मृति में उन्नति की सम्भावना है जैसे-

1. याद रखने की इच्छा या इरादा :-

   बहु त सी घटनाएं आपके सामने से गुजरती है परन्तु आपको उनकी याद नहीं रहती, क्योंकि आपकी उनमें रूचि नहीं है। आपका उनको अपनी स्मृति में रखने की कोई इच्छा या इरादा नहीं है। बिना इच्छा या इरादे के हमें प्रस्तुत सामग्री याद नहीं रह पाती।

   यदि आप में याद रखने की इच्छा होगी तो आप प्रस्तुत सामग्री पर अधिक ध्यान देंगे। यदि आपके लिए किसी खेल में रूचि है तो उसका उल्लेख आते ही आप उसके सम्बंध में प्रस्तुत सामग्री को ध्यान से सुनेंगे।

   आर्कमिडिज के सिद्धान्त में शायद आपकी रूचि नहीं इसलिए कक्षा में उसे पढ़ाते समय उसके प्रति अन्यमनस्क रखने के कारण याद नहीं रख पाते परन्तु जब आपके सामने शिक्षक यह प्रश्न रखता है कि -

   'लोहा पानी में डूब जाता है पर लोहे का जहाज पानी पर कैसे तैरता है?' '

   तो आपको फौरन इसका उत्तर जानने की उत्कंठा होती है तथा आप जानने के लिए उस पर अधिक ध्यान देते है। शिक्षक को किसी रोचक प्रश्न के रूप में अपने पाठ की

प्रस्तावना रखना इसी उद्देश्य की पूर्ति के होता है - छात्रों में पाठ प्रस्तुत तथ्यों को जानने की इच्छा, इरादा और इसलिए उस पर अधिक ध्यान।

2. अपनी कल्पना का महत्तम प्रयोग :-

प्रस्तुत सामग्री को अपने मन में इस तरह उतार लीजिए जिससे उसे भविष्य में भी प्रत्युत्पन्न किया जा सके। आर्कमिडिज के सिद्धान्त के सभी पहलुओं तरल पदार्थों उसमें डुबोई हुई वस्तु पर उछाल, वस्तु के आयतन से उसका संबन्ध इत्यादि सब महत्वपूर्ण बातें याद कर लीजिए।

3. जो कुछ आप याद रखना चाहते है उसे दूसरी चीजो से बांधने का प्रयत्न कीजिए। जिससे अधिक से अधिक सहचरों से आप उसे सम्बंध कर सकेंगे उतना ही आप उसे पास रख सकेंगे जैसे - राजा के सोने के ताज में कितनी मिलावट की गई उसे बिना ताज को गलाये पता लगाने की चुनौती - उस पर आर्कमिडिज की चिन्ता, तथा अनुमान की सफलता पर उसकी मानसिक स्थिति इत्यादि।

4. याद करने में लय भी सहायक होती है आज से 70 वर्ष पहले पहाडे इसी प्रकार सिखाये जाते थे। जैसे 15 का पहाडा - दूना 30, तिया 45, चौके 60, पंचे 75 छक्का 90, सत्ते पांच (105), अट्ठे बीसा (120), नौसा पतीसा (135) दावा डेढ़ सौ (150)

विज्ञापनों में इसका सबसे अधिक प्रयोग होता है। परन्तु याद करने में इसका प्रभाव सीमित होता है।

5. खण्डों में याद करना (Chun king) मान लीजिए आपको मोबाइल का यह नम्बर याद रखना है 1942.1657.7284

आप इसे आसानी से याद कर सकते है यदि आप इनको खण्डों में विभाजित कर सकें जैसे 1942 भारत छोड़े वर्ष का

1657 प्लासी का युद्ध हुआ था।

72 और 84 12×6 और 12×7 है।

6. अधिगम की इकाई में दी गई सीखने की विधियों का प्रयोग -

Whole Vs.part method

Recitation method

Massed Vs. Distributed practice

विस्तार के लिए सम्बन्धित इकाई को देखें।

स्वपरख प्रश्न (Check your progress)

05 स्मृति जीवन इतना महत्वपूर्ण क्यों है ?

06 स्मृति की अवधारणा में तीन कौन से तत्व है ?

07 हमारे भूलने के क्या कारण हो सकते है ?

08 अपनी स्मृति में सुधार के लिए हमें क्या करना चाहिए।

09 पूर्व प्रभावी निरोध और प्रति-प्रभावी निरोधक में क्या अन्तर है, उदाहरण देकर प्रकट करें।

7.4 रुचि (Interest) :-

7.4.1 अवधारणा एवं विशेषताएं :-

रूचि और अभिवृत्ति (Attitude) अभिन्न रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित होते है। अभिवृत्ति व्यापक शब्द है जिसमें रूचि शामिल है इसलिए एक दूसरे को समझने के लिए हम दोनों का एक साथ अध्ययन करेंगे।

रूचि वे अभिवृत्तियां है जिसमें कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र में अधिक सक्रिय होना चाहता है अर्थात् रूचियां वातावरण के किसी चयनित पक्ष के प्रति एक सकारात्मक अभिवृत्तियां है। उदाहरण के लिए अपने अनुभव के द्वारा या किसी व्यस्क जिसको वह बहु त चाहता है। उसके प्रभाव के कारण विद्यालय और उसमें पढ़ाये जाने विषयों को नफरत करता है। इस प्रकार वह विद्यालय सामग्री जैसे पुस्तकों और विद्यालय क्रियाओं के प्रति सक्रिय रूप विरोध करने की अभिवृत्ति कर लेता है। पहले लड़के मूर्त चीजों के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक भावनाएं रखते है जैसे खेल. शिक्षक. पशु किस प्रकार के लोग इत्यादि, जैसे जैसे वह अपने आप में बढते जाते है सच्चाई देश जैसी अमूर्त चीजों के प्रति निश्चित भावनायें रखने लगते है।

7.4.2 रूचियों का उद्‌गम एवं विकास :-

अभिवृत्तियों और रूचियां उसी तरह समान रूप से सीखी जाती है जैसे कुशलताएं, आदतें और अन्य विद्‌यालय कार्य सीखे जाते है। अधिगम के सारे सिद्धान्त जिनका वर्णन अधिगम की इकाई में किया गया है वह समान रूप से अभिवृत्तियों और रूचियों के निर्माण में लागू होती है परन्तु रूचियों या अभिवृत्तियों के क्षेत्र में यह इतना स्पष्ट नहीं होता सूक्ष्म कारक (subtle factors) जैसे ऐसी आवश्यकताएं जिनके प्रति वह सजग (aware) नहीं है या दबी आक्रामक भावनाएं या इच्छाएं हमारी अभिवृत्तियों के निर्माण की आधार शिला बन सकती है। कई अध्ययनों में देखा गया कि जो लोग किसी जाति या धर्म विरोधक होते है वह अक्सर ऐसे लोग होते है जिनमें उच्च स्तरीय संवेगात्मक द्‌वंद और सुरक्षा की भावना (emotional conflict) होती है जैसे आज कल हम उग्रवादियों या आतंकवादियों में देखते है "ऐसे लोगों के लिए प्रयोगंडा शैक्षिक सामग्री या शिक्षकों द्‌वारा ऐसा टिप्पणीयॉ जो यह संकेत करती है कि कोई समूह बुरा है या खतरनाक है, दबी उग्रता का स्वागत युक्त निकास बनता है (to such propoganda, educational material or even casual mark by teacher suggesting that certain group is evil provides a welcome outlet for repressed aggression" (Stagner, Ross:- "Attitude" Encyclopedia of educational research, 1950 N.Y)

परन्तु रूचियां आवश्यकताओं का सीधा संकेत नहीं है। बालक की आधारभूत आवश्यकताएं लोगों से (खासकर बड़ों से) अपने कायों की पसन्दगी पाना, अपने को महत्वपूर्ण होने की दिखलाई देने की इच्छा, सुरक्षा तथा स्वतन्त्रता। कोई भी क्रिया जो इसकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति करती है उसमें उसकी रूचि होगी। यह कोई संगीत हो सकता है, कोई खेल हो सकता है या 'दम-मारा दम्भा" वाला चरस का कश हो सकता है। किशोरों के किसी विशिष्ट समाज में यह सभी आधारभूत आवश्यकताओं का कार्य कर सकते है।

साधारणत: विद्यालय में अधिकांश ध्यान केवल पुस्तकीय ज्ञान पर जाता है। विद्यालय सभी बालकों को अपने अहम (ego) तथा सामाजिक आवश्यकताओं को विद्यालय द्वारा स्वीकृत क्रियाओं में स्थान नहीं देते। जब पुरस्कार कुछ सीमित छात्रों तक है तथा केवल पुस्तकीय ज्ञात तक अर्जित है, ऐसी दशा में सभी छात्रों को उपलब्धि का अनुभव करना या उसकी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना बहुत मुश्किल है। बालकों की आवश्यकताओं का पता उनकी इच्छाओं तथा आदर्शो से चलता है। जैसे बालक अपने प्रिय खिलाड़ियों या फिल्म स्टारों इत्यादि के साथ तादात्म स्थापित करते है। इस प्रकार का तादात्म उन्हें विघालयी क्रियाओं से दूर ले जाता है।

7.4.3 शिक्षण में रूचि तथा अभिवृत्त का महत्व :-

अधिकांश विघालयी छात्र-छात्रों की रूचियों को अपने शिक्षण में स्थान नहीं देता, इसलिए जैसे-जैसे छात्र बड़े हो जाते है कक्षा या विद्यालय में होने वाली गतिविधियों के प्रति उनकी रूचि घटती जाती है।

शिक्षक को अपने शिक्षण को रूचिकर बनाने के लिए उसमें विविधता लानी होगी जैसा ब्लेर जोन सिम्पसन (blair jone simpson p.232 मे) जैसे 'उन्हें तू पढ़" विधि से हटकर सुझाव दिया है:-

1. छात्रों को सामूहिक कार्यो तथा सामूहिक वाद-विवद का अवसर देना चाहिए तथा कक्षाओं में मानवीय सम्बन्धों के सुधार पर बल देना चाहिए।
2. जो अभिवृत्ति का निर्माण करने वाले विषय (issues) है उनका यथा सम्भव प्रत्यक्ष अनुभव प्रदान करना चाहिए।
3. विद्यालय की समुदाय का वास्तविक अंग बनायें - उनके सहयोग और उनको सहयोग इत्यादि से अभिप्रेरणो में बताई गई सभी विधियों का विद्यालय शिक्षण में प्रयोग किया जा सकता है।

अर्थात् -

1. शैक्षिक सामग्री को रूचिकर पूर्ण और कभी-कभी नवीन संदर्भ में प्रस्तुत करें। कभी-कभी शैक्षिक खेल (अंताक्षरी, विचारों का आदान-प्रदान इत्यादि)
2. शिक्षण अधिक रूचिकर तथा आकर्षक हो जायेगा यदि छात्रों को यह पता चल सके कि वह किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक हो सकेगा।
3. कक्षा का शिक्षण - अधिगम वातावरण ऐसा होना चाहिए जिसमें सभी छात्रों को उसमें सक्रिय भागीदारी का अवसर मिले तथा जिसका वातावरण दोस्ताना तथा उन्मुक्त (Permissive) हो।

स्वपरख प्रश्न (Check your progress)

10. रुचि की परिभाषा दीजिए तथा उसकी विशेषताएं बताइये।

11 व्यक्ति की दबी आक्रमक भावनाएं एंव इच्छाएं किसी प्रकार हमारी रुचियों एवं अभिवृत्तियों को किस प्रकार प्रभावित कर सकती है ?

12. छात्रों की रुचि शिक्षण के प्रति धीरे-धीरे क्यों घटती जाती है ?

13. शिक्षण को किसी प्रकार अधिक रुचिकर बनाया जा सकता है।

7.5 सारांश (Summary)

7.5.1 अवधान (Attention) :

अवधान प्रत्यक्षीकरण का पूर्वगामी है अर्थात प्रत्यक्षीकरण का पूर्वगामी समायोजन है। अवधान के निर्धारकों को दो स्थूल पर परस्पर सम्बन्धित बाह्य और आन्तरिक वर्गो में बांटा जा सकता है। बाह्य निर्धारकों के उद्दीपन की दशाओं का स्वरूप, स्थिति, तीव्रता, आकार, रंग, गीत आवृति और न्यूनता एवं विरोध। जिस सीमा तक उद्दीपक रूढ़िगत तथा परिचित परिवेश में भिन्नता का विरोध रखता है उतनी सीमा तक वह ध्यान आकर्षित करने में सफल होता है। इसी प्रकार हम उस पर ध्यान देते है जिसका सम्बन्ध हमारी आवश्यकताओं, इच्छाओं और रूचियों में होता है, ये वे निर्धारक है जो प्रेरणाओं से सम्बन्धित है।

7.5.2 स्मृति (Memory) :-

आने वाली सूचनाओं के कूटकरण (encoding) संग्रहण तथा पुन: प्राप्ति को स्मृति की संज्ञा दी जाती है। जब हम स्मृति की बात करते हैं तो हम प्राय: लम्बी अवधि की स्मृति की बात करते है जिसमें वह संगठित की जाती है, वर्गीकृत की जाती है तथा पुन: प्राप्ति की जाती है।

हर स्मृति के साथ भूलना भी लगा रहता है। अनभ्यास के काल में शुद्ध और अशुद्ध दोनों प्रकार की अनुक्रियाएं अंशत: विस्मृति हो जाती है। परन्तु शुद्ध की अपेक्षा अशुद्ध अधिक शीघ्रता से विलुप्त होती है अशुद्ध अर्थात जो सूचना का अति महत्वपूर्ण अंग नहीं है।

भूलन के कई कारण हो सकते है -

(i) सूचना पर ध्यान न देना (ii) ठीक प्रकार से कूट न होना (iii) नवीन सीखी चीजों का सीखना पूर्व सीखे को वांछित कर सकता है। (iv) यही नहीं पूर्व की घटनाएं भी बाद की घटनाओं की स्मृति को बाधित कर सकती है।

स्मृति में ये तत्व सहायक हो सकते है - याद करने की इच्छा, कल्पना की सीखने में महत्तम प्रयोग, स्मृति वाली चीजों का दूसरे से सम्बन्धित करना, सीखने में लय।

7.5.3 रूचि (Interest) :-

रूचि अभिवृत्ति का उप क्षेत्र है रूचि वह अभिवृत्तियाँ है जिसमें कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र में सक्रिय होना चाहता है, अर्थात् जिसमें उसकी सकारात्मक अभिवृत्ति होती है

अभिवृत्तियाँ एवं रूचियां उसी प्रकार सीखी जाती है जैसे कुशलतायें, आदतें इत्यादि। यह सीखना अचेतन मन से भी हो सकता है। शिक्षक को अपने शिक्षण को रूचिकर बनाने के लिए -

(i) छात्रों को सामूहिक कायों में लगाना चाहिए।
(ii) शिक्षण में प्रत्यक्ष अनुभव जहाँ सम्भव हो, शामिल करना चाहिए।
(iii) विद्‌यालय को समुदाय का अभिन्न अंग बनाना चाहिए।

7.6 शव्दावली (Glossary

स्मृति :- आने वाली सूचनाओं को कूट करके, संग्रहण करने तथा पुन: प्राप्त करने की प्रक्रिया।

अवधान (Attention):- यह संप्रेरणा (Motivation) पर आधारित प्रक्रिया है जिसके कारण वह किसी व्यक्ति, वस्तु या स्थिति पर ध्यान देते हैं।

रूचि:- वह अभिवृत्ति है जिसके कारण कोई व्यक्ति को किसी दिये क्षेत्र में अधिक क्रियाएं करना चाहता है।

प्रति-निरोधक (Proactive):- ये वह निरोधक है जो बाद में आकर पहले वाली अधिगम में बाधा डालते हैं।

7.7 संदर्भ ग्रन्थ (Further Readings)

1. Blair,L.M.,Jones,S and Simpson,R.H(Second edition,1962):The Macmillan Company, New York
2. Boring,E.C., Langfeld,H.S. and Weld(Eds)(1963,Indian printing) Asia publishing House, NewDelhi.
3. Morgan,C.T.King, R.A Weisz, J.R. and Schoptor, J.(1993). Tata McGraw-Hill Publishing Co.Ltd., New Delhi.
4. नारमन, एल, एन.(1961) : (अनुवादक आत्माराम शाह), राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली -6

7.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer/Indication to Self-LearningExamination) :-

01. जो उद्दीपक संवेदना पैदा करता है तथा जिस पर ध्यान जाता है उसी का प्रत्यक्षीकरण होता है। श्रेणीकरण नहीं पर उपरोक्त क्रम है।
02. (i) यह वह तीव्र उद्दीपक की तरह व्यवहार करता है। (ii) सतत् दोहराने पर ध्यान स्वत: जाता है। (iii) अपेक्षा पैदा करता है। (iv) अवधान पोषक होता है।
03. नहीं, और देखें 7.2.2 प्रथम वाक्य
04. प्रत्यक्षीकरण में शक्तिशाली एजेन्ट का कार्य करती है।
05. इसके बिना मनुष्य क्या पशु जीवन भी सम्भव नहीं है।
06. आने वाली सूचनाओं को कूट करना, संग्रहण करना तथा समय पर पुन: प्राप्ति करना।
07. (i) सूचनाएं कूट न करना या ठीक प्रकार से कूट न करना।
    (ii) नवीन सूचनाओ का पूर्व सूचनाओं या पुरानी सूचनाओं का बाद की सूचनाओं को प्रभावित करना।
    (iii) पुन: प्राप्ति की समस्याएं
    (iv) संवेगात्मक कारक।

08. (i) याद रखने की इच्छा (ii) प्रस्तुत सामग्री को मन में इस तरह उतार लें कि उसे भविष्य में प्रत्युक्रम किया जा सके। (iii) सामग्री को अन्य सूचनाओं से बाँधें। (iv) लय (v) खण्डों में याद करना।

09. देखें 7.3.3 (ii)

10. वह अभिवृत्तिया। है जिसमें कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र में अधिक होना चाहता है।

11. देखें 7.4.2

12. छात्रों की रूचियों की शिक्षण में अवहेलना होती है।

13. सामूहिक कार्य देकर, प्रत्यक्ष शिक्षण अनुभव, संवेगात्मक जीवन में भागीदारी का अवसर, विद्यालय को समुदाय का अभिन्न अंग बनाएं, विद्यालय का दोस्ताना तथा उन्मुक्त वातावरण।

7.9 परीक्षण योग्य प्रश्न (Unit-end Questions) :-

---

1. अवधान, स्मृति तथा रूचि में आपसी सम्बन्ध बताइये।
2. शिक्षण अधिगम की अर्थपूर्ण एवं स्थाई बनाने में अवधान, स्मृति एवं रूचि की क्या भूमिका है?
3. अभिवृत्तियॉ किस प्रकार समान एवं भिन्न है?-
4. अवधान प्राप्त करने की युक्तियाँ बताइए।
5. स्मृति में सहायक तत्वों का वर्णन।
6. अवधान प्रत्यक्षीकरण को किस प्रकार प्रभावित कर सकता है, उदाहरण सहित उत्तर दें।

इकाई 8 (UNIT 8)

व्यक्तित्व, अर्थ, सिद्धान्त, कारक और प्रारूप

(Personality : meaning,theories,factors and types)

इकाई की रूपरेखा (Structure) :-

8.0 उद्देश्य (Objectives)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

8.2 व्यक्तित्व का अर्थ (Meaning of personality)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

8.3 व्यक्तित्व के सिद्धान्त (Theories of personality)

8.3.1 प्रारूप और विशेषक सिद्धान्त (Types traittheories)

8.3.2 आइजेंक का श्रेणीबद्ध प्रारूप सिद्धान्त (Eyseneks hierarchical trait theory)

8.3.3 विशेषक सिद्धान्त (Trait theories)

8.3.4 गत्यात्मक व्यक्तित्व सिद्धान्त (Dynamics personality theories)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

8.4 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक (Factors a affecting personality)

8.4.1 वंशानुक्रम (Heredity)

8.4.2 वातावरण (Environment)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

8.5 व्यक्तित्व के प्रारूप (Types of personality)

8.5.1 स्वभाव की दृष्टि से (According of nature)

8.5.2 शारीरिक गठन के आधार पर (On the basis of body built up)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

8.6 सारांश (Summary)

8.7 शब्दावली (Glossary)

8.8 संदर्भ ग्रन्थ (Further reading)

8.9 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answers/Indication to self-Learning Exercises)

8.10 परीक्षायोग्य प्रश्न (Unit end question)

8.0 उद्देश्य (OBJECTIVES) :-

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको इस योग्य होना चाहिए कि आप :-

(1) व्यक्तित्व की अवधारणा को स्पष्ट कर सकें।

(II) व्यक्तित्व से सम्बन्धित शब्दावली तथा तकनीक का वर्णन कर सकें।

(III) व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या कर सकें।

(IV) व्यक्तित्व प्रारूपों की व्याख्या कर सकें।

8.1 प्रस्तावना (INTRODUCTION):-

किसी भी सफल अधिगम के लिए तीन मुख्य बातें आवश्यक है : सीखने की क्षमता, सीखने की चाह (प्रेरणा) तथा अनुकूल वातावरण। सीखने की क्षमता व्यक्ति की वंशानुक्रम तथा वातावरण से प्राप्त क्षमताओं पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दों में उसके व्यक्तित्व पर आधारित है।

व्यक्तित्व क्या है? इसको कौनसे कारक करते हैं? इसके आधार पर कितने प्रकार के व्यक्तित्व हो सकते हैं? सफल शिक्षण के लिए इन प्रश्नों को उत्तर आपको जानना काफी लाभदायक हो सकता है। इसलिए इस इकाई का ज्ञान तथा उपभोग आपके शिक्षण को काफी प्रभावशाली बना सकता है।

8.2 व्यक्तित्व का अर्थ:-

व्यक्तित्व की परिभाषाओं में कुछ, व्यक्ति के अन्दर कुछ उसके बाहर व्यवहार की विशेषताओं तथा कुछ में दोनों को शामिल करते हैं। गॉर्डन अलर्पोट की प्रसिद्ध परिभाषा में दोनों को शामिल किया गया है :-

"Personality is the dynamic organization within the individual of those psychophysical system that determine his unique adjustment to his environment"

व्यक्तित्व व्यक्ति के अन्दर उन मनोशारीरिक व्यवस्था का गत्यात्मक संगठन है जो उसके अपने वातारवरण के साथ अनन्य (Unique) समायोजन को निर्धारित करता है।

इसी प्रकार वाल्टर माइकेल (Walter Mischel) भी दोनों अन्तर प्रक्रियाओं तथा बाह्य व्यवहार को अपनी परिभाषा में शामिल करता है परन्तु बाह्य व्यवहार पर अधिक बल देता है । उसके अनुसार व्यक्तित्व उन सुस्पष्ट व्यवहार संरचनाओं (जिसके विचार तथा संवेग भी शामिल है) में निहित है जो उसके या उसकी परिस्थितियों से समायोजन की विशेषता को दर्शाता है।

"Personality consists of the distinctive patterns of behaviour (including thoughts and emotions) that charactraise each individual adaption to the situations of his or her life."

ऐसी कोई व्यक्तित्व की परिभाषा नहीं है जो सर्वमान हो परन्तु अधिकांश मनावैज्ञानिक इस बात पर सहमत है कि व्यक्तित्व में (i) वह व्यवहार संरचनायें शामिल है जो व्यक्ति अपने विभिन्न परिस्थितियों में प्रदर्शित करता है या (ii) वह मनोवैज्ञानिक विशेषतायें जो उसके प्रत्यक्ष व्यवहार का कारण होती है।

स्वपरख प्रशन (Check Your Progress)

01. गॉर्डन आलपोर्ट तथा वाल्टर माइकेल की व्यवितत्व की परिभाषाओं में क्या समानता तथा अन्तर हैं।

8.3 व्यक्तित्व के सिद्धान्त (Theories of personality):-

व्यक्तित्व के बहुत से सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये है परन्तु अधिकांश को इन चार प्रमुख वर्गो में बांटा जा सकता है :-

8.3.1 प्रारूप और विशेषक सिद्धान्त (Type and trait theories) :-

दोनों व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषताओं पर जोर डालते है परन्तु वह व्यक्ति की व्याख्या में इन विशेषताओं का विभिन्न प्रकार से प्रयोग करते है जैसे -

टाइप सिद्धान्त (Type theories) में व्यक्तित्व को प्रारूपों (Types) में वर्गीक्रत किया गया है। अन्य लोगों के व्यवहार जो समझने के लिए हम में से बहुत से लोग इस प्रकार का वर्गीकरण करते है और अनुमान लगाते हैं कि भविष्य में वह कैसा व्यवहार करेंगे। व्यक्तित्व के बारे में जानने का यह सबसे पुराने तरीकों में से है (लगभग 200 वर्ष पुराना)

सबसे पुराने टाइप सिद्धान्त ग्रीस के एक चिकित्सक हिप्पोक्रेटस (Hippocrates) ने दिये उसने व्यक्तियों को चार प्रकार के स्वभाव बताये :-

(i) विषादी स्वभाव (Melon cholic) : उदासीन (depressed) विषण्ण (Morose)

(ii) पैत्तिक स्वभाव (Cholevic) गर्म स्वभाव

(iii) भाव शुन्य (phlegmatic) मन्द गति, शान्त, अ.उत्तेजित

(iv) अत्याशा (Sanguine) : प्रसन्नचित्त, सशक्त, विश्वास के साथ आशावादी।

Hippocrates के बाद व्यक्तियों को समूह में बांटने के बहुत से प्रयत्न किये गये। कोई टाइप (Type) किसी वर्ग के व्यक्तियों का समूह होता है जो समान विशेषताओं वाले होते है जैसे अन्तर्मुखी (Introverls) ऐसे व्यक्ति होते है जिनमें समान विशेषतायें यह होती है :- शर्मिलापन, सामाजिक जीवन से खिंचाव, अधिक बोलने की प्रवृत्ति इत्यादि। इसकी उल्टी विशेषता वाले लोग बर्हिमुखी वर्ग में आते है।

परन्तु सामान्यत: इस प्रकार का तीखा (sharp) वर्गीकरण वैज्ञानिक दृष्टि से व्यवहारिक नहीं है क्योंकि लगभग व्यक्तित्व के सभी आयाम सामान्य सम्भवत: वक्र के अनुसार वितरित है। कोई व्यक्ति पूर्णत: अर्न्तमुखी या बर्हिमुखी नहीं होता, वह कम या अधिक हो सकता है। अधिकतर सामान्य के आस-पास होते हैं।

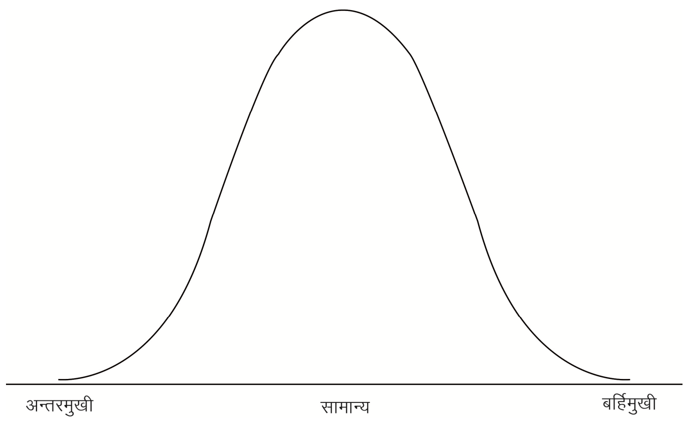

आरेख 8.1 सामान्य संभावता: वक्र

8.3.2 आइजेंक की श्रेणीबद्ध टाइप सिधान्त (Eysenck's hierarchical theory) :-

आइजेंक ने व्यक्तित्व के प्रमुख संघटकों (Components) को कुछ थोड़े व्यक्तित्व के प्रारूप (types) के साथ में पहचान की। प्रत्येक टाइप में कुछ व्यक्तित्व की विशेषताएं होती है। उदाहरण के लिए आइजेंक की दृष्टि से बर्हिमुखी प्रकार के व्यक्ति में सामाजिकता सक्रियता (liviliness) तथा उत्तेजना की विशेषता होती है । इन में से प्रत्येक विशेषता को ऐसे स्वाभाविक-प्रतिक्रिया (habitual response) संरचनाओं में बांटा जा सकता है जो कई स्थिति में होती है। इसी प्रकार प्रत्येक स्वाभाविक प्रतिक्रिया को फिर किसी विशिष्ट स्थिति में विशिष्ठ प्रतिक्रियाओं में बांटा जा सकता है। इस प्रकार के व्यापक (global) से लेकर विशिष्ठ स्थिति को देखते हु ए प्रतिक्रियाओं की श्रेणीकरण के कारण आइजेंक का सिद्धान्त श्रेणीबद्ध सिद्धान्त कहलाया।

8.3.3 विशेषक सिद्धान्त (Trait theories) :-

जब हम किसी व्यक्ति के बारे में कहते हैं कि "वह दुराग्रही है, अपनी बात मनवाने के लिए किसी सीमा तक जा सकता है," भड़कीला है या आवेगशील है, शीघ्र निर्णय लेता है इस प्रकार के विवरणीय शब्दों को Traits या विशेषक कहा जाता है ।

आलपोर्ट का सिद्धान्त :-

Gordon Allport; trait theory वालों में विशेष स्थान रखते हैं, उन्होनें अंग्रेजी कोषों से 18000 ऐसे विशेषकों को गिना जो सुस्पष्ट व्यक्तिगत प्रकार के प्रदर्शित करते थे। इनका उसने सामान्यत: तीन स्तरों पर वर्गीक्रत किया :

1. मूलभूत विशेषक (**Cardinal traits)**

यह वह विशेषक है जो इतने प्रभावी है कि व्यक्तिं की सभी क्रियायें का स्रोत उनमें ढूंढा जा सकता है। यह व्यापक उच्च स्तरीय प्रभावी विशेषक अक्सर प्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम से जाने जाते है जैसे कि व्यक्ति को ईसा मसीह की तरह का कहा जा सकता है, किसी को Machiavellian कहा जा सकता है किसी को केन्नेडी की तरह व निक्सन की तरह (Nixonian) कहा जा सकता है। प्रत्येक शब्दावली एक विशेषक का वर्णन करती है जिसका

प्रभाव इतना व्यापक तथा गहन है कि उस व्यक्ति के अन्य विशेषकों के प्रभाव को निष्प्रभ (Over shadow) कर देता है। आलपोर्ट का विश्वास है कि अधिकांश व्यक्तियों में कोई वास्तविक मूलभूत विशेषक (Cardinal trait) नहीं होते परन्तु जब वह ऐसे विशेषक होते तो वह वस्तुत व्यक्ति के समूर्ण व्यवहार में परिलक्षित होते है।

2. केन्द्रीय विशेषक (**Central traits)**

व्यक्तियों में जिनमें मूलभूत विशेषक (लक्षण) नहीं होते केन्द्रीय विशेषक निर्णायक (crucial) होते है। केन्दीय विशेषक मूलभूत विशेषक व्यक्ति के व्यवहार का चरित्र चित्रण करते है परन्तु उस सीमा तक नहीं जितना मूलभूत विशेषक करते हैं। केन्द्रित विशेषक है जिन्हें क्रम निर्धारणकर्त्ता को किसी व्यक्ति की मुख्य विशेषताओं का क्रम निर्धारण करने को कहा जाता है। आलपोर्ट के अनुसार ऐसे विशेषकों की संख्या 10-12 से अधिक नहीं होती।

3. द्वितीयक विशेषक (**Secondary traits)**

सबसे कम सामान्यीकृत विशेषक है जैसे वह व्यक्ति "चुंगम पसन्द करता है" विदेशी कार पसन्द करता है। यह विशेषक केवल बहुत सीमित क्षेत्र तक प्रभावी है।

आलपोर्ट की मान्यता है कि व्यक्ति को उन विशेषकों के रूप में वर्णन करना चाहिए जो उसकी अनन्य विशेषताएं (Unique features) है। इस उपागम में जिसे Idiographic उपागम कहा जाता है व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। यह प्रयत्न किया जाता है कि विभिन्न स्थितियों में व्यक्ति को समझा जा सके, उसके व्यवहार को व्याख्या की जा सके तथा अक्सर उसके व्यवहार के बारे में भविष्यवाणी की जा सके।

इसका उल्टा nomothetic उपागम है जिसको भी आलपोर्ट मान्यता देता है परन्तु idiographic से कम इसे dimensional approach भी कहते हैं। इसमें ऐसे व्यक्तित्व के सिद्धान्तों (Principles) का पता लगाया जाता है जो व्यक्तियों पर सामान्य रूप से लागू होता है।

एकल-विशेषक शोध-आलपोर्ट की सोच में बहुमुखी विशेषक है, परन्तु लोग सर्तकतापूर्ण केवल एक विशेषक पर ध्यान देते है जैसे बहुत से लोगों ने नियन्त्रण की अधिकारिता (locus of control) का अध्ययन किया - इसका अभिप्राय है किस सीमा तक हम मानते है कि हम जीवन के घटनाओं के कारण है तथा उनका नियन्त्रण करते है। ऐसे लोगों की आंतरिक नियन्त्रण अधिकारिता बहुत उच्च स्तरीय होती है। इसका उल्टा यदि हम यह विश्वास करते हैं कि अधिकांश घटनायें भाग्य या किसी शक्तिशाली शक्ति के कारण होती है तो हमारा बाहय locus of control उच्च स्तर का है।

8.3.4 गत्यात्मक व्यक्तित्व सिद्धान्त (Dynamic personality theories) :- इसमें फ्राँयड (Freud) जुंग (Jung) र्हानी (Horny) के सिद्धान्त आते जिनका है विस्तृत वर्णन यहाँ सम्भव नहीं है। ऐसे सिद्धान्तों में ऐसी प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, जिसके द्वारा आवश्यकताओं, प्रेरणाओं तथा मनोवेगों जिससे व्यक्ति अक्सर अवगत नहीं होता। आपसी अर्न्तप्रक्रियाओं से व्यक्ति को व्यवहार नियन्त्रण करती है।

स्वपरख प्रशन **(Check Your Progress)**

02. टाइम सिद्धान्त और श्रेणीबद्ध टाइप सिद्धान्त में क्या अन्तर हैं ?

03. आलपोर्ट की विशेषक सिद्धान्त (Trail theory) में विशेषकों को कितने स्तरों में बांटा गया हैं ?

8.4 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting personality) :-

जैविक शरीर (Biological organism) के सामाजिक वातावरण के साथ पारस्परिक क्रिया द्वारा व्यक्तित्व का उदय होता है। इस व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले दो प्रमुख कारक है जैविक या वंशानुक्रम एवं वातावरण । इसके अनुरूप व्यक्ति की उपलब्धि, क्षमता तथा स्वभाव निर्धारित होता है। व्यक्ति की जो विशेषताओं अधिगम या प्रशिक्षण से प्रभावित नहीं होती उनके कारण पित्रेक. (genes) माने जाते है जो हमारे वंशानुक्रम के वाहक है। इस विभाजन में कई प्रकार के वातावरण के कारक जैसे ताप (Temperature) और पोषण (Nutrition) का पारस्परिक प्रभाव जो नाड़ी संस्थान के विकास में योगदान देता है को भी शामिल करना आवश्यक है इस प्रकार व्यक्तित्व के विकास के कारकों का सरसरी तौर पर वर्णन इस प्रकार हो सकता है।
व्यक्तित्व विकास के कारक्

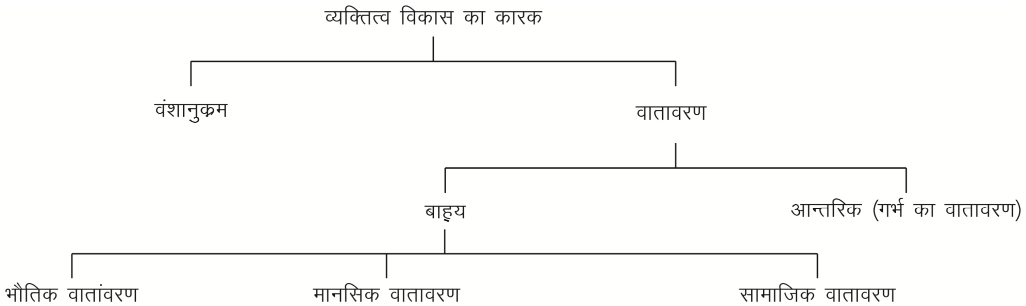

आरेख 8.2 व्यक्तित्व विकास के कारक

परन्तु यह कारक स्वतंत्र रूप से व्यक्तित्व का विकास वही करते उनके पारस्परिक क्रिया के कारण ही होते है।

8.4.1 वंशानुक्रम की कुछ विशेषताएं इस प्रकार है :-

(1) वंशानुक्रम व्यक्ति के सारे व्यक्तित्व में व्याप्त है।

(2) वंशानुक्रम संयोग की बात है ।

(3) समान से समान उत्पन्न होते है (Like begete alike)
व्यक्ति कई प्रकार से उसी आयु और जाति के व्यक्तियों के अपेक्षा अपने माता पिता से अधिक समान होती है।

(4) समान से असमान भी उत्पन्न हो सकते है ।

(Like may also beget unlike) :- वंशानुक्रम संयोगिक है जनन कोशिकाओं में विभिन्न गुणसूत्र होते है जो विभिन्न सम्मिलनों से संयोजित होकर ऐसी सन्तान उत्पन्न कर सकते है जो अपने माता-पिता या भाई बहिन से भिन्न हो जैसे बुद्धि, शारीरिक गठन, स्वभाव।

(5) माध्य की ओर प्रतिगमन (Regression Towards mean) :- बहुधा यह देखा जाता है कि असामान्य माता पिता की सन्ताने उतनी असामान्य नहीं होती जैसे नाटे माता-पिता की सन्ताने उसकी नाटी नहीं होती प्रतिभाशाली माता-पिता की सन्ताने उतनी प्रतिभाशाली कम मिलती है।

8.4.2 वातावरण :-

पित्रेक (genes) को छोड़कर जो भी कुछ भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है यह वातावरण है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से व्यक्ति का वातावरण गर्भ से लेकर मृत्यु तक प्राप्त होने वाले सभी उद्दीपकों (Stimuli) का समुच्चय है व्यक्ति और वातावरण के बीच निरन्तर पारस्परिक क्रिया होती रहती है। वातावरण का वर्गीकरण आन्तरिक तथा वाह्य वातावरण के साथ रूप में किया जा सकता है। आन्तरिक वातावरण में अन्त: कोशिका तथा कोशिकान्तर वातावरण शामिल है तथा बाह्य वातावरण में जन्मपूर्व के गर्भ वातावरण तथा जन्म उपरान्त तक के भौतिक, मानसिक तथा सामाजिक वातावरण शामिल है।

गर्भ धारण के साथ ही वातावरण अपना प्रभाव शुरू कर देता है। गर्भावस्था के रासायनिक वातावरण को बदलने से अनेक शारीरिक रचनाओं में परिवर्तन देखा गया इसकी प्रकार पालक घरो में रखे गये बालकों तथा पिछड़ी एवं एकल जातियों के बालकों के अध्ययन में जन्मोपरान्त मानसिक क्रियाओं तथा व्यक्तित्व पर भी वातावरण का प्रभाव देखने को मिला।

व्यक्तित्व पर वंशानुक्रम तथा वातावरण का साक्षेप प्रभाव जानने के लिए अनेक प्रकार के अध्ययन किये गये जैसे पारिवारिक इतिहास तथा सह-सम्बंध विधि से पारिवारिक समानता का अध्ययन, गोद लिए बालकों का अध्ययन, जुड़वा बच्चों का अध्ययन, असामान्य स्थितियों में पाले गये बच्चों का अध्ययन, चयनात्मक प्रजनन सम्बन्धि चूहों पर अध्ययन तथा असाधारण वातावरण के प्रभाव का अध्ययन। इन सभी अध्ययनों में सबसे बड़ी कमी यह थी कि इनमें वंशानुक्रम तथा वातावरण के प्रभावों को अलग-अलग नियन्त्रित करके अध्ययन करना सम्भव नहीं हुआ इसलिए व्यक्तित्व पर वंशानुक्रम तथा वातावरण के साक्षेप प्रभाव के बारे में कोई निश्चित मत देना सम्भव प्रतीत नहीं होता। इसलिए वर्तमान स्थिति में यह कहना अधिक उचित होगा व्यक्तित्व का विकास वंशानुक्रम तथा वातावरण की पारस्परिक क्रियाओं के कारण होता है इसलिए छात्रों को सामाजिक व्यक्तित्व विकास के लिए अनुकूल शैक्षिक एवं सामाजिक वातावरण मिलना चाहिए जिससे उनकी आनुवंशिक क्षमताओं का अधिक से अधिक विकास हो सके।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress

04. वंशानुक्रम की प्रमुख विशेषतायें सोचिए।

05. वंशानुक्रम तथा वातावरण के व्यक्तित्व की दृष्टि से कौन अधिक प्रभावी हैं ?

8.5 व्यक्तित्व के प्रारूप (Types of personality) :-

व्यक्तित्व के वर्णन के पूर्व उपागमों में व्यक्तित्व को प्रकारों (Types) में विभाजित करना था। इसके प्रयोग से किसी व्यक्ति को प्रभावी प्रकार का किसी को सामाजिक किसी को एकान्तप्रिय प्रकार कहा जा सकता है। टाइप (Type) सिद्धान्त काफी समय से प्रचलित है क्योंकि वह यह पुरानी लोकप्रिय चिन्तन का भाग है किसी को लम्बा, ठिंगना, अच्छा या बुरा कहना बड़ी सामान्य प्रवृति है। परन्तु जैसा ऊपर देखा गया ऐसे दूरस्थ (extreme) अपवाद है और अधिकांश व्यक्ति न बहुत लम्बे या नाटे है ना ही पूर्णत: अच्छे या बुरे है । इन गम्भीर कमियों के बावजूद Type theories ने मनोविज्ञान के ऐसी कुछ अवधारणाओं एवं शब्दों का योगदान दिया है जिनका प्रभाव काफी व्यापक है ऐसे वर्गीकरणों में कुछ इस प्रकार है :-

8.5.1 स्वभाव की दृष्टि से (According to nature) :-

अंतर्मुखी-बर्हिमुखी (Introvert Extrevert)

अंतर्मुखी वह व्यक्ति है जो वास्तविक जगत की सहभागिता में कम अपनी आन्तरिक दुनिया के विचारों और स्वैर कल्पना (Fantasy) में अधिक खोये रहते है

दूसरी ओर बर्हिमुखी (extrovert) अधिकतर बाह्य वस्तुनिष्ठ सामग्री से नियन्त्रित होता है तथा बाह्य आवश्यकताओं तथा सामाजिक स्वार्थपरायणता (expendiency) से संचालित होता है कभी-कभी इस दिधुरी वर्गीकरण को काल्पनिक (Visionary) वास्तविक (Practical) व्यक्तियों के रूप में कहा जाता है। बहिर्मुखी की समान्य अवधारणा यह भी हे कि वह मोटी चमड़ी वाला (भाव शून्य) तथा अपेक्षाकृत अपने प्रति आलोचना के प्रति उदासीन होता है अपने संवेगात्मक अभिव्यक्ति में स्वैच्छिक (spontaneous) होता है अपनी बहस में अव्यक्तिक (impersonal) होता है वह अपनी आवश्यकताओं न तो गम्मीर रूप से प्रभावित होता है । ना ही अधिक आत्म विश्लेषण या आत्म आलोचना में रत होता है। अर्न्तमुखी में इससे उल्टी प्रवृत्तियाँ होती है। आलोचना के प्रति संवेदनशीलता संवेगात्मक अभिव्यक्ति में अवरोधन (inhibition) बहस में व्यक्तिगत (Personalisation) असफलताओं को बढ़ा चढ़ा कर देखना तथा आत्म-विश्लेषण तथा आत्म-आलोचना में ध्यान मग्नता।

8.5.2 शारीरिक गठन के आधार पर एक क्रेशमर का प्रारूप इस प्रकार है

अ. पीन छोटे-मोटे (Pyknic) - इस वर्ग को बर्हिमुखी लक्षणों से युक्त माना जाता है।

ब. सुगठित (मांसल) (atheletic) ओजस्वी और आक्रमणशील।

स. कृश (लम्बे और दुबले पतले) (Asthenic or Leptosome) - अन्तर्मुखता वाली प्रवृति। शारीरिक गठन के व्यक्तित्व से सम्बन्धित करने वालों में सबसे महत्वकांक्षी प्रयास शेल्डन (Sheldon) का है । इसमें शारीरिक एवं मानसिक लक्षणों के मूल्यांकन के लिए सामान्य अनुमान के स्थान पर मात्रात्मक मापन (Quantative rating) से काम लिया गया है।

इसके अनुसार तीन प्रकार के व्यक्तित्व होते है :-

1. गोलाकारिक (Endomorphic) :- खूब उभरे उदरीय भाग वाले पाचक अंगों का मुख्यत: भ्रूण के अन्तर्जनस्तर (endoderm) से होता है इसलिए इसे यह नाम दिया गया।
2. मांसल (mesomorphic) अत्यन्त मांसल वाले व्यक्ति। चूंकि मांसपेशिया मध्यर्जनस्तर से उत्पन्न होती है इसलिए इसे यह नाम दिया।
3. लम्बा कारिक (ectomorphic)

क्योंकि त्वचा और नाड़ीय तन्त्र का विकास बर्हिजर्नस्तरों से होता है।

इसमें किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का मूल्यांकन 1 से 7 के मापक पर किया है जैसे -

7-1-1

का अर्थ है प्रचुर गोलाकारिता (end morphic)

1-7-1

का अर्थ है प्रचुर आयत कारिक (mesomorphic)

1-1-7

का अर्थ है प्रचुर लम्बाकारिक (ectomorphic)

4-4-4

वाला व्यक्ति तीन आयोमों में औसत है इस प्रकार हम देख सकते है कि गोलाकारिक वर्ग के लोग क्रेशमर की जीन वर्ग, आयता कारिक सुसंगठित और लम्बाकारिक क्रेशमर के कृश वर्ग में आते है।

शारीरिक गठन की भिन्नता प्रत्यक्ष होती है लेकिन कुछ ऐसे लोग होते है जिनको किसी वर्ग विशेष में नही खपाया जा सकता। शारिरीक गठन के आधार पर वर्गीकरण करने में ऐसे विलक्षण व्यक्ति ही प्रमुख रौडे हैं

एक समस्या यह सिद्ध करना है कि व्यक्तित्व का वर्गीकरण शारीरिक गठन पर आधार पर किया जा सकता है क्या इनमें कोई सार्थक सह सम्बन्ध है ? बालकों की एक शिक्षण संस्था के द्वारा किये गये अनुसन्धान में शारीरिक प्रारूपों (Types) तथा व्यक्तित्व के लक्षणों में कोई सह सम्बन्ध नहीं मिला। एक अन्य शोध से पता चला कि आयामों के सीमान्त पर ही ऐसा यह सम्बन्ध स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ता है।

प्रारूपी सिद्धान्त (Type theories) अधिक मान्य नहीं है क्योंकि वह व्यक्तित्व के वर्णन का अत्यधिक सरलीकरण देते है जैसे-

(i) वह यह मान लेते है कि सभी व्यक्ति किसी न किसी वर्ग में फिट (fit) हो जायेंगे यह अवलोकन तथ्यों से मेल नहीं खाता। अधिकांश व्यक्ति तो छोरो (extremes) के बीच के होते है। उनमें सतत श्रेणीकरण होता है।

(ii) यह वर्गीकरण कारण और प्रभाव में भ्रम पैदा करते है।

यह कहना कि व्यक्ति बाहरी संसार सम्पर्क से पीछे हैं क्योंकि एक अंतर्मुखी है यह एक ऊपरी तथा घुमाऊ व्याख्या है। व्यक्ति का विशिष्ठ समायोजन बहुत से कारणों से प्रभावित होता है। अंतर्मुखीजन इन कारणों से होता है और व्यक्तियों का इस उपरोक्त वर्गीकरण यह नहीं बताता कि यह व्यक्ति क्यों किसी प्रकार से व्यवहार करता है, वह केवल उसके व्यवहार का वर्णन करता है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress

06. शारीरिक गठन के आधार पर क्रेशमर के प्रारूप बताइये।

07. प्ररूपी सिद्धान्त अधिक मान्य क्यों नहीं हैं ?

8.6 सारांश (Summary)

इस इकाई को तीन प्रमुख भागों में बांटा गया है :

व्यक्तित्व की अवधारणा एवं उसको प्रभावित करने वाले कारक तथा व्यक्तित्व के प्रारूप।

व्यक्तित्व की अवधारणा में बहुचर्चित प्रसिद्ध गार्डन आलपोर्ट (Gordon Allport) की व्यक्तित्व की परिभाषा दी गई है जिसके अनुसार व्यक्तित्व, व्यक्ति के आन्तरिक मनोदैहिक संगठन से निर्धारित उसके अनन्य (Unique) व्यवहार करने का तरीका है।

इस सन्दर्भ में कई प्रकार की व्यक्तित्य के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है जिनको चार प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है : प्रारूप सिद्धांत (Types theories) श्रेणीकृत प्रारूप सिद्धान्त (hierarctical theorus) विशेषक सिद्धान्त (Trait theories) तथा गत्यात्मक व्यक्तित्व सिद्धान्त (Dynamics personality theories)

इनके अनुरूप व्यक्तित्व के प्रारूपों पर भी विचार किया हैं। यह प्रारूप या विशेषक कैसे निर्माण होते है उनके कारकों का भी "व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों' के अन्तर वर्णन किया गया है।

8.7 शब्दावली (Glossary) :-

व्यक्तित्व (Personality) :-व्यक्ति के आन्तरिक मनोवैज्ञानिक संगठन द्वारा निर्धारित व्यक्ति के व्यवहार करने का अपना अनन्य तरीका।

व्यक्तित्व प्रारूप (Personality type) :- विभिन्न प्रकार के व्यवहार करने के आदी व्यक्ति

विषादी स्वभाव (melanchlic) :- उदासीन, विपण्ण स्वभाव

पैत्तिक स्वभाव :- गर्म स्वभाव

भाव शून्य (phlegmatic) :- मंद गति, शान्त, अ.उत्तेजित आत्याशा

मूल विशेषक (Cardinal traits) :- वह विशेषक जो इतने प्रभावी है कि व्यक्ति की सभी क्रियाओं का स्रोत उनमें दूंढा जा सकता है।

केन्द्रीय विशेषकर (Central traits) :- मूलभूत विशेषक की अनुपस्थिति में यह निर्णायक होते है।

द्वितीयक विशेषक (Secodnary traits) :- सबसे कम सामान्यीकृत विशेषक।

वंशानुक्रम (Heredity)) :- व्यक्ति के वह व्यक्तित्व के गुण जो उसे अपने माता-पिता से पित्रक (genes) के द्वारा मिलते है।

वातावरण (Environment) पित्रेक को छोड़ कर जो भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है वह वातावरण के अन्तर्गत आता है।

अंतर्मुखी (introvert) :- बाह्य जगत से कम अपने विचारों में अधिक खोया रहता है, चिन्तनशील काल्पनिक बर्हिमुखी (extrovert) :- बाह्य जगत से सम्पर्क में अधिक रूचि रखने वाला। व्यवहारिक मोटी चमड़ी वाला, आलोचना के प्रति अधिक ध्यान देने वाला

8.8 संदर्भ ग्रंथ (Further readings) :-

1. Boring, Langfild weld (1961) : Foundations of Psychology
2. नारमन एल. मन. (1961) मनोविज्ञान : मानवी समायोजन के मूल सिद्धान्त
3. Morgan, King and Schopler (1993) : Introduction to Psychology

8.9 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर / संकेत (Answers to Self Learning Exercises)

01. दोनों आन्तरिक क्रियाओं तथा बाहय व्यवहार को अपनी परिभाषा के स्थान देते है परन्तु वाल्टर की परिभाषा बाहय व्यवहार पर अधिक बल देती है ।

02. टाइप सिद्धान्त में सभी प्रारूप (Type) बराबर होते है, श्रेणीकृत में प्रत्येक प्रारूप को ऐसे स्वभाविक प्रतिक्रिया संरचनाओं में बांटा जाता है जो कई स्थितियों में होती है प्रत्येक स्वभाविक प्रतिक्रिया ।

03. प्रारूपों (Traits) को आलपोर्ट के सिद्धान्त में तीन स्तरों पर बांटा गया है.

मूलभूत विशेषक

केन्द्रीय विशेषक

द्वितीयक विशेषक

और देखें 8.3.3

04. देखें 8.4.3

05. देखें 8.4.2

06. पीन (pyknic) सुगठित (athetctic) और कृश (asthenic) विस्तार के लिए देखें 8.5.2

07. प्रारूपी सिद्धान्त अधिक मान्य नहीं है क्योंकि (i) वह यह मान लेते है कि सभी व्यक्ति किसी न किसी प्रारूप (type) के वर्गीकृत किये जा सकते है (ii) यह कारण और प्रभाव में भ्रम उत्पन्न करते है।

8.10 परीक्षण योग्य प्रश्न (Unit end question) :-

1. व्यक्तित्व की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए। अधिगम में इसकी भूमिका को रेखांकित कीजिए।
2. प्रारूप (Type) तथा विशेषक (traits) सिद्धांतों का संक्षिप्त में वर्णन करके इनकी तुलना कीजिए।
3. शारीरिक गठन पर आधारित प्रारूपों का वर्णन कीजिए तथा उनकी कमियां बताइये।
4. व्यक्तित्व पर प्रभाव डालने वाले वातावरण सम्बन्धी कारकों की समीक्षा कीजिए।
5. वंशानुक्रम क्या होता है? वह व्यक्तित्व पर किस प्रकार प्रभाव डाल सकता है, उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

6. व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का ज्ञान शिक्षक को अपने शिक्षण-अधिगम में किस प्रकार सहायक हो सकता है।
7. किस सीमा तक व्यक्तित्व का निर्माण किया जा सकता है? अपना मत दें उदाहरण सहित।

इकाई 9 (UNIT 9)

व्यक्तितत्व का मापन: प्रक्षेपण तथा अप्रक्षेपण प्रविधियाँ तथा व्यक्तितत्व का मापन :

(Measurement of Personality: Projective and Non-Projective ”techniques”)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

9.0 उद्देश्य (Objectives)

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

9.2 व्यक्तितत्व का मापन (Measurement of Personality)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

9.3 प्रक्षेपण प्रविधियाँ (Projective Techniques)

9.3.1 रोशा परीक्षण (Rorschach Test)

9.3.2 शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test)

9.3.3 विषय आत्मबोधन परीक्षण (Thematic Apperception Test)

9.3.4 वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

9.4 अप्रक्षेपण प्रविधियाँ (Non-Projective Techniques)

9.4.1 व्यक्तितत्व आविष्कारिका (Personality Inventory)

9.4.2 प्रेक्षण विधियाँ (Observation Methods)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

9.5 सारांश (Summary)

9.6 शब्दावली (Glossary)

9.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

9.8 रुवपरख प्रश्नों के उत्तर/सुझाव (Answer/hints to Self Learning Excercise)

9.9 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions)

9.0 उद्देश्य (Obectives) :

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. व्यक्तितत्व मापन के सम्प्रत्यय को समझ सकेंगे।
2. व्यक्तितत्व मापन की विधियों के नामों का प्रत्यास्मरण कर सकेगे।
3. व्यक्तितत्व मापन की प्रक्षेपण प्रविधि के अन्तर्गत आने वाले परीक्षणों (रोशा, आत्मबोधन आलबोधन, वाक्य पूर्ति आदि) की संरचना तथा इनके द्वारा व्यक्तितत्व मापन की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।

4. व्यक्तित्व मापन की अप्रक्षेपण प्रविधि को समझ सकेंगे।
5. रेटिंग मापनी तथा साक्षात्कार में अन्तर कर सकेंगे।
6. व्यक्तित्व मापन से सम्बन्धित शब्दावली का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना (Introduction) :

व्यक्तित्व मापन से पूर्व हमें यह जानना आवश्यक है कि व्यक्तित्व का अर्थ क्या है? व्यक्तित्व शब्द लैटिन शब्द परसोना (Persona) से बना है जिसका अर्थ नकाब (Mask) होता है। व्यक्तित्व का यह अर्थ व्यक्ति की बाहरी वेशभूषा तथा पहनावे के आधार पर परिभाषित किया गया था परन्तु इस परिभाषा को अमनोवैज्ञानिक घोषित कर दिया गया। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तित्व की कई परिभाषाएँ दी गई। 1937 में आलपोर्ट (Allport) ने व्यक्तित्व की 49 परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर अपनी परिभाषा दी जो कि अधिक विस्तृत तथा मनोवैज्ञानिक है।

आलपोर्ट (Allport, 1937) के अनुसार "व्यक्तित्व व्यक्ति के भीतर उन मनोशारीरिक तंत्रों का गतिशील या गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण में उसके अपूर्व समायोजन को निर्धारित करते हैं।"

"Personality is the dynamic organization within the individual of those psychophysical systems that determine his unique adjustment to his environment."

9.2 व्यक्तित्व का मापन (Measurement of Personality) :

प्राचीन काल से ही व्यक्तित्व मापन की अनेक विधियाँ चली आ रही हैं। जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में हम व्यक्तित्व का मापन किसी न किसी रूप में करते रहते हैं। जैसे - विद्यालय, सेना, शोध कार्य आदि। व्यक्तित्व की माप से तात्पर्य व्यक्तित्व के शील गुणों के बारे में पता लगाकर यह निश्चित करना होता है कि कहाँ तक वे संगठित (Organized) हैं या विसंगठित (disorganized) हैं (सिंह, 1994)। ऐसा माना जाता है कि शील गुणों के आपस में संगठित होने पर व्यक्ति सामान्य व्यवहार करता है जबकि असंगठित होने पर असामान्य व्यवहार करता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार व्यक्तित्व मापन के सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक (Theoritical and Practical) उद्देश्य होते हैं। व्यवहारिक उद्देश्य के अन्तर्गत शील गुणों की शक्ति (Strength) का पता चलता है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तित्व मापन की अनेकों विधियाँ बताई गयी है। सुविधा की दृष्टिकोण से व्यक्तित्व मापन की विधियों को दो भागों में बाँटा जा सकता है। -

1 प्रक्षेपण प्रविधियाँ (Projective Techniques)
2 अप्रक्षेपण प्रविधियाँ (Non Projective Techniques)

व्यक्तितत्व मापन की विधियों

अप्रक्षेपण प्रविधि	प्रक्षेपण प्रविधि
(Projective Technique) 1 रोशा परीक्षण (Rorschach Test) 2 शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test) 3 विषय आत्मबोधन परीक्षण (Thematic Apperception Test) 4 वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test)	(Non Projective Technique) 1 व्यक्तितत्व आविष्कारिका (Personality Inventories) 2 प्रेक्षण विधियाँ (Observational Methods) (i) रेटिंग मापनी Rating Scale (ii) साक्षात्कार Interview

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

01 व्यक्तितत्व मापन क्या तात्पर्य है?
What do you mean by Personality Measurement?

02 व्यक्तितत्व मापन प्रक्षेपण प्रविधि के अन्तर्गत आने वाले परीक्षणों की सूची दीजिए।
List some tests related to projective techniques of Personality Measurement.

9.3 प्रक्षेपण प्रविधियाँ (Projective Techniques):

इस विधि में व्यक्तितत्व का मापन अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। व्यक्ति के सामने उद्दीपन के रूप में कुछ असंगठित परिस्थितियों को दिया जाता है। इन असंगठित परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति अपनी अनुक्रिया करता है। व्यक्ति द्वारा की गई अनुक्रियाओं के विश्लेषण द्वारा व्यक्ति के अचेतन मन की इच्छाओं, मानसिक संघर्ष आदि का प्रेक्षण किया जाता है। अर्थात प्रक्षेपण परीक्षण में व्यक्ति अपनी अचेतन मन की जिज्ञासाओं की अभिव्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से करता है । प्रक्षेपण परीक्षणों की निम्न विशेषताएँ हैं -

1. प्रक्षेपण परीक्षण में व्यक्ति के सम्मुख अस्पष्ट व असंगठित परिस्थितियों को दिया जाता है।
2. इस प्रविधि में व्यक्तितत्व का मापन सम्पूर्ण (As a whole) होता है।
3. प्रक्षेपण प्रविधि व्यक्तितत्व मापन की एक अप्रत्यक्ष माप है।

व्यक्तितत्व मापन की प्रक्षेपण प्रविधि के अन्तर्गत मनोवैज्ञानिकों द्वारा कई परीक्षणों का वर्णन किया गया है जिसमें कुछ प्रमुख हैं -

9.3.1 (i) रोशा परीक्षण (Rorschach Test)
(ii) शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test)

(iii) विषय आत्मबोधन परीक्षण (Thematic Apperception Test)

(iv) वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test)

9.3.1 (i) रोशा परीक्षण (Rorschach Test) :

इस परीक्षण का प्रतिपादन स्विटजरलैण्ड के हरमन रोशा द्वारा (Herman Rorschach) 1921 में किया गया था। इस परीक्षण में 10 कार्ड होते हैं जिन पर विभिन्न आकार के स्याही के धब्बे के समान प्रिंट होते हैं। इनमें से 5 कार्ड पर काला-सफेद (black-white) धब्बे की आकृति होती है जबकि अन्य 5 कार्डो पर रंग बिरंगी धब्बों की आकृति होती है। 1921 से लेकर आज तक इस परीक्षण में पर्याप्त संशोधन व सुधार हो चुका है।

रोशा परीक्षण में एक-एक करके प्रत्येक कार्ड व्यक्ति को दिया जाता है। परीक्षार्थी जैसे चाहे कार्ड को घुमा फिरा सकता है। कार्ड देने के बाद उससे पूछा जाता है कि उसे कार्ड में क्या दिखाई दे रहा है। इस परीक्षा में समय का कोई बंधन नहीं होता है। व्यक्ति द्वारा उत्तर देने की क्रिया, ढंग तथा किये गये व्यवहार को लिख लिया जाता है। व्यक्ति द्वारा की गयी अनुक्रियाओं का विश्लेषण संकेतों (symbols) के द्वारा निम्न भागों में बांटकर किया जाता है -

क्षेत्र (Location) :

क्षेत्र के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि व्यक्ति की अनुक्रिया का सम्बन्ध स्याही के धब्बे के सम्पूर्ण भाग या किसी विशेष अंग से सम्बन्धित है। अनुक्रिया का विश्लेषण निम्न संकेतों (symbols) व स्याही के धब्बे के भाग के आधार पर किया जाता है -

W	-	अनुक्रिया का आधार पूरा धब्बा होने पर
D	-	अनुक्रिया का आधार धब्बे का बड़ा भाग होने पर
Dd	-	अनुक्रिया का आधार धब्बे का छोटा भाग होने पर
S	-	अनुक्रिया का आधार धब्बे के उजले भाग होना।

निर्धारक (Determinants) :

निर्धारक गुण के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि व्यक्ति की अनुक्रिया किस कारण से हुई अर्थात धब्बे के रंग, गति अथवा बनावट के कारण। इसके लिए 4 अक्षर संकेतों (letter symbols) का प्रयोग किया गया जैसे -

रंग के लिए	-	C
आकार के लिए	-	F
गति के लिए	-	M
पशु गति के लिए	-	FM

विषयवस्तु (Content) :

इसमें यह देखा जाता है कि व्यक्ति द्वारा की गई अनुक्रिया में क्या चीज देखी गई। अर्थात व्यक्ति की अनुक्रिया की विषयवस्तु क्या है? अनुक्रिया की विषयवस्तु मनुष्य के अंग का विवरण होने पर Hd जबकि पशु के किसी अंग का विवरण होने पर Ad तथा घरेलू वस्तुओं के लिए Hh का प्रयोग किया जाता है ।

लोकप्रिय-मौलिक अनुक्रिया (Original Response):

लोकप्रिय अनुक्रिया वह अनुक्रिया है जो सामान्यत: सभी लोगों द्वारा दी जाती है इसे P से सम्बोधित किया जाता है जबकि मौलिक अनुक्रिया वह अनुक्रिया है जो बहुत कम लोग देते हैं। इसे O से संबोधित किया जाता है ।

रोशा परीक्षण पर व्यक्ति द्वारा की गई अनुक्रियाओं का विश्लेषण उपरोक्त चारों भागों के आधार पर किया जाता है तथा उनकी व्याख्या की जाती है। उदाहरणार्थ - यदि किसी व्यक्ति द्वारा D अनुक्रिया की जाती है तब वह व्यक्ति किसी वस्तु को स्पष्ट रूप से देखने की क्षमता रखता है जबकि S अनुक्रिया की अधिकता व्यक्ति के जिद्दी होने का संकेत करती है। व्यक्ति की अनुक्रियाओं का विश्लेषण में क्षेत्र, निर्धारक, विषयवस्तु, मौलिक अनुक्रिया करने के पश्चात उसकी व्याख्या की जाती है जिससे व्यक्ति के मन की भावना तथा बौद्धिक स्तर का पूरा-पूरा ज्ञान हो जाता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व की व्याख्या करते समय उसकी सामाजिक व आर्थिक परिस्थिति को भी ध्यान में रखा जाता है। इस परीक्षण के द्वारा मानसिक रोगियों का पता लगाया जा सकता है। परामर्श व निर्देशन में भी यह परीक्षण उपयोगी है । इस प्रकार रोशा परीक्षण द्वारा व्यक्ति की क्षमता, शक्ति तथा योग्यता का पता चलता है।

रोशा (Rorschach) के समान ही एक दूसरा स्याही धब्बा परीक्षण (Ink blot test) है जिसका प्रतिपादन होल्जमैन (Holtzman) ने 1961 में किया था। इसे होल्जमैन स्याही धब्बा परीक्षण (Holtzman Ink blot test) के नाम से जाना जाता है। इस परीक्षण में 2 फॉर्म होते हैं। प्रत्येक फॉर्म में 45 कार्ड्स होते है । जिन पर स्याही के धब्बे (Ink blot) बने होते हैं । प्रत्येक कार्ड पर व्यक्ति को एक अनुक्रिया देनी होती है। परन्तु इस परीक्षण को रोशा की भांति लोकप्रियता नहीं मिली ।

9.3.2 (ii) शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test):

इस विधि का प्रयोग गाल्टन द्वारा 1879 में किया गया। गाल्टन ने 75 शब्दों की सूची बनाकर, इनका प्रयोग खुद पर ही किया। उन्होंने बताया कि साहचर्य शब्दों के माध्यम से कुछ प्रतिमायें तथा चित्त मनुष्य के मस्तिष्क में बन जाते हैं। इन चित्त तथा प्रतिमाओं की स्पष्टता, साहचर्य की शक्ति पर निर्भर करती है। इस परीक्षण में उद्दीपन के रूप में कुछ पूर्व निश्चित शब्दों को व्यक्ति के सम्मुख बोला जाता है। व्यक्ति को शब्द सुनने के बाद जो पहला शब्द मन में आता है उसे बोलना पड़ता है। परीक्षण द्वारा कहे गये शब्द को उद्दीपक शब्द (Stimulus Word) तथा परीक्षार्थी द्वारा कहे गये शब्द को "प्रतिक्रिया शब्द" (Reaction Word) कहा जाता है । उदाहरण के लिए यदि उद्दीपक शब्द "समाचार-पत्र' है और प्रतिक्रिया शब्द "खेल" है तो इन दोनों शब्दों का एक अर्थ है, यह परीक्षार्थी की खेल के प्रति प्रतिक्रिया बताता है।

गाल्टन के पश्चात इस परीक्षण को युंग द्वारा अपनाया गया और 100 शब्दों की एक सूची तैयार की गयी । युंग (Yung) के पश्चात इस परीक्षण का संशोधन केन्ट-रोसानोफ (Kent-Rosanoff), रेपापोर्ट (Rapaport) तथा ओरबीसन (Orbison) आदि द्वारा किया गया। युंग ने इसका उपयोग सांवेगिक संघर्षो (emotional conflicts) के अध्ययन में किया था।

9.3.3 विषय आत्मबोधन परीक्षण (Thematic Apperception Test):

इस परीक्षण का निर्माण मुरे (Murray) द्‌वारा 1935 में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी (Harward University) में किया गया। 1938 में मुरे ने मार्गन (Morgan) के साथ मिलकर इस परीक्षण का संशोधन किया। इस परीक्षण में 31 कार्ड्स होते हैं, जिसमें 30 कार्ड्स पर चिन्ह बने होते हैं, 1 कार्ड खाली होता है। जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व को जानना होता है उसे लिंग तथा उम्र के अनुसार 31 कार्ड्स में से 20 कार्ड्स का चुनाव किया जाता है। एक व्यक्ति पर 20 कार्ड्स ही प्रशासित किये जाते हैं। प्रत्येक कार्ड को देखकर परीक्षार्थी कहानी लिखता है जिसमें कहानी से संबन्धित भूत, वर्तमान, भविष्य का वर्णन होता है। इस परीक्षण में समय का कोई बन्धन नहीं होता है परन्तु पाँच मिनट से ज्यादा समय लगने पर उस चिन्ह का निष्कर्ष पूछ लिया जाता है। विश्लेषण करने के लिए परीक्षार्थी का व्यवहार, उसके द्‌वारा लिया गया समय उसका ढंग, उसकी प्रतिक्रिया का उल्लेख भी विस्तृत रूप से किया जाता है। इस परीक्षण के द्‌वारा परीक्षार्थी की कल्पनाशक्ति का भी बोध होता है। इस परीक्षण का प्रशासन दो सत्रों में किया जाता है - पहले सत्र में 10 कार्ड तथा दूसरे सत्र में 10 कार्ड दिये जाते हैं। अन्त में खाली कार्ड दिया जाता है, परीक्षार्थी द्‌वारा उस कार्ड पर अपने मन से चित्र बनाकर कहानी लिखने को कहा जाता है। मुरे द्‌वारा दोनों सत्रों के मध्य 24 घंटों का अन्तराल का समय दिया गया।

9.3.4 वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test):

वाक्य पूर्ति परीक्षण का प्रयोग सर्वप्रथम पाइन (Pyne) तथा टेण्डलर (Tendler) द्‌वारा 1930 में किया गया है। इसमें 20 वाक्यों को सम्मिलित किया गया था। 1940 में रोहडे तथा हाइड्रेथ (Rohde & Hidreath) ने इस परीक्षण में संशोधन कर, बहुत छोटे तथा सरल पदों को रखा। इस परीक्षण में कुछ अधूरे वाक्य व्यक्ति को दिये जाते हैं जिन्हें व्यक्ति को अपने अनुभवों के आधार पर पूरा करना होता है। ऐसा माना जाता है कि इस परीक्षण में व्यक्ति द्‌वारा उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो उसकी इच्छा, डर आदि को व्यक्त करते हैं। वाक्य पूर्ति परीक्षण के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

(i) मैं सोचता हूँ कि ....

(ii) मैं स्कूल जाते समय ....

(iii) मैं चाहता हूँ कि ....

(iv) मेरे भाई बहन मुझसे अक्सर..................

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

03 रोशा परीक्षण को स्पष्ट कीजिए। (Explain Rorschach Test).

04 विषय आत्मबोधन परीक्षण का वर्णन कीजिए। (Describe Thematic Apperception Test)..

9.4 व्यक्तित्व मापन की अप्रक्षेपण प्रविधियाँ:
(Non-Projective Techniques of personality Measurement):

व्यक्तित्व मापन की अप्रक्षेपण प्रविधियों के अन्तर्गत व्यक्तिव सूचियॉ (Personality Inventories) और प्रेक्षण विधियाँ (Observational methods) आती हैं । इन विधियों का वर्णन निम्न प्रकार से है -

9.4.1 व्यक्तित्व सूची (Personality Inventory):

व्यक्तित्व सूची में व्यक्ति के शील गुणों से सम्बन्धित कई प्रश्न बने होते हँ जिनका उत्तर व्यक्ति द्वारा हॉ/नहीं, सही गलत के रूप में दिया जाता है । जैसे -

(i) क्या आप लोगों के समूह में बात करना पसन्द करते हैं? हॉ/नहीं

(ii) क्या आप अपना ध्यान देर तक केन्द्रित कर पाते हैं? हॉ/नहीं

(iii) क्या आपको ज्यादा भीड़ देखकर बेचैनी होती है? हॉ/नहीं

(iv) क्या आपको अंधेरे कमरे में डर लगता है? हॉ/नहीं

व्यक्तित्व सूची में एक ही प्रश्न का उत्तर अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग हो सकता है। इसमें व्यक्ति प्रश्नों को पढकर अपने बारे में एक वक्तव्य (Report) देता है इसलिए इसे आत्मरिपोर्ट सूची (Self Report Inventory) भी कहा जाता है। कुछ वैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तिव सूची को मनोमिति परीक्षण (Psychometric Test) भी कहा जाता है।

व्यक्तित्व सूची का प्रयोग प्रथम विश्व युद्ध के दौरान सांवेगिक रूप से अस्थिर सैनिकों को हटाने के लिए किया गया था। बुडवर्थ (Woodworth) द्वारा 1988 में Woodworth Personal Data Inventory का निर्माण किया था । इसमें कुल 116 एकांश थे जिनका उत्तर हाँ या नहीं में देना था। आज कई व्यक्तित्व सूचियॉ (Personality Inventories) उपलब्ध हैं जिसमें से कुछ निम्न हैं -

(i)	बैल समायोजन सूची	(Bell Adjustment Inventory)
(ii)	मिनेसोटा मल्टीफेजिक पर्सनेलिटी सूची	(Minnesota Multiphasic Personality Inventory (MMPI)
(iii)	आइजैन्क व्यक्तित्व सूची	(Eysenck Personality Inventory)
(iv)	द केलीफोर्निया व्यक्तित्व सूची	(The California Personality Inventory)
(v)	कैटेल 16 व्यक्तित्व-कारक प्रश्नावली	(Cattell’s 16 P.F. Questionnaire)

बैल समायोजन सूची (Bell Adjustment Inventory) का निर्माण Bell द्वारा 1934 में किया गया। इसकी सहायता से व्यक्तित्व की समायोजन सम्बन्धी कठिनाई का पता लगाया जाता है। मिनेसोटा मल्टीफेजिक व्यक्तित्व सूची का निर्माण हाथावे तथा मैककिनले (Hathaway and Mckinley) द्वारा 1940 में किया गया। इस सूची द्वारा रोगात्मक शील गुणों जैसे - सिरदर्द, अत्यधिक चिन्ता, बोलने तथा चलने की अक्षमता आदि का पता लगाया जाता है। इस

सूची में 550 एकांश (items) हैं तथा उत्तर के रूप में सत्य, असत्य, अनिश्चित (True, False, Cannot say) हैं।

कैटल 16 PF प्रश्नावली कारक विश्लेषण पर आधारित है। इसके द्वारा 17 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों के 16 शील गुणों (Traits) को मापा जाता है। ये सभी शील गुण द्विध्रुवीय (bipolar) हैं। जैसे -

1.	विनम्र (Humble)	निश्चित बात करने वाला (Assertive)
2.	गंभीर (Sober)	खुश मिजाज (Happy Go Lucky)
3.	डरपोक (Shy)	साहसिक (Venturesome)

9.4.2 प्रेक्षण विधियाँ (Observation Methods):

यह वह विधि है जिसमें परीक्षार्थी के व्यवहार का ध्यानपूर्वक पर्यवेक्षण (Observation) वास्तविक परिस्थिति (Natural situation) में प्रेक्षक (Observer) द्वारा किया जाता है। परीक्षार्थी के व्यवहार का पर्यवेक्षण प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से किया जा सकता है । परीक्षार्थी के व्यवहार के रिकार्ड (Record) का विश्लेषण (Analysis) कर, उसके व्यक्तित्व के विषय में एक निश्चित निष्कर्ष पहुँचा जाता है। एटकिन्सन-एटकिन्सन, हिलगार्ड एवं स्मिथ (Atkinson-Atkinson, Hilgard and Smith, 1987) ने प्रेक्षण विधि में दो उपविधियॉ - रेटिंग मापनी (Rating Scale) तथा साक्षात्कार (Interview) को शामिल किया है।

(i) रेटिंग मापनी (Rating Scale):

रेटिंग मापनी में व्यक्तित्व के शील गुणों के बारे में लिये गये निर्णयों को श्रेणियों में रिकार्ड (Record) किया जाता है। अर्थात व्यक्ति के शील गुणों के बारे में प्रतिक्रिया श्रेणियों के माध्यम से व्यक्त की जाती है। जैसे -

(अ) कूड़ा करकट जलाने से पर्यावरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

( ) पूर्णत: सहमत	( ) सहमत	( ) अनिश्चित	( ) असहमत	( ) पूर्णत: असहमत
5	4	3	2	1

शील गुणों का निर्णय श्रेणी में करने के पश्चात सांख्यिकी विश्लेषण किया जाता है। अन्त में इन निर्णयों के निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है। रेटिंग मापनी का निर्माण करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए -

- रेटिंग में शामिल की गई श्रेणियों को भली भाँति परिभाषित किया जाना चाहिए।
- रेटिंग मापनी द्वारा व्यक्तिव का मापन करते समय रेटर को अपने आपको आभा प्रभाव (halo effect) से दूर रखना चाहिए अर्थात धनात्मक व ऋणात्मक रेटिंग के लिए बाध्यता नहीं होनी चाहिए।
- रेटिंग मापनी 3, 5, 7 पाइंट की हो सकती है । रेटिंग मापनी कई प्रकार की हो सकती है - ग्राफिक मापनी (Graphic Scale), श्रेणीक्रम मापनी (Rank Order Scale) आदि। गिलफोर्ड (Gilford, 1959) तथा फ्रीमैन (Freeman, 1962) ने रेटिंग मापनी का निर्माण व्यक्तित्व मापने के लिए किया था।

9.4.3 साक्षात्कार विधियाँ (Interview Methods):

जॉन डब्ल्यू0 बेस्ट के अनुसार, "साक्षात्कार एक प्रकार से एक मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है। इसके अन्तर्गत उत्तर लिखने के स्थान पर आमने सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है।"

"The Interview is, in a sense, an oral type of questionnaire. Instead of writing the response, the subject or interviewee gives the needed information verbally in a face to face relationship."-John W.Best.

व्यक्तित्व मापन में साक्षात्कार सबसे अधिक लोकप्रिय है। व्यक्ति की आमने सामने की परिस्थिति (Face to face situation) के आधार पर साक्षात्कार दो प्रकार का होता है -

(i) रचना सहित साक्षात्कार (Structured Interview)

(ii) रचना रहित साक्षात्कार (UnStructured Interview)

(i) रचना सहित साक्षात्कार (Structured Interview)

इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत पूछे जाने वाले प्रश्नों की सूची पहले से तैयार कर ली जाती है। इन प्रश्नों को एक निश्चित क्रम में पूछा जाता है। इस प्रकार एक मानक पैटर्न के अन्तर्गत साक्षात्कार लिया जाता है। संगठित साक्षात्कार द्वारा कई व्यक्तियों के व्यक्तित्व की तुलना आसानी से की जा सकती है परन्तु इस प्रकार के साक्षात्कार के द्वारा गहन रूप से प्रश्नों के पूछने की स्वतंत्रता नहीं होती है क्योंकि साक्षात्कारकर्त्ता को निश्चित क्रम का अनुसरण करना पड़ता है।

(ii) रचना रहित साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता अपनी इच्छानुसार प्रश्न पूछता है। अर्थात साक्षात्कारकर्त्ता के पास पहले से प्रश्नों की सूची तैयार नहीं होती। रचना रहित साक्षात्कार में प्रश्नों को घुमा-फिराकर पूछा जा सकता है इसलिए व्यक्तित्व का मापन गहरे रूप से हो जाता है परन्तु इसका प्रमुख दोष यह है कि इस प्रकार के साक्षात्कार में विभिन्न व्यक्तियों के व्यक्तित्व के मापन की तुलना संभव नहीं है।

साक्षात्कार के माध्यम से व्यक्ति के आत्मविश्वास, अभिव्यक्ति, क्षमता, मानसिक तत्परता, विषय का गहन ज्ञान आदि गुणों को जाना जा सकता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

05 व्यक्तित्व सूचियों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
(Write short note on Personality Inventories).

06 निम्न को सुमेलित कीजिये -

1	मिनेसोटा मल्टीफेजिक व्यक्तित्व सूची	(A) आइजैन्क
2	कैटेल 16 व्यक्तित्व कारक प्रश्नावली	(B) कैटेल
3	आइजैन्क व्यक्तित्व सूची	(C) हाथावे एवं मैककिनले

07 रेटिंग मापनी से क्या तात्पर्य है?
(What do you understand by Rating Scale)?

9.5 सारांश (Summary) :

व्यक्तित्व शब्द का अंग्रेजी पर्याय पर्सनेलिटी (Personality) होता है । Personality शब्द लैटिन भाषा के परसोना शब्द से बना है जिसका अर्थ नकाब होता है। इस प्रकार से मनुष्य के बाहरी दिखावे को व्यक्तित्व माना जाता है। परन्तु इस परिभाषा को अमनोवैज्ञानिक घोषित कर दिया गया है। व्यक्तित्व की 50 वीं परिभाषा आलपोर्ट (Allport, 1937) द्वारा दी गई जिसमें व्यक्तित्व को मनोशारीरिक तंत्र का गत्यात्मक संगठन कहा गया जो कि व्यक्ति को उसके वातावरण के साथ समायोजित करने में मदद करता है। व्यक्तित्व मापन से तात्पर्य व्यक्ति के शील गुणों की शक्ति का पता लगाना होता है। व्यक्तित्व मापन की कई विधियाँ प्रचलित है जैसे- प्रक्षेपण तथा अप्रक्षेपण प्रविधियाँ। प्रक्षेपण प्रविधि के द्वारा व्यक्ति के अचेतन मन को जाना जाता है। प्रक्षेपण प्रविधि में रोशा परीक्षण (Rorschach Test), शब्द साहचर्य परीक्षण (Word Association Test), वाक्य पूर्ति परीक्षण (Sentence Completion Test), विषय आत्मबोधन परीक्षण (Thematic Apperception Test) आदि आते हैं जबकि अप्रक्षेपण प्रविधियों में रेटिंग मापनी (Rating Scale), प्रेक्षण विधि (Observation method) आदि। व्यक्ति मापन की प्रेक्षण विधियों (Observation method) में रेटिंग मापनी (Rating Scale) तथा साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया जाता है। व्यक्तित्व सूची (Personality Inventory) में बेल समायोजन मापनी (Bell Adjustment Inventory), कैटल 16 व्यक्तित्व कारक सूची (Cattell 16 PF Inventory) प्रमुख है।

9.6 शब्दावली (Glossary):-

1	आत्मबोधन (Apperception)	-	व्यक्तिगत प्रेक्षण
2.	अप्रक्षेपण (Non Projective) जैसे	-	rating scale, test items
3.	व्यक्तित्व (Personality)	-	अपना अनूठा व्यवहार करने का तरीका।
4.	प्रक्षेपण (Projective)	-	किसी अस्पष्ट वस्तु या घटना को अपनी तरह से देखना।
5.	मनोशारीरिक तंत्र (Psychophysical System)	-	जिसमें शरीर तथा मस्तिष्क दोनों शामिल हो।
6.	प्रतिक्रिया शब्द (Reaction Words)	-	उद्दीपक की प्रतिकिया में दिया गया शब्द।
7.	उद्दीपक शब्द (Stimulus Words)	-	जो प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है ।

9.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Regarding) -

1. भटनागर, सुरेश (1999), शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
2. पाण्डेय, राम शकल (1998), शिक्षा मनोविज्ञान, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
3. गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता, ए. (2002), शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
4. शर्मा, आर.ए. (2000), अधिगम एवं विकास के मनोवैज्ञानिक आधार, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ
5. वर्मा, रामपाल सिंह एवं उपाध्याय, राधावल्लभ, शिक्षण एवं अधिगम का मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
6. सिंह, रामपाल, सिंह, एस.डी0 (1999), एवं शर्मा, देवदत्त, व्यावहारिक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा ।
7. Dangwal, Kiran (2004), Personality Traits and Nationalism among youth, Adhyayn Publishers and Distributers, Delhi.
8. Chauhan, S.S.(2001), Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi.

9.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/सुझाव (Answer/Suggestions to Self-Learning Excercise)

प्रश्न संख्या 01 के उत्तर के लिए 9.2 का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 02 के उत्तर हेतु 9.3 की बनी तालिका का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 03 के उत्तर हेतु 9.4.1(1) का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 04 के उत्तर हेतु 9.4.B का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 05 के उत्तर हेतु 9.5.A का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 06 का सही उत्तर है -

1. C
2. B
3. A

प्रश्न संख्या 07 के उत्तर हेतु 9.5.C का अवलोकन करें।

9.9 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions):

(A) दीर्घ उत्तर प्रश्न (Long Answer Questions)

(1) प्रक्षेपण से आप क्या समझते हैं? टी0ए0टी का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
(What do you understand by Projection? Discuss in brief T.A.T.)

(2) व्यक्तितत्व मापन सम्बन्धी रोशा परीक्षण का विस्तार से उल्लेख कीजिए। (Explain fully Rorschach Ink Blot Test of Personality Assessment).

(B) लघु उत्तर प्रश्न (Short Answer Questions).

(1) व्यक्तितत्व मापन की साक्षात्कार विधि को संक्षेप में समझाइये। (Discuss in brief interview method of Personality Assessment).

(2) व्यक्तितत्व मापन की प्रेक्षण विधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए। (Discuss in brief observation method of Personality Assessment).

(C) अति लघु उत्तरीय प्रश्न (Very short Answer Questions)

(1) संरचनात्मक साक्षात्कार को गहन साक्षात्कार भी कहा जाता है - सत्य/असत्य (Structured Interview is also known as Depth Interview. True/False

(2) टी0ए0टी परीक्षण में कार्डों की संख्या होती है......................... (The Total number of cards in T.A.T. Test are..............).

(3) प्रथम रेटिंग मापनी ....द्वारा प्रकाशित की गयी थी । (The first Rating Scale was published by....................................)

इकाई 10 (UNIT-10)

विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व के साथ व्यवहार में शिक्षक की भूमिका

Role of teacher in dealing with different types of personality

इकाई की संरचना (Structure of Unit) :-

10.0 उद्देश्य (Objectives)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

10.2 व्यक्तित्व क्या है? (What is personality?)

10.3 सामान्य व असामान्य व्यवहार (Normal and abnormal behaviour)

10.4 असामान्य व्यवहार के कारण (Causes)

10.5 कुसमायोजित व्यवहार के प्रकार (Types of Maladjusted Behaviour)

10.6 कुसमायोजन को कम करने के सुझाव (Suggestions to reduce Maladjustement)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

10.7 विशिष्ट समस्याएँ (Specific problems)

10.7.1 झूठ बोलना (Lie) समस्या का समाधान

10.7.2 चोरी करना (Stealing) समस्या का समाधान

10.7.3 कक्षा से भाग जाना (Escaping) समस्या का समाधान

10.7.4 कक्षा में देर से आना (Late coming) समस्या का समाधान

10.7.5 अनुशासनहीनता (Indiscipline) समस्या का समाधान

10.7.6 दिवास्वप्न (Day dreaming) शिक्षक द्वारा समाधान

10.7.7 दाँत से नाखून काटना, अंगूठा चूसना, बाल तोड़ना (Nervous habits) समस्या के निराकरण हेतु शिक्षक की भूमिका

10.7.8 एकान्तप्रिय बालक, समाधान, शिक्षक की भूमिका

10.7.9 विशिष्ट प्रकार के स्वर दोष कम करने में शिक्षक की भूमिका (उच्चारण व लय सम्बन्धी)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

10.8 असाधारण बालक - प्रकार व अर्थ (Exceptional child, types and meaning) असाधारण बालकों के शिक्षक हेतु सुझाव

10.8.1 प्रतिभाशाली बालक (Gifted child), शिक्षक की भूमिका

10.8.2 मंद बुद्धि बालक (Slow learner), शिक्षक की भूमिका

10.8.3 शारीरिक दोषयुक्त बालक (Physically handicapped children) व शिक्षक की भूमिका

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

10.9 सारांश (Summary)

10.10 शब्दावली (Glossary)

10.11 संदर्भ पुस्तकें (Further Reading)

10.12 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answers to self-Learning Exercises)

10.13 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-and Question)

10.0 उद्देश्य (Objectives)

इस पाठ की समाप्ति पर आप इस योग्य हो सकेंगे कि

- विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व वाले बालकों को पहचान सकें।
- विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व को जान सकें।
- अलग-अलग व्यक्तित्व लिए छात्रों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए जान सकें।
- छात्रों के साथ व्यवहार में शिक्षक की क्या भूमिका है जान सके।

10.1 प्रस्तावना (Introduction) :-

मनोविज्ञान इन तथ्यों को स्वीकार करता है कि प्रत्येक मनुष्य का कुछ न कुछ व्यक्तित्व होता है चाहे हमें उसकी अनुभूति हो या नहीं। व्यक्तित्व में प्रभावशीलता व ग्रहणशीलता दोनों ही होती है। सामान्यतया हमारा ध्यान प्रभावशीलता पर ही जाता है, ग्रहणशीलता की ओर नहीं जाता। 'आकर्षक', 'मोहक', 'गतिशील' के विश्लेषण' व्यक्तित्व की प्रभावशीलता के ध्योतक हैं, ग्रहणशीलता के नही।

एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर सर्वांगीण प्रभाव (Overall impression) व्यक्तित्व है। इसी सर्वांगीण प्रभाव के अस्तित्व तथा अभाव में व्यक्ति एक दूसरे के सम्बन्ध में सुन्दर व्यक्तित्व तथा असुन्दर व्यक्तित्व वाले विचार प्रकट करते चले आ रहे हैं, परन्तु व्यक्तित्व का सम्बन्ध सम्पूर्ण व्यवहार से होता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व में उसका शारीरिक गठन, रूचि, अभिरूचि, क्षमता, योग्यता सभी का समावेश होता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व वातावरण के साथ समायोजन को प्रस्तुत करता है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत मनुष्यों के विशेषकों (शील गुणों) (traits) का अनोखा संगठन रहता है, कोई व्यक्ति ईमानदार समझा जाता है, कोई परिश्रमी कहलाता है, किसी को हम प्रसन्नचित व्यक्ति कहते हैं, किसी को उदासीन समझते हैं। किसी को सामाजिक, किसी को क्रोधी, डरपोक तथा चिड़चिड़ा कहते हैं। ये सभी उपाधियाँ व्यक्ति को उनके विशेषकों के आधार पर दी जाती है। जिसे हम ईमानदार कहते हैं वह अधिकांश परिस्थितियों में ईमानदारी दिखाता है, जिसे परिश्रमी कहते हैं वह अधिकतर परिश्रम करते हुए देखा जाता है। व्यवहार के अनुरूप ही व्यक्ति को उपाधि दी जाती है। व्यक्तित्व सदैव गतिशील होता हे, जैसा व्यवहार व्यक्ति करता है उससे उसका चरित्र प्रभावित होता है। व्यक्ति का अकेले में व्यवहार कुछ होता है और समाज में अलग होता है इसलिए व्यक्तित्व, व्यक्ति के व्यक्तिक तथा सामाजिक व्यवहार का दर्पण है। समाज में ही व्यक्तित्व का मूल्यांकन हो सकता है जैसे ध्वनि को न देखा व छुआ

जा सकता हे, उसे केवल सुना जा सकता है। सुनने वाला कोई दूसरा होता है, वैसे ही व्यक्तित्व को समझने वाला कोई दूसरा होता है। व्यक्तित्व की गति समाज में ही अनुभव की जा सकती है। किसी व्यक्तित्व के व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति द्वारा पूर्णरूपेण व्याख्या कभी नहीं की जाती। उसका दूसरे व्यक्तित्व पर क्या प्रतिक्रिया (Response) होती है उसी की व्याख्या की जाती है। बिना क्रिया (action) के अनुक्रिया (response) नहीं होती। व्यक्ति विशेष का व्यवहार एक प्रकार की उत्तेजना (Stimulus) का कार्य करता है। उसी उत्तेजना की उपस्थिति से प्रतिकिया (Response) होती है। व्यक्तित्व व्यक्ति का आंतरिक अंग नहीं होता वरन् एक ऐसी बाहय शक्ति होती है जो दूसरे व्यक्ति को किसी अनुक्रिया के लिए प्रभावित करती है। विद्यालय में विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व वाले बालक आते हैं उनके स्वभाव को समझना तथा असमायोजन को सुधारने में निम्न बातों का ज्ञान शिक्षक के काफी सहायक हो सकता है।

10.2 व्यक्तित्व क्या है? (What is Personality)?

विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व के साथ शिक्षक का व्यवहार कैसा हो, जानने के लिए व्यक्तित्व क्या है? यह जानना आवश्यक है।

मानव के व्यवहार, बाह्य स्वरूप और अन्तर्निहित शक्तियों के सम्मिलित स्वरूप का नाम ही व्यक्तित्व है। 'लिण्टन (Linton) के अनुसार - व्यक्तित्व "व्यक्ति से सम्बन्धित समस्त मनोवैज्ञानिक क्रियोंओं एवं दशाओं का सम्मिलित स्वरूप है।

“Personality is the organized aggregate of Psychological Processes and states Pertaining to the individual.”

Gordon Allport के अनुसार, व्यक्तित्व के स्वयं में स्थित मनोशारीरिक तंत्रों का वह गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण के साथ उसका समायोजन स्थापित करता है।

“Personality is the dynamic organization within the individual of those Psychophysical system that determines his unique adjustment to his environment.”

वाटसन (Watson) ने लिखा है कि हम जो कुछ करते हैं वह सब कुछ व्यक्तित्व है।

"Personality is everything that we do."

व्यक्ति को प्रभावित करने वाले कारक (Factors) :-

वंशानुक्रम (Heredity) और वातारण (Environment)

ये दोनों तत्व व्यक्तित्व को मुख्य रूप से प्रभावित करते हैं। किसी व्यक्तित्व पर वातावरण अधिक प्रभाव डालता है तो किसी पर वंशानुक्रम।

10.3 सामान्य व असामान्य व्यवहार (Normal and Abnormal Behaviour) :-

मानव एक सामाजिक प्राणी है इसीलिए उसे अपने शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा संवेगात्मक आवश्यकताओं को सामाजिक मान्यताओं व मूल के अनुरूप ढालना पड़ता है। इस प्रकार वह व्यक्ति जो सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप अपना व्यवहार करता है, उसके व्यवहार को अनुशासित मान्य व्यवहार की संज्ञा दी जाती है और उस व्यक्ति विशेष को जीवन सरल, सुलभ व सामान्य हो जाता है क्योंकि उसके व्यवहार को समाज ने मान्यता प्रदान की है लेकिन सामाजिक मान्यताओं से हटकर जो व्यक्ति व्यवहार करता या ऐसे व्यवहार जो समाज द्वारा मान्य नहीं है करने पर व्यक्ति के व्यवहार को सामान्य नहीं माना जाता, क्योंकि उसके व्यवहार से समाज पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है और स्वयं उसके लिए भी कठिनाइयों व परेशानियॉ पैदा कर रहा है। इस प्रकार का असामान्य व्यवहार कुसमायोजित व समस्यात्मक व्यवहार कहा जाता है। असामान्य व्यवहार सामाजिक दृष्टि से अपेक्षित व्यवहार से हटकर व्यवहार होता है इसलिए यह एक सापेक्ष पद (Relative term) है जिसका स्वभाव (Nature) विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न हो सकता है। जिस व्यवहार को हम एक समाज में असामान्य कहते हैं उसे अन्य समाज में सामान्य समझा जा सकता है। असामान्य व्यवहार की परिभाषा समय-समय व स्थान-स्थान पर बदलती रहती है जो कभी असामान्य समझा जाता था आज नहीं समझा जाता और जो आज असामान्य समझा जाता है पहले सामान्य समझा जाता था। इस प्रकार असामान्य व्यवहार किसी समाज के किसी समय विशेष से सम्बन्धित होता है।

इस इकाई में हम इसी प्रकार के विभिन्न असामान्य व्यक्तित्व वाले बालकों के बारे में अध्ययन करेंगे और सामान्य या असमायोजित व्यवहारों को सुधारने में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका का वर्णन करेंगे।

अधिकतर असामान्य व्यवहार सामान्य संवेगात्मक विकास का ही एक भाग होता है। संवेग मानव के वाह्य व्यवहार को प्रभावित करता है जैसे - क्रोध आने पर लाल-पीली आँखें दिखाना, दांत पीसना, पीटना, भय लगने पर कपकपाना, छोटी-छोटी बातों पर रोना, संवेगों के विस्फोटक रूप प्रकट करना, चिल्लाना, वस्तुओं को फेंकना, मचलना। ये हाल सुलभ व्यवहार आरम्भ में तो सामान्य लगते हैं लेकिन यही व्यवहार बालक के बड़े होने पर भी उसी प्रकार बने रहते हैं तब हम यह मानने लगते हैं कि या तो बालक में कोई कमी है या उसके वातावरण में जिसके कारण बालक के विकास में रूकावट आ गई है, तब हम बालक के इस प्रकार के व्यवहार को असामान्य या समस्यात्मक व्यवहार की संज्ञा देंगे।

10.4 असामान्य व्यवहार के कारण (Causes) :-

बालक के असामान्य व्यवहार के निम्नलिखित संभावित कारण हैं जिन्हें जानना शिक्षक के लिए परम आवश्यक है। इन्हीं कारणों को जानकर शिक्षक छात्र के असामान्य व्यवहार पर मनोवैज्ञानिक तरीके से नियंत्रण कर सकता है।

1. व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति न होना :-

   वुडरफ (Woodruff) के अनुसार मानसिक विकास के लिए व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है यदि बालक की अधिकांश आवश्यकतायें सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप पूर्ण हो जाती है तो उसका समायोजन सामान्य रूप से होगा। लेकिन यदि बाहरी वातावरण उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति में रूकावट डालता है

या उसे आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संघर्ष करना पड़ता है तो बालक में निराशा का भाव जागृत हो सकता है जिससे मानसिक तनाव पैदा होता है। बालक निराशायुक्त जीवन जीने लगता है और उसका व्यवहार असामान्य हो जाता है

2. अनुवांशिकता (Heredity) :-

अनुवांशिक गुणों के कारण जल से ही कुछ बालक शक्तिशाली तो कुछ कम शक्तिशाली होते हैं। शक्तिशाली बालक कठिन परिस्थितियों से डटकर मुकाबला कर सकते हैं जबकि कम शक्तिशाली या कमजोर किस्म के बालक मानसिक तनावों से ग्रस्त रहते हैं, संघर्षो का सामना न करते हुए वातावरण में कुसमायोजित हो जाते हैं।

3. वातावरण (Environment) :-

(अ) परिवार : माता-पिता व परिवार के अन्य जन बालक को पर्याप्त प्यार, दुलार, सुरक्षा, प्रशंसा पुरस्कार व दण्ड देने में असंगत व्यवहार दर्शाते हैं। अपने बच्चों में अच्छे संस्कार नहीं डाल पाते। ऐसे बालकों में असामान्य व्यवहार प्रदर्शित करने की संभावना अधिक होती है। माता-पिता के बीच मानसिक तनाव, लड़ाई-झगड़े, अलग होना, बेरोजगारी, परिवार में बालको पर अत्याधिक नियंत्रण या पूर्ण स्वतंत्रता, ये सब बालकों के व्यवहार को समस्यात्मक बना सकते हैं।

(ब) विद्यालय : विद्यालय का अस्वच्छ वातावरण, सुविधाओं की कमी, शिक्षकों का अमनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षण कार्य करना, अत्याधिक नियंत्रण द्वारा डर का माहौल बनाना, बालकों से अभद्र व्यवहार करना, व्यक्तिगत विभिन्नताओं का ध्यान न रखते हुए सभी बालकों से समान अपेक्षा करना, उन्हें सबके सामने अपमानित करना, शारीरिक दण्ड देना, क्षमा मांगने के लिए जोर देना, विद्यालय समय से अतिरिक्त समय तक रोकना, चिढ़ाना, मजाक बनाना, ध्यान न देना आदि।

4. शारीरिक अयोग्यता :-

शारीरिक रूप से कमजोर बालकों में कुसमायोजन की समस्या अधिक पाई जाती है। इस शारीरिक अयोग्यता के कारण बालक सामान्य रूप से कार्य नहीं कर पाता व अपने लक्ष्य पर पहुँचने में कई बाधाओं को महसूस करता है, उसमें शैक्षिक पिछड़ापन आ जाता है। शारीरिक अयोग्य बालकों में निम्नलिखित कुसमायोजित व्यवहार पनपने लगते हैं। शर्मीलापन, भीरू, संकोची, डरा हुआ, चिन्तनहीन, छिपाने की प्रवृत्ति, हीनता की भावना, संवेगों का पनपना, मनोकामुकता, एकांकी, शंकालु, दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की अभिलाषा, उग्रता, मानसिक तनाव, अधीरता आदि लक्षण पाये जाते हैं।

बालक अपनी असामान्यताओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। वे अपने मित्रों के समान बनना चाहते हैं। शिक्षक ऐसे शारीरिक दृष्टि वाले असामान्य बालकों के अन्दर उत्पन्न हीन भावना को कम कर सकते हैं यदि वह उनमें समान की भावना जागृत करे, उनके दृष्टिकोण को बदले, ताकि वे अपने दोषों को भूलने व अपनी क्षमताओं का भरपूर प्रयोग करने की प्रेरणा ले।

10.5 कुसमायोजित व्यवहार के प्रकार (Types of Maladjusted Behaviour)

लोवेल (Lovell) के अनुसार कुसमायोजित व्यवहारों की सूची, जिन्हें तीन वर्गो के अन्तर्गत रखा गया है :-

(1) अनुशासन सम्बन्धी (Disciplinary), विध्वंसकारी प्रवृत्ति (Destruction tendency), दुराग्रह (Stubborness), छात्रों को छेड़ना, परेशान करना, झूठ बोलना, चोरी करना, धोखा देना, घर या स्कूल से बार-बार भागना व अन्य।

(2) मन: शारीरिक (Psycho Somatic) बेचैनी, कठिन परिश्रम न कर पाना बिस्तर पर पेशाब करना अंगूठा चूसना, दाँत से नाखून काटना, बार-बार पेशाब करना, पेट की खराबी, (जो किसी रोग के कारण न हो) हाथ कांपना, अपने आप से बातें करना।

(3) संवेगात्मक (Emotional), दिवास्वप्न (Daydreaming) हीनता की भावना अंधेरे में व छोटे पशुओं से डरना, आलोचना या स्वभाव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील, निर्णय लेने में अनिश्चितता या असमर्थता, शीघ्र उत्तेजना, संवेगात्मक अस्थिर (Emotinal Upset), विभिन्नता की भावना (Feeling of Differentness), उदास रहना, अपने को महत्वपूर्ण समझना, क्षमता को छुपाना।

10.6 विद्यालयी बालकों में कुसमायोजित को कम करने के लिए शिक्षकों हेतु सुझाव (Suggestion to Teachers to Reduce Maladjustment)

1. बालकों को उनकी योग्यता व क्षमतानुसार कार्य करने को दिया जाये। शिक्षक बालकों से उसकी क्षमता के अनुसार अपेक्षा करें। उदाहरण के लिए यदि आठवीं कक्षा का अध्यापक अपनी कक्षा के सभी छात्रों से यह अपेक्षा करे कि वह 13 से 15 वर्ष तक की आयु वाले बालकों द्वारा सामान्य रूप से किये जाने वाले मानसिक कार्य करे तो निश्चित है कुछ छात्रों में कुसमायोजन का व्यवहार उत्पन्न होगा। जो छात्र इस योग्यता स्तर से निम्न होंगे उन्हें शिक्षक द्वारा दिये गये अपेक्षित कार्य अधिक लगेंगे और वे छात्र अरूचि प्रकट करते हुए कक्षा से भागना, उग्र व्यवहार प्रकट करना या चुपचाप रहना बाहय वातावरण पर ध्यान देना जैसी हरकतें करेंगे। इसी प्रकार वे छात्र जिनकी क्षमता 13-15 वर्ष तक के सामान्य बालकों से अधिक है उन्हें कार्य बहुत आसान व तुच्छ लगेंगे। उन छात्रों में कक्षा में नीरसता का भाव उमरने लगेगा और वे शिक्षक को परेशान करने या अनुशासनहीन कार्य करने जैसे व्यवहार प्रदर्शित करने लगेंगे।
2. शिक्षक को चाहिए कि वह अपनी कक्षा में प्रत्येक छात्र की क्षमता, योग्यता, पूर्वानुभव को पहचाने व उसके अनुरूप कार्य विभाजन व शिक्षण कार्य करें।
3. विद्यालय में प्रत्येक बालक की यह इच्छा होती है कि वह सबकी नजर में सम्मानपूर्वक स्थान प्राप्त करे। जो शिक्षक बालकों की इस इच्छापूर्ति में सहायक होते हैं वे काफी हद

तक उनके कुसमायोजन होने को रोक सकते हैं। शिक्षक द्वारा दिये गये प्रयासों के लिए ब्लेयर और उनके साथियों (Blair et al) ने कुछ सुझाव दिये हैं।

(i) बालकों को दण्ड देने, आरोप प्रत्यारोप लगाने निन्दा (Censure) करने की अपेक्षा प्रशंसा तथा सामाजिक प्रोत्साहन द्वारा अच्छे व्यवहारों की आदत डालने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

(ii) शिक्षक को व्यंगात्मक भाषा (Sarcasm) का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि व्यंगों के प्रति बालक अत्यधिक संवेदनशील होते हैं जिससे उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचती है।

(iii) शिक्षक बालक के दुर्व्यवहारों (Misconduct) को अपना अपमान न समझकर उन्हें नजरअंदाज कर दें। शिक्षक अपने छात्रों की भलाई हेतु प्रयत्नरत रहें।

(iv) विद्यालयों में अनुशासन नियम, आचार संहिता, अन्य गतिविधियों की योजना बनाने और व उन्हें क्रियान्वित करने में छात्रों का सहायोग लिया जाये।

(V) बालक द्वारा किये गये कुसमायोजित व्यवहार के वास्तविक कारणों का शिक्षक को पता लगा लेना चाहिए।

(vi) समस्यात्मक व्यवहार के अधिक पनपने से पहले ही उसकी रोकथाम हेतु सुरक्षात्मक उपाय कर लेने चाहिए।

स्वपरख प्रश्न (**Check your Progress**)

01. सामान्य एवं आसामान्य व्यवहार में क्या अन्तर है ?
02. आसामान्य व्यवहार के वातावरण सम्बन्धी क्या कारण है ?
03. कुसमायोजन के प्रकार ?

विशिष्ट समस्याएँ (**Specific Problems**) :

विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्व द्वारा उत्पन्न समस्यात्मक व्यवहारों से कुसमायोजन होता है। बालकों में अनेकों प्रकार की समस्याएँ पाई जाती हैं। कुछ समस्यात्मक व्यवहारों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है जो बालकों में पाये जाते हैं, वे निम्न है -

* झूठ बोलना
* चोरी करना
* कक्षा से भाग जाना
* कक्षा में देर से आना
* परीक्षा में नकल करना
* झगड़ा करना
* अनुशासनहीनता
* दिवास्वप्न्न देखना
* दांत से नाखून काटना, बाल तोड़ना, अंग्दूता चूसना

* एकांतप्रिय बालक
* विशिष्ट प्रकार स्वर दोष

उच्चारण सम्बन्धी (Disorder of Vocalisation), लय सम्बन्धी (Disorder or rhythm), तुतलाना (Stuffering), हकलाना।

10.7.1 झूठ बोलना (**Lieing**):

बालक डांट के भय से विद्यालय व घर में सत्य को छिपाकर असत्य बोलते हैं। इस आदत के पनपने के कारण बालकों में माता-पिता व शिक्षक द्वारा कठोर कगार अपनाने से बच्चों में भय का वातावरण बन जाता है। कुछ परिवारों में परिवारजन अपनी स्थिति व ओहदे को बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत करते हैं जिसके परिणामस्वरूप उनके बच्चे झूठ बोलना सीख जाते हैं। संगति का असर भी इस समस्या को बढ़ावा देता है।

समाधान (**Solution**) :

इस समस्या के समाधान में शिक्षक व माता-पिता दोनों को ही प्रयत्न करना होगा।

1. विद्यालय व परिवार में बालकों के भय के वातावरण को कम किया जाए उनके प्रति प्रेमपूर्वक व्यवहार किया जाये।
2. शिक्षक व अभिभावक बालकों को उनकी गलतियों पर न डाटे बल्कि समझायें कि कोई बात नहीं जो हो गया सो हो गया आगे ऐसी गलती दुबारा न करें।
3. बालकों को कहानी द्वारा या संस्मरण द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से झूठ बोलने के दुष्परिणामों से अवगत करायें।
4. बालकों को अपनी बात बताने का पूरा पूरा अवसर प्रदान करें। ये ध्यान रखें कि वह किसी बात को छिपाये नहीं।
5. झूठ बोलने वाले बच्चों को हेय दृष्टि से न देखें बल्कि उन्हें समझायें कि झूठ बोलना सफल जीवन के लिए कितना घातक होता है।
6. ऐसे बच्चों को अकेले में बुलाकर समझाया जाये
7. ऐसे बच्चों पर अप्रत्यक्ष निगाह रखते हुए उन्हें कुछ उत्तरदायित्व कार्य करने को दिये जाये।

10.7.2 चोरी करना (**Stealing**) :-

बालक द्वारा चोरी करना एक शारीरिक क्रिया हैं जिसके पीछे हीनभावना छुपी हुई है। बालक के मन में चोरी करने का विचार आने पर वह बिना अनुमति में किसी दूसरे की वस्तुओं पर अपना अधिकार जमाता है। बालक के चोरी करने के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है। जैसे उसकी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न होना, प्रिय वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा, अपने साथियों के साथ व अभावग्रस्त होना, कुसंगति, मान्यता व प्रतिष्ठा प्राप्त न होना।

समाधान: शिक्षक की भूमिका (**Role of Teacher**)

1. ऐसी स्थिति में सबसे पहले बालक की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु यथा सम्भव सहायता प्रदान की जानी चाहिए।
2. शिक्षक व माता-पिता को धैर्यपूर्वक सहृदयता से व्यवहार करना चाहिए।
3. संवेगों की विमुक्ति हेतु संगीत, व्यायाम, खेलकूद, स्वच्छ सुन्दर वातावरण हो।

4. बालक को सकारात्मक सुझावों द्वारा समझाना कि बिना चोरी के भी उस अभाव की पूर्ति किस प्रकार की जा सकती है।
5. कारणवश यदि बालक चोरी कर बैठता है तो उसे पहली बार दण्ड न दें उसे प्रेमपूर्वक समझायें कि चोरी करने से क्या-क्या दुष्परिणाम हो सकते हैं, बालकों को जानकारी दें।
6. बालकों में डर के आतंक की अपेक्षा स्वानुशासन व प्रेम द्वारा अनुशासन बनाये रखने पर बल दें।
7. बालकों को अपनी बात बताने की पूर्ण स्वतंत्रता दें ताकि वे चोरी करने के कारण को बता सकें।
8. बालक किन-किन दोस्तों व मित्रों के साथ रहता है इसका शिक्षक व अभिभावक दोनों ही ध्यान रखे।
9. बालक का गलत कार्य करने पर अनावश्यक रूप से पक्ष न लें।
10. बालकों को अच्छे संस्मरण, पुस्तकें, महापुरूषों की जीवनियों के बारे में बतायें व उन्हें अच्छे जीवनयापन हेतु प्रेरणा दें।
11. बालकों को वस्तुएँ क्रय करने का भार सौंपे व पुन: पता लगायें कि वे कुछ छुपा तो नहीं रहा है। यदि वह फिर गलती कर रहा है तो उसे पुन: पार से ऐसा न करने की सलाह दे।

10.7.3 कक्षा से भाग जाना (**Escaping**) :-

बिना अनुमति के प्राय: बच्चे कक्षा से बाहर कहीं भी चले जाते है। ये पलायन घर से भी होता है जिसका मुख्य कारण अरूचि, मन न लगना, भय मुक्ति, निकम्मापन होता है। कक्षा से भागने की समस्या छोटे बच्चों में कम होती है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, समस्या बढ़ने लगती है। इसका मूल कारण है जैसे गृह कार्य न करने पर, शिक्षक द्वारा कक्षा में प्रश्न पूछना दूसरी ओर माता-पिता के डाटने से भय आदि।

किशोरावस्था में दो कारणों से यह प्रवृति अधिक पनपती है : विपरीत लिंगाकर्षण व भयमुक्ति, किशोर-किशोरियों में एक दूसरे के प्रति आकर्षण होता है। सामाजिक बंधनों व सही परामर्श के अभाव में वे कक्षा व घर से भाग जाते हैं। भय व भयमुक्ति दोनों ही परिस्थितियों में बालक पलायन करता है। भय शारीरिक व मानसिक दण्ड का होता है व किशोरावस्था में बालक गलत काम करने से भयभीत नहीं होता। यह सोचता हैं कि मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। इस प्रकार की भयमुक्ति सोच पलायनवादिता का कारण बन जाती है।

कुछ बच्चों को साधनों की कमी के कारण खेल खेलने को नहीं मिलते तो वे कक्षा से भागने का प्रयास करते हैं। विद्यालय में शिक्षकों व घर में माता-पिता के प्रति कठोर व्यवहार, बात-बात पर टोकना, अपमानित करना, दण्ड देना आदि से परेशान होकर किशोर-छात्र पलायन कर जाते हैं। कुसंगति, अधिक लाड़ प्यार से भी बालक पलायनवादी बन जाते हैं।

<u>समस्या के समाधान में शिक्षक की भूमिका</u> :-

1. कक्षा का वातावरण व शिक्षकों का व्यवहार भयमुक्त होना चाहिए। विद्यालय में बालक की उचित आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए उन्हें पूर्ण करने का पूरा प्रयास किया जाना चाहिए।
2. शिक्षक अपने शिक्षण कार्य को रूचिकर व उपयोगी बनायें।

3. अनजाने में की गई गलतियों को शिक्षक नजरअंदाज करें। बालकों को प्रेमपूर्वक समझायें व पुनरावृत्ति न करने की सलाह दें।
4. इस समस्या से ग्रस्त बालक को व्यक्तिगत रूप से अकेले में समझाया जाये, सबके सामने नहीं।
5. बालकों के साथ कभी भी ऐसा व्यवहार न करें जिससे उसके मन में घृणा का भाव जागृत हो।
6. बालकों की संगति पर ध्यान रखा जाये, उसे विश्वास में लेकर उसके मन की बात का पता लगाया जाये सुझावात्मक तरीके से समझाया जाये।
7. समस्या के समाधान हेतु शिक्षक माता-पिता से व माता-पिता शिक्षक से सलाह मशवरा कर समस्या का हल ढूँढें।
8. शिक्षक व माता-पिता बालक की प्रगति के विषय में पूर्ण जानकारी रखें।
9. विद्यालय के कुछ क्रियाकलापों का उत्तरदायित्व उस बालक पर डाल दिया जावे।

10.7.4 कक्षा में देर से आना (**Late coming**) :-

कुछ बालक विद्यालय में नियत समय के पश्चात पहुँचते हैं। कुछ बालकों की रोज देरी से पहुँचने की आदत होती है और कुछ कभी-कभी पहुँचने में देरी करते हैं। देर से आना बालक की जब आदत बन जाती है तो वास्तव में यह एक समस्या होती है, जिसके अनेक कारण हैं। शिक्षक को बालक के कक्षा में देर से आने के कारण को जानना बहुत आवश्यक है। जैसे छात्र के घर की दूरी अधिक है, वह रास्ते में खेलने लगता है, उसकी कोई व्यक्तिगत समस्या हो, माता-पिता बालक के विद्यालय जाने के प्रति जागरूक न हों, समय पर तैयार न करते हों, कक्षा में शिक्षक देर से पहुँचते हों, विद्यालय के अधिकांश शिक्षक व प्रधानाध्यापक भी देर से आते हों, विद्यालय का अनुशासन व नियम ठीक न हो आदि।

समाधान हेतु शिक्षक की भूमिका :-

1. बालकों के विद्यालय में देरी से आने का कारण यदि माता-पिता हैं तो उन्हें बुलाकर समझाया जाये। देर से पहुँचने के दुष्परिणामों से अवगत कराया जाये। उन्हें अपने बच्चों पर ध्यान रखने की सलाह दी जाये
2. यदि विद्यालय में अधिकांश बच्चे देर से बाते हैं तो कारण पता लगाया जाये, यदि विद्यालय का समय परिवर्तन करने से समस्या का हल हो सकता है तो परिवर्तन कर दिया जावे।
3. देर से आने वाले छात्रों को भौतिक दण्ड अवश्य दिया जाये ताकि अन्य समय पर आने वाले छात्रों पर इसका प्रभाव न पड़े।
4. समय पर आने वाले छात्रों की प्रशंसा की जाये एवं पुरस्कार दिया जाए ताकि वे बालक जो देर से आते हैं वे भी पुरस्कार प्राप्ति हेतु प्रयास करें।
5. विद्यालय के नियम व अनुशासन अधिक कठोर न हो, जिसकी अनुपालना में छात्रों को कठिनाई हो।
6. शिक्षक व प्रधानाध्यापक छात्रों के समक्ष समय पर विद्यालय में उपस्थित होकर आदर्श प्रस्तुत करें।

7. देर से आने वाले छात्रों को बजाए शारीरिक दण्ड के उन्हें ऐसा कार्य करने को दिये जाये जिसे करने में उन्हें संकोच न हो और उनकी प्रतिष्ठा का अंग बने। जैसे किसी पाठ को याद कर सुनाना, देर तक रोकना, पेड़-पौधें में पानी देना, शिक्षण में सहयोग प्रदान करना आदि।

10.7.5 <u>अनुशासनहीनता (**Indiscipline**):</u>

अनुशासनहीनता आज के समय की गंभीर व उग्र समस्या है। छात्र जान-बूझकर निर्धारित नियमों का उल्लंघन करते हैं। मारपीट, गाली-गलौच, तोड़-फोड़, झगड़े करना, आक्रामक व्यवहार, हड़तालें आदि करते हैं। छात्रों द्वारा अनुशासनहीनता के कई कारण हैं जैसे व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनैतिक, नैतिक शिक्षा का अभाव आदि। छात्र स्वयं, शिक्षक, माता-पिता व अभिभावक अनुशासनहीनता के लिए उत्तरदायी होते हैं।

वे बालक जो माता-पिता या समाज द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं कर पाते, वे प्राय: अनुशासनहीन हो जाते हैं। छात्रों का राजनीति से जुड़ना, राजनीति में कूटनीति होना, छात्रों द्वारा अच्छे बुरे का भेद स्थापित न कर पाना, नैतिक शिक्षा का अभाव, अच्छी आदतों व संस्कारों का अभाव आदि भी अनुशासनहीनता के कारण हो सकते है।

समाधान : शिक्षक की भूमिका

अनुशासनहीनता की समस्या अकेले शिक्षक दूर नहीं कर सकता। इसके लिए कई कार्य करने होंगे।

1. शिक्षक अभिभावक सहयोग प्राप्त करना।
2. शिक्षक की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना।
3. श्रेष्ठ शिक्षण
4. शिक्षकों की अनुशासनप्रियता
5. राजनीति से दूर
6. उपयोगी पाठ्यक्रम
7. सहभागी क्रियाओं का आयोजन व छात्रों की सहभागिता।
8. नैतिक शिक्षा की व्यवस्था
9. परीक्षा प्रणाली में सुधार करना।
10. इसके अन्तर्गत छात्रों की वर्षभर के कार्यो के आधार पर मूल्यांकन करना।
11. विद्यालय के नियमों, उपनियमों को लचीला बनाना।
12 छात्रों की सुविधा का ध्यान रखना।

10.7.6 दिवास्वप्न (**Day Dreaming**) :-

कुछ बालक अपनी वास्तविक स्थिति को भूलकर कल्पना में खोये रहते हैं। दूसरों की बातों पर ध्यान नहीं देते। उनका ध्यान अन्य कहीं होता है। वह जागते हुए भी कहीं ओर रहते हैं। दिवास्वप्न का सम्बन्ध मन की स्थिति से होता है। मनोविश्लेषण (Psychoanalysis) के अनुसार मन की तीन अवस्था होती हैं। जागृति, स्वप्न एवं सुसुप्त। स्वप्नवस्था, जागृत अवस्था एवं सुसुप्तावस्था के बीच की स्थिति होती है जिसमें बालक न तो सोया हुआ ही रहता है न जागा हुआ। फ्रायड ने सुसुप्तावस्था को अर्धचेतन (Sub Conscious) मन की संज्ञा दी है। स्वप्न इसी

अवस्था में आते हैं। अत: बालक जब कभी कभी स्वप्न विचारों में इतना खो जाता है कि बालक बाहय जगत से उसके विचार सम्बंध टूट जाता है, तो उसे दिवास्वप्न कहते हैं।

दिवास्वपन को रोकने हेतु शिक्षक का प्रयास :-

यह एक मानसिक क्रिया है। शिक्षक वर्ग छात्र के मनोस्थिति पर विचार कर निम्न प्रकार नियंत्रण करने का प्रयास कर सकते हैं।

1. छात्रों को किसी न किसी मानसिक क्रिया में व्यस्त रखा जाए।
2. प्रभावी शिक्षण द्वारा छात्रों को विषय वस्तु ज्ञान प्राप्ति हेतु तल्लीन कर देना।
3. छात्र शिक्षक सम्बंध मधुर व आत्मीय हों ताकि छात्र अपने मन के विचारों व समस्याओं को निसंकोच बता सकें।
4. यौन शिक्षा को सामान्य रूप में पढाना ताकि छात्र की रहस्यात्मक गुत्थियाँ स्वत: सुलझ जाये और उस ओर ध्यान आकश्ष्ट न हो।
5. यौन सम्बन्धी रहस्यों के दुष्परिणामों से अवगत करा दिया जाये।
6. विद्‌यालयी वातावरण इतना अच्छा हो कि व्यर्थ की निरर्थक कल्पनाओं में जाने का अवसर बालक को न मिले।

10.7.7 <u>दांत से नाखून काटना, अंगूठा चूसना, बाल तोड़ना (**Nail biting Nervous habits**) :-</u>

अंगूठा चूसना छोटे शिशुओं की स्वाभाविक क्रिया है। यह क्रिया तभी समस्यात्मक बनती है जब शिशु अवस्था के बाद भी काफी समय तक चलती है। इसका कारण पोषाहार में कमी, अतृप्ति, माता-पिता का ध्यान आकर्षित करना मान्यता प्राप्त करना आकर्षण का केंद्र अवधान (Attention) आदि है।

आगे चलकर ये प्रवृतियॉ बालक में हीन भावना का विकास करती हे जब परिवार व मित्रगण उसका मजाक बनाते हैं तो बालक संवेदनशील हो सकता है और आलोचना के कारण असामाजिक भी हो सकता है। दांत से नाखून काटना, बाल तोड़ने की प्रवृत्ति भी प्राय: बालकों में देखने को मिलती है। ये आदतें भी प्राय: ध्यान आकर्षित करने हेतु या कुंठाओं से ग्रस्त बालकों में होती है।

शिक्षक की भूमिका :

इन बालकों की इन आदतों को छुड़ाने हेतु कारणों का पता लगाकर यथासम्भव उन कारणों को समाप्त करने का प्रयास किया जाये :-

1. बालकों को संवेगात्मक सुरक्षा प्रदान की जाये।
2. किसी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने पर ये आदतें स्वत: अद्दश्य हो जाती हैं।
3. शिक्षक व माता-पिता बालकों में विश्वास को जगायें, उसे मान्यता प्रदान करें। उसको अपनी क्षमताओं को बतायें।
4. शारीरिक व मानसिक विश्राम के विद्‌यालय में अवसर प्रदान करें।
5. मानसिक तनाव व द्‌वंद को कम करने हेतु बालकों से प्रेम, प्यार व सहानुभूति का व्यवहार करें।
6. उनके साथ डांट फटकार, मारना, दण्ड देना ऐसी विधियों का प्रयोग न करें।

10.7.8 एकान्तप्रिय बालक;

ऐसे बालक शिक्षक के लिए कोई विशेष समस्या उत्पन्न नहीं करते लेकिन स्वयं बहुत उदास, दुःखी, असुरक्षित, अपने आपको व जीवन को निरर्थक समझने लगते हैं। पूर्व के अनुभव या कोई हादसा उसे अपनों से अलग कर देता है, वह दिवास्वप्न देखने लगता है, अपने आप में खोया रहता है। अन्य व्यक्तियों से मिलने में उसकी कोई रूचि नहीं होती। कुछ बालकों की यह स्थिति मनोविक्षिप्त (Psychotic) जैसी हो जाती है। उसका आत्मविश्वास समाप्त हो जाता है।

शिक्षक की भूमिका :

1. बालक को इस स्थिति पर पहुंचने से पहले समय रहते हमें उसको सामाजिक बनाने का पूर्ण प्रयास करना चाहिए। ऐसे बालकों के प्रति दया, सहिष्णुता, प्रेम का बर्ताव कर उन्हें व समाज में विभिन्न क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहन करें।
2. उसे अनुभव करायें कि वह समाज का सम्मानित अंग है।
3. उसे वास्तविकता से परिचित करायें, उसके साथ शिक्षक स्वयं समय व्यतीत करें।
4. उसकी भावनाओं को समझें, उसकी प्रशंसा करें, जिससे उसका आत्मविश्वास पुनः जागृत होगा।

10.7.9 विशिष्ट प्रकार के स्वर दोष :-

विचारों के आदान प्रदान में जब बालक को कठिनाई महसूस होती है तो उसमें स्वर दोष पाया जाता है। यह दोष कई प्रकार व कई कारणों से हो सकते हैं। विद्यालय में दो मुख्य स्वर विकार उच्चारण तथा लय दोष जैसी समस्याएँ अधिकांश पाई जाती है।

शिक्षक की भूमिका:

1. यदि स्वर विकार शारीरिक कारण से है तो बालक को सम्बन्धित विशेषज्ञ के पास भेज देना चाहिए। आर्थिक दृष्टि से कमजोर बालकों को सहायतार्थ चलाई गयी संस्थाओं से सम्पर्क कर ईलाज हेतु भेज देना चाहिए।
2. यदि ये विकार वातावरण से संबन्धित हैं तो अध्यापक का पूर्ण दायित्व बनता है कि वह उस बालक की पूरी-पूरी मदद करें। शिक्षक स्वयं सही भाषा व तरीके का प्रयोग करें । छात्रों के समक्ष अपना आदर्श स्वरूप प्रस्तुत करें।
3. शिक्षक छात्रों के सामने प्रदर्शन कर होंठ, जीभ व सांस पर नियंत्रण कर शुद्ध उच्चारण करें व छात्रों को अभ्यास करायें। शिक्षक स्वयं सम्बन्धित पुस्तकों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त कर छात्रों को सावधानीपूर्वक निर्देशन दें।
4. भाषा सुधार हेतु शिक्षक सामूहिक प्रयास करें। त्रुटिपूर्ण बोलने वाले बालक की खिल्ली न उड़ाई जाये।
5. शिक्षक उच्चारण में बाधक तत्वों को हटाने का प्रयास करें।
6. गलत उच्चारित शब्द व शुद्ध स्वरों को पहचाने।
7. अभयस व पुनर्वलन द्वारा बालकों को सीखे गये उच्चारण को बल प्रदान करें।
8. अशुद्ध उच्चारण पर शिक्षक पुनः ध्यान दें, उसे पहचाने व ठीक करवाकर दुबारा अलग से उस शब्द को उच्चारित करवायें।
9. जीभ, होंठ, मुँह, दांत के उपयुक्त प्रयोग हेतु चित्र, चार्ट, मॉडल, ऑडियो वीडियो, रिकार्ड प्लेर, प्रोजेक्टर का प्रयोग करें।

10. अभ्यास कार्य तब तक जारी रखें जब तक बालक पूर्ण रूप से संशोधन न कर ले।

लय सम्बन्धी विकार में तुतलाना (**stuttering**) :-

छोटे बालक 2 से 4 वर्ष की आयु में यह विकार अधिक तौर पर पाया जाता है। यह दोष बालकों में बालिकाओं की अपेक्षा अधिक पाया जाता है। उस सम्बन्ध में विशेषज्ञ का मत है कि ऐसे विकास अधीर अभिव्यक्ति (Nervous expression) के रूप में होते हैं जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व के कुसमायोजन का घोतक है। तुतलाने वाले बालक में संवेगात्मक द्वंद, हीनता की भावना, पूर्वाग्रह (Prejudice), किसी भी प्रकार के डर से पीड़ित, उसमें असुरक्षा, अपर्याप्तता का भाव छुपा होता है।

सुझाव :

1. तुतलाने के वास्तविक कारण का पता लगाया जाये।
2. बालक को परेशान करने वाले वातावरण व पारिवारिक कारणो को दूर करने का प्रयास किया जाये।
3. बालक को योग, अभ्यास द्वारा शान्त रहने, चिन्ताओं तथा भय को कम करने का प्रशिक्षण दिया जाये।
4. बालक का मजाक न बनाया जाये।
5. बालक में सुरक्षा की भावना, आत्मविश्वास व सफलता प्रदान करने का प्रयास किया जाये।
6. बालक को अधिक से अधिक अनुकूल परिस्थितियों में बोलने का अवसर प्रदान करें।
7. बालक को अच्छा, स्वच्छ, आनन्ददायक, भयमुक्त, शान्त, तनावरहित वातावरण प्रस्तुत करें।
8. बालक के अच्छे प्रयासों की सराहना करें, उसे शाबासी दें, उसकी क्षमताओं को उसे समझायें।
9. ऐसे बालकों को वातावरण सम्बन्धी क्रियाकलापों में व्यस्त रखें।
10. शिक्षक ऐसे बालकों का आलोचनात्मक टिप्पणी न देकर सुझावात्मक व सृजनात्मक सुझाव दें।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress**)

04. कक्षा तथा विद्यालय से सम्बन्धित विशिष्ट समस्याएँ बताइये। इनके सुधार में शिक्षक की क्या भूमिका हो सकती है?

05. तुतलाने को सुधारने के लिए क्या प्रयत्न किये जा सकते हैं?

10.8 असाधारण बालक (Exceptional child) :-

ऐसे असाधारण बालकों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1. शारीरिक दृष्टि से अक्षम बालक (Physically Handicapped child)
2. मानसिक दृष्टि से असामान्य बालक (Mental deviates)
3. सामाजिक दृष्टि से असमायोजित बालक (Socially Maladjusted)
4. संवेगात्मक समस्याओं वाले बालक (Emotionally Problematic)

हेरी बेकर (Harry j. baker)ने अपनी पुस्तक Introduction to Exceptional Children में लिखा है असाधारण बालक वे हैं "Those who deviate from what is supposed to be average in Physical mental emotional characteristics or social to such an extent they require special education services in order to develop their maximum capacity."

कि असाधारण बालक (Exceptional children) वे हैं जो शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक और सामाजिक दृष्टि से सामान्य गुणों से इस सीमा तक विचलित होते हैं कि उन्हें अपनी अधिकतम क्षमता के अनुसार स्वयं का विकास करने के लिए विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। असाधारण बालकों के किसी समूह की शिक्षा से सम्बन्धित योजना बनाते समय शिक्षक को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा संवेगात्मक स्थिति को अच्छी तरह जानना बहुत आवश्यक है। बालकों को प्रदान की गई सहायता उनकी समस्याओं व प्रकृति के अनुकूल होनी चाहिए।

शारीरिक दृष्टि से अक्षम बालक वे बालक होते हैं जो अंधे, गूंगे, बहरे, तोतले या किसी अंग से हीन होते हैं।

असाधारण बालकों के शिक्षण हेतु कुछ सुझाव:

1. शिक्षक को चाहिए कि वे साधारण व असाधारण बालकों में समानता के लक्षणों को पहचानें।
2. उन्हें मान्य बालकों के समान स्नेह, प्यार, सम्मान तथा सुरक्षा दी जाये।
3. यदि ऐसे बच्चों का समायोजन सामान्य बालकों की तरह है जो उन्हें उसी प्रकार के कार्य करने को दिये जायें जैसे सामान्य के लिए होते हैं। कोई भी क्षेत्र उनके लिए वर्जित नहीं होना चाहिए।
4. उन्हें स्वतंत्र रूप से कार्य करने, अध्ययन करने, निर्णय लेने के अवसर प्रदान करने चाहिए।
5. उन पर अत्यधिक ध्यान देने, दया, सहानुभूति प्रदर्शित करने व सुरक्षा देने से हीन भावना व अस्वस्थ भावना का विकास होगा जिसका उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

6. सामान्य बालकों के साथ स्वाभाविक वातावरण में उन्हें शिक्षा दी जानी चाहिए ताकि वे जीवन पर्यन्त साधारण लोगों के साथ रहना सीखें सामान्य बालकों जैसे गुणों का विकास कर सकें लेकिन उनकी विशेष शिक्षा व सुविधाओं पर ध्यान दिया जाये।
7. शारीरिक रूप से विकलांग बालकों को विशिष्ट कक्षाओं में शिक्षा देने की आवश्यकता होती है। उन्हें विशिष्ट विधियों, प्रविधियों, उपकरणों के माध्यम से शिक्षा देनी होती है।
8. शिक्षक को बालक की शारीरिक अक्षमता से उत्पन्न मस्तिष्क पर पड़ने वाले प्रभाव को समझ कर उसके साथ सद्व्यवहार करना चाहिए।
9. शिक्षक को आवश्यकतानुसार माता-पिता से परामर्श कर बालक की व्यक्तिगत समस्या को सुलझाने का प्रयास करना चाहिए।
10. शिक्षक को इन बालकों के प्रति परम्परागत रुढिवादिता को छोड़ स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।
11. असाधारण बालकों के निर्देशित व परामर्श की सुविधा तब तक चलती रहनी चाहिए जब तक वे पूर्ण रूप से जीवन में समायोजित न हो जाये।
12. विद्यालय में शिक्षक व घर परिवार में माता-पिता व अन्य यदि ऐसे विशिष्ट बालकों के साथ स्वस्थ दृष्टिकोण अपनायेंगे तो निश्चित ही ऐसे बालकों का जीवन में समायोजन अच्छा होगा और वे भी हमारे देश के उपयोगी नागरिक बन पायेंगे।

10.8.1 प्रतिभाशाली बालक (Gifted child) :-

मानसिक/बौद्धिक दृष्टि से बालकों में बहुत बड़ा अन्तर पाया जाता हे, कुछ बालक किसी भी बात को बड़ी शीघ्रता से सीख लेते हैं लेकिन अधिक संख्या उन बालको की होती हैं जो किसी बात को थोड़ा अधिक समझाने पर सीख पाते हैं परन्तु कुछ ऐसे भी होते हैं जो किसी बात को बहुत समझाने पर भी किसी बात को पूरी तरह नहीं समझ पाते। इनमें पहले व तीसरे प्रकार के छात्रों की संख्या बहुत कम, स्कूली जनसंख्या को लगभग एक प्रतिशत होती हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रथम प्रकार के बालकों को प्रतिभावान बालक (Gifted) कहते हैं। अधिकांश विद्यालयों में इनकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता क्योंकि ये बिना किसी व्यक्तिगत सहायता के सफलतापूर्वक आगे बढ़ते चले जाते हैं। शिक्षकों के लिए कोई विशेष समस्या पैदा नहीं करते। शिक्षण में जो भी विशेष सहायता या समाधान बताये जाते हैं, वे पिछड़े बालकों के लिए होते हैं। प्रतिभाशाली बालक सामान्यत: विशेष सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं जिससे प्रखर बुद्धि बालक भी एक समस्यात्मक बालक बन सकता है। प्रखर बुद्धि बालक जो कि आगे चलकर नेतृत्व कर सकते हैं, अच्छे डॉक्टर, वैज्ञानिक, समाज सुधारक, शिक्षक बन सकते हैं। राष्ट्र ऐसे होनहार छात्र की प्रतिभा के लाभ से वंचित रह सकता है। कुछ मेधावी छात्र धनाभाव के कारण बुरी संगत, घर व विद्यालय का वातावरण दूषित होने के कारण पढ़ना छोड़ देते हैं। ऐसे बालकों को समय-समय पर निर्देशित करना परम आवश्यक है जिससे वे अपनी शिक्षा को आगे बढ़ाये रखने, अपनी क्षमताओं, योग्यताओं व रूचियों के अनुकूल अपनी प्रतिभाओं का अधिक से अधिक विकास कर सकें, जिससे न केवल उसे लाभ होगा बल्कि समाज व देश का कल्याण भी होगा।

प्रतिभा सम्पन्न बालकों को पढ़ाते समय शिक्षकों हेतु कुछ सुझाव:

1. उनकी जिज्ञासाओं को न दबायें, वे जो कुछ जानना चाहते हैं उसे तर्क संगत ढंग से समझायें, उन्हें भ्रमित न करें, चाहे सही उत्तर की जानकारी प्राप्त कर दूसरे दिन बतायें।
2. ऐसे बालकों को शिक्षा देने में जल्दबाजी न करें।
3. अपनी मान्यताओं व बात को उन पर न थोंपें। प्रजातांत्रिक ढंग से शिक्षण कार्य करें।
4. उन्हें बजाय व्यख्यान देने के, समस्या समाधान विधि द्वारा, ह्यूरिस्टिक विधि व अन्य विधि जो स्वयं करके सीखने पर आधारित हो, उनका प्रयोग करें।
5. उनको बौद्धिक दृष्टि से सक्रिया बनाने हेतु बीच-बीच में विचारोत्तेजक प्रश्न पूछें।
6. बालकों की प्रतिभाओं व क्षमताओं का भलीभांति पता लगायें।
7. प्रत्येक पाठ को विस्तृत रूप से गहराई से पढ़ाये।
8. विशिष्ट कक्षाओं का आयोजन कर विषय के विशेषज्ञों द्वारा शिक्षण कार्य करवायें।
9. समय-समय पर मूल्यांकन कर उनकी प्रगति से उन्हें अवगत करायें।
10. प्रतिभा सम्पन्न बालकों को अच्छी पुस्तकें, वैज्ञानिक साहित्य, संदर्भ पुस्तकें व सामग्री उपलब्ध कराई जाये जिसका अध्ययन वे स्वतंत्र रूप से कर सकें। लौटकर वे अपने साथियों के साथ विचारों का आदान-प्रदान कर सकें, अपने ज्ञान को दूसरों में बांट सकें।
11. प्रतिभा सम्पन्न बालकों को शिक्षक चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में रखें, उन्हें त्वरित शिक्षण प्रदान करें त्वरित शिक्षण बालक की सामाजिक व सांवेगिक स्थिति को ध्यान में रखकर किया जाये।
12. तर्क, चिंतन, अनुसंधान पर आधारित पाठ्यक्रम ऐसे बालकों के लिए अधिक उपयोगी होता है।

10.8.2 मंद बुद्धि बालक (slow learner) :-

मंद बुद्धि बालक बौद्धिक दृष्टि से प्रतिभावान बालकों के ठीक विपरीत होते हैं। इनकी बुद्धि लब्धि 70 से कम होती है। अपनी मंद बुद्धि के कारण कक्षा में पिछड़े होते हैं। उनके लिए विद्यालय व कक्षा में समायोजन कठिन होता है व समस्यात्मक बालक के रूप में व्यवहार करने लगते हैं।

मंद बुद्धि बालक की पहचान :-

1. किसी बात को सरलता से नहीं समझ पाते।
2. इनमें अमूर्त (Abstract thinking) चिन्तन का अभाव रहता है।
3. स्वनिर्णय लेने की शक्ति की कमी होती है।
4. आत्मविश्वास की कमी होती है।
5. कक्षा में पीछे बैठना पसंद करते हैं।
6. रटी रटाई बात बता सकते हैं, विषय-वस्तु का अवबोध नही कर पाते।
7. उत्सुक व जिज्ञासु नहीं होते, अधिगम में पिछड़े होते हैं।
8. किसी बात का संतोषजनक उत्तर नहीं दे पाते।

<u>मंद बुद्धि बालक व शिक्षक की भूमिका :-</u>

1. मंद बुदि बालक जो शिक्षित किये जा सकते हैं उन्हें अन्य सम आयु व सामान्य छात्रों के साथ ही रखा जाये, कुछ समय विशेष शिक्षा हेतु नियमित कक्षा से अलग किया जा सकता है।
2. शिक्षक को छात्र के मंद बुद्धि होने के कारणों को माता-पिता से सलाह लेकर पता कर लेना चाहिए और उसी के अनुरूप शिक्षण की व्यावस्था की जाये।
3. मंद बुद्धि बालकों को पढ़ाना, लिखाना बहुत कठिन कार्य होता है। अत: शिक्षक को संवेगात्मक दृष्टि से स्थिर होना चाहिए। उन पर क्रोधित व आक्रोंशित न हों।
4. इन बालकों को जीविकोपार्जन हेतु कुछ कार्य करना सिखाया जाये।
5. जिस कार्य को करने में बालक समर्थ हैं उसे उसी कार्य का प्रशिक्षण दिया जाये।
6. उनको इतनी ही शिक्षा दी जाये जितनी वे मानसिक रूप से ग्रहण कर सकते हैं।
7. बौद्धिक व शारीरिक कार्य उनकी क्षमतानुसार करवाया जाये।
8. ऐसे कार्य करवाये जाये जिससे उनमें काम के प्रति लगन व सामाजिकता का विकास हो जैसे लकड़ी का कार्य, चित्रकला, सिलाई, कताई, बुनाई, सफाई, बागवानी, उपकरणों की मरम्मत आदि।
9. खेल व क्रियाओं पर आधारित शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाये।
10. इन बालकों को क्षमतानुसार खेलकूद, व्यायाम व अन्य प्रतियोगिताओं में भाग लेने हेतु प्रोत्साहित किया जाये।
11. मंद बुद्धि बालकों पर किसी भी प्रकार का कोई दबाव या जोर जरबदस्ती न की जाये, परन्तु उनका पर्याप्त ध्यान रखा जाये।
12. समय-समय पर उनके माता-पिता या अभिभावक को बुलाकर बालक के हित की बात करें।

10.8.3 शारीरिक दोषयुक्त बालक (**Physically Handicapped children**) :-

ऐसे बालक जो शारीरिक निर्योग्यता के कारण सामान्य अभिवृद्धि सीखना व विकास नहीं कर पाते। ये शारीरिक दोष बालक के सीखने व अनुभवों को सीमित कर देते हैं।

शारीरिक दोष के कारण

1. वंशानुक्रम, वातावरण
2. जन्म के समय दुर्घटना
3. गम्भीर बीमारी या दुर्घटना (Brain Injury), मस्तिष्क चोट, दृष्टि दोष, श्रवण दोष, विकलांगता, पोलियो, लिखने बोलने में अक्षमता, मिर्गी (Espilepsy) आदि।
4. हमारे देश में इस प्रकार के दोषों से युक्त (Handicapped) व्यक्तियों की संख्या सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग 10 प्रतिशत है। ऐसे बालकों को विद्यालय में स्वच्छ वातावरण प्रदान किया जाये ताकि इनकी मुख्य समस्या, सामाजिकता व संवेगात्मकता को कम किया जा सके। हीन भावना को दूर कर आत्मविश्वास जाग्रत कर सके उनका विद्यालय व समाज में समायोजन तथा पुनर्स्थापन हो सके।

शारीरिक दोषयुक्त बालक व शिक्षक की भूमिका :-

1. शिक्षक को चाहिए कि वह ऐसे बालकों की आवश्यकताओं व कमियों को पहचानें।
2. शारीरिक दोषयुक्त बालकों की शिक्षा हेतु विषय-वस्तु उनके अनुरूप होनी चाहिए।

3. शिक्षक को उनकी जिज्ञासाओं को शान्त करने योग्य होना चाहिए।

4. शिक्षक बालकों को ऐसा वातावरण प्रस्तुत करें कि वे अपनी हीनता की भावना का परित्याग कर आत्मविश्वास जाग्रत कर सकें। शिक्षक स्वच्छ दृष्टिकोण अपनाते हुए उनके साथ न तो अधिक दया सहानुभूति दर्शायें और न ही तिरस्कार।

5. शिक्षक को इन छात्रों के बीच आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए।

6. शिक्षक बजाय अपनी बात थोपने के उनकी बात ज्यादा सुने, समझे और फिर संतोषजनक उत्तर दें।

7. थोड़े भी अच्छे कार्य करने पर उनकी प्रशंसा अवश्य करें।

8. घृणा, डांट, फटकार के बजाय ऐसे बालकों से प्रेम, सदभाव का व्यवहार करें।

9. सामान्य व इन बालकों के बीच भेदभाव का व्यवहार न करें।

10. मूल्यांकन कार्य पक्षपात रहित किया जाये।

11. श्रवण दोष में कुछ तो ऊँचा सुनते हैं और कुछ बिल्कुल नहीं। ऊँचा सुनने वाले बालक सामान्य बालकों जैसे ही होते हैं। वे शैक्षणिक दृष्टि से ज्यादा पिछड़े नहीं होते। उन्हें कक्षा में आगे बैठाकर व व्यक्तिगत ध्यान देकर नियमित कक्षाओं में पढ़ाया जा सकता है । आवश्यकता पड़ने पर विशेषज्ञ की सहायता ली जा सकती है। बहुत कम या न सुनने वाले बालकों के लिए श्रवण सहायक सामग्री, श्रवण प्रशिक्षण और पतन, बोलने का प्रशिक्षण विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

12. दृष्टि दोष वाले बालक भी वे जो आंशिक रूप से देख सकते हैं और वे जो बिल्कुल नहीं देख सकते हैं, होते हैं। कम देखने वाले बालकों की शिक्षा व्यवस्था की जा सकती है। उन्हें पृथक कक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत सिखाया जा सकता है और कुछ समय सामान्य बालकों के साथ नियमित कक्षा में उन्हें आगे बैठाया जाये व व्यक्तिगत ध्यान दिया जाये । ऐसे बालकों के लिए शिक्षण की मौखिक अभिव्यक्ति बहुत अधिक प्रभावी व सजीवता लिए हुए होनी चाहिए।

13. कम देखने वाले बालकों हेतु कक्षा व्यवस्था उपयुक्त व भौतिक वातावरण अच्छा व उनके अनुकूल होना चाहिए। प्रकाश व्यवस्था, बैठने की व्यवस्था, श्यामपट्ट लेखन व्यवस्था, अक्षरों का बड़ा आकार, सहायक सामग्री का बड़ा आकार, पाठों के प्रस्तुतीकरण हेतु डिक्टाफोन (Dictaphone), रिकार्ढ प्लेयर (Record Player), बोलने वाली पुस्तकें (Talking books) का प्रयोग यथा सम्भव किया जाना चाहिए।

14. बिल्कुल न देख सकने वाले बालकों की शिक्षा का उद्देश्य उन्हें अपने चारों ओर के वातावरण से परिचित कराना, आत्मविश्वास व आत्मसम्मान जगाना हो।

15. अंधे बालकों की शिक्षा का उद्देश्य वही होता है जो सामान्य बालकों की, परन्तु उद्देश्य प्राप्ति हेतु उन्हें अतिरिक्त सहायता व सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है जो उपलब्ध कराना शिक्षक का कर्तव्य बन जाता है।

16. अंधे बालकों के शिक्षण व निर्देशन हेतु प्रशिक्षित अध्यापक हों जो समय-समय पर ऐसे बालकों के लिए कार्यक्रम व शिक्षण सामग्री तैयार कर छात्रों को उपलब्ध करायें। उन्हें उत्कीर्ण पाठन और लेखन (Brail reading and writing) प्रदान करें।

17 स्पर्शीय अनुभव (Touch Experience) तथा मौखिक व्याख्या (Verbal Explanation) जैसी विधियों का प्रयोग कर इन बालकों के सुनने, समझने व याद रखने की क्षमता का अधिक से अधिक विकास किया जा सकता है।

18. कक्षा का आकार सीमित हो, केवल 6 से 8 बच्चे हों ताकि व्यक्तिगत शिक्षण व उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षण हो सके।

19. उन्हें सीखने हेतु प्रोत्साहित व स्वक्रिया के लिए प्रेरित किया जाये।

20. अंधे बालकों का व्यवसायिक समायोजन तथा पुनर्स्थापन करना बहुत आवश्यक है। आज ऐसे बालक कई सफल कार्यकम जैसे खेती-बाड़ी, दुकानदारी, बाबूगिरी, कारीगरी, नर्सरी, संगीत, वाद्‍यंत्रों का प्रयोग, शिक्षण, टाइपिंग व अन्य व्यवसाय को बखूबी निभा रहे हैं।

अन्य विकलांगता में प्रमस्तिष्क, संस्तम्भ, पोलियो, मिर्गीग्रस्त आदि प्रकार के बालक भी होते हैं। ऐसे बालकों का शैक्षिक कार्यकम पूर्णत: व्यक्तिगत व बालक की आवश्यकतानुसार होना चाहिए।

सुझाव:-

1. भौतिक चिकित्सा की व्यवस्था व प्रशिक्षण प्रदान किया जाये। कमजोर मांसपेशियों को मजबूत करने हेतु मालिश, योग, व्यायाम, ताप, चिकित्सा, पौष्टिक आहार, अन्य मनोवैज्ञानिक चिकित्सा आवश्यक होती है।

2. इनके प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण बनाया जाये, न अधिक दया और न अधिक उपेक्षा प्रदान की जाये।

3. उनके साथ बहुत ही सावधानी में व्यवहार किया जाये। शिक्षक को चाहिए कि वह अपने सक्रिय सहयोग से बालकों को अपने पैरों पर खड़ा होना, उन्हें स्वावलम्बी बनाना सिखाये । उसमें आत्मविश्वास जागश्त करे, स्वयं कार्य न करें बल्कि उन्हें कार्य करने हेतु प्रेरित करे।

4. उनके इलाज हेतु स्वयं-सेवी संस्थाओं, क्लबों से सम्पर्क स्थापित कर यथा सम्भव इलाज हेतु सहायता प्रदान करे।

5. उनकी सृजनात्मक क्षमताओं को पहचानें व उन्हें विकसित करने का प्रयास करें।

6. ऐसे बालकों के कल्याण हेतु शिक्षक, माता-पिता, विशेषज्ञों सभी के सामूहिक प्रयासों द्‍वारा योजना बनाई जाये व क्रियान्वित की जाये।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

06. असाधारण बालकों का वर्गीकरण प्रस्तुत करें।

07. असाधारण बालकों के निर्देशन हेतु कुछ सामान्य सुझाव।

08. विशिष्ठ (असाधारण) बालकों बुद्धिलब्धि................से ऊपर या ....से कम होती है!

09. मंद बुद्धि के बालकों के शिक्षण में किन का ध्यान रखना चाहिए?

10.9 साराश (**summary**):

एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर सर्वागीण प्रभाव व्यक्तित्व है।

- व्यक्तित्व का सम्बन्ध सम्पूर्ण व्यवहार से होता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व वातावरण के साथ समायोजन को प्रस्तुत करता है। व्यक्तित्व की गति समाज में ही अनुभव की जा सकती है। व्यक्ति विशेष का व्यवहार एक उत्तेजक का कार्य करता है।
- मानव का व्यवहार ,बाहृय स्वरुप और अन्तर्निहित शक्तियों का नाम ही व्यक्तित्व है।
- व्यक्ति जो सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप अपना व्यवहार करता है उसके व्यवहार को अनुशासित व मान्य व्यवहार कहा जाता है लेकिन सामाजिक मान्यताओं से परे जो व्यक्ति व्यवहार करता है उसे असामान्य व्यवहार कहा जाता है। असामान्य व्यवहार किसी समाज के किसी समय विशेष से सम्बन्धित होता है। असामान्य व्यवहार सामान्य संवेगात्मक विकास का ही एक भाग होता है। संवेग मानव के बाहृय व्यवहार को प्रभावित करता है।
- बालक के असामान्य व्यवहार का कारण आवश्यकताओं की पूर्ति होना, अनुवांशिकता, वातावरण व शारीरिक अयोग्यता होती है।
- व्यक्तित्व के विकास में सबसे प्रमुख भूमिका शिक्षक की होती है। शिक्षक को चाहिये कि वह छात्रों के विकास हेतु उनकी भावना, कियाशीलता रूचि, आयु, योग्यता, क्षमता, पारिवारिक पृष्ठभूमि, कर्मभावना, कक्षा का वातावरण, भयमुक्त, राग द्वेष रहित, मित्रवत, उचित मार्गदर्शन व निष्पक्ष मूल्यांकनकर्ता के रूप में हो।
- लोवेल ने कुसमायोजित व्यवहारों को तीन वर्गो में रखा है - (1) अनुशासन सम्बन्धी (2) मन, शारीरिक (3) सांवेगिक।
- विद्यालयी बालकों में अनेक प्रकार की विशिष्ट समस्याएँ पाई जाती हैं. झूठ बोलना, चोरी करना, कक्षा से भाग जाना, कक्षा में देर से आना, परीक्षा में नकल करना, झगड़ा करना, अनुशासनहीनता, दिवास्वप्न देखना, दांत से नाखून काटना, बाल तोड़ना, अंगूठा चूसना, एकान्तप्रिय बालक, स्वर दोष आदि।
- झूठ बोलना, चोरी करना, कक्षा में देर से आने जैसी समस्याओं के समाधान हेतु शिक्षक को माता-पिता व अभिभावक के साथ विचार-विमर्श कर हल निकालना चाहिये।
- शिक्षक का सकारात्मक दृष्टिकोण, श्रेष्ठ शिक्षण व निर्देशन से इन समस्याओं को कम किया जा सकता है।
- छात्र अनुशासनहीनता के कारण व्यक्तिगत, सामाजिक. राजनैतिक, उचित निर्देशन का अभाव, नैतिक शिक्षा का अभाव, अच्छी आदतों व संस्कारों के अभाव होते हैं।
- अनुशासनहीनता को दूर करने में शिक्षकों के सामूहिक प्रयास, श्रेष्ठ शिक्षण, शिक्षक का आदर्श स्वरूप, छात्रों का राजनीति से दूर रहना, परीक्षा प्रणाली मे सुधार करना, छात्रों को पर्याप्त सुविधा प्रदान करना है।
- दिवास्वप्न का सम्बंध मन की स्थिति से होता है। दिवास्वप्न को रोकने के लिए छात्र को मानसिक क्रियाओं में व्यस्त रखा जाये।
- एकान्तप्रिय बालक स्वयं बहु त उदास, दुखी, असुरक्षित, दिवास्वप्न देखने वाले होते हैं। ऐसे बालकों के साथ शिक्षक दया, सहानुभूति, प्रेम का व्यवहार करें। उनके आत्मविश्वास को प्रशंसा द्वारा जाग्रत करें।

- विचारों के आदान प्रदान में जब बालक को कठिनाई होती है तो उसमें उच्चारण व लय दोष जैसे विकार पाये जाते हैं। शिक्षक बालक के गलत उच्चारित शब्द को पहचानें। अभ्यास, पुनर्वलन, चित्र, चार्ट, मॉडल व अन्य सहायक सामग्री द्वारा सावधानीपूर्वक संशोधन करवायें।
- असाधारण बालकों को चार भागों में विभाजित किया गया है - शारीरिक दृष्टि से, मानसिक दृष्टि से, सामाजिक दृष्टि से, संवेगात्मक दृष्टि से।
- असाधारण बालकों के किसी समूह की शिक्षा से सम्बन्धित योजना बनाते समय शिक्षक को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा संवेगात्मक स्थिति को अच्छी प्रकार जानना आवश्यक है।
- प्रतिभाशाली व मंद बुद्धि बालकों की संख्या विद्यालयी जनसंख्या का लगभग एक प्रतिशत होती है
- प्रतिभा सम्पन्न बालकों की प्रतिभाओं व क्षमताओं को भलीभाँति पहचान कर शिक्षक उन्हें विशेष विषय-वस्तु का ज्ञान गहनता से कराये। समस्या समाधान व ह्यूरिस्टिक विधि द्वारा शिक्षण कार्य करवाये। तर्क चिंतन व अनुसंधान पर आधारित उपयोगी पाठ्यक्रम हो।
- मंद बुद्धि बालक वे होते हैं जो सरलता से समझ नहीं पाते। स्व निर्णय क्षमता, आत्मविश्वास, चिंतन का अभाव होता है, उत्सुक व जिज्ञासु नहीं होते।
- मंद बुद्धि बालकों के साथ शिक्षक को संवेगात्मक दृष्टि से स्थिर होना चाहिए। उन्हें उनकी क्षमतानुसार सिखाया जाये, जीविकोपार्जन हेतु प्रेरित किया जाये।
- शारीरिक दोषयुक्त बालकों के दोष का प्रकार व कारण जानकर उनके साथ शिक्षक का व्यवहार आत्मीयतापूर्ण होना चाहिये।
- श्रवण दोष वाले बालकों के लिए श्रवण सहायक सामग्री और पठन, बोलने का प्रशिक्षण होना चाहिए।
- दृष्टि दोषयुक्त बालकों को व्यक्तिगत शिक्षण, प्रकाश व्यवस्था, बैठने की व्यवस्था, भौतिक वातावरण, सहायक सामग्री उपयुक्त होनी चाहिए।
- शारीरिक दोषयुक्त बालकों का व्यावसायिक समायोजन व पुनर्स्थापन करना परम आवश्यक है।

10.10 शब्दावली (Glossary) :

व्यक्तित्व	-	मनोदैहिक तंत्रों का वह गत्यात्मक संगठन जो व्यक्ति के वातावरण के साथ।
असामान्य व्यवहार	-	जिससे समाज पर बुरा प्रभाव पड़े या जो व्यक्ति के स्वयं के लिए कठिनाइयाँ या परेशानियाँ पैदा करे।
कुसमायोजित व्यवहार	-	जिसमें अनुशासन सम्बन्धी मनोशारीरिक सम्बन्धी या संवेगात्मक विकार हो।
असाधारण बालक	-	जो शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक या/और सामाजिक दृष्टि से सामान्य गुणों से इस सीमा तक विचलित होते हैं कि उन्हें

		अपनी अधिकतम क्षमता के अनुसार स्वयं का विकास करने के लिए विशिष्ठ शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।
प्रतिभाशाली बालक	-	बौद्धिक दृष्टि से वह किसी बात को बड़ी शीघ्रता से सीख लेते हैं।
मंद बुद्धि वाले बालक	-	बुद्धिलब्ध 70 से कम
शारीरिक दोषयुक्त बालक	-	जो दोष के कारण सामान्य सीखना व विकास नहीं कर पाता।
अनुशासनहीनता		जान-बूझकर निर्धारित नियमों का उल्लंघन।
दिवास्वप्न	-	कल्पनाओं में खोये रहना।

10.11संदर्भ पुस्तके (**Referencnce books**)

1. Skinner Charles F.	:	Educational Psychology.
2. R.K. Rajoria	:	Development of learner & teaching learning process.
3. S.P Choubey & Choubey	:	Fundamental of Educational Psychology.
4. A.B. Bhatnagar	:	Advanced Educational Psychology.
5. B.Kuppuswamy	:	Advanced Educational Psychology.
6. Raizada,B.S.&Dave	:	Child Psychology, Edu.1992, Rajasthan Hindi Granth Academy

10.12 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर / उत्तर संकेत

(Answer/Hints to the Self-learning Exercises)

01. वह व्यक्ति जो सामाजिक मान्यताओं के अनुसार करता है उसका व्यवहार सामान्य कहलाता है परन्तु जो व्यवहार समाज पर बुरा प्रभाव डालता है या स्वयं के लिए हानिकारक है या उसको कठिनाइयों में डाल सकता है वह असामानय व्यवहार कहलायेगा।

02. (i) व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति न होना।
    (ii) परिवार का बालक के प्रति उपेक्षा और उसकी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न करना।
    (iii) विद्यालय का भौतिक, शैक्षिक या सामाजिक वातावरण में कमियों।

03. अनुशासन सम्बन्धी, मनोशारीरिक संवेगात्मक

04. कक्षा में न आना, देर से आना, परीक्षा में नकल करना, अनुशासनहीनता
    सुधार के लिए देखें - 10.7.3, 10.7.4, 10.7.5

05. देखें 10.7.9 के अंतिम भाग

06. (i) शारीरिक, (ii) मानसिक, (iii) सामाजिक, (iv) संवेगात्मक दृष्टि से इतने विचलित कि विशिष्ट प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता

07. देखें 10.8 के सामान्य सुझाव

08. 120 - 70

09. 10.8 देखें

10.13 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-end Questions)

1. व्यक्तित्व को परिभाषित कीजिये।
2. सामान्य व असामान्य व्यवहार किसे कहेंगे?
3. विद्‍यालय में अनुभव की जाने वाली विशिष्ट समस्याओं की सूची तैयार कीजिए।
4. कक्षा में देर से आने वाले बालकों के साथ शिक्षक को कैसे व्यवहार करने चाहिए?
5. दिवास्वप्न (Day dreaming) व एकान्तप्रिय (Isolated) बालक में क्या समानता होती है? दोनों समस्याओं का उपचार आप कैसे करेंगे?
6. उच्चारण व लय सम्बन्धी दोष को कम करने के लिए अध्यापक को क्या-क्या उपाय करने चाहिए?
7. प्रतिभाशाली बालक व मंद बुदि बालक में क्या अंतर होता है?
8. प्रतिभाशाली व मंद बुद्धि बालकों के लिए पाठ्‍यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए?
9. प्रतिभाशाली व मंद बुद्धि बालकों हेतु किस प्रकार की शिक्षण विधियों का प्रयोग शिक्षक को करना चाहिए?
10. शारीरिक दोषयुक्त बालक कौन-कौन से होते हैं? उनके साथ शिक्षक का व्यवहार किस प्रकार का होना चाहिए?
11. विशिष्ट बालकों हेतु विशिष्ट कक्षाओं की क्या आवश्यकता है?
12. विकलांग बालकों के समायोजन हेतु अपने सुझाव दीजिये।

(UNIT 11)

बुद्धि (मल्टीपल एवं कृत्रिम) का सम्प्रत्यय एवं सिद्धांत, ज्ञान तथा बुद्धि मे अंतर, कृत्रिम बुद्धि

Intelligence (Multiple and Artificial) concepts and Theories, Difference between Knowledge and intelligence, Artificial Intelligence)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

11.0 उद्देश्य (Objectives)

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

11.2 बुद्धि का संप्रतत्य (Concept of Intelligence)

11.3 मल्टीपल बुद्धि (Multipe Intelligence)

11.4 कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence)

स्वपरख प्रश्न (Check your Progress)

11.5 बुद्धि के सिद्धान्त (Theories of Intelligence)

- 11.5.1 स्पीयरमैन द्विकारक सिद्धान्त (Spearman’s Two-factor Theory)
- 11.5.2 थर्स्टन का समूह तत्व सिद्धान्त (Thurston’s Group Factor Theory)
- 11.5.3 बहु कारक सिद्धान्त (Multiple Theory)
- 11.5.4 पदानुक्रमिक सिद्धान्त (Hierarchical Theory)
- 11.5.5 प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त (Process Oriented Theories)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

11.6 ज्ञान तथा बुद्धि में अन्तर (Difference between Knowledge and Intelligence)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

11.7 कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

11.8 सारांश (Summary)

11.9 शब्दावली (Glossary)

11.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

11.11 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर संकेत (Answer/Suggestions to Self-Learning Exercises)

11.12 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Questions)

11.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

1. बुद्धि के सम्प्रत्यय को समझ सकेंगे।
2. मल्टीपल तथा कृत्रिम बुद्धि में अन्तर कर सकेंगे।
3. द्विकारक सिद्धान्त, बहुकारक सिद्धान्त, समूहकारक सिद्धान्तों को समझकर इनके बीच अन्तर कर सकेंगे।
4. ज्ञान तथा बुद्धि में अन्तर कर सकेंगे।
5. कृत्रिम बुद्धि की व्याख्या कर सकेंगे।
6. कृत्रिम बुद्धि के उदाहरण का वर्णन कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना (Introduction):

बुद्धि (Intelligence) एक ऐसा शब्द है जिसे आम बोलचाल की भाषा मे सामान्यतः प्रयोग किया जाता है। जब हम कहते हैं कि वह "बड़ा बुद्धिमान है" "उसके पास बुद्धि नहीं हैं" "उसकी तो बुद्धि ही मारी गई हैं"। इन सभी वाक्यों से बुद्धि के विस्तृत रूप का पता चलता है। अब प्रश्न उठता है कि मनुष्य अन्य पशुओं से बुद्धिमान होता है। पशुओं में कौन अधिक बुद्धिमान होता है। मानव समाज में कुछ व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों से अधिक बुद्धिमान माने जाते हैं - वैज्ञानिक, डाक्टर, इंजीनियर, कवि, लेखक। इन सभी प्रश्नों से निष्कर्ष निकलता है कि बुद्धि क्या है? मनोवैज्ञानिकों द्वारा बुद्धि के अलग-अलग रूपों को बताया गया है। आज भी मनोवैज्ञानिक निरन्तर प्रयासरत हैं कि बुद्धि क्या हैं? उसका स्वरूप और लक्षण क्या है? परन्तु जो भी प्रयास बुद्धि को जानने के लिए किये गये हैं उनसे मनोवैज्ञानिकों को बहुत लाभ हुए हैं। शिक्षकों को इस प्रकार से बुद्धि की प्रकृति तथा विभिन्न आयामों का ज्ञान शिक्षक को अपने छात्रों की मानसिक योग्यता का आंकलन तथा उसका उनके शिक्षण विधियों की योजना बनाने में काफी सहायक हो सकता है।

11.2 बुद्धि का संप्रत्यय (Concept of Intelligence):

दिन प्रतिदिन की भाषा मे हम तेजी से सीखना, समझना, स्मरण, तार्किक, चिन्तन आदि गुणों के लिए लिए बुद्धि शब्द का प्रयोग करते हैं परन्तु शिक्षा मनोविज्ञान में बुद्धि का विशेष अर्थ है। शुरुआती दौर से ही मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि को परिभाषित करने का प्रयास किया है। बुद्धि की पहली औपचारिक परिभाषा बोरिंग (Boring,1923) द्वारा दी गयी। बोरिंग के अनुसार, "बुद्धि परीक्षण जो मापता है वही बुद्धि है।" "Intelligence is What Intelligence test measures." परन्तु बोरिंग द्वारा दी गई बुद्धि की परिभाषा से इसका स्वरूप का पता नहीं चलता क्योंकि बुद्धि परीक्षण कई हैं। किस बुद्धि परीक्षण के मापन को बुद्धि कहा जायेगा। बोरिंग के बाद अनेकों मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि को अपने ढंग से परिभाषित किया। सुविधा की दृष्टिकोण से इन परिभाषाओं को तीन भागों में बाँटा गया -

1. मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी गई ऐसी परिभाषाएँ जिन्हें वातावरण के साथ समायोजन के आधार पर परिभाषित किया गया। इन परिभाषाओं के आधार पर तीव्र बुद्धि वाला व्यक्ति अपने आपको वातावरण के साथ तीव्र गीत से समायोजित कर लेता है।

2. सीखने की क्षमता के आधार पर बुद्धि की दूसरी श्रेणी बनाई गयी। अर्थात जो व्यक्ति सीखने की क्षमता जितनी अधिक रखता है वह उतना ही बुद्धिमान माना जायेगा।

3. मनोवैज्ञानिकों का ऐसा समूह जो केवल अमूर्त चिन्तन (Abstract reasoning) (की क्षमता को बुद्धि मानता हो अमूर्त चिन्तन की क्षमता अधिक होने पर व्यक्ति को बुद्धिमान माना जाएगा।

उपरोक्त तीनों परिभाषाओं में बुद्धि के सिर्फ एक ही पक्ष को आधार माना गया है जबकि बुद्धि में अनेक क्षमताएँ सम्मिलित होती हैं। इसी प्रकार वेश्लर, रॉबिन्सन एवं राबिन्सन, स्टोडार्ड द्वारा भी बुद्धि को परिभाषित किया गया।

वेश्लर (Wechsler,1939) के अनुसार, "बुद्धि एक समुच्चय या सांगोलिक क्षमता है जिसके सहारे व्यक्ति उद्देश्यपूर्ण किया करता है, विवेकशील चिन्तन करता है तथा वातावरण के साथ प्रभावकारी ढंग से समायोजन करता है।"

"Intelligence is the aggregate or global capacity of the individual to act purposefully to think rationally and to deal effectively with his environment" - Wechsler, 'Measurement of Adult Intelligence, 1939.

स्टोडार्ड (Stoddard,1941) ने बुद्धि की व्यापक परिभाषा देते हुए कहा कि "बुद्धि उन क्रियाओं को समझने की क्षमता है जिनकी विशेषताएँ हैं - (1) कठिनता (2) जटिलता (3) अमूर्तता (4) मितव्ययता (5) किसी लक्ष्य के प्रति अनुकूलनशीलता (6) सामाजिक मूल्य (7) मौलिकता की उत्पत्ति तथा कुछ परिस्थितियों में वैसी क्रियाओं को करना जिसमें शक्ति की एकाग्रता तथा सांवेगिक कारकों का प्रतिरोध दिखता है।"

Intelligence is the ability to understand activities that are characterized by (i) difficulty (ii) complexity (iii) abstractness (iv) economy (v) adaptivness (vi) social values (vii) the emergence of originals and to maintain such activities under condition that demand a concentration of energy and a resistance to emotinal factors.

थर्स्टन (Thurstone) ने बुद्धि को "आठ योग्यताओं का पुंज" कहा है। उनके अनुसार, निम्नलिखित आठ योग्यताओं के द्वारा बुद्धि का गठन होता है -

1.	स्थानिक योग्यता (Spatial Ability)	S
2.	संख्या गणना योग्यता (Number Ability)	N
3.	शाब्दिक योग्यता (Verbal ability)	V
4.	वाक प्रवाह (Word fluency)	W
5.	स्मरण शक्ति (Memory)	M
6.	आगमन तर्क योग्यता (Inductive Reasoning Ability)	I
7.	निगमन तर्क योग्यता (Deductive Reasoning Abilty)	D
8.	पर्यवेक्षण गति (Perceptual speed)	P

उपरोक्त परिभाषाओं से निष्कर्ष निकलता है कि बुद्धि एक सामान्य क्षमता न होकर, कई क्षमताओं का योग है। वेश्लर, स्टोडार्ड तथा थर्स्टन की परिभाषाओं के विश्लेषण के उपरान्त निम्न तथ्य सामने आते है-

(i) बुद्धि अनेक क्षमताओं का समुच्चय (aggregate) है।

(ii) बुद्धि के सहारे व्यक्ति किसी समस्या के समाधान में पूर्व अनुभवों का लाभ उठा पाता है व उसमें सूझ उत्पन्न होती है।

(iii) बुद्धि के सहारे व्यक्ति उद्देश्यपूर्ण क्रियाएँ (Purposeful acts) करता है।

(iv) अधिक बुद्धिमान व्यक्ति अपने आपको वातावरण के साथ आसानी से समायोजित कर लेता है।

(v) बुद्धिमान व्यक्तियों के कार्यो में मौलिकता अधिक होती है साथ ही वे कठिन व जटिल कार्यो को समझकर करते हैं।

(vi) बुद्धिमान व्यक्ति के सोचने का तरीका विवेकपूर्ण तथा तर्कयुक्त होता है तथा उसमें अमूर्त चिन्तन की क्षमता अधिक होती है।

11.3 मल्टीपल बुद्धि (Multiple Intelligence):

हावर्ड गार्डनर (Howard Gardner) ने अपने द्वारा दिये बुद्धि सिद्धान्त के माध्यम से मल्टीपल बुद्धि के बारे में बताया। हावर्ड के अनुसार हम सभी में सात मापन बौद्धिक क्षमताएँ होती हैं जो कि निम्न है-

(i) तार्किक - गणीतीय (Logical-Mathematical)

(ii) शाब्दिक - भाषायी (Verbal-Linguistic)

(iii) स्थानिक - यांत्रिकी (Spatial-Mechanical)

(iv) संगीतमय (Musical)

(v) शारीरिक -गतिबोधन (Bodily-Kinesthetic)

(vi) अन्तर व्यक्तिक सामाजिक (Interpersonal social)

(VII) अन्तर व्यक्तिक स्व:ज्ञान (Interpersonal self knowledge)

हावर्ड के अनुसार, सामान्यत: विद्यालय दो प्रकार की मानसिक क्षमताओ- तार्किक-गणितीय तथा शाब्दिक को ही पढ़ाते, परीक्षित तथा पुरस्कृत करते हैं। हावर्ड ने कहा कि जिन विद्यार्थियों में शाब्दिक तथा तार्किक गणितीय क्षमताएँ पाई जाती हैं वे विद्यालय में अच्छा कार्य करते हैं। इन दो क्षमताओं के न होने पर बालक असफल हो जाता है चाहे वह बुद्धि के दूसरे रूप में कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो।

थार्नडाइक (Thorndike) तथा गिलफर्ड (Guilford) 1967 के बहुकारकीय सिद्धान्त द्वारा भी मल्टिपल बुद्धि का पता चलता है। थार्नडाइक के अनुसार बुद्धि कई मानसिक क्रियाओं व क्षमताओं का योग है। गिलफर्ड (Guilford 1967), ने 120 तत्व बताये तथा इन्हें तीन आयामों में विभाजित किया। ये तीन आयाम हैं - (i) संक्रिया (Operation), (ii) विषयवस्तु (Content), (iii)उत्पादन (Product)।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि मल्टीपल, बुद्धि से तात्पर्य है मानसिक क्षमताओं का सक्रिय समष्टि।

11.4 कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence):

वर्तमान बुद्धि का नया रूप प्रचलित है जिसे कृत्रिम बुद्धि के नाम से जाना जाता है। कृत्रिम बुद्धि का प्रयोग तकनीकी के माध्यम से लिया जाता है। कृत्रिम बुद्धि विज्ञान एवं तकनीकी का क्षेत्र है जो कि कम्प्यूटर विज्ञान, मनोविज्ञान, भाषा, गणित, इंजीनियरिंग आदि क्षेत्रों पर आधारित होता है। कृत्रिम बुद्धि से तात्पर्य कम्प्यूटर जैसी तकनीकी को बुद्धि प्रदान करना है अर्थात ऐसा क्म्प्यूटर विकसित करना जो सोच सकता हो देख सकता हो, चल सकता हो तथा महसूस कर सकता हो। मानवीय बुद्धि के साथ क्म्प्यूटर को सम्बंधित करना कृत्रिम बुद्धि का एक बड़ा आधार है।

स्वपरख प्रश्न (Cheak Your Progress)

01 बुद्धि का समप्रतत्य संक्षेप मे स्पष्ट कीजिये। (Discuss in brief the concept of Intelligence)

02 मल्टीपल बुद्धि से आप क्या समझते है? (What do you understand by Multiple Intelligence)?

11.5 बुद्धि के सिद्धान्त (Theories of Intelligence):-

बुद्धि के स्वरूप की व्यापक व्याख्या बुद्धि के सिद्धान्तों द्वारा ही सम्भव है। आज बुद्धि के कई सिद्धान्त प्रचलित हैं। बुद्धि के इन सिद्धान्तों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है -

(i) कारकीय सिद्धान्त (Factorial Theories)

(ii) प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त (Process-Oriented Theories)

(अ) बुद्धि का कारकीय सिद्धान्त (Factorial Theories of Intelligence):-

इस श्रेणी के अन्तर्गत बुद्धि को कई तत्वों का संगठन कहा गया है। इन तत्वों को ज्ञात करने के लिए कारक विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है। कारकीय सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्नलिखित सिद्धान्त आते हैं -

(i) स्पीयरमैन का द्विकारक सिद्धान्त (Spearman’s Two Factor Theory)

(ii) थर्स्टन का समूह कारक सिद्धान्त (Thurstone Group Factor Theory)

(iii) बहु कारक सिद्धान्त (Multi-factor Theory)

(iv) पदानुक्रमिक सिद्धान्त (Hiererchial Theory)

11.5.1 स्पीयरमैन द्विकारक सिद्धान्त (Spearman's Two Factor Theory):-

स्पीयरमैन के अनुसार, "बुद्धि एक सर्वशक्तिमान सामान्य मानसिक शक्ति है जो समस्या समाधान में हमारी मदद करती है एवं परिस्थितियों से समायोजन करने में हमारी सहायता करती है।"

Intelligence is all pervalling mental power which helps us to solve problems and make successful adjustment to new situations."

स्पीयरमैन ने 1904 में द्विकारक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इनके अनुसार बुद्धि के संगठन में मुख्य रूप से दो तत्व सम्मिलित होते हैं -

(i) सामान्य तत्व (General Factor or 'g' factor)

(ii) विशिष्ठ तत्व (Specific factor or 'g' factor)

स्पीयरमैन के अनुसार इसको 'g' कारक सभी मानसिक क्रियाओं को प्रभावित करता है। इसकी मात्रा व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न होती है इसलिए मानसिक उर्जा (Mental energy) की संज्ञा दी गयी है। g कारक स्थायी होता है। जिस व्यक्ति में g कारक जितना अधिक होगा उतना ही वह मानसिक क्रियाओं को करने में प्रवीण होता है। g कारक को जन्मजात कारक (innate factor) भी कहा जाता है क्योंकि इस पर प्रशिक्षण (training) तथा पूर्व अनुभवों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

हर मानसिक कार्य एक दूसरे से अलग होता है इसलिए हर मानसिक कार्य को करने के लिए कुछ विशिष्ठता की भी आवश्यकता पड़ती हैं। इसे s कारक कहा जाता है। व्यक्ति में एक समय में अनेकों विशिष्ठ तत्व पाये जाते हैं। एक ही व्यक्ति में s कारक की मात्रा अलग-अलग मानसिक कार्यों पर निर्भर करती है। इसका स्वरूप परिवर्तनशील होता है। g कारक (g factor) का प्रभाव s कारक (s factor) पर पड़ता है। g कारक का प्रभाव s कारक पर कितना पड़ता है, इसका पता दोनों के बीच सहसम्बन्ध पर निर्भर करता है।

g - factor

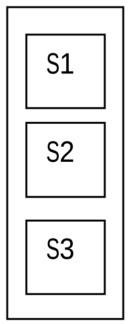

इस प्रकार किसी भी मानसिक कार्य को करने के लिए g कारक तथा s कारक की आवश्यकता होती है। g कारक को स्पीयरमैन द्वारा ज्यादा महत्वपूर्ण माना गया क्योंकि g कारक के बिना किसी भी मानसिक क्रिया को करने में सफलता नहीं मिलती इसलिए इस सिद्धान्त को g कारक सिद्धान्त (g factor Theory) भी कहा जाता है।

परन्तु स्पीयरमैन के द्विकारक सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि अन्य

मनोवैज्ञानिकों ने कहा कि बुद्धि की व्याख्या दो कारकों के आधार पर नहीं की जा सकती है क्योंकि बुद्धि के संगठन में कई कारक सम्मिलित होते हैं।

11.5.2 थर्स्टन का समूह कारक सिद्धान्त (Thurstone Group Factor Theory):-

थर्स्टन ने अपने बुद्धि के स्वरूप में 7 मानसिक क्षमताओं (Mental abilities) के बारे में बताया। थर्स्टन ने बताया कि इन सात कारकों में से दो या तीन कारक मिलकर एक समूह बना लेते हैं अर्थात इन क्षमताओं का एक प्रधान कारक होता है। ये सभी मानसिक क्षमतायें एक दूसरे से सह-सम्बन्धित होती है तथा आपस में मिलकर एक समूह का निर्माण करती है। प्रत्येक समूह का प्रतिनिधित्व करने वाले कारक को प्रधान क्षमता (Primary ability) कहा जाता है।

I

Primary ability

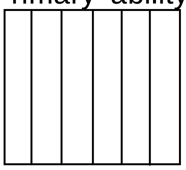

Group of Mental ability

II

Primary ability

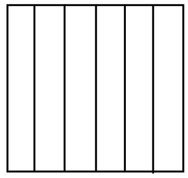

Group of Mental ability

इस पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवीं आदि मानसिक क्षमताओं के प्रत्येक समूह का एक प्रधान कारक (Primary ability) होता है। इस प्रकार थर्स्टन के अनुसार बुद्धि में कई मानसिक क्षमताओ के समूह होते हैं तथा प्रत्येक समूह का एक प्रधान कारक होता है। अलग-अलग समूह के प्रधान कारकों में कोई सह-सम्बंध नहीं होता है जबकि प्रत्येक समूह की मानसिक क्षमताओं के बीच सह-संबन्ध पाया जाता है। थर्स्टन द्वारा सात प्रधान मानसिक क्षमताओं को बताया गया जो कि निम्न हैं-

शाब्दिक अर्थ योग्यता (Verbal meaning ability):-

इसे v शब्द द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। शब्द तथा वाक्यों को समझने की क्षमता को शाब्दिक अर्थ क्षमता कहा जाता है।

(ii) शब्द प्रवाह योग्यता (Word fluency ability) -

इसे W शब्द द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इसमें कुछ शब्द दिये जाते हैं यदि बालक दिये गये शब्दों में से असंबंधित शब्द सोचता है तो इसे शब्द प्रवाह क्षमता कहा जाता है।

(ii) स्थानिक योग्यता (Spatial Ability):-

इसे 'S' अक्षर से सम्बोधित किया जाता है। जो स्थान दिया जाता है उसमें बच्चों के काल्पनिक परिचालन को स्थानिक क्षमता कहा जाता है।

(iv) आंकिक योग्यता (Numerical Ability or N):-

इसे 'N' अक्षर से प्रदर्शित किया जाता है। शुद्धता व तेजी से आंकिक गणना करने की क्षमता को आंकिक क्षमता कहा जाता है।

(v) तर्क योग्यता (Reasoning Ability):-

इसे 'R' अक्षर से प्रदर्शित किया जाता है। वाक्यों द्वारा नियम बनाने की क्षमता को "तर्क योग्यता" के अन्तर्गत रखा जाता है।

(vi) स्मृति योग्यता (Memory Ability):-

इसे 'M' अक्षर से प्रदर्शित किया जाता है। किसी पाठ को याद कर लेने की क्षमता को स्मृति योग्यता कहा जाता है।

(vii) प्रत्यक्षणात्मक गति योग्यता (Perceptual Speed Ability):-

इसे 'P' अक्षर से सम्बोधित किया जाता है। प्रत्यक्षणात्मक गति क्षमता से तात्पर्य किसी वस्तु का विस्तृतता के साथ तेजी से प्रत्यक्षण करना होता है।

एटकिन्सन, एटकिन्सन तथा हिलगार्ड (Atkinson, Atkinson and Hilgar) द्वारा थर्स्टन के सिद्धान्त की समीक्षा की गयी, तथा इसमें कुछ दोष भी बताये -

(i) थर्स्टन के अनुसार, प्रधान क्षमतायें एक दूसरे से सम्बन्धित नहीं होती है जबकि इन मनोवैज्ञानिकों ने पाया कि प्रधान क्षमताएँ एक दूसरे से पूर्ण रूप से अलग न होकर कुछ समय तक सहसम्बधित भी होती है।

(ii) चूँकि थर्स्टन द्वारा स्पीयरमैन के g कारक को अस्वीकार किया गया था परन्तु जब सात प्रधान क्षमताएँ आपस में सहसंबन्धित हो जाती है तो यहाँ पर g कारक को समर्थन मिलता है। लेकिन थर्स्टन के सिद्धान्त को स्पीयरमैन के सिद्धान्त से अधिक मान्यता मिली है।

11.5.3 बहु कारक सिद्धान्त (Multi factor Theory):-

बुद्धि के बहु कारक सिद्धान्त के अन्तर्गत थार्नडाइक (Thorndike) तथा गिलफोर्ड के सिद्धान्तों जो रखा गया है -

थार्नडाइक (Thorndike) के अनुसार, बुद्धि कई छोटे-छोटे तत्वों से मिलकर बनी होती है। अर्थात कई तत्वों का समूह होती है तथा प्रत्येक तत्वों में विशिष्ट मानसिक योग्यता Specific Mental ability) होती है। इस प्रकार थार्नडाइक के बहु कारक सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि कई विशिष्ट मानसिक योग्यताओं का समुच्चय है। इसमें सामान्य बुद्धि जैसी कोई चीज नहीं होती है। गार्डनर मरफी (Gardner Murphy) के अनुसार "एक क्षेत्र की प्रतिभा का दूसरे क्षेत्र की प्रतिभा (Talent) के साथ एक निश्चित सकारात्मक संबन्ध होता है।" अर्थात दो मानसिक क्रियाओं के बीच सहसम्बन्ध उनके बीच पाये जाने वाले उभयनिष्ठ तत्वों (Common elements) पर निर्भर करता है। दो मानसिक क्रियाओं के बीच उभयनिष्ठ तब जितने अधिक होंगे उतना ही दोनों के बीच सहसम्बन्ध धनात्मक होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि थार्नडाइक ने स्पीयरमैन 'g' कारक की जगह उभयनिष्ठ तत्व (Common elements) बताए। मानसिक क्रियाओं के स्वरूप के बदलने पर उभयनिष्टता (Commonness) कम हो जाती है और दोनों मानसिक क्रियाओं के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध भी कम हो जाता है।

उपरोक्त व्याख्या के आधार पर कहा जा सकता है कि थार्नडाइक तथा स्पीयरमैन के बुद्धि सिद्धान्तों में बहु त अधिक अन्तर नहीं है क्योंकि स्पीयरमैन के 'g' कारक को थार्नडाइक (Thorndile) ने उभयनिष्ठ तत्व (Common element) कहा जबकि 'S' कारक को थार्नडाइक ने अभयनिष्ठ तत्व (Uncommon element) कहा। स्पीयरमैन तथा थार्नडाइक के तत्व में बस इतना फर्क है कि स्पीयरमैन 'g' कारक कई छोटे-छोटे तत्वों में नहीं बंटा है जबकि थार्नडाइक ने कई उपकारकों का योग माना है।

गिलफर्ड (Guilford) द्वारा 1967 में बुद्धि के बहुकारक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

गिलफर्ड के बुद्धि सिद्धान्त को त्रिविमीय सिद्धान्त (Three-dimensional Theory) तथा बुद्धि का संरचना सिद्धान्त (Structure of Intellect Theory) (SI model) भी कहा जाता है। गिलफर्ड ने बुद्धि के तत्वों को तीन विमाओं (Three-Dimensions) में विभाजित किया - गिलफर्ड (Guilford) द्वारा बताई गई तीनों विमाओं को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है-

I. संक्रिया (Operation):-

किसी भी कार्य को करने में व्यक्ति द्वारा की गयी मानसिक प्रक्रियाओं के स्वरूप को संक्रिया कहा जाता है। गिलफर्ड द्वारा मानसिक क्षमताओं को 5 भागों में बांटा गया है जो कि निम्न हैं -

1. केन्द्रमुखी चिन्तन (Convergent Thinking)
2. बहुमुखी चिन्तन (Divergent Thinking)
3. संज्ञान (Cognition)
4. स्मृति (Memory)
5. मूल्यांकन (Evaluation)

उदाहरण के लिए - छात्रों को अभिक्रमित अनुदेशन की परिभाषा बताकर, इसकी विशेषताओं को बताने को कहा जाये तो कौन सी संक्रिया का प्रयोग होता है? इस अवस्था में प्रयोग की जाने वाली संक्रिया को बहुमुखी चिन्तन (Divergent Thinking) कहा जायेगा।

II. विषयवस्तु (Content):

विषयवस्तु से तात्पर्य जिसके आधार पर संक्रियायेँ की जाती हैं। गिलफर्ड ने इसे 4 भागों में बाँटा है -

1. आकृतिक (Figural)
2. सांकेतिक (Symbolic)
3. शाब्दिक (Semantic)
4. व्यवहारिक (Behavioural)

उदाहरण - यदि किसी व्यक्ति को ऐसी संक्रिया करनी है जिसका आधार शब्द हैं तो ऐसी अवस्था में विषयवस्तु शाब्दिक (Sementic) हो जायेगी।

III. उत्पादन (Product):-

उत्पादन से तात्पर्य संक्रिया से उत्पन्न परिणाम से होता है। गिलफर्ड के अनुसार यह परिणाम 6 भागों में बाँटा जा सकता है-

(I) इकाइयाँ (Units or U)
(II) वर्ग (Classes or C)
(III) सम्बन्ध (Relation or R)
(IV) पद्धति (System or S)
(V) रूपान्तरण (Transformation or T)

(VI) निहित अर्थ (Implication-I)

उदाहरण - यदि व्यक्ति को बैटरी के असाधारण उपयोग बताने को कहा जायेगा तो उत्तर उत्पादन की सम्बन्ध (relation) श्रेणी में रखा जायेगा।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि गिलफर्ड ने बुद्धि की व्याख्या 3 विमाओं के आधार पर की जिसमें कई कारक उपस्थित होते हैं। इस प्रकार गिलफर्ड के अनुसार बुद्धि में 5 x 4 x 6 =120 कारक होते हैं।

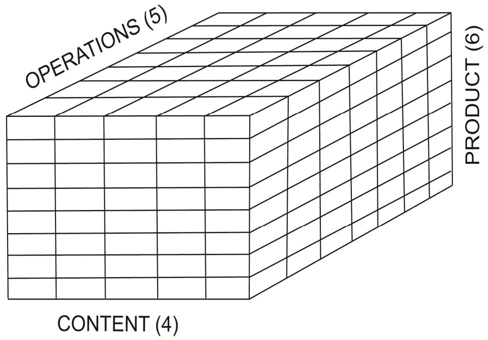

चित्र : 11.1 बुद्धि एसजे आरेख (Model of Intelligence)

11.5.4 पदानुक्रमिक सिद्धान्त (Hierarchical Theory):-

स्पीयरमैन के द्विकारक सिद्धान्त, थर्स्टन का समूह कारक सिद्धान्त तथा थार्नडाइक तथा गिलफर्ड के बहुकारक सिद्धान्त के तत्वों / कारकों को मिलाकर बुद्धि का एक नया सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया जिसे पदानुक्रमिक सिद्धान्त (Hierarchical Theory) के नाम से जाना जाता है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन बर्ट (Burt,1949), वर्नन (Vernon,1960), हम्फ्रेज (Humphreys,1962) तथा कैटल (Cattell,1971) द्वारा प्रतिपादित किया गया। इस सिद्धान्त में बुद्धि की तुलना पिरामिड (Pyramid) से की गयी है जिसमें सबसे ऊपर g- कारक है (g Factor)। जिसे हर प्रकार के मानसिक कार्य को करने में प्रयोग किया जाता है। इसकी पहचान बुद्धि परीक्षणों द्वारा आरम्भ में ही कर ली जाती है। दूसरे स्तर पर V:Ed अर्थात एक शाब्दिक - शैक्षिक कारक (Verbal Educational Factors or V.Ed) तथा व्यवहारिक-यांत्रिक कारक (Practical-mechanical factor or k:m) होते हैं। इन प्रमुख समूह कारकों को गिल्फर्ड के बहुकारकों के समान छोटे-छोटे समूहों में बाँटा गया है। इन छोटे समूह कारकों को भी छोटे-छोटे उपकारकों (Sub factor) में बाँटा गया है जिसकी तुलना स्पीयरमैन के s कारक (s-factor) से की गयी है जो किसी विशेष मानसिक प्रक्रिया के लिए आवश्यक होता है।

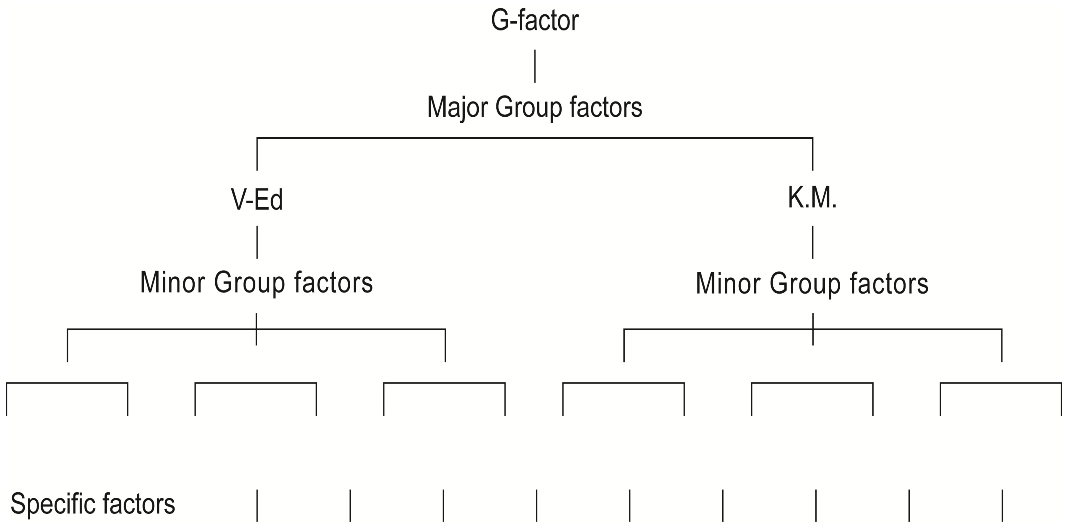

आरेख : 11.2 पदानुक्रमिक मॉडल (Heirarchical Model)

11.5.5 प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त (Process Oriented Theories):-

1960 के बाद संज्ञानात्मक मनोविज्ञान पर बल दिया गया। जिससे बुद्धि की व्याख्या कारकों पर आधारित होकर नये रूप में की जाने लगी। बुद्धि के नये रूप से तात्पर्य बुद्धि की व्याख्या बौद्धिक प्रक्रियाओं (Intellectual processes) के रूप में की गई इन सिद्धान्तों में संज्ञान शब्द (Cognition) पर अधिक जोर दिया गया। प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त दो बातों पर आधारित है-

(I) किसी भी समस्या को सुलझाने में व्यक्ति द्‌वारा बौद्धिक प्रक्रियाओं (Intellectual processes) का सहारा लिया जाता है।

(ii) व्यक्ति की परिपक्त्वता के साथ बौद्धिक प्रक्रियाओं का भी विकास होता है।

पियाजे (पियागेट, 1970) के अनुसार, "बुद्धि एक ऐसी अनुकूली प्रक्रिया है जिसमें जैविक परिपक्वता प्रभाव तथा वातावरण के साथ की गयी अन्त: क्रिया (Interplay) दोनों ही सम्मिलित होते हैं। उनके अनुसार, बौद्धिक विकास संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं (Cognitive processes) जैसे- प्रकृति नियम को समझना, व्याकरण के नियम को समझना तथा गणितीय नियमों को आदि के विकास पर निर्भर करता है।"

“Intelligence is an adaptive process that involves an interplay of biological maturation and interaction with the environment. He views intellectual development as an evolution of cognitive processes such as understanding the laws of nature, the principles of grammer and mathematical rules.”

बुद्धि के दो प्रकार के सिद्धान्त बताये गये हैं (I) कारकीय सिद्धान्त (Factorial Theories) (ii) प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त (Process oriented Theories)। दोनों ही सिद्धान्तों में बुद्धि के स्वरूप की व्याख्या अलग-अलग तरह से की गयी है। कारकीय सिद्धान्त में बुद्धि की

व्याख्या कारकों के आधार पर की गई है जबकि प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त में बौद्धिक योग्यताओं (Intellectual abilities) के आधार पर की गयी है। फिर भी बुद्धि के दोनों सिद्धान्त एक दूसरे से अलग न होकर एक दूसरे के पूरक (Supplementary) हैं। थर्स्टन के समूह कारक सिद्धान्त में प्राथमिक मानसिक योग्यताओं (Primary mental abilities) द्वारा पता चलता है कि व्यक्ति बुद्धि के किस क्षेत्र में मजबूत व किसमें कमजोर है। जैसे - वह गायन में अच्छा हो सकता है परन्तु पढाई में नहीं जबकि प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त में यह पता चलता है कि किस घटक के कारण व्यक्ति की विवेचन शक्ति कमजोर पड़ रही है। बुद्धि के दोनों सिद्धान्तों के समन्वय द्वारा ही बुद्धि की संरचना का पता लग सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि बौद्धिक क्रिया या मानसिक क्रिया में उपरोक्त कारक या तत्व उपस्थित होते है।

स्वपरख प्रश्न(Check Your Progress)

03. थर्स्टन का मानसिक योग्यता का सिद्धान्त क्या है? स्पष्ट कीजिये।
(What is Thurstone's mental abilities theory? Explain.

04. गिल्फर्ड के त्रिविमीय सिद्धान्त को संक्षिप्त मे समझाइये।
(Discuss in brief Guilford's Tri-dimensional Theory).

11.6 ज्ञान तथा बुद्धि में अंतर (Difference between knowledge and Intelligence):

पुरापाषाण काल से लेकर आज तक मनुष्य ने अनेकों आविष्कार किए हैं। जेसे ज्ञान का विकास होता गया,मनुष्य के रहने सहने का तरीका भी बदलने लगा। अर्थात पुरापाषाण काल से आज तक का सफर कमिक ज्ञान की श्रृखंलाबद्ध श्रेणी है परन्तु इस श्रृखंलाबद्ध ज्ञान का आधार बुद्धि का विकास है। ज्ञान और बुद्धि आपस में सह-संबन्धित शब्द है फिर भी इनके बीच कुछ अंतर है जो कि निम्न हैं -

* ज्ञान का अर्थ जानने की क्रिया, तथ्यों का स्पष्ट प्रत्यक्षण, निश्चित समय, संज्ञान, परिचित करना आदि होता है। बी. एस. ब्लूम के अनुसार ज्ञान छात्रों के प्रत्यास्मरण (recall) तथा अभिज्ञान (recognition) की क्रियाओं को तथ्यों, शब्दों, नियमों तथा सिद्धान्तों की सहायता से विकसित किया जाता है। ज्ञान को अनुमानित क्षमताओं की उच्च श्रेणी माना गया है जबकि बुद्धि को अनेकों मानसिक क्षमताओं का समुच्चय (aggregate) माना गया है।बुद्धि के सहारे व्यक्ति विवेकशील चिन्तन करता है तथा उद्देश्यपूर्ण क्रिया करता है तथा वातावरण के साथ प्रभावकारी ढंग से समायोजित हो जाता है। बुद्धि पर अनुभवों का प्रभाव पड़ता है।
* बुद्धि द्वारा किये गये आविष्कारों से ज्ञान लगातार बढता है जो कि श्रृखंलाबद्ध तथा स्थाई होता है।
* बुद्धि का प्रयोग करते हुए ज्ञान को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया को सृजनात्मकता कहा जाता है। ज्ञान को ग्रहण किया जाता है जबकि बौद्धिक स्तर का प्रभाव सम्प्रत्यय

विकास (Conceptual Development) पर पड़ता है। बौद्धिक परिपक्वता बढने से बालकों में समझने, चिन्तन करने तथा तर्क करने की क्षमता का विकास होता है। बौद्धिक स्तर कम होने पर इन क्षमताओं का अभाव रहता है तथा सम्प्रत्यय विकास की क्रिया भी धीमी हो जाती है।

* बालक के व्यक्तित्व का विकास ज्ञान पर पड़ता है जिन बालकों में समायोजनशीलता का गुण पाया जाता है वे तेजी से किसी प्रकार के ज्ञान को ग्रहण करते हैं जबकि बुद्धि सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करती है।
* मनौवैज्ञानिकों द्वारा ज्ञान को तीन भागों में बाँटा गया है जैसे -

1. घोषित ज्ञान (Declarative Knowledge)
2. प्रक्रियात्मक ज्ञान (Procedural Knowledge)
3. अनुबन्धन ज्ञान (Conditional Knowledge)

* थार्नडाइक ने बुद्धि को तीन भागों में बाँटा है -

1. सामाजिक बुद्धि (Social Intelligence)
2. अमूर्त बुद्धि (Abstract Intelligence)
3. मूर्त बुद्धि (Concrete Intelligence)

* घोषित ज्ञान से तात्पर्य “Knowing that” अर्थात किसी चीज को जाना जाता है जैसे- गणित के संकेत, शब्द, ब्रेल विधि। घोषित ज्ञान का विस्तार आश्चर्यजनक है। इस प्रकार के ज्ञान में छोटी इकाइयों को बड़ी इकाइयों में व्यवस्थित कर दिया जाता है। जैसे- पुनर्वलन (Reinforcement) तथा दण्ड (Punishment) को अधिगम व्यवहार के सिद्धान्त (Theory of leraning behaviour) में परिवर्तित किया जा सकता है जबकि सामाजिक बुद्धि एक सामान्य मानसिक क्षमता है जिससे व्यक्ति व्यवहार कुशल होता है। ऐसे, व्यक्तियों के सामाजिक सम्बन्ध मजबूत होते हैं। समाज के अन्य लोगों से मिलजुल कर रहता है जबकि सामाजिक बुद्धि के अभाव में व्यक्ति अपना सामाजिक जीवन सफल नहीं बना पाता है।
* प्रक्रियात्मक ज्ञान (Procedural Knowledge) से तात्पर्य “Knowing how”? कैसे जाना जाय? से है। प्रक्रियात्मक ज्ञान को प्राप्त करने के लिए कार्य करना पड़ता है जो कि प्रदर्शित भी होता है जैसे- घोषित ज्ञान में बालक कहता है जबकि प्रक्रियात्मक ज्ञान को बालक प्रदर्शित करता है। जैसे-किसी इंग्लिश के पैरा को चीनी भाषा में परिवर्तित करना। थार्नडाइक (Thorndike) द्वारा बतायी गयी अमूर्त बुद्धि (Abstract Intelligence) में अमूर्त विषय के बारे में चिन्तन किया जाता है। ये लोग अपनी कल्पनाओं के मानसिक प्रतिमाओं के सहारे बड़ी-बड़ी समस्याओं का समाधान कर लेते हैं। जैसे- कलाकार, पेन्टर, कहानीकार आदि।
* अनुबन्धन ज्ञान (Conditional Knowledge) "क्यों और कब जाना जाय" (Knowing when and why) से संबन्धित होता है। अनुबन्धित ज्ञान के अन्तर्गत घोषित ज्ञान तथा प्रक्रियात्मक ज्ञान का प्रयोग किया जाता है। जैसे - गणित की समस्याओं तथा मनुष्य के व्यवहार से सम्बन्धित समस्याओं को हल करने के लिए

अलग-अलग तरीकों का प्रयोग किया जाता है परन्तु कभी-कभी अनुबन्धित ज्ञान का प्रयोग बालकों के लिए समस्या उत्पन्न करता है क्योंकि बालक तरीका तो जानता है पर प्रयोग की जाने वाली परिस्थितियों को नहीं जानता है। थार्नडाइक ने बुद्धि का तीसरा प्रकार मूर्त बुद्धि (Concrete Intelligence) बताया था। मूर्त बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति द्वारा ठोस वस्तुओं के माध्यम से समझना। व्यक्ति इनके बारे में सोचता है तथा अपनी इच्छानुसार परिवर्तन लाकर उपयोगी भी बनाता है। मूर्त बुद्धियुक्त लोगों में हस्तकला कौशल पाया जाता है। जैसे- इंजीनियर आदि।

* ज्ञान का मापन उपलब्धि परीक्षणों द्वारा सम्भव है जबकि बुद्धि का मापन बुद्धि परीक्षणों द्वारा किया जाता है।
* ज्ञान का भण्डार असीमित है जबकि बुद्धि प्रत्येक व्यक्ति में एक समान मात्रा नहीं पायी जाती है।

स्वपरख प्रश्न (Cheak Your Progress)

05. ज्ञान का समप्रतत्य क्या है? (What is the concept of knowledge)?

06 ज्ञान और बुद्धि मे क्या अंतर है? समझाइये।
(Explain the differences between knowledge and Intelligence)

11.7 कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence):

कृत्रिम बुद्धि का प्रयोग तकनीकी के माध्यम से किया जाता है। कृत्रिम बुद्धि विज्ञान एवं तकनीकी का क्षेत्र है जो कि कम्प्यूटर विज्ञान, मनोविज्ञान, भाषा, गणित, इंजीनियरिंग आदि क्षेत्रों पर आधारित होता है। कृत्रिम बुद्धि से तात्पर्य कम्प्यूटर जैसी तकनीकी को बुद्धि प्रदान करना होता है। अर्थात इस प्रकार का कम्प्यूटर विकसित करना जो देख सकता हो, चल सकता हो, सोच सकता हो तथा महसूस कर सकता हो। मानवीय बुद्धि के साथ कम्प्यूटर को संबन्धित करना कृत्रिम बुद्धि का एक बड़ा आधार है। कृत्रिम बुद्धि शब्द John McCarthy (जॉन मैककार्थी) द्वारा 1956 में दिया गया। कृत्रिम बुद्धि के कई गुण होते हैं। जैसे - सोच-विचार, समस्या को सुलझाने के कारणों का उपयोग करना, अनुभवों से सीखना और समझना, ज्ञान की प्राप्ति तथा उसका क्रियान्वयन, सृजनात्मकता तथा कल्पनाशीलता को प्रदर्शित करना, नई परिस्थितियों के साथ जल्दी तथा सफलतापूर्वक प्रतिक्रिया देना, स्थिति के महत्व से जुड़े हुए तत्वो को पहचानना आदि।

कृत्रिम बुद्धि के क्षेत्र में गम्भीरतापूर्वक कार्य 1950 से किया गया। सिर्फ तकनीकी ही नहीं बल्कि नैतिक तथा दार्शनिक प्रश्न भी वैचारिक मशीन तथा बुद्धि की सम्भाव्यता से बंधे हुए हैं।1950 में ब्रिटिश गणितज्ञ एलन द्यइरग (Allan turing) ने टूरिंग परीक्षण (Turing Test) बनाया। टूरिंग द्वारा बनाया गया परीक्षण "यदि मशीन सोचने लगे" को निर्धारित करने के लिए बनाया गया था। टूरिंग परीक्षण के अनुसार कम्प्यूटर भी बुद्धि को प्रदर्शित कर सकता है। टूरिंग परीक्षण में कृत्रिम बुद्धि को इस प्रकार बताया गया कि यदि हम किसी वस्तु को परदे के पीछे रखें तथा वह हमसे वार्तालाप करे और हम उसमें और मानव जाति में अन्तर न कर पायें तो यह कृत्रिम बुद्धि कहलायेगी। टूरिंग की परिभाषा द्वारा कृत्रिम बुद्धि के बारे में यह सुझाव दिया गया कि यह एक ऐसी वस्तु है जो कुछ नहीं जानती पर सीख सकती है। आलोचकों का मत है कि

कोई भी कम्प्यूटर टूरिंग परीक्षण में उत्तीर्ण नहीं हो सकता क्योंकि मानव की बुद्धि के समान क्षमताएँ कम्प्यूटर में सम्भव नहीं है परन्तु फिर भी कृत्रिम बुद्धि के क्षेत्र में कार्य जारी है।

कृत्रिम बुद्धि के तीन आयाम बताये गये हैं जैसे- (I) संज्ञानात्मक विज्ञान प्रयोग (Cognitive science Applications) (ii) यांत्रिक प्रयोग (Robotics Applications) (iii) प्राकृतिक इण्टरफेस प्रयोग (Natural Interface Applications)

संज्ञानात्मक विज्ञान प्रयोग (Cognitive Science Application):

कृत्रिम बुद्धि का यह क्षेत्र गणित (Mathematics), मनोविज्ञान (Psychology), जीव विज्ञान (Biology) तथा तंत्रिका विज्ञान (Neurology) पर आधारित है। कृत्रिम बुद्धि के इस आयाम से पता चलता है कि मानव बुद्धि किस प्रकार कार्य करती है, मानव किस प्रकार से सोचता है और याद करता है। कृत्रिम बुद्धि में कम्प्यूटर विकास का आधार "मानव सूचना प्रक्रिया' (Human Information Processes) पर किये गये शोध हैं। अर्थात ज्ञान आधारित तंत्र (Knowledge based system) कृत्रिम बुद्धि के अन्तर्गत आता है। सूचना प्राप्त करना उसके आधार पर व्यवहार में सुधार लाना भी संज्ञान विज्ञान के अन्तर्गत आता है। मनुष्य की भाँति कृत्रिम बुद्धि के अस्पष्ट तर्क तंत्र में निष्कर्षो व उत्तरों को विकसित करके असंरचनात्मक समस्याओं को अधूरे ज्ञान द्वारा सुलझाया जाता है। प्रतिदर्श समस्या एवं उसके समाधान की प्रक्रिया को नाड़ी जान सॉफ्टवेयर पर (Neuron Network System) से सीखा जा सकता है। तंत्रिका जाल जैसे ही किसी चीज को पहचानना शुरू करता है वैसे ही वे उस समस्या का समाधान करना शुरू कर देते हैं। कृत्रिम बुद्धि तकनीकी द्वारा की जाने वाली प्रक्रियाएँ बुद्धि अभिकर्त्ता (Intelligent Agent) के मध्यम से होती है।

यांत्रिकी (Robotics):

यह तकनीकी कम्प्यूटर बुद्धि एवं कम्प्यूटर द्वारा नियन्त्रित की गयी मानव शारीरिक क्षमताओं के समान "रोबोट मशीन' बनाती है। अर्थात यांत्रिकी में मशीनी मानव (robot) को देखने, सुनने, स्पर्श करने की शक्ति, हस्तकौशल तथा शारीरिक क्षमताओं से निर्मित किया जाता है।

प्राकृतिक इन्टरफेसेस (Natural Interfaces):

इन्टरफेसेस से तात्पर्य एक व्यक्ति तथा कम्प्यूटर का आपस में सम्बन्ध होता है। जिस प्रकार हम लोग एक दूसरे की भाषा को आसानी से समझते हैं उसी प्रकार कम्प्यूटर भी मनुष्य से आम भाषा में बात कर सके, यही कृत्रिम बुद्धि का मुख्य उद्देश्य हैं। प्राकृतिक भाषाएँ तथा भाषायी पहचान का विकास कृत्रिम बुद्धि के आधारभूत क्षेत्र है। कृत्रिम बुद्धि के अन्तर्गत भाषा, मनोविज्ञान तथा कम्प्यूटर विज्ञान में किये जाने वाले शोध आते हैं। आवाज को पहचानना, उत्तर देना आदि बहुइंद्रीय युक्तियों का विकास कृत्रिम बुद्धि में होता है। कम्प्यूटर द्वारा मानव को वास्तविकता का अनुभव कराया जाता है। उदाहरण के लिए यदि हम बालक को हवाई जहाज चलाने की क्रियाविधि समझाना चाहते हैं तो कम्प्यूटर के माध्यम से वास्तविक परिस्थितियों को दर्शा सकते हैं जिसमें बालक पढता है, अन्त:क्रिया करता है तथा उत्तर देता है। कम्प्यूटर में रखे आँकड़ों के माध्यम से कम्प्यूटर प्रोग्राम कृत्रिम बुद्धि के हिसाब से ही कार्य करता है।

उपरोक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि कृत्रिम बुद्धि व्यावसायिक तकनीकी में प्रयोग किया जाने वाला शब्द है। कृत्रिम बुद्धि को मानव क्षमताओं को प्रभावित करने हेतु डिजाइन किया गया, न कि मानव को हटाने में। अर्थात कृत्रिम बुद्धि लोगों के बीच कम्प्युटर ज्ञान तथा भौतिक विश्व के बीच नये सम्बन्ध बनाती है। कृत्रिम बुद्धि द्वारा निम्न क्रियायेँ की जा सकती हैं जैसे - सूचनाओं को वितरित करना तथा उन्हें पुन: प्राप्त करना, आँकड़ों का डेटाबेस (database) तैयार करना, उत्पाद निर्माण, प्रशिक्षण देने में, निरीक्षण आदि।

शिक्षक द्वारा कृत्रिम बुद्धि का उपयोग, विद्यार्थियों के database तैयार करने में, कक्षा तथा परीक्षा की अनुसूची, नये-नये प्रोग्राम बनाना, कम्प्यूटर्स का ज्ञान लेने व देने में व इंटरनेट का इस्तेमाल कर सकता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

07. कृत्रिम बुद्धि का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
(Define the meaning of artificial Intelligence).

08. कृत्रिम बुद्धि के तीनों आयामों की व्याख्या कीजिए।
Explain three dimensions of artificial Intelligence).

11.8 सारांश (Summary)

बुद्धि कई तरह की क्षमताओं का समुच्चय करता है जिसके सहारे व्यक्ति उद्देश्यपूर्ण क्रिया करता है, विवेकशील चिन्तन करता है तथा वातावरण के साथ प्रभावकारी ढंग से समायोजन करता है। बुद्धि की विस्तृत व्याख्या करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने दो तरह के प्रमुख सिद्धान्त बताये हैं - कारक सिद्धान्त (Factor Theory) तथा प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्त (Process-Oriented Theories) कारक सिद्धान्तों में द्विकारक, बहुकारक सिद्धान्त, थार्नडाइक तथा गिलफर्ड के सिद्धान्त तथा पदानुक्रमिक सिद्धान्त को रखा गया है जबकि प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्तों में पियाजे को प्रमुख स्थान दिया गया है।

ज्ञान तथा बुद्धि एक दूसरे से सहसंबन्धित होते हुए भी एक दूसरे से अलग हैं जैसे - बुद्धि द्वारा किये गये आविष्कारों से ज्ञान लगातार बढ़ता है जो कि श्रृंख्लाबद्ध तथा स्थायी होता है। बुद्धि का प्रयोग करते हुए ज्ञान को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया को सृजनात्मकता कहा जाता है।

वर्तमान युग तकनीकी का युग है जिसमें कम्प्यूटर विशेष स्थान रखता है। कम्प्यूटर जैसी बुद्धि तकनीकी को बुद्धि प्रदान करना कृत्रिम बुद्धि कहलाता है। अर्थात एक ऐसा कम्प्यूटर विकसित करना जो देख सकता हो, चल सकता हो, सोच सकता हो तथा महसूस कर सकता हो। मानवीय बुद्धि के साथ कम्प्यूटर से सम्बन्धित करना कृत्रिम बुद्धि का बडा आधार है।

11.9 शब्दावली (Glossary)

1. अमूर्त चिन्तन (Abstact Thinking) - जिसमें व्यवहारों के माध्यम से चिन्तन होता है
2. कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence) - बुद्धिमान कम्प्यूटर
3. सम्प्रत्यय (Concept) - किन्हीं वस्तुओं में नियमितता का नाम
4. केन्द्रमुखी चिन्तन - Convergent Thinking

5. निगमन तर्कशक्ति (Deductive reasoning) - सिद्धान्त से निष्कर्ष की ओर
6. आगमन तर्कशक्ति (Inductive reasoning) - तथ्यों से सिद्धान्त की ओर
7. बुद्धि (Intelligence) - वातावरण से समायोजन की क्षमता

11.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings):

1. शर्मा, आर.ए. (2000), अधिगम एव विकास के मनोवैज्ञानिक आधार, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. पाण्डेय, राम शकल (1998), शिक्षा मनोविज्ञान, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
3. भटनागर, ए0बी0, भटनागर, एम0 एवं भटनागर, ए0, डेवलेपमेन्ट ऑफ लर्नर एवं टीचिंग लर्निंग प्रोसिस, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
4. सिंह, रामपाल, सिंह, एसण्डी0 एवं शर्मा, देवदत्त, व्यवहार मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. Chauhan, S.S. (2001), Advance Educational Psychology, Vikash Publishing House, Pvt. Ltd., New Delhi.
6. मंगल, ए.के.एवं मंगल, शुभ्रा (2005), विद्यार्थी विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, लॉयल बुक डिपो, मेरठ।
7. Woolfolk, Anita, (2006), Educational Psychology, Ninth Edition, Pearson Education, Delhi.
8. पाण्डेय, कल्पलता एवं श्रीवास्तव, एस.एस. (2007), शिक्षा मनोविज्ञान भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि, टाटा मैकग्रॉ हिल्स पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

11.11 स्वपरख प्रश्नो के उत्तर/सुझाव (Answer/Hints to Self-Learning Exercises)

प्रश्न संख्या 01 उत्तर लिए 11.2 का अवलोकन करे ।

प्रश्न संख्या 02 के उत्तर के लिए 11.3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न संख्या 03 के के लिए 11.5 (ii) का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 04 का उत्तर देने के लिए 11.5 (iii) देखें।

प्रश्न संख्या 05 का उत्तर 11.6 पर देखिये।

प्रश्न संख्या 06 के उत्तर के लिए 11.6 का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 07 के उत्तर के लिए 11.7 का अवलोकन करें।

प्रश्न संख्या 08 के उत्तर के लिए 11.7 का अवलोकन करें।

11.12 परीक्षा योग्य प्रश्न

1. बुद्धि क्या है ? इसके विभिन्न सिद्धान्तों की व्याख्या कीजिये।
   (What is Intelligence ?Discuss its various theories)
2. मल्टीपल तथा कृत्रिम बुद्धि में विभेद कीजिए।
   (Differentiate between multiple and artificial intelligence).
3. थर्स्टन का मानसिक योग्यता का सिद्धान्त क्या है? स्पष्ट कीजिए।

(What is Thurstone's mental abilities theory? Explain.

4. कृत्रिम बुद्धि के आशय को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

(Discuss in brief implications of artificial intelligence.

5. कृत्रिम बुद्धि का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके आयामों की व्याख्या कीजिए।

(Explain the meaning of artificial intelligence. Also describe its dimensions.)

इकाई 12 (UNIT 12)

बुद्धि का मापन तथा उनका शिक्षण अधिगम व्यवस्था में प्रयोग (Measurement of Intelligence and their uses in Teaching Learning System)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

12.0 उद्देश्य (Objectives)

12.1 प्रस्तावना Introduction)

12.2 बुद्धि का मापन करने वाली परीक्षायें (Tests for Measuring Intelligence)

12.2.1 निष्पादन परीक्षायेँ (Performance Test)

12.2.1.1 Bhatia's Battery of Performance Tests

12.2.1.2 विदेशी परीक्षण जो भारतीय परिवेश में मानकीकृत किये जो चुके है

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

12.2.2 बुद्धि के सामूहिक परीक्षण (Group Tests of Intelligence)

12.2.2.1 शाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Verbal Test of Intelligence)

12.2.2.2 अशाब्दिक परीक्षण (Non Verbal Test of Intelligence)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

12.2.3 व्यक्तिगत बनाम सामूहिक बुद्धि परीक्षण

रूपरख प्रश्न (Check Your Progress)

12.3 शिक्षण-अधिगमm में बुद्धिपरीक्षणों का उपयोग (Intelligence Tests in Teaching Learing)

12.4 सारांश (Summary)

12.5 शब्दावली (Glossary)

12.6 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)

12.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर /संकेत (Answer/hints to Self Learning Exercises)

12.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End-Questions)

12.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

(i) बुद्धि का मापन करने वाले विभिन्न प्रकार के परीक्षणों की सूची बना सकेंगे ।

(ii) इन परीक्षणों की विशेषताओं को समझकर उनका वर्गीकरण कर सकेंगे ।

(iii) शैक्षिक अधिगम व्यवस्था में इनका समुचित प्रयोग कर सकेंगे ।

12.1 प्रस्तावना Introduction):

जैसे आपने इकाई 11 में देखा होगा । बुद्धि की कई प्रकार की परिभाषाएँ दी गयी है जिनको मुख्यत: दो वर्गो, कारक सिद्धान्तों (Factor Theories) तथा प्रक्रिया उन्मुख सिद्धान्तों (Process Oriented Theories) में रखा जा सकता है परन्तु सबसे उत्तम तथा सबसे अधिक प्रचलित बुद्धि परीक्षा किसी विशेष बुद्धि के सिद्धान्त पर अंतरंग रूप से आश्रित नही है परन्तु वह निश्चित रूप से ऐसी उप-परीक्षाओं का प्रयोग करती हैं और एक समग्र सारांश अंक (जैसे I.Q. इत्यादि), जो कारक सिद्धान्तों से सम्बद्ध है, प्रदान करती है

इनके आधार पर आप अपने छात्रों की मानसिक योग्यताओं के स्तर को समझकर उनको अपने शिक्षण के समय समुचित व्यक्तिगत ध्यान दे सकते हैं ।

12.2 बुद्धि का मापन करने वाली परीक्षाएँ (Tests):

इन परीक्षणों का वर्गीकरण इस प्रकार कर सकते है-

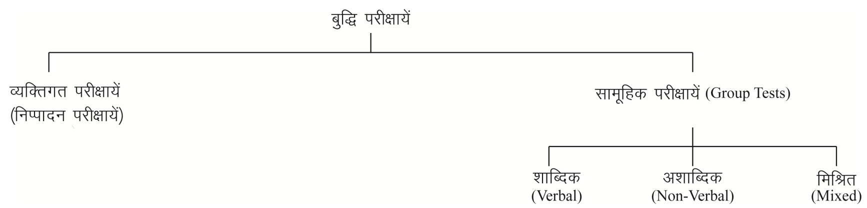

आरेख 12.1

इनमें से कुछ प्रमुख परीक्षणों का कुछ विस्तार से वर्णन करना न्यायसंगत होगा ।

12.2.1 निष्पादन परीक्षाएँ (Performance Tests)-

इनमें कुछ प्रमुख परीक्षाएँ इस प्रकार है -

12.2.1.1 Bhatia's Battery of Performance Test- भारतीय संदर्भ में प्रयोग होने वाली ।

C.M.Bhatia's द्वारा निर्मित 11 वर्ष से ऊपर के लोगों के लिए इस निष्पादन परीक्षा में पाँच उप-परीक्षाएँ हैं ।

(i) Koh's Block Design Test-

इसमें गुटकों (cubes) की सहायता से ऊपरी सतह पर निर्धारित समय में दी हुई डिजाइनें (जो कमश: सरल से कठिन होती जाती है तथा जिनमें गुटकों की संख्या बढ़ती जाती है (16 गुटकों तक) बनानी होती है।

(ii) Alexander's Pass-Along Test-

इसमें एक लाल प्लेट तथा बाकी नीली वर्गाकार या आयताकार प्लेटें होती हैं। लाल प्लेट नीले किनारे की ओर होती है, उसको अन्य प्लेटों के साथ ताल-मेल बैठाते हुए लाल किनारे की ओर लाना होता है । (निर्धारित समय में) प्लेटों को खिसकाया जा सकता है पर उठाकर नहीं रखा जा सकता, कार्य क्रमश: कठिन होते जाते हैं।

(iii) Pattern Drawing-

इसमें क्रमश: सरल से कठिन होती हुई लाइनों की सहायता से बनी आकृतियां होती हैं। दिए सादे कागज पर उनकी नकल करना होता है। शर्त यह कि पेंसिल उठे नहीं, न ही लाईन दोहराई की जाये।

(iv) तात्कालिक स्मृति (Immediate Memory)-

इसमें कुछ अंक बोले जाते हैं जिन्हें परीक्षार्थी को उसी कम में दोहराना होता है । अंकों की संख्या क्रमश: बढ़ती जाती है। इसी प्रकार जो अंक बोले जाते हैं उन्हें उल्टे क्रम में दोहराना होता है जैसे- यदि परीक्षक 3, 4, 6 कहता है तो परीक्षार्थी 6, 4, 3 कहेगा ।

(v) चित्र निर्माण (Picture construction)-

इसमें कटे टुकड़ों को मिलाकर चित्र पूरा करना पड़ता है । टुकड़ों की संख्या कमश: बढ़ती जाती है। पूरी परीक्षा के आधार पर बुद्धिलब्ध (I.Q.) तथा निष्पत्ति लब्ध (Performance Quotient) दोनों प्राप्त होते हैं।

पूरी परीक्षा में 90 से 120 मिनट लगते हैं तथा इसे 11 वर्ष से लेकर प्रौढों तक दिया जा सकता है। यह परीक्षण व्यक्तिगत परीक्षण के अन्तर्गत भी वर्गीकृत हो सकता है क्योंकि इसमें एक बार में केवल एक व्यक्ति का परीक्षण किया जा सकता है। यह बात सभी निष्पत्ति परीक्षाओं पर लागू होती है।

12.2.1.2 विदेशी परीक्षण जो अब भारतीय परिवेश के लिए भी मनकीकृत किये जा चुके हैं!

(अ) स्टेनफोर्ड बिने टेस्ट **(Stanford Binet Test)-**

पहले यह टेस्ट बिने और साइमन (Binet and Simen) द्वारा फ्रांस के विद्यालयों में मन्द बुद्धि वाले बालकों पहचानने के लिए निर्माण किया गया था। इसकी सफलता को देखते हुए अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में इसके कई संस्करण प्रकाशित हुए । इनमें सबसे प्रसिद्ध और सफल संस्करण टरमन और साथियों (Terman and associates) द्वारा स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में, प्रकाशित हुआ। इसको स्टेनफोर्ड-बिने (Stanford & Binet) टेस्ट की संज्ञा दी गई। इसका अंतिम संशोधित संस्करण 1973 में आया।

यह टेस्ट आयु स्तरों पर श्रेणीकृत है क्योंकि यह देखा गया कि मन्द बुद्धि के बालक प्रारम्भिक आयु के बालकों के समान चिन्तन करते हैं इसलिए बाद के संशोधनों में भी आयुवार मापनियाँ बनाई गई । प्रत्येक आयु स्तर पर ऐसे कार्य रखे गये जिन्हें उस आयु के सामान्य बालक साधारण कठिनाई से कर सकते हैं । इस मापनी पर किसी बालक के अंक उस मानसिक आयु (M.A.) के रूप में व्यक्त किये जाते हैं जहाँ तक वह पहुँच जाता है । उदाहरण के लिए यदि कोई बालक 9 आयु वर्ग वाले सभी परीक्षणों पर सफल होता है, परन्तु 10 आयु वर्ग वाले कोई भी प्रश्न न कर पाता तो उसकी वास्तविक आयु कुछ भी हो, उसकी मानसिक आयु 9 वर्ष की मानी जायेगी क्योंकि उसने साधारण 9 वर्ष के बालक के बराबर उपलब्धि प्रदर्शित की, उससे अधिक नहीं । यदि वह 11 वर्ष का है, तो इसका अर्थ है कि वह अपनी आयु के साधारण बालक से 2 वर्ष पीछे है ।

पहले आरम्म में इसमें केवल 30 समस्याएँ थीं परन्तु 1916 के टेरमन का संशोधन, जो अमेरिका में हुआ उसमें प्रश्नों की संख्या बढ़ा दी तथा कुछ कम उपयुक्त परीक्षणों के

स्थान पर नये परीक्षण सम्मिलित किये गये । परन्तु इसमें सबसे महत्वपूर्ण नवाचार बुद्धिलब्ध (I.Q.=Intelligence quotient) की अवधारणा का था ।

$$\text{बुद्धिलब्ध (I.Q.)} = \frac{\text{मानसिक आयु(Mental Age)}}{\text{वास्तविक आयु(Chronological Age)}} \times 100$$

उदाहरण के लिए यदि बालक की वास्तविक आयु 10 वर्ष की है और उसने 12 वर्ष आयु वाले सभी प्रश्न कर लिए (अर्थात उसकी मानसिक आयु 12 वर्ष है) तो उसका बुद्धिलब्ध

$$I.Q = \frac{12}{10} \times 100$$

विभिन्न आयु पर तुलना करने की दृष्टि से I.Q. काफी सुविधाजनक है: जैसे 100 I .Q. का अर्थ है कि बालक अपनी आयु का साधारण बालक है (उसकी जो भी वास्तविक आयु हो)I I.Q. 80 का अर्थ है अपनी आयु के सामान्य बालकों से बुद्धि में I.Q. 75 की अपेक्षा काफी अधिक है। इस प्रकार 5 वर्ष पर एक वर्ष का पिछड़ापन, 12 वर्ष के पिछड़ेपन में काफी गम्भीर है क्योंकि 4/5$\times$100 = 80 पर 11/12$\times$100=91.

I.Q. की अवधारणा काफी तार्किक है परन्तु इसकी कई समस्याएँ है। एक समस्या यह है कि मानसिक आयु का विकास रेखीय (Linear) नहीं है वक्रीय (Curivlinear) है। आरम्भ में यह वह तेजी से बढ़ती है परन्तु मध्य किशोरावस्था में उसका विकास काफी शिथिल हो जाता है इसलिए वयस्कों के लिए यह निरर्थक हो जाता है, 22 या 37 मानसिक आयु की बात करना निरर्थक है इसलिए वयस्कों के लिए I.Q. की अवधारणा अधिक उपयोगी नहीं है इसलिए अब स्टेनफोर्ड बिने टेस्ट में एक अलग तरह के I.Q. का प्रयोग किया जाता है जिसे विचलन बुद्धिलब्ध (deviation I.Q.) की संज्ञा दी जाती है। यह एक प्रकार का प्रामाणिक अंक (standard score) है अर्थात I.Q. जिसने अंकों को प्रामाणिक विचलन के रूप में व्यक्त किया गया है । इसकी प्रक्रिया इस प्रकार होती है।

विचलन (standard deviation) ज्ञात कर लेते हैं। इसके आधार पर जिस व्यक्ति पर दिया जाता है उसका प्रामाणिक अंक (standard score) इस प्रकार ज्ञात करते है जैसे-

$$\text{Standard score} = \frac{X-M}{U}$$

जहाँ X व्यक्ति का प्राप्त अंक, है M समूह का मध्यमान तथा U समूह का प्रामाणिक विचलन।

उदाहरण के लिंए मान लीजिए किसी व्यक्ति का प्राप्त अंक 85 है, उसके आयु समूह का मध्यमान 70 है तथा प्रामाणिक विचलन 10 है तो उसका

$$\text{Standard Score} = \frac{85-70}{10} = +1.5$$ अर्थात Mean से 1.5 गुणा अधिक है

अब यदि हम समूह का चाहे भी जो मध्यमान (M) या प्रामाणिक विचलन (U) है, उन्हें क्रमश: 100 और 15 मान लेते है तो

Deviation I. Q. $=100+1.5\times 15$

$=122.5$

स्टेनफोर्ड टेस्ट की अन्तर्वस्तु (content) टेस्ट में विविध प्रकार की मानसिक क्रियाओं का परीक्षण किया गया जिससे परीक्षार्थी की सामान्य मानसिक स्तर का भलीभाँति पता लगाया जा सके जैसे - छोटी आयु (2-4 वर्ष) के बालकों के लिए बहुत से परीक्षणों में वस्तुओं को पहचानने या हस्तकौशल (manipulation) जैसी समस्या होती है । जैसे - 2 वर्ष के बालकों के लिए Form Board समस्याएँ - कटे हुए खानों में (वृत्त त्रिभुज, वर्ग) में उपयुक्त आकृतियों रखना । परीक्षक का 4 ब्लॉक वाली मीनार बनाकर बालक को दिखलाना फिर बिगाड़कर बालक को उसी प्रकार बनाने को कहना । 3 वर्ष के बालक को इसी प्रकार ब्लाकों की सहायता से पुल बनाकर दिखाना तथा फिर बालक से उसी प्रकार बनाने को कहना । 4 वर्ष के बालक के लिए कार, कुत्ता या जूता में किसी को दिखलाकर ढक लेना फिर स्मृति से बताने को कहना । कार्ड पर बने कुकर, छाता इत्यादि दिखा कर पूछना : हम किससे खाना बनाते हैं, जब पानी बरसता है तो क्या ले जाते हैं इत्यादि।

धीरे-धीरे प्रश्न कठिन होते जाते हैं, कोयले और लकड़ी में क्या समानता है, छपे सम चतुर्भुज (diamona) को सामने रखकर वैसी 3 आकृतियों बनाना (7 वर्ष)। कहानी सुनकर उस पर प्रश्नों के उत्तर देना (8 वर्ष) । चित्र बीच सड़क में सीटी बजाते घूमना दिखाकर या कहानी सुनाकर पूछना इसमें बेवकुफी की क्या बात है (9 वर्ष) । एक लिस्ट से 20 शब्दों की परिभाषा देना (सामान्य वयस्क) इत्यादि ।

स्टेनफोर्ड-बिने का भारतीय परिस्थितियों में अनुशीलन (डा. कुलश्रेष्ठ द्वारा) अब उपलब्ध है ।

(ब) वेक्सलर परीक्षाएँ (Wechsler Tests):

बेलवू मानसिकोपरक अस्पताल (Bellue Mental Hospital) के डा. डेविड वेक्सलर की अध्यक्षता में विकसित एवं प्रमाणीकृत परीक्षणों का आरम्म प्रौढ़ों की बुद्धि परीक्षा करने के निमित्त बनाये गये एक मापनी से हुआ। आगे चलकर वेक्सलर ने विभिन्न आयु वर्ग के लिए कई मापनियों का विकास किया जैसे-

वेक्सलर की प्रौढ़ मापनी (Wecksler Adult Intelligence scale) संशोधित WAIS-R 1982) वेक्सलर की पुन: विद्यालय एवं प्राथमिक विद्यालय बुद्धि मापनी (Wechsler Pre-Primary &Primary School Intelligence Scale) (WPPSI'1967)

वेक्सलर की बालकों के लिए बुद्धि मापनी (Wechsler Intelligence Scale for Children Revised WISC-R1974).

वेक्सलर परीक्षण की विशेषताएँ :-

1. इन परीक्षणों के बिने की तरह 10 वर्ष से कम आयु वर्गों के लिए कोई परीक्षण नहीं है । यह सभी परीक्षण 10 वर्ष या उससे ऊपर की आयु के लिए है।

2. वेक्सलर में निष्पत्ति तथा शाब्दिक दोनों प्रकार की परीक्षाएँ शामिल हैं तथा दोनों भागों का मूल्यांकन अलग-अलग होता है । भाषा ज्ञान की स्थिति के अनुसार एक या दोनों का प्रयोग किया जा सकता है। निष्पत्ति वाला भाग उन परिक्षार्थियों के लिए अधिक उपयुक्त है जिन की भाषा ज्ञान सीमित है या जो विदेशी प्रष्ठभूमि के है। ऐसे लोग अधिकतर शाब्दिक परीक्षाओं की अपेक्षा निष्पत्ति परीक्षण पर अधिक अच्छी उपलब्धि प्रदर्शित करते हैं। शाब्दिक-निष्पादन की विभिन्नता ऐसे लोगों का पता लगाने के लिए सहायक हो सकती है जो किसी मानसिक क्षति के शिकार हैं जैसे कोई मस्तिष्क क्षति का संवेगात्मक विक्षोप से, क्योंकि उनके अंक शाब्दिक तथा निष्पत्ति पर बहुत भिन्न होते हैं। इस विभिन्नता के आधार पर उनकी समस्या का पता लगाया जा सकता है।
3. वेक्सलर परीक्षण भी बिने की तरह व्यक्तिगत परीक्षण है परन्तु यह आयु क्रम में वर्गीकृत नहीं है। इसके स्थान एक प्रकार के कार्यों को सरलता से कठिनता की ओर समूहित किया गया है। परीक्षार्थी प्रत्येक माला के प्रश्नों को उस सीमा तक करता है जहाँ तक करना उसके लिए सम्भव होता है । तब उसके निष्पादन का मूल्यांकन किया जाता है जो मानसिक आयु के रूप में न होकर उसकी आयु के अन्य व्यक्तियों की तुलना में उसके स्थान निर्धारण के रूप में होता है।
4. विचलन अंक (deviation score) जिसका उल्लेख उपर किया जा चुका है वेक्सलर की ही देन है जो कदाचित अधिक व्यवहारिक है और जिसे I. Q. में भी परिवर्तित किया जा सकता है।
5. इसमें शाब्दिक प्रश्न बिने तथा अन्य परीक्षणों के शाब्दिक प्रश्नों की तरह है, जैसे सामान्य ज्ञान समझ, स्मृति, शब्दावली इत्यादि। निष्पादन भाग में लकड़ी के टुकड़े (block) से डिजाइन बनाना चित्रों को अर्थ प्रदान करने वाले क्रम में रखना जैसे - अपेक्षाकृत जटिल काम होते हैं जो उच्च-स्तर के प्रत्यक्षीकरण तथा चिन्तन की योग्यता पर आधारित होते हैं तथा सामान्यत: शाब्दिक एवं निष्पत्ति योग्यता का समिश्रण होते हैं।

निष्पत्ति परीक्षणों पर सामान्य टिप्पणी :-

1. उपरोक्त तीनों निष्पत्ति परीक्षण भारतीय संदर्भ में सबसे अधिक ज्ञात तथा व्यापक रूप से प्रयोग होने वाले परीक्षण हैं।
2. निष्पत्ति परीक्षणों के कुछ उप-परीक्षण अशाब्दिक है उन्हें ऐसे परीक्षार्थियों को भी दिया जा सकता है जो मौखिक निर्देश समझ सकते हैं।
3. यह परीक्षण व्यक्तिगत रूप से दिये जाते हैं इसलिए (i) परीक्षक को परीक्षण के बीच परीक्षार्थी की निष्पत्ति के गुणात्मक पक्ष का भी अध्ययन करने का काफी अवसर मिल जाता है और (ii) परीक्षक यह सुनिश्चित कर सकता है कि परीक्षार्थी पूरी लगन से परीक्षा दे रहा है। इस प्रकार परीक्षक परीक्षार्थी के बारे में और काफी कुछ जान सकता है।
4. व्यक्तिगत परीक्षण बुद्धि के कहीं अधिक आयामों का परीक्षण करते हैं। समूहिक परीक्षणों का क्षेत्र अधिक सीमित होता है। साधारणत: सामूहिक परीक्षण का निर्माण किसी विशेष कार्य को गहराई से अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)	
01	भाटिया बैटरी टेस्ट की विशेषताएँ बताइये ।
02	Deviation I.Q.को परिभाषित कीजिए ।
03	5 वर्ष की आयु पर 4 वर्ष की मानसिक आयु 10 वर्ष की आयु पर 9 वर्ष की मानसिक आयु I.Q. की दृष्टि से क्यों तीव्र (severe) है ?
04	वेक्सलर के परीक्षण पर संवेगात्मक दशष्टि से पीड़ित बक्ति का पता कैसे लगाया जा सकता है?
05	व्यक्तिगत (निष्पत्ति) परीक्षणों की प्रमुख विशेषताएँ बताइये ।

12.2.2 बुद्धि के सामूहिक परीक्षण (Group Tests Intelligence)

यह परीक्षण एक समय में एक साथ कम समय में तथा कम प्रशिक्षण के पूरे समूह के लोगों को दिये जा सकते हैं। इसमें प्रश्नों के उत्तर विकल्पों के रूप में होते हैं जिनमें से केवल एक विकल्प सही उत्तर होता है। इनमें से कुछ परीक्षण शाब्दिक, कुछ अशाब्दिक तथा कुछ शाब्दिक अशाब्दिक का मिश्रण होते हैं। ऐसे, व्यक्तिगत परीक्षणों की अपेक्षा इनकी संख्या बहुत अधिक है इसलिए हम इनमें से कुछ प्रमुख का ही नीचे वर्णन करेंगे।

12.2.2.1 शाब्दिक बुद्धि परीक्षण (Verbal Intelligence Tests)

कुछ परीक्षण जो सामान्यत: प्रयोग में आते हैं वह इस प्रकार है -

1. प्रयाग मेहता का सामान्य बुद्धि परीक्षण -

यह परीक्षण 9-13 वर्ष के बालकों के लिए है। इसमें 10 भाग हैं तथा प्रत्येक में 6 परीक्षण है जिनमें, तीन या चार विकल्प होते हैं, जैसे -

1. मनुष्य के पास हर समय क्या रहता है?

   1. हाथ 2. कपड़ा, 3. जूता 4. रूपये

2. अधिकतर आदमी चशमा क्यों पहनते हैं?

   1. इससे बुद्धि तेजी होती है 2. यह सस्ता होता है 3. उनकी आँख कमजोर है 4. यह सुन्दर लगता है

3. गोल पृथ्वी है होती: (i) सही (ii) गलत (iii) मालूम नहीं
4. मास्को कहाँ है? (i) फ्रांस (ii) इंगलैण्ड (iii) भारत (iv) रूस
5. नीचे प्रत्येक में सात शब्द दिये हैं पहले दो शब्दों के बीच जो सम्बन्ध है वैसा ही तीसरे शब्द का अंतिम चार (4,5,6,7) शब्दों में से किसी एक के साथ है सही शब्द के सामने वाले गोले X पर का निशान बनाओ।

1. आहार 2. भूख 3. पानी	4. बाल्टी	0
	5. प्यास	0
	6. इच्छा	0
	7. बादल	0

6. नीचे के प्रश्न में अन्त में दी हुई चार संख्या में से जिस एक संख्या से बाहर की संख्याओं की रिक्त स्थान की पूर्ति हो सके उसके गोले पर गुणा (X) का निशान बनाओ

6, 9, 12_______________18,21.   13   0

15	0
19	0
22	0

यह परीक्षण मिडिल ग्रेड के स्कूल अंकों का एक अच्छा भविष्यवाचक (predicted) है

II. Otis का स्व-प्रशासित मानसिक योग्यता परीक्षण (Self Administering Mental Ability Test) हिन्दी अनुशीलन फार्म B and C -

यह परीक्षण, माध्यमिक विद्यालय स्तर पर वयस्कों के लिए निर्माण किया गया है । इसमें 75 मद हैं जो 13 उप-परीक्षणों में विभाजित है जैसे -

1. Best Answers 2.Word meaning 3.Logical selection 4.Arithmetical Reasoning 5.Sentence meaning 6.Analogies 7.Mixed sentences 8.Classification 9.Number series 10.Directions 11.Provperbly 12.Instruction 13.Inference

यह परीक्षण क्रियात्म्क दक्षता (fuctional efficiency) का बहुत ही अच्छा परीक्षण है

III. अंग्रेजी भाषा में प्रमिला आहूजा का 9-13 वर्ष के छात्रों का लिए Group Test of Intelligence-इसमें 100 मद तथा सात संघटक (components) हैं । जैसे - 1.Screambled words 2.Anologies 3.Classification 4. Disarranged sentences 5. Some opposites 6. Series 7. Best Answers

English medium से पढ़ने वाले छात्र के लिए यह सबसे अच्छा परीक्षण है ।

अंग्रेजी भाषी परीक्षार्थियों के लिए दो और भी टेस्ट प्रचलित हैं ।

(i) M.E.Herbon का Kingston Test of Intelligence (From A and B) जो 10-12 वर्ष के बालकों के लिए है।

(ii) TALam ke and M J Nelson द्वारा संशोधन Henmon-Nelson Ability (From A and B कक्षा 3-12 के लिए निर्मित है । यह शैक्षिक कार्यो में सफलता का अच्छा मापक है । इनके अतिरिक्त दर्जनों टेस्ट हिन्दी भाषी लोगों के लिए उपलब्ध है जैसे -

(i) एस. जलोटा की समूहिक सामान्य मानसिक परीक्षण

(ii) आर. के. टण्डन की सामूहिक बुद्धि परीक्षण (1/61 और 2/70) 10.16 तथा 16 वर्ष से ऊपर के व्यक्तियों के लिए

(iii) R.K. Ojha और K.Ray Chaudhary का Verbal Intelligence 13-20 वर्ष के लिये

(iv) वयस्कों के लिए Roma Pal की सामान्य योग्यता परीक्षण इत्यादि।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)	
06	अंग्रेजी परिपेक्ष वाले के लिए कौन से टेस्टों का विवरण दिगयाहै?
	इनमै 3-12 और 9-13 वर्ष के लिए कौन से परीक्षण है?
07	Otis self administering में कितना प्रकार के उप-टेस्ट है?
08	वयस्कों के लिए किस शाब्दिक परीक्षा का वर्णन है?

12.2.2.2 अशाब्दिक बुद्धि परीक्षायें (Non-Verbal Test of Intelligence)

इनमें कुछ प्रमुख परीक्षण इस प्रकार हैं -

1 Raven, J.C.की

(i) Coloured progressive Matrices Set A, B, C, D,& E

13 वर्ष से नीचे के सामान्य बुद्धि वाले बालकों के लिए है । इसमें 36 समस्याएँ हैं जो मैट्क्सि पर आधारित है। यह साम्यनुमानिक (analogy) पर आधारित वर्तमान मानसिक तर्कशक्ति का परीक्षण करती है।

(ii) Standard Progressive Matrices-

यह 25 मिनट का टेस्ट 13 से 18 वर्ष के लोगों के लिए हैं । इसमें 60 समस्याएँ हैं।

(iii) Advanced progressive Matrices

Set I and II. यह परीक्षण 18 या उससे ऊपर वाले वयस्कों के लिए है।

पहले set में 12 तथा set 2 में 36 समस्याएँ हैं जो व्यक्ति की बौद्धिक कुशलता का परीक्षण करती है । यह व्यक्ति की सम्पूर्ण सुव्यवस्थित चिन्तन से सम्बन्धित है।

2. R.B. Cattell द्वारा निर्मित परीक्षण -

(i) Test of ‘G’Culture Fair Scale I (English) 4 से 8 वर्ष के बालकों के लिए

22 मिनट का यह Test आयु वर्ग के त्वरित शैक्षिक कार्यकम के लिए छात्रों के चुनाव में सहायक है। इसमें Substitution, classification, maze, selecting, named objects, following direction, wrong pictures, Riddles तथा Similarities जैसी 8 समस्याएँ हैं ।

(ii) Scale II (Hind) Forms Aand B.

13 मिनट का यह Test $7\frac{1}{2}$ से 14 वर्ष के लिए है। यह परीक्षण ऐसे कार्यो (jobs) जिनमें ज्ञानात्मक योग्यता की आवश्यकता होती है उसको करने की क्षमता का आंकलन करने में सहायक है।इसमें 4 प्रकार की समस्याएँ हैं. (i) श्रृख्ला (Series) (ii) वर्गीकरण (Classification) (iii) मैट्रिक्स(Matrices) (iv) शर्ते (conditions)

(iii) Scele III Froms A and B (Hindi)

Scale II की तरह का ही यह टेस्ट 13 & 15 और वयस्कों के लिए है ।

3. A. K.Sharma का 'G' मापन करने वाली अशाब्दिक परीक्षण -

15 मिनट का यह परीक्षण 10 से 16 वर्ष के लिए है । यह परीक्षण के समय परीक्षार्थी के 'G' facts का पता लगाने में सहायक है ।

इसमें अतिरिक्त कई और भी अशाब्दिक टेस्ट हैं जैसे 20 मिनट का 8-13 वर्ष के लिए H.C.Joshi और R.B.Tripathi का Non-verble Group test of Intelligence, Krishan Boyati का logic Atitory Test इत्यादि।

III. मिश्रित बुद्धि परीक्षण - इनमें शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों प्रकार के परीक्षण शामिल होते हैं ।

1. P.N.Mehrotra का mixed group test of intelligence. यह परीक्षण 20 मिनट का है तथा 11-17 वर्ष के परीक्षार्थियों के लिए है । यह इसलिए परीक्षार्थियों के सामान्य मानसिक योग्यता की अधिक अच्छा चित्र प्रस्तुत करता है ।

2. Schaic-Thurstone Adult Mental Abilities Test -

25 मिनट का यह टेस्ट वयस्कों के लिए है जिसमें मानसिक योग्यता का परीक्षण पहचान (recognition),स्मृति (memory), आकृति-चक्रम (figure rotation), अक्षर सरीन श्रृख्ला (letter series), अंक जोड़ (Number addition) और शब्द प्रवाह (world fluency) जैसे परीक्षण है।

3. J.P.Gulford के structure of intellect model पर आधारित उषा खिरे (Usha Khire) द्वारा अनुशीलन क्रिया- यह परीक्षण वयस्कों के लिए है। 90 मिनट का यह परीक्षण 120 परीक्षणों के आधार पर आकृतिक (figural), प्रतीकात्मक (symbolic), अर्थग्रामी (semantic) और व्यवहारिक (behavioural) बुद्धि का परीक्षण करता है।

12.2.3 व्यक्तिगत बनाम समूहिक बुद्धि परीक्षण (Individual VS Group tests of Intelligence)

जैसे ऊपर देखा गया इनकी अपनी विशेषताएँ हैं। व्यक्तिगत परीक्षण न केवल बुद्धि स्तर का व्यापक, गहराई से भी परीक्षण करते हैं। इसके साथ ही, परीक्षण के बीच परीक्षार्थी के अन्य ऐसी गतिविधियों का भी अवलोकन कर सकते हैं जो उसके बुद्धि के स्वभाव तथा स्तर को और अच्छी तरह बता सके परन्तु उसकी सबसे बड़ी कमी यह है कि इसका प्रयोग सामान्यत: केवल प्रशिक्षित अनुभवी मनोवैज्ञानिक ही कर सकते हैं। इसमें समय भी अधिक लगता है।

सामूहिक परीक्षण किफायती होते हैं यह एक समय में एक साथ एक समूह का परीक्षण कर सकते हैं। इनके प्रशासन (administration) के लिए किसी विशेषज्ञ की भी सामान्यत: आवश्यकता नहीं हो परन्तु इनकी भी अपनी सीमा है। यह बुद्धि का इतना व्यापक मापन नहीं कर सकते जितना कि व्यक्तिगत परीक्षण न ही यह उतनी गहराई तक जा सकते है।

इसलिए बुद्धि के मापन में जहाँ आवश्यक हो दोनों का प्रयोग वांछित होगा। सामूहिक परीक्षण से सरसरी तौर पर परीक्षार्थी का बौद्धिक स्तर ज्ञात किया जाता है परन्तु जहाँ बुद्धि के स्तर का स्वभाव के बारे में कोई शक हो वहाँ व्यक्तिगत परीक्षण द्वारा उसका निराकरण किया

जा सकता है। इसलिए जहाँ सामूहिक परीक्षणों का प्रयोग स्कूल और कॉलेजों में किया जाता है इनका प्रयोग संस्था में प्रवेश पाने योग्य छात्रों को चुनने में सफलतापूर्वक किया जा सकता है परन्तु जहाँ नैदानिक (diagnostic) स्थितियों का प्रश्न है वहाँ व्यक्तिगत परीक्षण अधिक उपयुक्त होगी।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

09 अशाब्दिक परीक्षणों में 14 वर्ष और उससे कम वाले कुछ परीक्षण बताइये ।

10 वयस्कों के लिए कुछ परीक्षण सोचिये ।

11 Ginlford के Structure of Intellect model पर आधारित उषा खिरे के परीक्षण में कितने प्रकार की बुद्धि का परीक्षण किया गया है?

12 व्यक्तिगत बनाम सामूहिक परीक्षणों की समीक्षा करके बताइये किस स्थिति में कौन सा परीक्षण अधिक उपयोगी होगा।

12.3 शिक्षण-अधिगम व्यवस्था में बुद्धि परीक्षाओ का उपयोग (Uses of Intelligence Test in Teaching Learning System)

बुद्धि परीक्षणों का शोध कार्यो में अक्सर प्रयोग हुआ है परन्तु व्यवहारिक स्थितियों में जहाँ परीक्षार्थियों के बारे में कोई निर्णय लेने की आवश्यकता थी, जैसे -

1. किसी शैक्षिक कार्यक्रम में प्रवेश देने के लिए या किसी प्रकार के रोजगार के लिए चुनाव करने में निर्णय लेने के लिए-

   चयनकर्ता अर्थात जो इस प्रकार का निर्णय लेते हैं वह निर्धारित आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त बुद्धि परीक्षण का प्रयोग करते हैं। हाँ, यह अवश्य है कि अधिकांश स्थितियों में बुद्धि परीक्षण चुनाव प्रक्रिया का एक भाग होती है। प्रभावी निर्णय में कई अन्य सूचनाओ या परिक्षणों का समावेश होता है।

   सभी प्रमुख शैक्षिक एवं तकनीकी विद्यालय (जैसे इंजीनियरिंग कॉलेज, मेडिकल कॉलेज इत्यादि) किसी न किसी प्रकार की मानसिक योग्यता परीक्षण का प्रयोग करते हैं।

2 प्रभावी शिक्षक अपने छात्रों के बुद्धि स्तर का आंकलन करने के लिए बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग कर सकते हैं या उसके लिए किसी मनोवैज्ञानिक की सहायता ले सकते हैं।

   कक्षा में सभी छात्र समान बुद्धि स्तर के नहीं होते, साधारण कक्षा में लगभग दो तिहाई सामान्य बुद्धि स्तर के होते हैं, कुछ कुशाग्र बुद्धि वाले तथा कुछ सामान्य से कम बुद्धि वाले होते हैं। इन दोनों असामान्य वर्ग के छात्र अपनी योग्यता का भरपूर उपयोग कर सकें उसके लिए शिक्षक को उन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

   ऐसे छात्रों की पहचान करने, जिससे सुव्यवस्थित निर्देशन के द्वारा कक्षा संप्राप्ति सुधारा जा सके, बुद्धि का परीक्षण काफी सहायक हो सकते हैं।

3. वृत्त अध्ययन (Case study) में-

कक्षा में कई छात्रों का व्यवहार काफी असामान्य होता है। ऐसे छात्र कक्षा गतिविधियों पर ध्यान नहीं देते। ऐसे छात्रों में संवेगात्मक दृष्टि से ग्रसित छात्रों के अलावा काफी संख्या मन्द बुद्धि वाले या कुशाग्र बुद्धि छात्र हो सकते हैं । कुशाग्र बुद्धि वाले छात्रों की कक्षा की गतिविधियां नीरस लगती हैं क्योंकि वे काफी सरल लगती हैं या उन्हें पहले से जानते हैं। वे कुछ चुनौतीपूर्ण कार्य करना चाहते हैं। इसके विपरीत मन्द बुद्धि वाले छात्रों को कक्षा की गतिविधियों में इसलिए रूचि नहीं हो पाती क्योंकि अधिकतर वे उनके समझ में नहीं आती। ऐसे दोनों सिरे (extreme) के छात्र कक्षा में असामान्य करके न केवल अपने अहित करने अपनी हरकतों से कक्षा में अनुशासन की समस्या उत्पन्न कर सकते हैं।

ऐसे छात्रों को पहचानने तथा उनके लिए उपचारिक शिक्षण (remedial teaching) के स्वरूप को निर्धारण करने में बुद्धि परीक्षाएँ काफी सहायक हो सकती हैं।

पहले माना जाता था कि बुद्धिलब्ध (I.Q.) जन्मजात होती है परन्तु अब साक्ष्य यह प्रदर्शित करते हैं कि बुद्धि परीक्षाएँ एक प्रकार की ऐसी क्षमता का मापन करती हैं जो परम्परागत विद्यालयों में सफलता का द्योतक है। अब यह स्थापित हो चुका है कि उपयुक्त अधिगम वातावरण प्रदान करके किसी छात्र के I.Q. में परिवर्तन लाया जा सकता है, दूसरे शब्दों में उनकी शैक्षिक क्षमता को बढाया जा सकता है। शिक्षक इस दिशा में प्रयत्न कर सकते हैं।

4. वृत्तिक योजना बनाने (Career planning) में

किसी भी जीविका के लिए योजना बनाने में बुद्धि परीक्षण के परिणाम काफी सहायक हो सकते हैं। अधिकांश उच्च स्तरीय पेशे में उच्च स्तरीय शिक्षा एवं बुद्धि की आवश्यकता होती है। विशेषकर सरकारी नौकरियों, जैसे I.A.S. P.C.S इत्यादि या तकनीकी पेशों में जैसे Doctor, Engineer इत्यादि। इसलिए जीवनवृत का चुनाव करते समय बुद्धि स्तर का ज्ञान काफी सहायक हो सकता है। उदाहरण के लिए सामान्यत: 100 I.Q. वाले छात्र की I.A.S.जैसी प्रशासनिक सेवाओ चुनाव या I.I.T. जैसी संस्थाओं में प्रवेश पाने की सम्भावना काफी कम होगी । उनके लिए सामान्यत: सरल सा पेशा या I.T.I.या Polytechnique जैसा शिक्षण अधिक लाभकारी हो सकता है। परन्तु अपवाद कहीं भी हो सकते हैं।

शिक्षक तथा परामर्शदाता इसके आधार पर छात्रों को भावी व्यसायिक योजना बनाने में काफी सहायक हो सकते हैं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

13 बुद्धि परीक्षण शिक्षको के शिक्षण कार्य में किस प्रकार सहायक हो सकते है ?

14 निर्णय लेने वाली संस्थाएं इनका क्या प्रयोग कर सकती है?

12.4 सारांश (Summary)

शिक्षण-अधिगम को छात्रों की व्यक्तिगत क्षमताओं को ध्यान में रखकर अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की मानसिक परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। इनमें बुद्धि परीक्षणों का प्रमुख स्थान है ।

इन परीक्षणों को मुख्यत: दो प्रमुख वर्गो में विभाजित किया जा सकता है : व्यक्तिगत निष्पत्ति परीक्षण तथा सामूहिक (शाब्दिक, अशाब्दिक एवं मिश्रित परीक्षण)

व्यक्तिगत निष्पत्ति परीक्षण में, भारतीय संदर्भ में बनी Bhatia's Battery of Performance काफी प्रचलित है। इसमें (i) Koh's Block Design (ii) Alexander's pass-Along (iii) Pattern Drawing तथा (iv) Immediate Memory जैसे चार उप परीक्षण हैं जिनके आधार पर I.Q. Intelligence Quotient तथा P.Q. (Performance Quotient) दोनों प्राप्त होते हैं।

विदेशी व्यक्तिगत परीक्षणों जिनका भारतीय संदर्भ में अनुशीलन हुआ है उनमें स्टेनफोर्ड बिने तथा वेक्सलर के विभिन आयु स्तर के टेस्ट काफी प्रचलित हैं। स्टेनफोर्ड बिने आयु स्तरों पर श्रेणीकृत हैं तथा इससे वास्तविक और मानसिक आयु के आधार पर बुद्धिलब्ध (I.Q.) की अवधारणा विकसित हुई है।

वेक्सलर के कई स्तर के टेस्ट हैं, प्रौढ़ी के लिए Wechsler Adult Scale, पुन: विद्यालय तथा प्राथमिक विद्यालय के बालकों के लिए Wechlers Pr. Primary and Primary Scale तथा बालकों के लिए Weshlers Intelligence Scale for children.

यह परीक्षण आयु वर्ग पर श्रेणीकृत न होकर इसमें समान प्रकार के उप परीक्षणों को एक साथ समूहित किया है । इसमें विचलन बुद्धिलब्ध (devitation I.Q.) अवधारणा विकसित हुई जिसे I.Q. के रूप में भी बदला जा सकता है ।

सामूहिक परीक्षणों में शाब्दिक वर्ग में हिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्रयाग मेहता की सामान्य बुद्धि परीक्षण Otis की Self-administering Mental Attitutory Test तथा अंग्रेजी परिपेक्ष वाले बालकों के लिए प्रमिला आहूजा की Group Test of Intelligence, Hrbon की Kingston Test of Intelligence तथा Henmon Nelson Test of Mental Ability है।

अशाब्दिक परीक्षणों में Programme Matrices colourted P.M.standard P.M.तथा Advanced P. M.,Cattell की Test of 'G' Culture Fair Scale I, IIऔर I।। है तथा A.K.Shaema की 'G' मापन करने वाली अशाब्दिक परीक्षण है।

मिश्रित वर्ग में P.N. Mehrotra की Mixed Group Test of Intelligence तथा Schaie-Thomstone Adult Mental Abilities Test उपलब्ध है।

Guilford के Structure of Intellect Model पर आधारित उषा खिरे का भी टेस्ट है।

बुद्धि परीक्षणों का शोध के अतिरिक्त (i) किसी संस्था में चुनाव या रोजगार के लिए (ii) शिक्षकों का अपने छात्रों के बुद्धि स्तर का आंकलन करने के लिए (iii) वृत्त अध्ययन वृत्तिक योजना बनाने में परामर्श देने हेतु या जहाँ निर्णय लेने का प्रश्न आता है, वह प्रयोग किया जा सकता है।

12.5 शब्दावली (Glossary)

सामूहिक परीक्षण - जो एक समय में पूरे समूह को दिये जा सकते है।

व्यक्तिगत परीक्षण - जिन्हें एक समय में केवल एक व्यक्ति को दिया जा सकता है ।

निष्पत्ति परीक्षण - जिसमें उत्तर लिखने के स्थान पर मौखिक आदान-प्रदान का या कुछ करने को कहा जाता है।

शाब्दिक परीक्षण - इसमें भाषा के माध्यम से प्रश्न उत्तर होते हैं।

अशाब्दिक परीक्षण - इसमें भाषा की जगह आकृतियों का प्रयोग होता है।

टेस्ट अनुशीलन - इसमें मूल टेस्ट (जो विदेशी भाषा में होता है) को जिस स्थिति में उसको प्रयोग करना है उसके अनुकूल बनाया जाता है । प्रश्नों को नये परिपेक्ष में रखा जाता है तथा मानक भी उस स्थिति के अनुसार बनाये जाते हैं।

$$\text{बुद्धि लब्ध (I.Q.)} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

विचलन बुद्धिलब्ध (Deviation I.Q.)

$$= 100 + \frac{X - M}{U} \times 15$$

'G'- समान बुद्धि (General Intelligence)

Matrices Tests- इसके ऊपर एक डिजाइन दी हुई होती है जिसका एक टुकड़ा कटा होता है । वह नीचे की डिजाइनों में से होता है । सही टुकड़ा ढूंढना ही उत्तर होगा ।

Career Counselling- किसी जीविका वृत्त के लिये चुनाव में परामर्श देना।

12.6 संदर्भ ग्रंथ (Further Readings)

1. Boring E.G.; Longfeld, H.S. and Weld,H.P.(Indian Print 1963), Asia Pub. House, New Delhi.
2. Munn, N.L.(1961):Hindi Edn.Raj Kamal Prakashan of Ltd,Delhi.
3. Anne Anatasi (1982): MacMillan Pub.Co.New York.
4. Bigge, M.L.and Hunt, M.P. (1986): Psychological Foundation of Education (Sec.Ed.), Harper and Row, New York.
5. Gates, A.I. Jersild, A.T. and Challman (1948) (third Ed.), The Macmillan Company, New York.
6. Blair, G.M. jones, R.S. and Simpson, R.H. (1962 sec.Ed.),The Macmillan Company, New York.
7. Raizada, B. S. शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व ।

12.7 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answers/Hints to Self-Learning Exercises)

01. 90- 120 मिनट का यह एक निष्पत्ति परीक्षण है । इसमें 5 उप परीक्षण है, 4 में कुछ उलट-फेर (Manupulation) करना होता है । एक स्मृति का परीक्षण है ।

02. Deviation I.Q. =100 $+\frac{X-M}{U}\times 15$

03. 4/5 $\times$100=80 I.Q.,9/10$\times$100 =90 I.Q. इसलिए प्रथम की कमी अधिक तीव्र है ।

04. ऐसे व्यक्तियों के शाब्दिक तथा निष्पत्ति पर काफी भिन्न होते हैं ।

05. (1) इनको अनपढ़ लोगों या विदेशियों को भी दिया जा सकता है ।

(2) परीक्षार्थी के अन्य गतिविधियों (टेसू के बीच पर भी ध्यान रखा जा सकता है) ।

(3) बुद्धि के बहुत से आयामों का परीक्षण किया जा सकता है ।

06. (i) Pramila Ahuja का Group Test of Intelligence 1-13 वर्ष के लिए

(ii) Kingston Test (iii) Henmon-Nelson Test

07. 13 उप टेस्ट

08. Rama Pal तथा K. R. Chaudhay

09. Coloured Progressive Matrices: Test of ‘G’ Cuture Fair Scale-I

10. Advaced Progressive Matrices: Test of ‘G’Culture Fair Scale-III

11. आकृतिक, व्यवहारिक, प्रतीकात्मक, अर्थग्रामी

12. स्थापक और गहराई में जाने के लिए व्यक्तिगत, किफायती दृष्टि से सामूहिक

13. Selection के लिए, कक्षा के विभिन्न छात्रों का बुद्धि स्तर ज्ञात करने के लिए(प्रभावी शिक्षण के लिए) वृत्त अध्ययन के लिए, वृत्तिक योजना में सहायता के लिए

14. उपयुक्त अभ्यर्थियों के चुनाव के लिए या Promotion इत्यादि देने के लिए

12.8 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Question)

1. अभ्यर्थियों के चुनाव में साक्षात्कार काफी है या बुद्धि परीक्षा या दोनों अपने तर्क दें।
2. व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षणों की अच्छाइयां एवं कमियाँ बताइये।
3. वेक्सलर तथा स्टेनफोर्ड बिने में से आप किसको अधिक प्रभावी समझते हैं। अपने तर्क दें।
4. I.Q. को परिभाषित कीजिए। क्या यह स्थायी है? उत्तर की व्याख्या कीजिए।
5. I.Q.तथा deviation I.Q. को परिभाषित करते हुए उनमें सम्बन्ध तथा भिन्नता बताइये।
6. शिक्षक के रूप में आपके छात्रों के बुद्धिलब्ध उनके बक्तिगत शिक्षण में किस प्रकार सहायक हो सकते हैं?
7. Career Counselling में बुद्धि स्तर का ज्ञान किस प्रकार सहायक हो सकता है? उदाहरण देकर स्पष्ट करें।

इकाई 13 (UNIT 13)

सृजनात्मक : अवधारणा, बुद्धि से सम्बन्ध, सृजनात्मक का मापन (Creativity: Concept, Relationship Intelligence, with Measurement

इकाई की संरचना (Structure)

13.0 उद्देश्य (Objectives)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

13.2 सृजनात्मकता की अवधारणा (Concept of creativity)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

13.3 सृजनात्मकता को बुद्धि से सम्बन्ध (Relationship of intelligence with creativity)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

13.4 सृजनात्मकता को मापन करने वाली विधियों (Measurement of creativity)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

13.5 सारांश (Summary)

13.6 शब्दावली (Glossary)

13.7 संदर्भ ग्रंथ (Futher reading)

13.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer/Hints to Self-learning exercises)

13.9 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-end Questions)

13.0 उद्देश्य (Objective):

इस इकाई के अध्ययन बाद आप :

(1) सृजनात्मकता की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे ।

(2) सृजनात्मकता और बुद्धि में सम्बन्ध समझ सकेंगे तथा विभेदीकरण कर सकेंगे ।

(3) सृजनात्मकता का मापन करने वाले कुछ प्रमुख परीक्षणों की सूची बना सकेंगे तथा उनकी विशेषताओं को समझ सकेंगे ।

13.1 प्रस्तावना (Introduction):

आज सभी यह स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में समाज की सृजनात्मक प्रगति नितांत आवश्यक है, क्योंकि इसका दूसरा एक मात्र विकल्प है मानव-विनाश। आज सभी विकासशील देश बराबर यह महसूस कर रहे हैं कि उनका भावी भौतिक तथा सांस्कृतिक हित, प्रगति, यहाँ तक कि उनका अस्तित्व अपनी राष्ट्रीय सृजनात्मक पूँजी को

बुद्धिमतापूर्वक प्रयोग करने में ही निहित है। "हम भूल जाते हैं कि विपुल खनिज सम्पदा ही किसी देश को स्वयं में सम्पन्न नहीं बनाती, न उसकी कमी ही किसी देश को निर्धन बनाती है, किसी भी देश की सबसे बड़ी सम्पदा उसके भूगर्भ में नहीं बल्कि उसके देशवासियों की पटुता (ingenuity) तथा कुशलता में है। सृजनात्मक के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान आपको अपने छात्रों में सृजनात्मकता का विकास करके उन्हें रचनात्मक जीवन के लिए तैयार करने में सहायक हो सकता है।

सृजनात्मक क्षमता का मापन करने के लिए कई प्रकार की परीक्षाएँ प्रयोग में लाई गई जैसे, शब्द सहचर्य, वस्तुओं के विभिन्न उपयोग, छिपी आकृति ढूँढना, अधूरी नीति-कथा का अन्त बताना, समस्या निर्माण, आकृति पूर्ति, वश्त्त सम्बन्धी कार्य, उत्पादन सुधारक कार्य, टिन के डिब्बों का असाधारण प्रयोग, दूरस्थ सम्बन्ध ज्ञात करना, समस्या का हल निकालना, रोशा समकक्ष परीक्षा आकृति अधिमान परीक्षा इत्यादि। सृजनात्मकता का पता लगाने के लिए व्यवहार सूचकों का भी प्रयोग किया गया।

13.2 सृजनात्मकता की अवधारणा (Concept of Creativity):

सृजनात्मक के अध्ययन के प्रथम सुसंगठित प्रयास गाल्टन (Galton), के अध्ययन में मिलते हैं।आगे चलकर कैटेल (Cattell) तथा हैवलाक इलिस (Havelock Ellis) ने इस दिशा में योगदान दिया। परन्तु बिना बुद्धि परीक्षा के प्रकाशन के बाद इस दिशा में लगभग पचास वर्ष तक कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। उसके बाद गिलफोर्ड के प्रयत्नों ने इसमें नई जान फूंकी और सृजनता से संबन्धित अनुसंधान काफी तेजी से होने लगे। इस दिशा में गेटजेल्स, जैक्सन, टेलर तथा टॉरेन्स के अध्ययन काफी महत्वपूर्ण है। पिछले बीस वर्षों में 500 से अधिक अध्ययन सृजनात्मकता के क्षेत्र में किये जा चुके हैं।

सृजनात्मकता को कई उपागमों (approaches) से समझने का प्रयत्न किया गया है। टॉरेन्स (Torrence), मेडनिक और मेडनिक (Mednick & Mednick), वरवेलिन (Vervalin) इत्यादि ने इसकी ऐसी चिन्तन प्रक्रिया के रूप में संकलना की है जो नवीन संयोजनों का निर्माण करती है। यह एक अपसारी चिन्तन प्रक्रिया है जिसमें मस्तिष्क की विभिन्न दिशाओं में सोचना होता है। स्टेन (Stein), ड्रेव्डहाल (Drevdahl), वालाक और कोगान (Wallach & Kogan), दवे (Dave), करपेन्टर और हैड्डान (Carpenter & Haddon) इत्यादि सृजनात्मकता को एक ऐसी उत्यादक क्षमता के रूप में देखते हैं जो नवीन तथा उपयोगी परिणामों को प्राप्त करने में सहायक होती है। उपयोगी परिणामों में वह सब कुछ आता है जो हमारे ज्ञान तथा अवबोध के क्षेत्र को बढ़ाता है। सृजनात्मक व्यक्तियों की विशेषताओं का पता लगाकर भी सृजनता के स्वरूप का अनुमान लगाया गया है। अधिकांश अध्ययनों में सृजनात्मक व्यक्तियों में कई विशेषताएँ मिली, जैसे- अपरम्परागत विचारधारा, व्यक्तियों की अपेक्षा वस्तुओं में अधिक रूचि, अनुभवों के प्रति खुला मस्तिष्क, लगन, अप्रत्याशित मानसिक शक्ति, प्रवाही चिन्तन, गम्भीर परन्तु स्वाग्रही प्रवृत्ति, परिहासी, उत्सुक, काल्पनिक तथा संवेदी व्यक्तित्व, अव्यवस्थाओं के प्रति सहनशीलता तथा अच्छा मानसिक स्वास्थ्य। बकर मेहदी (Baqer Mehdi) के अनुसार सृजनात्मकता की

सम्पूर्ण परिभाषा देने के लिए उसमें इन सभी उपागमों का समावेश होना चाहिए, इसलिए उसने सृजन की परिभाषा इस प्रकार दी है -

"हम सृजन को ऐसी चिन्तन प्रक्रिया के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो किसी व्यक्ति को, सामान्यत: वातावरण से उपयुक्त प्रेरणा मिलने पर, कुछ ऐसी सामग्री उत्पन्न करने योग्य बनाती है जो उसके स्वयं के लिए या समाज के लिए नवीन और उपयोगी हो ।"

सृजनात्मकता की अन्य कुछ विशेषताएँ

(1) सृजनात्मकता एक विस्तृत संकल्पना है। नवीन कलाकृतियों, कलात्मक, अभिव्यक्तियों तथा वैज्ञानिक आविष्कारों से लेकर बढ़ई, लोहार या अन्य कुशल कारीगरों के कार्यों में भी सृजनात्मकता हो सकती है।

(2) सृजन एक मात्र एकांगी प्रवृत्ति नहीं होती अपितु विभिन्न प्रकार की योग्यताओं एवं व्यक्तित्व की विशेषताओं की समन्वित विशिष्ट वृत्ति होती है।

गिलफोर्ड (Guilford), के अनुसार सृजन में छ: प्रकार की योग्यताएँ शामिल हैं : विचारों की नम्यता, प्रवाहशीलता, मौलिकता, विस्तरण योग्यता, पुनर्व्याख्या शक्ति तथा समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता। इसके अतिरिक्त इसमें व्यक्तित्व के भी गुण शामिल है। थार्नडाइक (Thorndike) के विचार भी गिलफोर्ड के विचारों से मिलते-जुलते हैं।

(3) सृजनात्मकता तथा शैक्षिक संप्राप्ति में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

फ्लेशर (Flescher) तथा हालैण्ड (Holland) के अध्ययनों में सृजनात्मकता तथा शैक्षिक सफलता में बहुत कम सह-सम्बन्ध देखने को मिला परन्तु जहाँ सार्थक सम्बन्ध देखे गये वहाँ सृजनात्मक बालक काफी उच्च स्तरीय बुद्धिलब्ध वाले थे।

(4) अन्य कुशलताओं तथा योग्यताओं की तरह सृजनात्मक कुशलतायें तथा योग्यताएँ भी निश्चित अवस्थाओं से बढ़ती और विकसित होती है। उदाहरण के लिए लोवेनफेल्ड (Lowenfeld) ने चित्रकला विकास में निम्नलिखित अवस्थाएँ बताई -

(i) अव्यवस्थित आरेखण (disorderly scribling) (दो वर्ष के लगभग) ।

(ii) लम्बी या नियन्त्रित रेखायें (longitudinal or controlled scriblings) - इन रेखाओं का नाम देना तथा आकार की संकल्पना का अवबोध (7 से 9 वर्ष की आयु के बीच) ।

(iii) रेखाचित्र खींचने में वास्तविकता का ध्यान (drawing realism) (9 से 11 वर्ष की आयु तक) ।

(iv) कूट-यथार्थवादी या तार्किक अवस्था (Pseudo realistic or reasoning age) (11 से 13 वर्ष की आयु तक) ।

(v) निर्णय लेने की अवस्था (किशोरावस्था पर) ।

लोवेनफेल्ड के अनुसार इन अवस्थाओं के साथ दी गई आयु केवल औसत के रूप में है। अन्य विकासों की तरह बालक इनसे या अन्य अवस्थाओं से अपनी स्वाभाविक निपुणता तथा प्राप्त अवसर के अनुसार विभिन्न आयु पर गुजरते हैं।

इसी प्रकार बालक संगीत तालबद्ध क्रियाओं जैसे नृत्य, मिट्टी के नमूने, शिल्प कार्य तथा अन्य कलात्मक क्षेत्रों में सृजनात्मक प्रदर्शन के पहले कुछ विशिष्ट अवस्थाओं से गुजरते हैं।

(5) सृजनात्मक का विकास शैशवकाल से लेकर किशोरावस्था तक एक समान नहीं होता। इस बीच इसमें कई उतार चढ़ाव आते हैं।

पहला उतार इसमें पाँच वर्ष पर आता है फिर पहली से लेकर तीसरी कक्षा तक इसमें वृद्धि होती रहती है। चौथी कक्षा के आरम्भ में अर्थात् लगभग 9 वर्ष की आयु में इसमें फिर उतार आता है। पाँचवीं कक्षा में विकास चक्र फिर बढ़ना शुरू होता है और सातवीं कक्षा में अर्थात लगभग 12 वर्ष की आयु पर इसमें तीसरी बार फिर उतार आता है। इसके बाद इसमें क्षतिपूर्ति और फिर अपरिवर्ती चढ़ाव आता है जो ग्यारहवीं कक्षा तक अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है।

टॉरेन्स (Torrence) के अनुसार 5, 9 तथा 12 वर्ष की आयु पर आने वाले मन्दन (retardation) का कारण यह होता है कि बालक का सांस्कृतिक तथा शैक्षिक वातावरण उससे सामाजिक अनुरूपता (conformity) की नई-नई माँग करता है। पहला उतार मध्यबाल्यकाल के आरम्भ पर उस समय आता है जब बालक बाह्य अधिकारों की सामाजिक माँगों तथा अपेक्षाओं के प्रति जागरूक होता है। दूसरा उतार, 9 वर्ष की आयु में उस समय आता है जब बालक अपने समलिंगी साथियों द्वारा अपनाये जाने तथा उनके अनुमोदन की बढ़ती हुई आवश्यकता को महसूस करता है और तीसरा उतार 12 वर्ष की आयु पर उस समय आता है जब किशोरावस्था की चिन्ताएँ उसे सताने लगती है। टॉरेन्स ने अपनी उपरोक्त परिकल्पना के परीक्षण के लिए देश-विदेश के प्रदत्त इकट्ठे किये। उसने देखा कि समोआ (Samoa) जैसे प्राचीन समाज में, जिसमें सामाजिक माँगों में उतार-चढ़ाव नहीं था, क्योंकि समोआ की संस्कृति शुरू से ही कड़ी और रूढ़िवादी थी, बालकों के सृजनात्मक विकास में भी किसी आयु पर कोई उतार नहीं था, यद्यपि बालकों के सृजन अंक उतने अधिक नहीं थे जितने कि साधारण अमेरिकन बच्चों के थे। आस्ट्रेलिया तथा जर्मनी में उतार चौथी कक्षा के स्थान पर तीसरी कक्षा में पाया गया परन्तु भारत में अमेरिका की तरह उतार चौथी कक्षा में ही पाया गया। टॉरेन्स ने चौथी कक्षा के लिए एक विशेष प्रकार की शिक्षण सामग्री का प्रयोग करके यह भी प्रदर्शित किया कि विशेष प्रशिक्षण से यह उतार रोका भी जा सकता है।

कुछ अन्य अध्ययनों ने भी यह प्रदर्शित किया है कि सृजन के विकास में कुछ अवस्थाएँ ऐसी आती हैं जब बालक अपेक्षाक्रत कम सृजनात्मक होता है। कारआंग (Karang) ने भी यह देखा कि बालकों के सृजनात्मक स्वभाव में किशोरावस्था में परिवर्तन आता है।

(6) सृजनात्मक विकास में लैंगिक विभिन्नता भी होती है।

टॉरेन्स के एक अध्ययन में सृजनात्मक चिन्तन के लगभग सभी पक्षों में बालक, बालिकाओं की अपेक्षा अधिक अच्छे थे।

(7) सृजनात्मक चिन्तन प्रक्रिया में चार मुख्य अवस्थाएँ होती हैं जो सामान्यत: तर्कना के समकक्ष होती है परन्तु यह बड़ा स्पष्ट नहीं होती तथा परस्परव्यापी (overlapping) होती है।

(i) तैयारी (Preparation), वह अवस्था जब विभिन्न विचारों और योजनाओं पर विचार किया जाता है । इन विचारों में से जो विचारणीय समझा जाता है उसका उद्भवन

(incubation) काल में कई प्रकार से विस्तरण किया जाता है और यदि आवश्यक हुआ तो काफी हद तक उसका रूपान्तरण भी किया जाता है।

(ii) उद्भवन काल (incubation), यह काफी लम्बा हो सकता है, यहाँ तक कि कई वर्षों का जिसमें व्यक्ति (अर्थात कवि, संगीतकार, कलाकार, आविष्कारक या वैज्ञानिक) अपनी समस्या के हल पर नहीं पहुँच पाता।

(iii) प्रदीप्ति (illumination). इस अवस्था में विचार, हल या संरचना, चाहे वह पेंटिंग के रूप में हो किसी संगीत की धुन हो, या वैज्ञानिक खोज के रूप में हो, एकाएक सम्पूर्ण रूप से कोई निश्चित स्वरूप धारण कर लेती है।

(iv) सत्यापन (verification). इस अवस्था में सम्पूर्ण रूप से प्राप्त हल के अनुरूप हल का विस्तृत ब्यौरा बनाने की प्रक्रिया होती है। इसी में हल की संरचना या ब्यौरा के बारे में आलोचना करके या उसका परिशोधन करके उसे अन्तिम रूप दिया जाता है।

(8) सृजनात्मक व्यवहार, प्रेरणा, कड़ी मेहनत, आत्म-नियन्त्रण और सृजनात्मक क्रिया के साथ तादात्म्य तथा आत्मा अभिव्यक्ति के फलस्वरूप होता है।

किसी भी सृजनात्मक चिन्तन का कारण कोई न कोई प्रेरणा होती है, सृजनात्मक उत्पादन अपने आप नहीं हो जाता है।

वाल्टर्स और ओ'हारा (Walters and O'Hara) के अनुसार प्राप्त प्रमाण इस ओर संकेत करते हैं कि प्रेरणा के क्षणों के पहले सामान्यत: लम्बी तैयारी की अवधि होती है जिसमें कठिन परिश्रम तथा अध्ययन होता है। प्रत्यक्षरूप से बिना आधारभूत अवयवों के कोई फल प्राप्त नहीं हो सकता, यद्यपि उनका संगठन तथा स्वरूप वास्तव में नवीन और सृजनात्मक हो सकता है। किसी भी कलात्मक क्षेत्र में कोई सार्थक योगदान देने के लिए ठोस, कठिन परिश्रम, उस क्षेत्र में दूसरों के कार्य का ज्ञान तथा आधारभूत तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है।

इन गुणों के अलावा, सृजन में सृजनात्मक क्रिया के साथ व्यक्ति का तादात्म्य, उसके माध्यम से आत्म-अभिव्यक्ति तथा प्रगति, सफलता और व्यक्तित्व विमुक्ति (release) जिससे उसे शान्ति और सुख की अनुभूति होती है, का होना भी आवश्यक है। छोटे से छोटे मिट्टी-कुट्टी के कार्य या पेंटिंग में भी इस प्रकार का आत्म-तादात्म्य, आत्म-अभिव्यक्ति तथा आत्म संतुष्टि का होना आवश्यक है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Peogress)

01. गिलफोर्ड ने सृजनात्मक में किन-किन योग्यताओं को शामिल किया है ?

02. सृजनात्मक की प्रमुख विशेषताएँ बताइये ?

13.3 सृजनात्मकता का बुद्धि से सम्बन्ध (Relationship):

केवल कुशाग्र बुद्धि वाले छात्र ही सृजनात्मक नहीं होते और न ही कुशाग्र बुद्धि वाले छात्र सृजनात्मक होते हैं। गेटजेल्स और जैक्सन (Getzels and Jackson) तथा टॉरेन्स (torrence) के अध्ययन यह प्रदर्शित करते हैं कि सृजनात्मकता तथा बुद्धि में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। गेटजेल्स और जैक्सन तथा टेलर (Taylor) ने देखा कि उच्च स्तरीय सृजनात्मक सफलता के लिए

एक न्यूनतम बुद्धि की आवश्यकता होती है और साधारणत: बुद्धिलब्ध का यह न्यूनतम स्तर लगभग 120 I.Q. लिया जाता है परन्तु इसके ऊपर बुद्धि वाले व्यक्तियों के लिए बुद्धि परीक्षा सृजनात्मक तथा असृजनात्मक व्यक्तियों में अन्तर करने में असमर्थ रहती है। इसी प्रकार सृजन अब केवल मेधावी व्यक्तियों का ही विशेषाधिकार नहीं माना जाता। सभी सामान्य लोगों में सृजनात्मक होने की कुछ न कुछ क्षमता होती है परन्तु इसे इसी प्रकार सीखना होता है जैसे हम समस्या हल करना सीखते हैं। हम उसे उसी प्रकार खो भी सकते हैं जैसे हम आत्मविश्वास खो बैठते हैं, उसी प्रकार दमन भी कर सकते हैं जैसे हम अपनी क्रीड़ात्मक प्रवृत्ति (playfulness) का दमन कर देते हैं तथा उसकी उसी प्रकार उपेक्षा कर सकते हैं जैसे हम गणित या अन्य विषय की करते हैं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

03. "सृजनात्मक तथा बुद्धि में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है" साक्ष्य दें।

13.4 सृजनात्मकता को मापन करने वाली विधियाँ (Measurement of Creativity)-

प्रमाणिक बुद्धि परीक्षाओं में अपसारी (divergent) चिन्तन की अपेक्षा अभिसारी (convergent) चिन्तन पर अधिक बल दिया जाता है। उनमें अधिकतर ऐसे प्रश्न होते हैं जिनके केवल एक ही उपयुक्त उत्तर होते हैं परन्तु सृजनात्मक परीक्षाओं में एक ही प्रयत्न के अनेक प्रकार के उत्तर हो सकते हैं अर्थात् इनमें अपसारी चिन्तन पर बल दिया जाता है। सृजनात्मक क्षमता के मापन में ऐसी परीक्षाओं का निर्माण होता है जिससे की व्यक्ति के चिन्तन की मौलिकता, प्रवाहशीलता तथा लचीलेपन का मूलांकन किया जा सके। इसके लिए साधारणत: खुले-मुख (open-ended) प्रश्नों का सहारा लिया जाता है इसलिए सृजनात्मक योग्यता का मूल्यांकन अपेक्षाकृत कठिन होता है।

जैसा कि सभी तत्त्वांश अध्ययनों में देखा गया, सृजनात्मक चिन्तन के अन्तर्गत आने वाले तत्त्वांश उन योग्यताओं से सम्बन्धित थे जो अपसारी चिन्तन के अन्तर्गत आती है इसलिए ऐसी परीक्षाएँ निर्मित की गई जो प्रवाहशीलता, मौलिकता, नम्यता, विस्तरण, समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता और पुनर्व्याख्या योग्यताओं का मापन करती है। गिलफोर्ड की सुजनात्मक चिन्तन योग्यता परीक्षाओं ने अन्य सृजनात्मकता-परीक्षाओं के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें से कुछ मुख्य परीक्षाओं का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है -

I. गेटजेल्स और जैक्सन द्वारा निर्मित सृजन परीक्षा

सृजन मापन के लिंए इन्होंने पांच प्रकार की परीक्षाएँ प्रयुक्त की -

(1) शब्द साहचर्य (Word Association):

इसमें विविध अर्थ वाले शब्द विषय के सामने प्रस्तुत किये जाते हैं और उससे उनके अधिक से अधिक अर्थ बताने को कहा जाता है जैसे- arm, cap, duck, fair इत्यादि। विषय द्वारा बताये गये अर्थो की संख्या ही इस परीक्षा पर उसका अंक होती है।

(2) वस्तुओं का उपयोग:

इसमें पांच सामान्य वस्तुओं जैसे ईटें, पेन्सिल, पेपर, क्लिप, कागज की शीट इत्यादि के अधिक से अधिक उपयोग बताने को कहा जाता है। इस परीक्षा पर किसी बालक के अंक दो बातों पर निर्धारित किये जाते हैं-

(अ) उसमें किसी विशिष्ट वस्तु के कितने उपयोग बताये

(ब) ये उपयोग कितने अनूठे (unique) थे।

(3) छिपी आकृतियाँ ढूँढना:

इस परीक्षा में विषय को एक साधारण चित्र दिखाया जाता है फिर उसे चार अन्य जटिल चित्र दिखलाये जाते हैं और उन जटिल चित्रों में उस चित्र को बताने को कहा जाता है जिसमें पहले दिखाया गया साधारण चित्र छिपा हुआ है।

(4) नीति कथायें (Fables):

इस परीक्षा में चार लिखित अधूरी संक्षिप्त कथायें दी जाती हैं जिसमें अन्तिम पंक्ति नहीं होती। विषय को इनके तीन प्रकार के अन्त देने होते हैं, नैतिक, परिहासी तथा उदासीन।

(5) समस्या निर्माण:

इसमें विषय को कई संख्यात्मक कथन दिये जाते हैं जो घर खरीदने, स्विमिंग पूल बनवाने इत्यादि से सम्बन्धित होते हैं। इन सूचनाओं के आधार पर विषय को अधिक से अधिक गणित-समस्याएँ बनाने को कहा जाता है परन्तु समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसका हल सम्भव हो यद्यपि विषय को उसका हल बताने को नहीं कहा जाता।

II. टॉरेन्स की सृजनात्मक-परीक्षा:

टॉरेन्स ने सृजनात्मकता मापन के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उसकी बनाई परीक्षाओं में से कुछ प्रवाहशीलता, नम्यता, मौलिकता और विस्तरण का मापन करती है। उसने बालकों में सृजनता का पता लगाने के लिए चार उप-परीक्षाओं वाली एक परीक्षा-माला (test battery) का निर्माण किया इनमें से दो शाब्दिक तथा दो अशाब्दिक है। इनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

<u>अशाब्दिक परीक्षाएँ :</u>

(1) आकृति-पूर्ति (Figure completion):

इसमें विषय को दस अधूरी आकृतियाँ दी जाती हैं तथा उससे यह कहा जाता है कि उनमें कुछ रेखाएँ अपनी ओर से बनाकर वह उन्हें सुन्दर वस्तुओं या चित्रों में बदल दें। उसे कोई ऐसी वस्तु या चित्र की कल्पना करने का प्रयत्न करना चाहिए जिसको किसी और ने न सोचा हो। दी हुई आकृतियों में अपनी ओर से अन्य रेखाएँ खींचकर वह उन्हें इतनी सम्पूर्ण तथा रूचिकर बनाये जितना कि वह बना सकता है। प्रत्येक आकृति के नीचे चित्र का शीर्षक भी लिखने के लिए कहा जाता है।

इस परीक्षा पर तीन प्रकार के अंक दिये जाते हैं -

प्रवाहशीलता अंक-पूरी की गई आकृतियों की संख्या ।

नम्यता अंक- इसमें अंक इस बात पर निर्भर करते हैं कि विषय ने कितने प्रकार (वर्ग) के विचार प्रस्तुत किये हैं।

उदाहरण के लिए यदि विषय ने अपने आलेखों (drawing) में विभिन्न प्रकार के पहनने की वस्तुएँ दिखाई हैं तो यह कहा जायेगा कि उसके चित्रों में केवल एक प्रकार का विचार (पहनने वाले कपड़ों का) प्रस्तुत किया गया है और इसलिए नम्यता पर उसे केवल एक अंक मिलेगा। यदि उसने कुछ चित्रों में पहनने वाले वस्तुओं, कुछ में खेलने का सामान तथा कुछ में पशु आकृतियाँ दिखलाई हैं तो उसे नम्यता पर 3 अंक मिलेंगे। टॉरेन्स ने अपनी निर्देशन पुस्तिका में 70 ऐसे वर्ग दिये हैं, जैसे पशु, गेंद, गुब्बारे, हवाई जहाज इत्यादि। यदि विषय इनमें से अलग किसी अन्य वर्ग का चित्र बनाता है तो उसे इस नवीनता का एक अंक अधिक मिलेगा। इस प्रकार नम्यता अंक का निर्धारण करने के लिए सभी आलेखों को एक साथ देखना होगा।

मौलिकता अंक - यह अंक असाधारण प्रक्रियाओं के लिए दिया जाता है। साधारण (सामान्य) क्रियाओं को भी दो भागों में बांटा जाता है। यदि विषय की प्रक्रिया एक भाग की है तो उसे शून्य और यदि दूसरे की है तो एक अंक दिया जाता है। अन्य असाधारण प्रक्रिया के लिए दो अंक दिये जाते हैं।

विस्तरण अंक - यह विषय द्वारा मूल आकृति में किये गय विस्तरण पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए यदि मूल आकृति '4' जैसी है और विषय इसे कुल्हाड़ी का रूप देता और साथ-साथ हथौड़ा भी बनाता है और नीचे शीर्षक देता है : कुल्हाड़ी और हथौड़ा। ऐसी दशा में क्योंकि कुल्हाड़ी की आकृति बहुत कुछ मूल आकृति में दी हुई है इसलिए उसके लिए कोई अंक नही मिलेगा परन्तु उसने कुल्हाड़ी के फल को छायांकित भी किया है उसके लिए उसे एक अंक मिलेगा इसी प्रकार हथौड़े का शीर्षक बनाने के लिए या मूठ बनाने के लिए भी एक-एक विस्तरण अंक मिल जायेगा।

शीर्षक के विस्तरण के लिए भी अंक है। जैसे 'कुल्हाड़ी और हथौड़ा' कोई विस्तरण अंक नहीं क्योंकि यह तो शीर्षक का न्यूनतम विवरण है, 'परशुराम का फरसा', एक अंक इत्यादि।

(2) वृत्त सम्बन्धी कार्य (Circles Task)

इस परीक्षा में कुछ वृत्त दिये होते हैं जिसमें विषय को, वृत्त को मुख्य भाग रखते हुए, कोई चित्र या वस्तु बनानी होती है। ये आकृतियाँ वृत्त के अन्दर, बाहर या दोनों स्थानों में बनाई जा सकती है। निर्देश में विषय को चारों पक्षों का ध्यान रखने को कहा जाता है-

अधिक से अधिक आलेख बनायें

जितने भिन्न प्रकार के आलेख बना सकता है बनायें

दूसरों से भिन्न चित्र बनायें

तथा वृत्त में वह जितने अधिक विचार रख सकता है रखे

<u>शाब्दिक परीक्षाएँ:</u>

(3) उत्पादन सुधार कार्य (Product Improvement Task):

इसमें विषय को (किसी वस्तु से भरा) कुत्ते का खिलौना दिया जाता है और उससे कहा जाता है कि वह इस खिलौने में परिवर्तन लाने वाली अधिक से अधिक ऐसी चतुर, रूचिकर तथा असाधारण विधियों का वर्णन करें जिससे बालकों को उसके साथ खेलने में

अधिक से अधिक आनन्द आये। ऐसा परिवर्तन लाने में कितना पैसा लगेगा उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। विषय की प्रक्रियाओं का प्रवाहशीलता, नम्यता, मौलिकता तथा विस्तरण सभी दृष्टि से मूल्यांकन किया जा सकता है, यद्यपि इसमें विस्तरण की अधिक गुंजाइश नहीं होती। उदाहरण के लिए सुझाव गये परिवर्तनों की संख्या, प्रवाहशीलता विविध वर्ग के सुझाव, नम्यता तथा असाधारण सुझाव मौलिकता अंक निर्धारित करेंगे।

(4) टिन के डिब्बों का असाधारण प्रयोग:

इसमें विषय को उन टिन के डिब्बों का विभिन्न उपयोग बताने को कहा जाता है जो सामान्यत: फेंक दिये जाते हैं। इसमें अधिक से अधिक प्रयोग, प्रवाहशीलता, कई प्रकार के प्रयोग, नम्यता तथा असाधरण सुझाव मौलिकता अंक निर्धारण करते हैं।

उपरोक्त चारों परीक्षाओं में प्रत्येक के लिए 10 मिनट का समय निर्धारित है। यह चार परीक्षाओं वाली परीक्षा-माला, टॉरेन्स द्वारा निर्मित बड़ी परीक्षामाला का संक्षिप्त रूप है। मूल-परीक्षा में इनके अतिरिक्त तीन अन्य प्रकार की परीक्षाएँ हैं।

(i) असम्भव कार्य - सीमित समय में जितने अधिक असम्मव कार्य बता सकता है बताने को विषय से कहा जाता है।

(ii) परिणाम कार्य - इसमें कुछ काल्पनिक समस्याएँ रखी जाती हैं और विषय को उनका उत्तर बताना होता है। जैसे -

यदि व्यक्ति में अपनी इच्छा से अदृश्य होने की क्षमता आ जाये तो क्या होगा?

यदि धरती के आर-पार एक छेद बनाया जा सके तो क्या होगा?

(iii) सामान्य समस्याएँ - विषय से अधिक से अधिक उन सामान्य समस्याओं को बताने को कहा जाता है जो स्नान करते समय आ सकती है, गृह कार्य करते समय आ सकती है, इत्यादि।

III. मेडनिक की दूरस्थी-सम्बन्ध परीक्षा (Mednick's remote association test):

मेडनिक की यह परीक्षा उसकी उस संकल्पना के अनुरूप है जिसमें वह सृजनता को नवीन तथा दूरस्थ-सम्बन्धी संयोजनों की निर्माण क्षमता के रूप में परिभाषित करता है। दी हुई वस्तुओं के बीच किसी दूर के अज्ञात सम्बन्ध का पता लगाना होता है। इस परीक्षा में तीन-तीन शब्दों वाली 30 आइटम्स की लिस्ट में विषय को प्रत्येक आइटम्स में वह चौथा शब्द ढूंढ़ना होता है जो बाकी तीनों से सम्बन्धित हो सके, उदाहरण के लिए-

Wheel electric high.......................... (सम्भावित उत्तर chair)

Cookies sixteen heart........................... (सम्भावित उत्तर sweet)

IV. फैल्नगन की पटुता-परीक्षा (Flangen's test of ingenuity):

पटुता को उच्च श्रेणी की सृजनात्मक के रूप में मान्यता दी जाती है। इसमें समस्या का हल प्राप्त करने के लिए काफी चतुराई की आवश्यकता है। फैल्नगन ने अपनी परीक्षा में 24 ऐसी समस्याएँ रखी हैं। ये समस्याएँ किसी तकनीकी सूचना पर आधरित नहीं है इसलिए कोई भी साधारण पढ़ा-लिखा व्यक्ति उन्हें कर सकता है परन्तु इनके सम्भावित हल ऐसे होते हैं जिन्हें सामान्य व्याक्ति नहीं जानता। इन समस्याओं को निगमनिक

(deductive) विधि से भी हल नहीं किया जा सकता। परीक्षा को वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए प्रत्येक समस्या के पांच सम्भावित उत्तर समझाए जाते हैं परन्तु पूरे उत्तर न सुझाकर सम्भावित उत्तरों के केवल प्रथम तथा अन्तिम अक्षर दिये जाते हैं। उदाहरण के लिए एक समस्या इस प्रकार थी-

तूफान से एक टेलीविजन स्टेशन का ट्रांसमिशन टॉवर नष्ट हो गया। शहर में और कोई ऊंची इमारत नहीं थी। ध्वस्त ट्रांसमिशन टावर 300 फीट ऊंचा था। जब तक कि दूसरा ट्रांसमिशन टॉवर न बन जाये। ट्रांसमिशन के लिए ऐनटिना को ऊँचा करने के लिए क्या किया जाये -

b.............n (उत्तर : baloon)

V. बैरन की रोशा समकक्ष परीक्षा (Barron's Rorschach type test):

इस परीक्षा में रोशा की तरह 10 स्याही के धब्बे होते हैं परन्तु वे सममित (symmetrical) नहीं होते हैं, इसमें अंकन भी रोशा की तरह ही होता है।

VI। वेल्स की आकृति-अधिमान परीक्षा (Welsh's figure preference test):

इस परीक्षा में विषय को एक के बाद एक 80 आकृतियाँ दिखाई जाती हैं। उसे केवल यह बताना पड़ता है कि वह उसे पसन्द करता है या नापसन्द करता है। इन 80 आकृतियों में कुछ सरल और सममित होती हैं तथा कुछ जटिल और असममित होती हैं।

इस परीक्षा के पीछे यह तर्क है कि कलाकार तथा सृजनात्मक लेखक जटिल आकृतियों को तरजीह (preference) देते हैं।

उपरोक्त परीक्षाओं की पूर्व-निर्धारित वैधता (predicitive validity) के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। हमें यह भी नहीं मालूम कि किस प्रकार के उप-परीक्षणों का संयोजन किस प्रकार की सृजनात्मक योग्यता के मापन के लिए अधिक उपयुक्त होगा। हमने ऊपर देखा था कि अपसारी चिन्तन योग्यता मापन करने वाली परीक्षाओं में सम्मिलित उप-परीक्षाओं में आपस में बहुत ही कम सह-सम्बन्ध था इसलिए थार्नडाइक (Thorndike) के साथ हम यह कह सकते हैं कि हमारे लिए यह अच्छा होगा कि हम सृजनात्मकता शब्द का प्रयोग, (जैसा कि किसी या सभी सृजन सम्बन्धी परीक्षाओं में किया जाता है या सृजनात्मक शब्द का प्रयोग, (जैसा कि इस हेतु चुने गये बालकों के लिए किया जाता है) बहुत प्रयोगात्मक रूप में ही करें।

सृजनात्मक व्यवहार का पता लगाने के लिए व्यवहार सूचकों का भी प्रयोग किया गया है जैसे -

(1) व्यवहार में मौलिकता जैसे - असाधारण हल, उत्तर या हल करने के तरीके।

(2) स्वतन्त्र, व्यक्तिक, साहसी व्यवहार

(3) कल्पना- हवाई कल्पना या कहानी कहना

(4) अपरम्परागत व्यवहार

(5) सम्बन्धों के देखने की अप्रत्याशित क्षमता

(6) विचार-परिवाह (overflow of ideas)

(7) प्रयोगात्मक दृष्टिकोण

(8) आपसी स्थिति का सामना करने में असाधारण नम्यता

(9) किसी प्रयास को छोड़ने की अनिच्छा

(10) रचनात्मकता

(11) दिवा-स्वप्न या किसी समस्या के विचार में मग्न

(12) किसी दिये गये कार्य की सीमा के आगे बढ़ जाना

यह भी देखा गया है कि रूचि और स्वभाव मापन सूचियों द्वारा बहुत भी सृजनात्मक वैज्ञानिकों तथा वास्तुशिल्पियों का पता लगाया जा सकता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

04. गेटजेल्स ने अपनी सृजन परीक्षा में कितने प्रकार के टेस्ट उपयोग किए?

05. रोशा और बैरन (Barron) की परीक्षाओं में क्या अन्तर है?

06. टॉरेन्स की सृजनात्मक परीक्षाओं में सृजनात्मकता सम्बन्धित किस प्रकार के कार्य होते हैं?

13.5 सारांश (Summary):

हम सृजनात्मकता को ऐसी चिन्तन प्रक्रिया के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो किसी व्यक्ति को (समान्यत: वातावरण से उपयुक्त प्रेरणा मिलने पर) कुछ ऐसी सामग्री उत्पन्न करने योग्य बनाती है जो उसके स्वयं के लिए या समाज के लिए नवीन और उपयोगी हो।

सृजनात्मकता की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

(1) सृजनात्मकता एक विस्तृत संकल्पना है जो सभी क्षेत्रों में हो सकती है।

(2) सृजन केवल कुशाग्र बुद्धि वाले व्यक्तियों तक सीमित नहीं है, सामान्य बुद्धि वाले व्यक्ति भी सृजनात्मक हो सकते हैं।

(3) सृजनात्मकता मात्र एकांकी प्रवृत्ति नहीं होती अपितु विभिन्न प्रकार की योग्यताओं एवं व्यक्ति की विशेषताओं की समन्वित तथा विशिष्ट वृत्ति होती है।

गिलफोर्ड के अनुसार इसमें 8 प्रकार की योग्यताएँ शामिल हैं -

(क) विचारों की नम्यता, (ख) प्रवाहशीलता, (ग) मौलिकता, (घ) विस्तरण योग्यता,

(ङ) पुनर्व्याख्या शक्ति और (च) समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता।

इसके अलावा इसमें व्यक्तित्व के कुछ गुण भी शामिल हैं।

(4) सृजनात्मकता और शैक्षिक संप्राप्ति में कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं है।

(5) सृजनात्मकता कुशलताएँ अन्य कुशलताओं की तरह निश्चित अवस्थाओं से बढ़ती और विकसित होती है।

(6) सृजनात्मकता का विकास शैशवकाल से लेकर किशोरावस्था तक एक समान नहीं होता, इस बीच कई उतार-चढ़ाव आते हैं।

(7) सृजनात्मक विकास में लैंगिक भिन्नता भी होती है।

(8) सृजनात्मक चिन्तन चार परस्पर-व्यापी अवस्थाओं में होता है, तैयारी, उदभवन, प्रदीप्ति तथा सत्यापन।

(9) सृजनात्मक क्षमता प्रेरणा, कड़ी मेहनत, आत्म नियंत्रण, और सृजनात्मक क्रिया के साथ तादात्म्य तथा आत्म-अभिव्यक्ति के फलस्वरूप आती है।

केवल कुशाग्र बुद्धि वाले छात्र ही सृजनात्मक नहीं होते न ही सभी कुशाग्र बुद्धि वाले छात्र सृजनात्मक होते हैं। सृजनात्मकता तथा बुद्धि में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। सृजनात्मकता के लिए साधारणत: 120 बुद्धिलब्धि की आवश्यकता होती है, परन्तु उसका आगे बुद्धि परीक्षा सृजनात्मक तथा असृजनात्मक व्यक्ति में विभेदीकरण में समर्थ नहीं होती।

आज देश को अपने सृजनात्मक क्षमता का संरक्षण तथा विकास करने की कितनी आवश्यकता है इसका अनुमान हम पहले लगा चुके हैं इसलिए शिक्षा संस्थाओं का यह दायित्व है कि वे इस राष्ट्रीय प्रयत्न में अपना अनूठा योगदान दें।

हमने देखा कि सृजनात्मक केवल कुशाग्र बुद्धि वाले बालकों का अधिकार नहीं है। सृजनात्मक चिंतन तभी फलफूल सकता है जब शिक्षक यह मानकर चले कि सभी सामान्य बालकों में यह क्षमता पाई जाती है, बल्कि यों कहिये कि वे उसका प्रदर्शन करने की लालसा रखते हैं परन्तु हमने यह देखा कि सृजनशीलता स्वत: नहीं आती इसके लिए सतत् प्रयत्न करना पड़ता है इसलिए शिक्षा संस्थाओं का दायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

13.6 शब्दावली (Glossary):

सृजनात्मकता - ऐसी चिन्तन प्रक्रिया है जो किसी व्यक्ति को सामान्यत: वातावरण से उपयुक्त प्रेरणा मिलने पर कुछ ऐसी सामग्री उत्पन्न करने योग्य बनाती है जो उसके स्वयं के लिए या समाज के लिए नवीन और उपयोगी हो।

शब्द साहचर्य परीक्षा - इसमें कोई शब्द देकर उसके अधिक से अधिक अर्थ बताने को कहा जाता है।

अशाब्दिक परीक्षाएँ - इसमें अधूरी देकर उसे पूरा करने को कहा जाता है। इसमें प्रवाहशीलता, नम्यता, मौलिकता तथा विस्तरण पर अंक दिये जाते हैं।

शाब्दिक परीक्षाओं में किसी वस्तु के असाधारण प्रयोग बताने को कहा जाता है।

मस्तिष्क लोडन (Brain storming) - समूह के सदस्यों का स्वैच्छा से किसी समस्या पर तेजी से समाधान प्रस्तुत करना।

13.7 संदर्भ ग्रंथ (Further Readings):

Blair, G.M., Jones, R.S., Sampson, R. H. (1992 2nd Edn.): Educational Psychology. The Macmillan Co., New York

Carpenter, F. and Hadden E.F. (1967): Systematic Application of Psychology to Education, The Macmillan Co., New York.

Dave, P.N. (1976): Improving Language skill in the Mother Tongue, Central Institute of Education, Mysore.

Raizada, B. S. (1992): बाल मनोविज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

Tripathi, S.N. (1969): Creativity & Education, Regional College of Education, Bhopal (M.P.), India.

13.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer / Hints to Self-Learning Exercises):

01. विचारों की नम्यता, प्रवाहशीलता, मौलिकता, विस्तरण योग्यता, पुनर्व्याख्या शक्ति तथा समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता
02. देखें 13.2.1
03. (i) 120 I.Q. तक इसमें सीधा सम्बन्ध है पर उसके बाद नहीं (ii) सृजनशीलता के मेधावी छात्रों तक सीमित नहीं है, सृजनता का कुछ सीमा तक विकास किया जा सकता है।
04. (i) शब्द साहचर्य (Word-Association) (ii) वस्तुओं का उपयोग (iii) छिपी आकृतियाँ ढूँढ़ना और (iv) समस्या निर्माण और देखें 13.4.2
05. दोनों में स्याही के धब्बे हैं परन्तु Barron में वह सममित (Symmatrical) नहीं है।
06. आकृति पूर्ति तथा वृत्त सम्बन्धी कार्य ।

13.9 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-end Questions):

1. सृजनात्मकता की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
2. बुद्धि और सृजनात्मकता किस प्रकार एक दूसरे से सम्बन्धित एवं भिन्न है?
3. सृजनात्मकता का विकास करने वाले कुछ साधन बताइये।
4. सृजनात्मकता का पता लगाने वाले कुछ परीक्षणों का वर्णन करें।
5. छात्रों के सृजनात्मकता विकास में शिक्षक किस प्रकार सहायक हो सकता है?
6. सृजनात्मकता का परीक्षण करने वाली कुछ अशाब्दिक परीक्षणों का वर्णन कीजिए।
7. सृजनात्मकता का परीक्षण करने वाली कुछ शाब्दिक परीक्षणों के उदाहरण दें।

इकाई 14 (UNIT 14)

विशिष्ट आवश्यकतों वाले बच्चे : श्रवण एवं दृष्टि दोष युक्त बच्चे, प्रतिभाशाली, पिछड़े तथा बाल अपराधी बच्चे

Children With Special Need: Hearing and Visually Handicapped Children, Gifted, backward and Delinquent Children

इकाई की संरचना (Structure)

14.0 उद्देश्य (Objective)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

14.2 विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे (Children with special Need)

स्वपरख प्रश्न (Check Your progress)

14.3 श्रवण दोष युक्त विकलांग बच्चे (Hearing Handicapped Children)

14.3.1 श्रवणदोष युक्त विकलांग विद्यार्थियों की शिक्षा (Education of Hearing Impaired Children)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

14.4 दृष्टि दोष युक्त विकलांग बालकों की पहचान (Visually Handicapped Children)

14.4.1 दृष्टि दोष युक्त विकलांग बालकों की पहचान (Identification of Visually Handicapped Children)

14.4.2 दृष्टि दोष के कारण (Causes of Visual Impairement)

14.4.3 दृष्टि दोष युक्त बालको की शिक्षा (Education of Visually handicapped Children)

स्वपरख प्रश्न (Check your Progress)

14.5 प्रतिभाशाली बालक (Gifted Children)

14.5.1 प्रतिभाशाली बालक की पहचान (Identification of Gifted Child)

14.5.2 प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा (Education of Gifted Child)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

पिछड़े विद्यार्थी (Backward children)

14.6.1 पिछड़े बालक की पहचान (Identification of Backward Children)

14.6.2पिछड़े बालक की शिक्षा (Education of Backward Children)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

14.7 बाल अपराधी बालक (Delinquent Children)

14.7.1 बाल अपराधी बालक के लक्षण (Characteristics of Delinquent Child)
14.7.2 बाल अपराधी के कारण (Causes of Delinquency)
14.1.3 बाल अपराधी की शिक्षा (Education of Delinquent Child)
रूपरख प्रश्न (Check Your Progress)
14.8 सारांश (Summary)
14.9 शब्दावली (Glossary)
14.10 संदर्भ पुस्तके (Some Useful Book Further Reading)
14.11 बोध प्रश्न/मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर, सुझाव (Hints for Self-Learning Execises)
14.12 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit-End Question)

14.0 उद्देश्य **(Objectives)**

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप -

(1) विशेष आवश्यकता वाले बालको की अवधारणा को समझ सकेगें।

(2) ऐसे बालकों के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कर सकेगे।

(3) विकलांग विद्यार्थी के अर्थ को समझकर, श्रवण दोष तथा दृष्टि दोष युक्त विद्यार्थीयों में अन्तर कर सकेगें।

(4) प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की अवधारणा को समझ सकेगें।

(5) प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की शिक्षा की आवश्यकता तथा स्वरूप को समझ सकेगें।

(6) बालअपराधी को परिभाषित कर सकेगें।

(7) विकलांग, पिछड़े तथा बालअपराधी बालको में अन्तर कर सकेगें।

(8) विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों से संबन्धित शिक्षा के स्वरूप में अन्तर समझ सकेंगें।

14.1 प्रस्तावना **(Introduction)**

प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कई बातों में भिन्न होता है। व्यक्तियों के बीच यह भिन्नता उनकी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं में होती है। ये विभिन्नतायें सामान्यत: सभी में पायी जाती है। परन्तु जब कोई व्यक्ति साधारण व्यक्ति से बहुत अधिक भिन्नता रखता है। उसे उस भिन्नता के आधार से सुगमता से पहचाना जा सकता है। ऐसे बालक को 'विशिष्ट बालक' (Exceptional Child) की श्रेणी में रखा जाता है। ऐसे बालक अपने आपको वातावरण के साथ समायोजित करने में कठिनाई महसूस करते हैं। ऐसे बालको को पढ़ाने के लिए विशेष कक्षाओं की व्यवस्था भी करनी पड़ सकती हैं। यदि इन बालकों को भी उचित शिक्षण प्रदान किया जाता है तो वे भी एक अच्छे नागरिक का जीवन जी सकते हैं। यदि इन बालकों की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता है तो वे अपराधी व कुंठित नागरिक बन सकते हैं। अत: समाज व देश के ऊपर ऐसे बालकों की शिक्षा व्यवस्था का विशेष दायित्व है, इस यूनिट में इन्हीं विशिष्ट बालको का वर्णन किया जा रहा है। जिससे आपको उनके पहचानने तथा उनकी शिक्षा-दिक्षा के लिए सुझाव देने में सहायता मिल सकती है।

14.2 विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे **Children With Special Need)** उनकी पहचान एवं वर्गीकरण

ऐसे बालक कुछ विशेष आवश्यकतायें होती हैं। उन्हें विशिष्ट बालकों की श्रेणी मे रखा जा सकता है। वैसे मनोवेज्ञानिको ने "विशिष्ट" शब्द का अर्थ अलग-अलग तरह से दिया है। क्रो एण्ड क्रो (crow& crow) ने विशिष्ट शब्द को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि - विशिष्ट शब्द किसी एक ऐसे गुण या उस गुण को धारण करने वाले व्यक्ति के लिए उस समय प्रयोग में लाया जाता है जबकि वह व्यक्ति उस विशेष गुण को धारण करते हुए अन्य सामान्य व्यक्तियों से इनता अधिक असामान्य प्रतीत हो कि वह उस गुण विशेष के कारण अपने साथियों से विशिष्ट ध्यान की मांग करे अथवा उसे प्राप्त करे और साथ ही इससे उसके व्यवहार की क्रियायें तथा अनुक्रियायेँ भी प्रभावित हों।

(The term exceptional is applied to a trait or to a person possessing trait upto the extent of diviation from normal possession if the trait is so great that because if it the individual warrants or receives special attention from his fellows and his behaviour responses and activities are thereby affected)

अमेरिकन नेशनल सोसायटी फॉर स्टडी ऑफ ऐजूकेशन

(American National Society for study of Education)

के अनुसार "विशिष्ट बालक वे हैं जो कि सामान्य बालको से शारीरिक, मानसिक, संवेगिक या सामाजिक विशेषताओं में इतनी अधिक दूरी पर हैं कि अपनी उच्चतम योग्यता तक विकसित होने के लिए उन्हें विशेष शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है।"

क्रिक के अनुसार, "विशिष्ट बालक वह है जो सामान्य तथा औसत बालक से शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक विशेषताओं में इतना अधिक भिन्न है कि वह विद्यालय व्यवस्थाओं में संशोधन अथवा विशेष सेवायें अथवा पूरक शिक्षण चाहता है जिससे वह अपनी अधिकतम क्षमता का विकास कर सके ।

"Any exceptional child is one who deviates fram the normal or average child in mental, Physical and social chatacteristics to such an extent that he requires a modification of school practices or special educational services or supplementary instruction in order to develop to his maximum capacity"-Krick

उपरोक्त परिभाषाओं से निष्कर्ष निकलता है कि - विशिष्ट बालक सामान्य बालकों से भिन्न होते हैं।

- विशिष्ट बालको की यह भिन्नता विकास की दोनों दिशाओं धनात्मक (positive) तथा ऋणात्मक (negative) में हो सकती है। अर्थात हो सकता है कि बुद्धि की दृष्टि से ये बहुत अधिक धनी तथा दूसरी ओर कमजोर हो सकते हैं ।

- विशिष्ट बालकों को अपने आपको वातावरण के साथ समायोजित करने में कठिनाई होती है।
- विशिष्ट बालको के विकास, आवश्यकताओं तथा उचित समायोजन के लिए विशेष देख रेख व शिक्षण व्यवस्था की आवश्यकता होती है ।

14.2.1 विशिष्ट बालको का वर्गीकरन **(Classfication of Exceptional Children)**

अलग-अलग मनोवैज्ञानिकों ने विशिष्ट बालकों के अलग-अलग प्रकार बताये हैं । पाण्डेय तथा श्रीवास्तव (2007) ने बालको को उनकी विशिष्टता की प्रकृति एवं क्षेत्र के आधार पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया है -

(1) मानसिक रूप से विशिष्ट (Mentally Exceptional)
इस वर्ग में मुख्यत: दो प्रकार के विशिष्ट बालक आते हैं -
(i) प्रतिभाशाली बालक (Gifted Child)
(ii) मन्द बुद्धि बालक (Mentally Retarded Child)

(2) शारीरिक दृष्टि से बाधित (Physically Handicapped)
इसके अन्तर्गत निम्न विकलांग बालक आते हैं-
(i) दृष्टि विकलांग (Visually Handicapped)
(ii) श्रवण दोष युक्त बालक (Hearing Impired children)
(iii) वाक् दोष युक्त बालक (speech Impired child)
(iv) विरूपित बालक (Crippled Child)
(v) अस्वस्थ विकलांग (Unhealthy Handicapped)

(3) सांवेगिक दृष्टि से विशिष्ट (Emotionally Exceptional):-
इस वर्ग में निम्न प्रकार के बालक आते हैं-
(i) असमायोजित एवं नैतिक-विचलित बालक (Mal-adjusted and Morally-Deviant)
(ii) समस्यात्मक बालक (Problematic Child)
(iii) बाल अपराधी (Delinquents)
(iv) सांवेगिक रूप से विशिष्ट (Emotionally Disturbed)

(4) बहुविकलांग (Multi-Handicapped): इसके अन्तर्गत ऐसे बालक आते है जो एक से अधिक दृष्टि से विशिष्ट होते हैं।

14.2.2 विशिष्ट बालकों की पहचान (Identification of Exceptional Children)

कक्षा में विशिष्ट बालकों की पहचान उनकी विशेषताओं को कसौटी मानकर की जा सकती है -

(1) विभिन्न प्रकार के बुद्धि परिक्षण जैसे- सामूहिक एवं व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण
(2) उपलब्धि परीक्षण

(3) अभिरूचि परीक्षण

(4) शारीरिक परीक्षण

(5) मानसिक परीक्षण इत्यादि।

स्वपरख प्रश्न **(Check Your Progress)**

01. विशिष्ट बालक से क्या तात्पर्य है? एक परिभाषा दीजिए ।
(What do you mean by exceptional child? Give one definition)

02. विशिष्ट बालकों के विभिन्न प्रकार बताइये ।
(State different types of Exceptional children?)

14.3 श्रवण युक्त (**Hearing Handicapped Children**)

श्रवण दोष युक्त बालक को या तो सुनाई नहीं देता अथवा ऐसा बालक जिसे सुनने, ध्वनियों को पहचानने तथा अर्थ लगाने में सहजता महसूस नहीं होती है। श्रवण दोष से युक्त बालक विकलांगता के शिकार माने जाते हैं । श्रवण विकलांग बालकी को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है -

(1) बधिर अथवा बहरा बालक (Deaf Children) जिसे कुछ सुनाई नहीं देता।

(2) ऊँचा सुनने वाला बालक (Hard of Hearing)

बहरे बालक को कुछ भी सुनाई नहीं देता। यदि यह बात जल से होती है तो वे गूंगे भी होते हैं। वे अपनी बात को ईशारों से ही थोड़ा बहुत समझ सकते हैं, ऊँचा सुनने वाले बालकों में पूर्णत: बहरापन नहीं होता इनकी श्रवण यंत्रों में दोष पाये जाने के कारण वे सामान्य वार्तालाप तथा ध्वनियों को अच्छी तरह से सुन व समझ नहीं पाते है। इसलिए इनके साथ काफी तेज बोलना पड़ता है। श्रवण यंत्रों के माध्यम से ऐसे बालकों की परेशानियों को कम किया जा सकता है। धीरे-धीरे ये सामान्य बालकों की तरह व्यवहार करना शुरू कर देते हैं। इसलिए श्रवण दोषों को ठीक से पहचान कर, इलाज करने तथा श्रवण यंत्रों का सही इस्तेमाल का प्रशिक्षण देकर इन्हें सामान्य बालकों की तरह शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

श्रवण दोष के लिए कई कारण जिम्मेदार हो सकते हैं जैसे :-

- कोई भी गम्भीर बीमारी से ग्रसित होने पर या कुपोषण का शिकार होने पर भी श्रवण दोष हो सकता है।
- यदि माँ के गर्भ में बालक को उचित वातावरण की कमी अथवा माँ को लगी चोट, सदमा, आदि भी बालक के मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव डाल सकते हैं ।
- माता पिता के क्रोमोसोम्स तथा जीन्स का दोषपूर्ण होना व इनका स्थानान्तरण बालकों में होने पर जैसे ही बच्चा भ्रूण अवस्था में आता है वह श्रवण दोष का शिकार हो जाता है।
- भयंकर दुर्घटनाएँ भी श्रवण दोष का कारण बन सकती हैं। शरीर व मस्तिष्क पर पहुँचा गहरा आघात श्रवण दोष उत्पन्न कर सकता है।

- वर्तमान परिस्थितियों में तेजी से बढ़ता प्रदूषण भी बहरेपन की समस्या के लिए जिम्मेदार है।
- सामान्य तथा कान सम्बन्धी बीमारियाँ भी श्रवण दोष का कारण होती है। जैसे - बीमारियों में ली जाने वाली तेज दवाईयों का सीधे मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव डालती हैं। जिससे व्यक्ति की श्रवण तन्त्रिकाओं पर सीधा प्रभाव पड़ता है, जिससे व्यक्ति की सुनने की शक्ति प्रभावित होती है।

14.3.1 श्रवणदोष युक्त विकलांग विद्यार्थियों की शिक्षा**(Education of Hearing Impaired Children)**

बालक किस प्रकार की श्रवण विकलांग से ग्रसित है यह जानना अत्यन्त आवश्यक है। जो बालक पूर्ण रूप से बहरे (Deaf Children) तथा जिन्हें ऊँचा सुनाई देता है (Hard of Hearing)के लिए शिक्षा की व्यवस्था अलग-अलग होनी चाहिए। जैसे :-

14.3.1.1 बहरे बालकों की शिक्षा **(Education of Deaf Children)**

बहरे बालकों की समस्याओं सामान्य बालकों की तुलना में काफी गंभीर होती हैं जैसे -

- ध्वनियाँ न सुनाई देने के कारण ये अपनी अभिव्यक्ति न तो मौखिक रूप से कर पाते है, जिससे ये अपनी सहायता के लिए कह नहीं पाते हैं।
- पूर्ण रूप से बहरे बालकों के लिए विशेष विद्यालयों की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे इन्हें मूक एवं बधिर विद्यालयों (Deaf and dumb Schools) में भेजा जा सके।
- ऐसे बालक जो पूरी तरह से सुन नहीं सकते हैं इसके अन्दर सुनने की शक्ति का विकास प्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा किया जा सकता है।
- मूक, बधिर बालकों को इस प्रकार से प्रशिक्षित किया जाये कि ये होठो के संचालन, हाव भाव, मुख, जिह्वा, तालू आदि की पेशिय शति का अनुभव कर, विचारों को ग्रहण कर सके।

ऐसा कहा जाता है कि यदि प्रकृति हमसे एक चीज छीन लेती है या नहीं प्रदान करती है तो उसके बदले में वह हमें दूसरी चीजें प्रदान करती है। ऐसा पाया गया कि मूक, बधिर बालकों में कलात्मक तथा सौन्दर्यात्मक गुण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं । यदि इन शक्तियों के विकास के उचित अवसर प्रदान किये जाते हैं तो ये बालक कुशल शिल्पकार, मूर्तिकार, चित्रकार तथा डिजाइनर बन सकते हैं ।

ऐसे बालकों के पाठ्यक्रम में क्रियायों तथा इन्द्रिय अनुभवों को विशेष रूप से स्थान दिया जाना चाहिए।

14.3.1.2 ऊँचा सुनने वाले बालको की शिक्षा **(Education of Hard of Hearing)**

पूर्ण रूप से बहरे बालको की तुलना में कम या ऊँचा सुनने वाले बालको की शिक्षा की व्यवस्था करना आसान है। इन्हें आसानी से जीवन की परिस्थितियों के साथ समायोजित किया जा सकता है जैसे:-

- ऊँचा सुनने वाले बालकों की श्रवण शक्ति के विकास के लिए श्रवण सहायक यंत्रों का नियमित प्रयोग तथा अभ्यास का सहारा लिया जा सकता है ।

- ऐसे बालकों की देखभाल इस प्रकार किया जाय ताकि इन्हें अपनी अक्षमता का बोध न हो सके ।
- कम सुनने वालों में उन कौशलों की कमी पायी जाती है जिनका सम्बन्ध सुनने से होता है कभी ये बहुत जोर से बोलते हैं कभी धीरे से । ऐसा इनकी स्वयं की ध्वनि को सुन न पाने के कारण होता है। इसलिए बोलेने से सम्बन्धित त्रुटियों तथा उच्चारण से सम्बन्धित गलतियों को दूर करने के प्रयास किये जाने चाहिए । इसके लिए सुनने के साधन तथा दृश्य साधनों (टेलीविज़न) आदि का प्रयोग किया जा सकता है ।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress)**

03 विकलांग बालक से क्या अभिप्राय है?
(What is meant by Handicapped Children)

04 श्रवण दोष युक्त बालकों की शिक्षा की व्यवस्था आप किस प्रकार करेगें।
(What educational provisions will you make for Hearing Impaired Children)

14.4 दृष्टि दोष युक्त विकलांग बालक (Visually Impaired or Visually Handicapped)

ऐसा दोष जिसके कारण या तो कुछ भी दिखायी नहीं देता अथवा जिसमें स्पष्ट रूप से दिखायी नहीं देता, दृष्टि दोष कहलाता है तथा इस दोष के शिकार बालक दृष्टि विकलांग (Visually Handicapped children) कहलाते हैं। दृष्टि विकलांग बालको के कई प्रकार हो सकते हैं जैसे: कमजोर दृष्टि वाले (Poor eye sighted), पूरी तरह से अंधे (Totally blind), अपूर्ण अंधे (Partially blind) आदि।

14.4.1 दृष्टि दोष युक्त विकलांग बालकों की पहचान (Identification of Visually Handicapped children)

- दृष्टि दोष युक्त बालकों को चलने, उठने, बैठने, विद्यालयी गतिविधियों में भाग लेने में असुविधा होती है।
- नेत्र के दोषपूर्ण होने के कारण ज्ञान को ग्रहण करने में असुविधा होती है।
- दृष्टि दोष होने के कारण हीन भावना से ग्रसित हो जाते हैं।
- इन्हें कुछ को विशेष उपकरणों की आवश्यकता होती है जिससे वे अपने परिवेश के साथ उचित रूप से समायोजन कर सकें।
- ऐसे बालकों को उचित सामाजिक तथा संवेगात्मक समायोजन में असुविधा होती है।

14.4.2 दृष्टि दोष के कारण **(Causes of Visual Impairement)**

दृष्टि दोष के लिए, प्रमुख रूप से आनुवांशिकता तथा वातावरण (Heredity and environment) जिम्मेदार होते हैं । प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं -

- प्रसव के समय होने वाली असावधानियाँ।
- बालक के शुरूआती जीवन में दिया जाने वाले भोजन, कुपोषण आदि।

- शरीर में महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी।
- डायविटीज, मलेरिया आदि बीमारियाँ जिससे शरीर में महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी हो जाये।
- बहुत कम रोशनी या अधिक रोशनी, गहरे रंग वाली रोशनी में पढ़ना, हिलती डुलती रोशनी में पढ़ना तथा बहुत देर तक कम्प्यूटर पर कार्य करना या बहुत पास से टीवी, देखने से भी दृष्टि दोष हो जाता है ।
- माँ बाप से दृष्टि दोष का अपनी संतति में स्थानान्तरण।
- गर्भकाल में माँ का अशान्त रहना या दुर्घटना का शिकार होना आदि।

14.4.3. दृष्टि दोष युक्त बालकों की शिक्षा (Education of Visually Handicapped children)

ऐसे बालक जिन्हें दृष्टि दोष होता है वे दूसरों को बताना नहीं चाहते कि वे दृष्टि दोष के शिकार हैं। इस अवस्था में अध्यापक को पूर्ण रूप से सचेत रहना चाहिए। यदि बालक पढ़ते समय बार-बार अपनी आँखों को इधर-उधर झुकाता है, आँखों को बार-बार मलता है, पुस्तक को सामान्य परिस्थिति से हटाकार पकड़ता है तब यह मालूम करने का प्रयास करना चाहिए कि बालक किस प्रकार से दृष्टि दोष से ग्रसित है। दृष्टि दोष युक्त बालको की शिक्षा की व्यवस्था निम्न प्रकार से की जा सकती है -

14.4.3.1 पूर्ण रूप से अंधे बालकों की शिक्षा **(Education of complete blind Children):**

यदि बालक पूरी तरह से अंधा है तो उसे अंध विद्यालयों (school for blinds) में भेजना चाहिए। तथा विशेष शिक्षण विधियों का भी प्रयोग करना चाहिए जैसे - ब्रेल (braille) लिपि, व्यक्तिगत शिक्षण (Individualised instruction), स्वक्रिया (Self Activity), एकीकृत शिक्षण (Unified Instruction)। इन विधियों के माध्यम से पूर्ण रूपेण दृष्टि दोष युक्त बालक वातावरण से समायोजन करना सीख सकते हैं। पूर्ण रूपेण अंधे बालकों का पाठ्यक्रम इस प्रकार से बनाया जाना चाहिए कि वे पढने, लिखने, जानने तथा अपने वातावरण को समझने के योग्य बन सके। ब्रेल लिपि इसमे सहायक है। पाठ्यक्रम में निम्न बातों को लक्ष्य बनाया जाना चाहिए-

- वे अपने आवश्यक कार्यो (चलना, घूमना, सड़क पार करना आदि) को स्वयं कर सकें।
- कला तथा संगीत के प्रति इनका लगाव देखा गया है अत: पूर्ण रूपेण अंधे बालकों की शिक्षा में संगीत विषय तथा क्रियाओं को स्थान दिया जाना चाहिए
- ऐसे बालकों का पाठ्यक्रम कार्यानुभव तथा बुनियादी उद्योगों के प्रशिक्षण पर आधारित होना चाहिए।

देश के सभी प्रान्तों में सरकार तथा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा पूर्ण रूपेण अंधे बालकों के लिए विद्यालय चलाये जा रहे हैं, जैसे :- (National Institute of Visually Handicapped,N.Delhi NIVH)

14.4.3.2 दृष्टि दोष युक्त विकलांग बालकों की शिक्षा

(Education of Low Vision or Partially blind Children):

ऐसे बालक जो पूरी तरह से अंधे नहीं होते या उनकी दृष्टि कमजोर होती है। उनकी शिक्षा सामान्य बालकों के साथ नियमित कक्षाओं में करायी जा सकती है। परन्तु ऐसे बालको के समायोजन तथा शिक्षा प्राप्त करने में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए जैसे-

- ऐसे बालकों का दृष्टि परीक्षण करवाकर, उनके नेत्र के उपयुक्त लेन्स, चश्मों का प्रयोग करना चाहिए ताकि इन्हें देखने में असुविधा न हो।
- ऐसे बालकों को दृष्टि यंत्रों के उपयोग की आदत डालने का अभ्यास कराना चाहिए।
- ऐसी कक्षायें जिनमें नेत्र का उपयोग कम होता है वहीं दृष्टिदोष युक्त बालकों को सामान्य कक्षाओं में रखना चाहिए। इसके विपरित जिन कार्यो के लिए नेत्र की अधिक आवश्यकता होती है तब इन बालकों को विशेष कक्षाओं में रखना चाहिए। इस प्रकार की कक्षा की व्यवस्था करना 'सहकारी योजना' के अन्तर्गत आता है।
- वे बालक जो कम देखते है उन्हें ऐसी कक्षाओं में भेजना चाहिए जहाँ बड़े छापे वाली पुस्तकें व सामग्री प्रयोग में लायी जाती हो। ऐसी कक्षायें "कम्जरवेशन कक्षायें" कहलाती है।

कक्षा में श्यामपट्ट ऐसा हो जिसका बालकों की आँखों पर प्रभाव न पड़े।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress)**	
05	NIVH .... शहर में स्थित है ।
06	अंधे लोगों की भाषा का क्या नाम है?

14.5 प्रतिभाशाली बालक **(Gifted Children)**

प्रतिभाशाली बालक को “विशिष्ट बालक” की श्रेणी में रखे जाने का कारण ऐसे बालकों में उच्च बुद्धि तथा अभिक्षमताओं का पाया जाना है। प्रतिभाशाली बालक को मनोवैज्ञानिकों द्वारा अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया गया है ।लूसिटों (Lucito) ने प्रतिभाशाली शब्द की व्याख्या पांच भागों में विभाजित करके की है जो कि नि है :-

- ऐसे व्यक्तियों को प्रतिभाशाली माना गया है जिन्होंने किसी विशेष व्यवसाय में उच्च स्थान प्राप्त किया हो ।
- द्वितीय वर्ग में ऐसे व्यक्तियों को प्रतिभाशाली माना गया है जो कि बुद्धिलब्धि की दृष्टि से उच्च होते हैं। परन्तु बुद्धिलब्धि, के वितरण का कोई सुनिश्चित विभेदक बिनु (cut of point) निर्धारित नहीं है। फिर भी मनोवैज्ञानिक 120 से ऊपर बुद्धिलब्धि रखने वाले विद्यार्थियों को प्रतिभाशाली मानते हैं।
- तृतीय वर्ग में ऐसे विद्यार्थियों / व्यक्तियों को प्रतिभाशाली माना जाता है जिन्होंने किसी विशेष क्षेत्र (कला, संगीत, सांस्कृतिक क्षेत्र) में विशेष उपलब्धि अर्जित की हो।
- चतुर्थ वर्ग में ऐसे बालक / व्यक्ति जो किसी समूह में निश्चित अनुपात या प्रतिशत में आते हैं, को प्रतिभाशाली माना गया है।

- पंचम वर्ग में उन परिभाषाओं को रखा गया है जिनमें सृजनात्मकता पर बल दिया गया है। अर्थात ऐसा व्यक्ति प्रतिभाशाली माना जायेगा जिसमें सृजनशीलता की मात्रा अधिक होती है। गिलफर्ड की बुद्धि संरचना के सिद्धान्त के अनुसार अपसारी उत्पादन (Divergent Production) की अधिक क्षमता रखने वाले व्यक्ति को प्रतिभागी माना गया है।

उपरोक्त वर्गो से निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिभाशाली बालक की श्रेणी में आने के कई प्रकार के मानदण्ड है।

लूसिटों (Lucito) ने प्रतिभाशाली बालक को निम्न शब्दों में परिभाषित किया है

- "प्रतिभाशाली बालक वे हैं जिनकी क्षमता तथा बौद्धिक शक्तियों उत्पादकता एवं मूल्यांकनात्मक चिन्तन में इतने उच्च स्तर की है कि तर्कसंगत रूप में माना जा सकता है कि यदि इन्हें पर्याप्त शैक्षिक अनुभव प्रदान किये जाये तो वे संस्कृति के भावी समस्या समाधानकर्ता, खोजकर्ता, प्रवर्तक एवं मूल्यांकनकर्ता बन सकेंगे" ।

"The Gifted are those children whose potential intellectual powers are at such high ideational level in both prouctive and evaluating thing that it can reasonably assumed that they could be future problem solvers, innovators and evaluators of the culture, if adequate educational experience are provided to them".

14.5.1 प्रतिभाशाली बालक की पहचान **(identification of Gifted Child)**

प्रत्येक विद्‌यालय में प्रतिभाशाली बालक होते हैं परन्तु इनकी पहचान करना इतना आसान नहीं होता। इसके लिए विभिन्न प्रविधियों का प्रयोग करना पड़ता है। यदि प्रतिभाशाली बालकों की पहचान प्रारम्भिक अवस्था में नहीं हो पाती तो ऐसे बालको की प्रतिभा दबकर रह जाती है। जितनी जल्दी प्रतिभाशाली बालकों की पहचान होगी उतनी ही जल्दी उनके लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था की जा सकेगी। निम्नलिखित विधियों तथा प्रविधियों का प्रयोग कर प्रतिभाशाली विद्‌यार्थियों की पहचान की जा सकती है -

- बुद्धि परीक्षण (व्यक्तिगत एवं सामूहिक) का प्रयोग कर प्रतिभाशाली बालकों की पहचान की जा सकती है। इन परीक्षणों के लिए अध्यापक का प्रशिक्षित होना आवश्यक है।
- मानवीकृत उपलब्धि परीक्षणों (Standardised Achievement Test) के प्रयोग द्‌वारा प्रतिभाशाली बालकों को पहचाना जा सकता है।
- स्कूल के अंकपत्र तथा संचयी प्रपत्रों (Cumulative records) से भी बालकों की प्रतिभाशीलता का पता लगाया जा सकता है।
- प्रतिभाशाली बालकों की पहचान के लिए अध्यापक अन्य व्यक्तियों से भी सूचनायें एकत्रित कर सकता है। अध्यापक अन्य गतिविधियों के माध्यम से भी बालक की प्रतिभा का पता लगा सकता है जैसे प्रतियोगिता आयोजित कर, कक्षा में तथा कक्षा में तथा कक्षा से बाहर निरीक्षण करके, विशेष प्रकार की परीक्षा का आयोजन आदि।

- डीहान (Dehaan) और कफ (Kough) ने शिक्षकों के लिए प्रकाशित निर्देश पुस्तिका में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के गुणों की सूची तैयार की है जिसके आधार पर भी विद्यार्थियों की पहचान की जा सकती है जैसे :-
- शीघ्रता व सरलता से सीखने की क्षमता।
- अधिक शब्दों का प्रयोग शुद्धता व सरलता से करना।
- अपने स्तर से ऊँचे स्तर की पुस्तकों को पढ़ना व समझना।
- तर्क करने की क्षमता, स्पष्ट चिन्तन तथा अर्थो का अवबोध करने की क्षमता।
- सामान्य बुद्धि तथा व्यावहारिक ज्ञान का अधिकाधिक उपयोग करना।
- कठिन कार्यो को आसानी से कर लेना।
- बिना रटे समझने में विश्वास करना।
- अनेक प्रकार की चीजों से संबन्धित रूचि रखना।
- अनुक्रियाओं को शीघ्रता तथा सतर्कता पूर्वक उत्पन्न करना।
- सामान्य बालक जिन चीजों से अनभिज्ञ रहते हैं उनकी जानकारी करना।

कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के भाषा सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख किया है, जैसे:-

- कम आयु में ही बोलने की क्षमता रखना।
- शब्दों का विस्तृत भण्डार एवं शुद्धतापूर्वक प्रयोग।
- कम आयु में कहानी कहना व सुनी हुई कहानी को दोहराना।
- शब्दकोश, विश्वकोष आदि को पढ़ने में रूचि रखना।
- कार्यकारण सम्बन्धों का पता लगाने मे रूचि रखना।

प्रतिभाशाली बालकों की पहचान उपरोक्त विधियों / प्रविधियों का प्रयोग करके की जा सकती हैं।

प्रतिभाशाली बालको की पहचान के लिए विशेषकर "बुद्धि परीक्षण' तथा "उपलब्धि परीक्षणों' का संचालन किया जाता है। भारत में ये परीक्षायेँ एन.सी.आर.टी. व एस.सी.ई.आर.टी. संस्थाओं द्वारा ली जाती है। एन.सी.आर.टी, एस.सी.ई.आर.टी. तथा मनोवैज्ञानिक केन्द्रों द्वारा समय-समय पर प्रतिभाशाली बालकों की खोज के लिए प्रशिक्षण भी प्रदान किये जाते है।

14.5.2 प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा **(Education of Gifted child)**

प्रतिभाशाली बालको को शिक्षा प्रदान करने के लिए मुख्यत: तीन उपागम उपयोग में लाये जाते हैं-

(i) त्वरण उपागम (Acceleration Approach)

(ii) संवर्धन उपागम (Enrichment Approach)

(iii) विशिष्ट कक्षाये एवं विद्यालय (Special classes and schools)

(i) त्वरण उपागम (Acceleration Approach)_: इस उपागम के अनुसार त्वरण तीन प्रकार से किया जाता है-

- वर्ष में एक से अधिक बार अगली कक्षा में प्रवेश देना/प्रोन्नत करना।
- तीन वर्ष की विषय सामग्री को दो वर्ष में पढ़ाना।
- लचीली शैक्षिक व्यवस्थायें जैसे - खुला विद्यालय, पत्राचार पाठ्यक्रम आदि के माध्यम से प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की सीखने की गति को बढ़ावा दिया जाता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों का मानना है ऐसा करने से बालकों का संवेगिक तथा सामाजिक विकास बाधित होता है। परन्तु ये मत शोध पर आधारित नहीं हैं।

(ii) संवर्धन उपागम (Enrichment Approach): इससे प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की प्रतिभावों (विशिष्ट योग्यताये, क्षमतायें तथा गुण) को विकसित करने का अवसर प्रदान किया जाता है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों को अतिरिक्त कक्षायें, तथा अन्य क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इन क्रियाओं के अन्तर्गत दिया जाने वाला गृह कार्य भी उच्च स्तर के होते हैं। प्रतिभाशाली बालकों के लिए अलग शिक्षक का प्रावधान करना भी संवर्धन के अन्तर्गत आता है। जिसका कार्य इन बालकों की पहचान करके, उनकी रूचि व योग्यताओं के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था करना होता है। संवर्धन के अन्तर्गत शिक्षकों को इस बात के लिए प्रेरित किया जाता है कि वे प्रतिभाशाली बालकों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने व पहल करने की स्वतन्त्रता दें जिससे उनकी उपलब्धि का स्तर ऊँचा हो सके।

(iii) विशिष्ट कक्षाये एवं विद्यालय (Special classes and schools) प्रतिभाशाली बालकों विशेष कक्षाओं तथा विद्यालय के प्रावधान के अन्तर्गत तीन प्रकार की व्यवस्थायें आती हैं-

(1) बालकों को पूर्णत: पृथक करके अलग शिक्षा देने की व्यवस्था की जाये । इसे पूर्ण पृथक्करण के नाम से जाना जाता है ।

(2) ऐसी व्यवस्था जिसमें प्रतिभाशाली विद्यार्थीयों को सामान्य विद्यार्थियों के साथ ही पढ़ाया जाता हो अपृथक्करण कहलाती है ।

(3) जब प्रतिभाशाली विद्यार्थीयों को उनकी प्रतिभा के क्षेत्र या विषय में पढ़ाने के लिए अलग बिठाकर पढ़ाया जाये जबकि अन्य विषयों में सामान्य बालकों के साथ रखकर पढ़ाया जाय तो यह उपागम "आंशिक पृथक्करण' कहलाता है । आजकल आंशिक पृथक्करण बहुत अधिक प्रचलन में हैं । उपरोक्त उपागमों के अतिरिक्त प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परियोजना, यात्रा, शोध, नाटकीकरण (Dramatisation) आदि शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress)**

07. प्रतिभाशाली छात्र से आप क्या समझते हैं?

08. प्रतिभाशाली विद्यार्थियों की पहचान किस प्रकार करेगें?

09. प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के शिक्षा के विभिन्न उपागम बताइये।

14.6 पिछड़े विद्यार्थी **(Backward Children)**

पिछड़े विद्यार्थी से तात्पर्य ऐसा बालक जो बार-बार समझने पर भी नहीं समझता तथा सामान्य बालको की भांति प्रगति नहीं कर पाता है । इस प्रकार पिछड़ा बालक सामान्य बालकों की तुलना में पढ़ने लिखने में पीछे होता है । इसलिये ऐसे बालक कक्षा में कई बार अनुत्तीर्ण हो जाते हैं ।

बालको का पिछड़ापन दो प्रकार का होता है - (1) मानसिक पिछड़ापन (2) शैक्षिक उपलब्धि के आधार पर पिछड़ापन । परन्तु पिछड़ा बालक सदैव मानसिक रूप से मन्द नहीं होता यह देखने मैं आया है कि सामान्य बुद्धिलाब्धक वाले बालक भी शैक्षिक प्रगति में पिछड़ जाते हैं ।

शोनेल (Schonell) के अनुसार 'पिछड़ा हुआ बालक वह है जो अपनी आयु के अन्य बालकों की तुलना में अत्यधिक शैक्षणिक कमी का परिचय देता है ।"

"Backward pupil is one who, when compared with other pupils of his chronological age, shown marked educational deficiency"

बर्ट (burt) के अनुसार 'पिछड़ा बालक वह है जो अपने विद्यालयी जीवन के मध्यकाल (लगभग साढ़े दस वर्ष की आयु में अपनी कक्षा का वह कार्य नहीं कर सकता, जो कि उसकी आयु के लिए सामान्य कार्य है ।"

"A Backward child is one who in the middle of his school (that is about ten and half years) is unable to do the work of the class that which is normal for his age"

14.6.1 पिछड़े बालक की पहचान **(Identification of Backward Children)**

बर्ट के अनुसार ऐसा बालक जिसकी शैक्षिक अनुपात 85 से कम होती है पिछड़ा बालक कहलाता है । बालकों का शैक्षिक अनुपात (E.Q) निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जा सकता है :-

शैक्षिक अनुपात (E.Q)=$\frac{(Educational)}{(Chronological\ Age)} \times 100$

इसके अतिरिक्त पिछड़े बालकों की पहचान अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के माध्यम से भी की जा सकती है तथा बुद्धि परीक्षण (व्यक्तिक या सामूहिक), निष्पत्ति परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, निदानात्मक परीक्षण, व्यक्तित्व अध्ययन (Case study)।

इसके अलावा शिक्षण प्रेक्षण के अन्तर्गत बालक के व्यवहार का अध्ययन कक्षा में तथा कक्षा के बाहर किया जाता है । जबकि व्यक्तित्व अध्ययन में बालक की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा नैतिक विशेषताओं को उसके अतीत, वर्तमान एवं भविष्य को ध्यान में रखकर परीक्षित किया जाता है ।

14.6.2 पिछड़े बालक की शिक्षा **(Education of Backward Children)**

पिछडेपन की पहचान हो जाने पर उसके दूर करने के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था निम्न प्रकार से की जा सकती है -

(1) पिछडेपन की समस्या के कारणों का सही-सही पता लगाकर, छात्र पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जाय।

(2) बालक के उचित पारिवारिक व विद्‌यालयी वातावरण प्रदान किया जाये। पारिवारिक वातावरण से तात्पर्य बालक के पढ़ने का उचित प्रबन्ध सही मार्गदर्शन दिया जाय जबकि विद्‌यालयी वातावरण में उपयुक्त शिक्षण विधि, परस्पर सहभागीता का कक्षा में प्रावधान हो ।

(3) पिछड़े बालकों के बौद्धिक स्तर, रूचि व ग्रहण करने की क्षमता के अनुकूल शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाय ।

(4) पिछड़े बालको की शिक्षा विशेष रूप से नियोजित कक्षाओं में होनी चाहिए ताकि वे हीन से ग्रसित न हो ।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress)**

10. पिछड़े बालको को कैसे पहचाना जा सकता है?

11. आप पिछड़े बालकों की शैक्षिक व्यवस्था किस प्रकार करेंगे?समझाईये।

14.7 बाल अपराधी बालक **(Delinquent Children)**

बाल अपराध का सम्बन्ध बालक के व्यक्तित्व सभी पक्षों जैसे-सामाजिक, संवेगात्मक पक्षों से होता है। किसी भी पक्ष के समायोजन करने में यदि बालक असफल रहता है तो वह बाल अपराधी बन जाता है।

बाल अपराध (Delinquency)का शाब्दिक अर्थ रास्ते से भटक जाना या गिर पड़ना होता है।

हीली (Healy)के अनुसार 'यह बालक जो व्यवहार में सामाजिक मापदण्ड से विचलित हो जाता है या भटक जाता है, बाल अपराधी कहलाता है।"

("A child, who deviates from the social norm of behaviour is called delinquents.")

सिरिल वर्ट (Cyril burt) के अनुसार 'यह बालक वैधानिक रूप से उस समय अपराधी कहलाता है जब उसके समाज विरोधी कार्य इतने गम्भीर हो जाते हैं कि सरकार उन पर नियन्त्रण करने के लिए आवश्यक कार्यवाही करती है या कार्यवाही करने की आवश्यकता महसूस करती है ।"

("A child or technically delinquent when his anti social tendencies appear so grave that he becomes or ought to become the subject of official action")

"बाल अपराधी व्यवहार के अन्तर्गत न्यूमेयर (Newmeyer) के अनुसार ऐसे "समाज विरोधी व्यवहार आते है जो व्यक्तिगत तथा सामाजिक विघटन उत्तपन करते है"

"Delinquency implies form of anti-social behaviour involving personal and social dis-organization."

उपरोक्त परिभाषाओं से निष्कर्ष निकलता है कि यह सामाजिक मूल्यों व मान्यताओं के विरूद्ध किया जाने वाला व्यवहार है जो बालक छोटी आयु में प्रदर्शित करते हैं। इसमें अल्प व्यस्क अपराधी जिन्हें किशोर अपराधी भी कहा जाता है शामिल होते हैं। ये किशोर अपराधी शराब पीना, जुआ खेलना, जेब काटना, हत्या करना, मादक द्रव्यों का सेवन करना, भीख मांगना, मार-पीट करना, यौन सम्बन्धी अपराध, बलात्कार आदि अपराधों में व्यस्त होते है। इस प्रकार बालअपराध समाज के सामने बड़ी समस्या है समय रहते इसका निदान न किया जाने पर यह समाज के लिए बड़ी भयंकर समस्या साबित हो सकती है। अत: 18 वर्ष से कम आयु वाले बालकों को अपराधी-बालक कहा जाता है । अत: ऐसे विद्यालयों में इस प्रकार के बालकों की खोज करना, शिक्षा विधियों का शोध करना, शिक्षकों, अभिभावकों तथा विद्यालय प्रशासको की जिम्मेदारी हो जाती है।

14.7.1 बाल अपराधी बालक के लक्षण **(Characteritics of Delinquent Child)**

बाल अपराधी बालक के मनोवैज्ञानिक द्वारा निम्न लक्षण बताये गये है :-

(i) स्वभाव से बैचेन रहते है ।

(ii) व्यक्तित्व मे बैचेन रहते है ।

(iii) समस्या के समाधान में पूर्ण नियोजन की कमी रहती है ।

(iv) ये बालक अवसाद ग्रसित होते है।

14.7.2 बाल अपराधों के कारण **(Causes of Deliquency)**

बाल अपराध के कई कारण हो सकते है जैसे -

(1) मनोवैज्ञानिक कारण - बालक की बौद्धिक दुर्बलता, मानसिक रोग, सांवेगिक अस्थिरता आदि भी बालक को अपराधी बनाने में सहायक होती है।

(2) सामाजिक कारण - सामाजिक कारणों के अन्तर्गत आस पड़ौस, सामाजिक परिवेश तथा पारिवारिक वातावरण में व्याप्त प्रतिकूल परिस्थितियां आती है। जाने अनजाने बालक का परिवेश बालक पर अपना प्रभाव डालता है।

- पारिवारिक वातावरण

1. माता पिता का बालकों पर नियन्त्रण न होना।
2. घरेलू लड़ाई झगड़े ।
3. माता-पिता में से किसी एक की मृत्यु होना
4. परिवार के किसी सदस्य का अपराधी प्रवृत्ति का होना ।
5 बालक के साथ पक्षपातपूर्ण रवैया ।
6. बालक को पर्याप्त स्वतन्त्रता न मिलना ।

- विद्यालयी वातावरण का प्रभाव

1. दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली, पाठ्यक्रम तथा अनुचित शिक्षण विधियाँ ।
2. अध्यापक द्वारा किया गया पक्षपातपूर्ण व्यवहार
3. उचित अनुशासन का अभाव ।
4. शैक्षिक असफलता व पिछडापन ।
5. साथियों का समाज विरोधी व्यवहार ।

उपरोक्त कारणों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बाल अपराध सामाजिक परिवेश से उत्पन्न होने वाला अपराध है । बालअपचारी सामान्य बालकों के ही समान होता है। अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति न होने से वह कुसमायोजन का शिकार हो जाता है। जिससे उसमें विद्रोह की भावना तथा अपराध करने की प्रवृत्ति का विकास हो जाता है। अत: बालअपराध रोकने के लिए उचित प्रयलों की आवश्यकता होती है।

14.7.3 बाल अपराधी की शिक्षा **(Education of Delinquent Child)**

आज के समय में बाल अपराधी को दण्ड न देकर उनके सुधार के उपाय किये जाते हैं। बालअपराध की रोकथाम दो प्रकार से की जा सकती है :-

1. रोकथाम के प्रयत्न (To adopt preventive measures)
2. सुधारात्मक प्रयत्न (To adopt curative measures)

(1) रोकथाम के प्रयत्न के अन्तर्गत समाज, विद्यालय, परिवार तथा वातावरण में सुधार कर बालअपराध को रोकने का प्रयास किया जाता है ।

(2) सुधारात्मक प्रयत्नों के अन्तर्गत ऐसे प्रयत्नों को शामिल किया जाता है जो बालअपराधी को अपराधपूर्ण जीवन से मुक्ति दिला सकें । जैसे -

परिवीक्षण (Probation):

इसमें बालअपराधी को परिवीक्षण अधिकारी के संरक्षण में रखा जाता है । यह अधिकारी बालपराधी बालक की मानसिक प्रवृत्तियों, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को सन्तुष्ट कर सही रास्ते पर लाने का प्रयास करता है । 1938 में उत्तर प्रदेश का प्रथम अपराधी परिवीक्षण अधिनियम पास हु आ ।

मनोवैज्ञानिक उपचार :

बालअपराधीयों का उपचार करने से पहले इनका पता विभिन्न क परीक्षणों द्वारा लगा लेना चाहिए जैसे - शारीरिक परीक्षण, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के अन्तर्गत - व्यक्तित्व परीक्षण, साक्षात्कार, केस स्टडी (Case study)आदि ।

खेल चिकित्सा :

व्यक्तिगत व सामूहिक खेलों द्वारा ऐसे बालकों में विश्वास, सहयोग व सहकारिता की भावना का विकास किया जा सकता है।

अगुंली चित्रण :

इसमें बालअपराधी अपनी अंगुली से विभिन्न रंगों के माध्यम से चित्र बनाने का प्रयास करता है, इन चित्रों के माध्यम से अपनी दबी इच्छाओं व भावनाओं को उजागर कर देता है । जिससे उपचार के व्यवहार को धीरे-धीरे सामान्य करने में आसानी होती है ।

मनोभिनय:

इसमें बालक को एक काल्पनिक भूमिका में भाग लेने का अवसर प्रदान किया जाता है । जिससे बालक की आक्रामक तथा विध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का पता लग जाता है ।

इसके अतिरिक्त मनोविश्लेषण विधि द्वारा बालअपराधी बालक के मन में दबी इच्छाओं और संवेगो का पता लगाकर उपचार किया जा सकता है ।

स्वपरख प्रश्न (**Check Your Progress**)

12 बाल अपराध के कारणों पर प्रकाश डालिये ।

13 अपराधी बालक कौन है ।

14.8 सारांश (Summary)

विशिष्ट बालक ऐसे बालक को कहा जाता है जो शारीरिक, मानसिक तथा संवेगित में अन्य बालकों से बहु त अलग होते है । मनोवैज्ञानिकों द्‌वारा विशिष्ट बालकों के कई प्रकार बताये गये है जैसे -प्रतिभाशाली पिछड़े, वाक्यदोष युक्त, दृष्टि दोष युक्त, श्रवणदोष युक्त तथा बालपराधी बालक प्रमुख हैं। प्रतिभाशाली बालको की पहचान बुद्धि परीक्षण के अलावा सृजनात्मकता एवं उपलब्धि आदि के आधार पर भी की जाती है । दृष्टिदोष युक्त बालकों की शिक्षा एवं समायोजन शिक्षकों के लिए सबसे अधिक चुनौतिपूर्ण कार्य है । आंशिक रूप से बहरे तथा पूर्णरूप से बहरे छात्रों की शिक्षा के लिए अलग-अलग सुझाव दिये गये हैं । पिछड़ा बालक वह बालक है शैक्षिक रूप से अपने साथियों से पीछे रहता है । पिछड़े बालक के पिछड़ेपन के कई कारण हैं जैसे- वातावरण का प्रतिकूल प्रभाव, स्वभाव सम्बन्धी दोष बौद्धिक क्षमता की कमी आदि । अपराधी बालक ऐसे बालक को कहा जाता है जिसकी आयु कानून द्‌वारा निश्चित की गयी आयु के भीतर होती है वे कई तरह के अपराध (यौन अपराध, बालात्कार, आक्रामक प्रवृति जालसाजी आदि) करते हैं । घरेलू वातावरण, आर्थिक स्थिति, बेरोजगारी, माता पिता का सीमित सम्बन्ध इन्हें बाल अपराधी बनाने में सहायक होता है । बाल अपराधी को मनोवैज्ञानिक विधियों के प्रयोग द्‌वारा ठीक सुधारा जा सकता है ।

14.9 शब्दावली (Glossary)

1	बाल अपराधी	13-19 वर्ष वाले अपराधी 'बालक'
2.	संवर्धन	सामान्य से अधिक उच्च शिक्षा कि व्यवस्था
3.	विशिष्ट बालक	सामान्य से प्रत्यक्ष रूप से अलग लगने वाले बालक
4.	प्रतिभाशाली बालक	सामान्य साथियो से अधिक बहु त - बालक
5.	व्यक्तिगत	शिक्षक द्‌वारा व्यक्तिगत ध्यान देने वाले छात्र

14.10 संदर्भ पुस्तके (Further Reading)

(1) पाण्डेय ,राम शुक्ल (1989) - शिक्षा मनोविज्ञान,आर लाल बुक डिपो,मेरठ

(2) शर्मा, आर.ए. (2000) - अधिगम एवं विकास के मनोवैज्ञानिक आधार आरएल, बुक डिपो, मेरठ

(3) सिंह, रामपाल (1999) - व्यावहारिक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा। सिंह.एस.डी.एव शर्मा देवदत्त

(4) Chauhan,S.S(2000) - Advance Educational Psychology,Vikash Publishing House Pvt.Ltd।

(5)Pandey K.P. (1988) - Advance Educational Psychology (2nd Revised Edition), konark Publishers Pvt. New Delhi.

(6) Woolfolk,Anita (2006) - Educational Psychology, Ninth Edition, Pearsan Education,Delhi

14.11बोध प्रश्न/मूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर, सुझाव

(Hints for Self-Learning Exercises)

01 के उत्तर हेतु कृपया 14.2 की परिभाषा का अवलोकन कीजिए ।

02 मानसिक, शारीरिक के detail देखे ।

03 शारीरिक दृष्टि

04 के उत्तर हेतु 14.3.1 का अवलोकन करें ।

05 New delhi

06 ब्रेल लिपि

07 के उत्तर हेतु 14.5 का अवलोकन करें ।

08 के उत्तर हेतु 14.5 का अवलोकन करें ।

09 के उलर हेतु 14.5.1 का अवलोकन करें ।

10 के उत्तर हेतु 14.6.2 का अवलोकन करें ।

11 के उत्तर हेतु 14.7.2 का अवलोकन करें ।

12 के उत्तर हेतु 14.7.1 का अवलोकन करें ।

13 के उत्तर हेतु 14.7 में Healy और Burt की परिभाषा देखें ।

14.12 परीक्षा प्रश्न **(Unit-End Question)**

1. अपराधी बालक कौन है? उसकी आदतों एवं चरित्र में सुधार के लिए शिक्षक के नाते आप क्या करेंगे?

   (Who is Delinquent Child? What measures, as a teacher,whould you adopt in order to improve his habits and characters?)

2. विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण कीजिये । सामान्य बालकों से वे किस प्रकार भिन्न है ।

(Classify exceptional children.How do they differ from normal children)

3. पिछड़े बालक से आप क्या समझते हैं आप इनकी शैक्षिक व्यवस्था किस प्रकार करेंगे ।

(What do you understand by “Backward Children” How would you arrange for their Education).

4. विकलांग बालक से क्या अभिप्राय है? विकलांग बालको को कैसे पहचाना जा सकता है ।

(What is meant by handicapped children? How can handicapped children be identified?)

5. प्रतिभाशाली बच्चे प्रगति में सहायक होते हैं । समझाइये ।

(Gifted children are the ones who help in progress Explain.)

इकाई 15 (Unit 15)

विशष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता व योजना बनाना, अध्यापक की संक्रियता

Needs and planning of special group education, sensitivity of teacher

इकाई की संरचना (Structure)

15.0 उद्देश्य (Objectives)

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

15.2 विशिष्ट बालकों के प्रकार (Type of Special Group)

15.3 विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता (Needs of Education to Special Group)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

15.4 विशिष्ट समूह और पाठ्यक्रम (Special Group and Curriculum)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

15.4.1 विभिन्न स्तर पर (At different level) पाठ्यक्रम

15.5 विशिष्ट बालकों के लिए विशिष्ट कक्षाएँ (Special Classes for Special Group)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

15.6 विशिष्ट विद्यालयों का संगठन (Organisation of Special Group)

15.7 विशिष्ट समूह और विशिष्ट शिक्षण विधियाँ व प्रविधियाँ (Special Teaching Methods and Techniques and Special Group)

15.8 विशिष्ट समूह और शिक्षण सामग्री (Teaching Aid and Special Group)

15.9 विशिष्ट समूह हेतु शिक्षक की संक्रियता (Sensivity of Teacher for Special Group)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

15.10 सारांश (Summary)

15.11 शब्दावली (Glossary)

15.12 संदर्भ ग्रंथ (Further Readings)

15.13 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer to Self - Learning Questions)

15.14 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions)

15.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई की समाप्ति पर आप इस योग्य होने चाहिये कि

- विशिष्ट बालकों के समूह को पहचान सकें।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा की आवश्यकता को बता सकें।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु योजना तैयार कर सकें।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु विशिष्ट पाठ्यक्रम तैयार कर सकें।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु विशिष्ट शिक्षण विधियों सामग्रियों को प्रयोग में ला सकें।
- विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु शिक्षक के कर्त्तव्य व उत्तरदायित्व जान सकें व उन्हें प्रयोग में ला सके|

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामान्य बौद्धिक दृष्टि से प्रखर या मन्द बालकों को ही विशिष्ट बालक समझा जाता है परन्तु ऐसा नहीं है। प्रत्येक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनेक सामान्य बालक होते हैं उनके अलावा कुछ ऐसे भी बालक आते हैं जिनकी अपनी कुछ शारीरिक और मानसिक विशेषताएँ होती हैं। इनमें कुछ प्रतिभाशाली और कुछ मन्द बुद्धि, कुछ पिछड़े और कुछ शारीरिक दोषों वाले होते हैं इनको विशिष्ट बालकों या अपवादी बालकों की संज्ञा दी जाती है। विशिष्ट बालकों में सामान्य बालकों की अपेक्षा कुछ असामान्यताएँ ब कुछ विशेषतायें पाई जाती हैं। इन विशेषताओं की चरम सीमा वाले बालक विशिष्ट बालकों की श्रेणी में आते हैं। जब हम सामान्य छात्रों के ऊपर और नीचे दोनों ओर इधर-उधर बढ़ते जायेंगे तो यह संख्या या प्रतिशत निरन्तर कम होता जायेगा और अन्त में बहुत ही कम रह जायेगी। उदाहरण के लिए उन बालकों की संख्या अधिक (लगभग 96 प्रतिशत) होती है, जिनकी बुद्धि लब्धि (I.Q.) सामान्य (90 से 109) तक होती है। इसके अतिरिक्त उन बालकों की संख्या बहुत कम होती है जिनकी बुद्धि लब्धि 150 से ऊपर या 50 से कम हो। इसी प्रकार यदि शारीरिक दृष्टि से लिया जाये तो लगभग 95 प्रतिशत बच्चे सामान्य होते हैं, उन बच्चों की संख्या लगभग 1 प्रतिशत होती है जो शारीरिक दृष्टि से सामान्य बालकों से बहुत अच्छे होते हैं या जिनमें किसी अंग का अभाव होता है।

इस प्रकार

शारीरिक दृष्टि से - अंधे गूँगे, बहरे, तोतले या किसी अंग से हीन।

मानसिक दृष्टि से - अति प्रतिभावान, हीन बुद्धि, मानसिक अस्थिरता से ग्रस्त।

सांवेगिक दृष्टि से - भावावेश में आने वाले दुस्साहसी।

सामाजिक दृष्टि से - असामाजिक, दुष्ट, दुराचारी।

नैतिक दृष्टि से - चोर, बेईमान, बदमाश आदि सभी प्रकार के बालक विशिष्ट बालकों (Special group) के अन्तर्गत आते हैं। विशिष्ट बालक वे हैं "'जो शारीरिक, मानसिक, सामाजिक दृष्टि से सामान्य गुणों से इस सीमा तक विचलित होते हैं कि उन्हें अपनी अधिकतम क्षमता के अनुसार स्वयं विकास पाने के लिए विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।"'

Those who deviate from what is supposed to be average in physical, mental, emotional and social characteristics to such extent that they require special education services in order to develop their maximum capacity.

जब कोई बालक अपने ही वर्ग के सामान्य बालकों के लक्षणों से बिल्कुल अलग लक्षणों वाला होता है तो उसे विशिष्ट बालक कहते हैं और ऐसे बालकों के समूह को विशिष्ट समूह कहते हैं और जब इन बालकों द्वारा कोई विघटनकारी समस्या पैदा होती है तो उसे विशिष्ट समस्या (Special Problem) कहते हैं। जैसे चोरी करना, एक विशिष्ट समूह द्वारा विशिष्ट समस्या है जबकि चोर बालक एक विशिष्ट बालक।

15.2 विशिष्ट बालकों के प्रकार (Types of Special Children):

वैसे तो सभी विशिष्ट बालकों को अलग-अलग दृष्टि से देखा जाये तो ये कई प्रकार के हो जायेंगे पर यहाँ हम चार प्रकार के विशिष्ट बालकों का उल्लेख कर रहे हैं, वे हैं -

(1) प्रतिभाशाली बालक (Gifted)

(2) पिछड़े बालक (Backward)

(3) मन्द बुद्धि बालक (Mentally Retarded)

(4) समस्यात्मक बालक (Problematic Child)

विश्लेषण की दृष्टि से ऐसे बालकों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है -

(i) शिक्षण योग्य (Educable)

(ii) प्रशिक्षण योग्य (Trainable)

अधिगम का बुद्धि से बहुत अधिक सम्बन्ध है इस दृष्टि से जो बुद्धिमान है, वे किसी बात को बहुत जल्दी समझ लेते हैं और जो विद्यार्थी बौद्धिक दृष्टि से तेज नहीं हैं वे किसी बात को या तो समझ नहीं पाते और समझ भी पाते हैं तो बहुत कठिनाई से और थोड़ी देर में ही भूल जाते हैं।

इस प्रकार जो बालक बौद्धिक दृष्टि से कमजोर हैं, उन्हें शिक्षित तो नहीं बनाया जा सकता परन्तु उनसे ऐसे काम कराये जा सकते हैं जिन्हें करने में अनुकरण व अभ्यास की आवश्यकता होती है। विकलांग बालक शिक्षण योग्य होते हैं क्योंकि वे बौद्धिक दृष्टि से ठीक, बिल्कुल हीन नहीं होते हैं।

15.3 विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता (Needs of Education to Special Group):

ऐसे बालक जो शारीरिक सामाजिक, सांवेगिक एवं नैतिक दृष्टि से पिछड़े हुए या कमजोर हैं लेकिन बौद्धिक दृष्टि से ठीक है, उन्हें शिक्षा देने की आवश्यकता है। ऐसे विकलांग जिनके पैर या हाथ नहीं हैं वे कई कार्य एक हाथ या पैर से ही बड़ी कुशलता से कर लेते हैं, कई नेत्रहीन बड़े अच्छे संगीतज्ञ, शिक्षक व कलाकार होते हैं। प्रशिक्षण उनके लिए उपयोगी होता है, जो बौद्धिक दृष्टि से बहुत ठीक नहीं होते पर वे किसी भी कार्य को अनुसरण कर या अभ्यास करके सीख सकते हैं इसलिए शिक्षा उनके लिए आवश्यक है -

(1) जो सामाजिक, सांवेगिक, नैतिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं या सामान्य से अति नीचे हैं या बौद्धिक दृष्टि से प्रखर हैं।

(2) जो शारीरिक दृष्टि से विकलांग हैं, किन्तु बौद्धिक दृष्टि से ठीक हैं।

शिक्षा के साथ प्रशिक्षण उनके लिए आवश्यक है।

(i) जो बौद्धिक दृष्टि से मन्द, किन्तु अन्य दृष्टियों से ठीक हैं।

(ii) जो शारीरिक दृष्टि से विकलांग, लेकिन बौद्धिक दृष्टि के अलावा अन्य दृष्टियों से ठीक हैं।

विशिष्ट समूह में ऐसे बालक आते हैं जिनकी बुद्धि लब्धि 120 या इससे भी अधिक है इन बालकों का ध्यान केन्द्रित करने की शक्ति बहुत अधिक होती है। उन्हें यदि थोड़ा सा भी मार्गदर्शन मिल जाये तो वे अपना मार्ग स्वयं खोज लेते हैं और बिना थके घंटों तक अपने कार्य में व्यस्त रहते हैं। वे तर्कशक्ति के धनी, विवेकपूर्ण, निर्णय देने वाले होते हैं। प्रतिभावान बालकों को उनकी अभिवृत्ति के अनुकूल शिक्षा देने की आवश्यकता है। वे बालक स्वयं अपनी समस्या का समाधान खोज लेते हैं। उनके लिए ऐसे विद्‌यालयी कार्यक्रम हों, जिनसे वे अधिकतम लाभ उठा सके। वे बालक सामान्य बालकों का नेतृत्व कर सकते हैं। वे चिन्तनशील होते हैं, उन्हें नेतृत्व करने के अवसर प्रदान करने चाहिए।

दूसरी श्रेणी के ऐसे बालक जो किसी कारणवश पिछड़े हुए हैं वे समस्याग्रस्त हैं उनके लिए शिक्षा की परम आवश्यकता है, क्योंकि यदि ऐसे बालकों की समस्याओं का समाधान आरम्भिक स्तर पर नहीं किया गया तो वे आगे चलकर गम्भीर समस्या का रूप धारण कर लेंगे इसलिए ऐसे बालकों का समुचित विकास हेतु शिक्षा अति आवश्यक है। पिछड़े हुए बालकों में आत्महीनता की भावना को दूर करने हेतु उन्हें आत्मनिर्भर बनाने हेतु व्यावसायिक दक्षता उत्पन्न करने हेतु, आत्मविश्वास जगाने हेतु, समाज में स्थान बनाने हेतु, अपने जीविकोपार्जन हेतु, अवकाश के समय का सदुपयोग करने हेतु, समाज सुधार हेतु विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता है। आगे चलकर इन बालकों को साधारण लोगों में ही जीवन, व्यतीत करना है इसलिए विशिष्ट समूह के बालकों को एक साथ समूह में रहने हेतु इनकी शिक्षा की महती आवश्यकता है।

विशिष्ट समूह के वे बालक जो शारीरिक रूप से अक्षम हैं, जिसके कारण उनमें बहुत सी व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक संवेगात्मक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं और वे मानसिक रूप से अशान्त व विचलित हो जाते हैं, अपनी अक्षमता के कारण उनमें हीन भावना व मानसिक तनाव पैदा हो जाता है। ये बालक अपने चारों के वातावरण द्‌वारा की जाने वाली अपेक्षाओं के प्रति बहुत संवेदनशील हो जाते हैं। सामाजिक जीवन से कतराने लगते हैं, संकोची होने की प्रवर्ती पनपने लगती है। अनेक प्रकार की कुंठाएँ (Frustration), आक्रोश व असमायोजन की समस्याएँ पैदा होने लगती हैं। इन सब स्थितियों को कम करने के लिए, हल करने के लिए, स्वस्थ व सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता है

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

01. विशिष्ट समूह चार के प्रकार हैं -

(i) ....

(ii) ....

(iii) ....

(iv) ....

02. विशिष्ट समूह के बालकों की शिक्षा आवश्यक है-

(i) ....

(ii) ....

(iii) ....

(iv) ....

15.4 विशिष्ट समूह बालक व पाठ्यक्रम (Curriculum and Special Group):

जिन विशिष्टताओं या कमियों के कारण बालकों को विशिष्ट बालकों की श्रेणी में रखा गया हैं, उनके लिए समान पाठ्यक्रम निर्धारित करना न्यायसंगत नहीं होगा। हमें प्रत्येक कमी या विशेषता के लिए अलग-अलग प्रकार का पाठ्यक्रम निर्धारित करना होगा।

प्रतिभाशाली बालक और पाठ्यक्रम **(Gifted Child and Curriculum):**

ये बालक सामान्य पाठ्यक्रम से संतुष्ट नहीं होते, जिज्ञासु व कर्मठ होने के कारण बहुत कुछ सीख सकते हैं, इसलिए ऐसे छात्रों के लिए -

(1) अपेक्षाकृत कुद कठिन व विस्तृत पाठ्यवस्तु होनी चाहिए।

(2) विज्ञान, प्रौद्योगिकी, गणित विषयों का समावेश होना चाहिए।

(3) तर्क, चिन्तन व अनुसंधान पर आधारित विषयवस्तु होनी चाहिए।

(4) उन्हें नेतृत्व के अवसर प्रदान करने चाहिए।

पिछड़े बालक व उनका पाठ्यक्रम **(Backward Child and Curriculum):**

पर्यावरण द्वारा बालकों के लिए पारिवारिक व शैक्षिक दोनों प्रकार के वातावरण में सुधार करना होगा। बुरी संगत से बचाने हेतु नैतिक मूल्यों का ज्ञान देकर उसका आत्मविश्वास जगाना होगा, यदि बालक की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति न होती हो तो माता-पिता से सम्पर्क कर पौष्टिक भोजन स्वच्छता पढ़ाई के साधनों की व्यवस्था, यदि कोई रोग है तो उसके उपचार हेतु परामर्श देना होगा। उनमें आत्मविश्वास जागृत करने के लिए विभिन्न कार्यक्रमों में सम्मिलित होने के अवसर प्रदान करने चाहिए।

मंद बुद्धि बालक व उनका पाठ्यक्रम **(Mentally Retarded Child and Curriculum):**

वैसे तो मंद बुद्धि बालकों के लिए पृथक विद्यालय की व्यवस्था होनी चाहिए लेकिन हमारे देश में ऐसी व्यवस्था कम है, ऐसे बालकों के लिए विशिष्ट कक्षाओं का आयोजन किया

जाना चाहिए। इनका पाठ्यक्रम सामान्य से अलग होना चाहिए, इनके लिए शिक्षण की अपेक्षा प्रशिक्षण योग्य पाठ्य सामग्री निर्धारित की जानी चाहिए। इनके लिए -

(1) पढ़ाये जाने वाले विषयों की संख्या अधिक न हो।

(2) विषयवस्तु सरल व सुलभ हो।

(3) जीवन में उपयोग में आने वाले ज्ञान को अधिक महत्व दिया जाये।

(4) मानसिक की अपेक्षा शारीरिक व क्रियात्मक कार्यो पर विशेष बल दिया जाये।

(5) पाठ्यक्रम थोपा न जाये बल्कि वह व्यवहारिक एवं उनकी रूचि के अनुसार हो।

शारीरिक दोष वाले पिछड़े बालक व उनका पाठ्यक्रम **(Physically Handicapped Child & Curriculum):**

ऐसे बालक जो अपंग हो, लेकिन मंद बुद्धि न हो उनके लिए उनकी सामर्थ्य के अनुसार पाठ्यक्रम निर्धारित किया जाना चाहिए।

(1) संगीत, चित्रकला, सिलाई, कढाई, बुनाई, क्राफ्ट, लकड़ी का कार्य जीविकोपार्जन हेतु दक्षता व्यावसायिक कुशलता जैसे विषयों का होना आवश्यक है।

(2)) अपनी अपंगता के कारण को जानना व उसे दूर करना या कम करना, स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी का ज्ञान जैसी विषयवस्तु रखी जाये।

(3) नैतिक मूल्यों के ज्ञान द्वारा आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता जाग्रत करने जैसे विषयवस्तु का समावेश होना।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

03. प्रतिभावान छात्रों हेतु पाठ्यक्रम होना चाहिए -
    (i) ……………………………………..
    (ii) ……………………………………..
    (iii) ……………………………………..
    (iv) ……………………………………..

04. मंद बुद्धि बालकों हेतु पाठ्यक्रम होना चाहिए -
    (i) ……………………………………..
    (ii) ……………………………………..
    (iii) ……………………………………..
    (iv) ……………………………………..

05. मंद बुद्धि बालकों को शिक्षित करने के बजाय .... करना अधिक उपयोगी होता है।

06. बालकों की प्रत्येक कमी या विशेषता के लिए .... का पाठ्यक्रम निर्धारित करना चाहिए।

07. ज्ञानेन्द्रिय दोष वाले बालकों हेतु ....की व्यवस्था उपयोगी होती है।

15.4.1 विशिष्ट बालकों हेतु विभिन्न स्तर पर पाठ्यक्रम (At different level):

विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व के विकास की दृष्टि से शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम ऐसा हो जो विभिन्न शैक्षिक स्तरों के बालकों व उन बातों का विकास कर सके जो व्यक्तित्व के प्रमुख अंग हैं। इस सम्बन्ध में पाठ्यक्रम के निर्माण के समय मूलरूप से दो बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है -

1. बालकों की आयु एवं उनका शैक्षिक स्तर।
2. व्यक्तित्व का वह विशेष अंग जिसका विकास किया जाना है।

इन दोनों ही बातों को ध्यान में रखते हुए -

<u>प्राथमिक (**Primary**) स्तर पर</u>

(1) शारीरिक विकास के लिए - ऐसे पाठों का चयन किया जाये, जिनमें सफाई का स्वास्थ्य पर प्रभाव, गंदगी के कारण फैलने वाली बीमारियाँ का सड़ी-गली चीजों से घृणा करना स्वच्छ जल, वायु पर्यावरण, शिक्षा, पेड़-पौधों का महत्त्व आदि हो।

(2) बौद्धिक विकास के लिए - गणित व सामान्य विज्ञान जैसे विषयों पर अधिक बल दिया जाये। गणित में रटाने को कम व विज्ञान में स्वयं करके देखने और बौद्धिक क्रियाओं को अधिक महत्व दिया जाये। इस दृष्टि से इस स्तर पर गणित व विज्ञान अनिवार्य हो और अवश्य पढ़ाया जाये।

(3) सामाजिक विकास के लिए - भाषायी पाठों में ऐसे पाठों का चयन किया जाये जिनमें संगठन, सहयोग, समाज सेवा आदि से संबन्धित पाठ हों। इन पाठों का धनात्मक प्रभाव पाठ के निष्कर्ष के रूप में बताया गया हो। इसके विपरीत असहयोग, अकेलेपन की आदत आदि के दुषपरिणामओं को भी दर्शाया गया होना चाहिए।

(4) सांवेगिक विकास के लिए - मातृभाषा के पाठ के अन्तर्गत क्रोधी राजा, साहसी बालक आदि ऐसे पाठों का चयन किया जाये जिन्हें पढ़कर विद्यार्थियों में भय, क्रोध आदि का शमन हो तथा साहस, उत्साह, सामाजिकता, सहानुभुति आदि सांवेगिक गुणों का विकास हो।

(5) नैतिक विकास के लिए - नीति सम्बन्धी उन कहानियों, कविताओं आदि के माध्यम से इस अवस्था में सत्य,, अहिंसा, चोरी न करना, साथियों को धोखा न देना आदि ऐसे गुणों पर आधारित पाठ पढ़ाये जाये जिनसे बच्चों में उन गुणों का विकास हो सके जो उनके भावी जीवन के लिए जरूरी है।

पाठ्यवस्तु (Syllabus) की दृष्टि से बच्चों पर अधिक बोझ न डाला जाये, क्योंकि उनसे यह अपेक्षा करना कि वे सभी विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे, ठीक नहीं। उन्हें तो उनकी बौद्धिक एवं शारीरिक क्षमता को ध्यान में रखते हुए केवल उतना ही पढ़ाया जाये जो -

(i)) उनके विकास की दृष्टि से आवश्यक हो, तथा

(ii) क्षमता की दृष्टि से जिसे वे आत्मसात् कर सके।

इस दृष्टि से प्राथमिक स्तर पर -

1 मातृभाषा (विचारों के आदान-प्रदान की दृष्टि से)

2 गणित व विज्ञान (बौद्धिक विकास की दृष्टि से)

3 सामाजिक अध्ययन (समाज से सम्बन्धित सामान्य बातों की जानकारी की दृष्टि से) अनिवार्य होने चाहिए। इनके अतिरिक्त क्योंकि इन आयु के बच्चों में रचनात्मक की भी भावना होती है, अत: कलाओं के रूप में उन्हें चित्रकला, खिलौने, रंगों, गुड़िया आदि जानने को प्रोत्साहित किया जाये।

4 बच्चों की क्षमता को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक स्तर पर ये चार विषय ही पर्याप्त है।

माध्यमिक **(Secondary)** स्तर पर :

पाठ्यवस्तु के अन्तर्गत थोड़ा परिवर्तन किया जाये क्योंकि आयु बढ़ने के साथ-साथ बालकों की बौद्धिक क्षमता का भी विकास होता है। अत: ऊपर बताये गये विषयों के अतिरिक्त एक भाषा को और जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार इस स्तर पर निम्न विषय होने चाहिए -

1. मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा
2. राष्ट्रभाषा

3 गणित व सा0 विज्ञान

4 सामाजिक अध्ययन एवं

5 विभिन्न कलाओं में से बच्चों की रूचि के अनुसार कोई भी एक कला।

पाठ्यक्रम की दृष्टि से -

शारीरिक विकास के लिए - विभिन्न प्रकार के खेलों में से उस आयु में खिलाये जाने वाले खेलों की सामान्य जानकारी, उनका प्रभाव, स्वास्थ्य को अनुकूल या प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों का अध्ययन कराया जाना चाहिये। ये पाठ भाषायी पाठों के अन्तर्गत भी पढ़ाये जा सकते हैं और स्वास्थ्य शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, योग शिक्षा आदि।

मानसिक <u>**(Mental)**</u> विकास हेतु - गणित यहाँ भी अनिवार्यत: पढ़ाया जाये। साथ ही विज्ञान एवं सम्बन्धित सामान्य बातों की जानकारी भी इसी स्तर पर दी जा सकती है, उदाहरण के रूप में साइकिल का पम्प, मिट्टी के तेल का पम्प, बिजली का बल, प्रेशर कूकर आदि किस प्रकार का काम करते हैं और इनको बताते समय किन-किन बातों का ध्यान रखा जाता है।

सामाजिक विकास की दृष्टि से - सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, राष्ट्रीयता की भावना, आतंकवाद, फूट के दुष्परिणाम, समाजवाद, अन्धविश्वास, रूढियाँ आदि सभी से सम्बन्धित उन सभी बातों को पढ़ाया जाना चाहिए जो अन्तत: सामाजिक विकास में सहायक या बाधक सिद्ध होती है।

<u>सांवेगिक विकास की दृष्टि से</u> - छात्रों के शैक्षिक स्तर के अनुसार ऐसी कविताओं, कहानियों आदि का चयन किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों में सांवेगिक स्थिरता लाने में सहायक सिद्ध हों। यहाँ एक बात ध्यान में रखने की और है कि सभी में नहीं तो अधिकतर छात्रों में किशोरावस्था के लक्षण झलकने लगते हैं। अत: ऐसे पाठों का चयन किया जाना चाहिए जिनमें संयम और नियम का महत्व विशेष रूप से बताया गया हो।

नैतिक विकास हेतु - इस आयु में इन मूल्यों का विकास का प्रयास तो किया ही जाये जिनका उल्लेख हमने प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए किया था। साथ ही महाराणा प्रताप, शिवाजी, महारानी लक्ष्मीबाई, महात्मा गाँधी, सत्यवादी हरिश्चन्द्र जैसे पाठों का भी चयन किया जाये जिनके द्वारा विद्यार्थियों में आदर्श मूल्यों का विकास हो।

+ 2 या उच्च स्तर पर -

पाठ्यवस्तु की दृष्टि से - चूंकि विद्यार्थियों में बौद्धिक दृष्टि से काफी परिपक्वता आ जाती हैं, रूचियॉ अपना स्पष्ट प्रभाव दिखाने लगती है, जीवन मूल्य भी स्पष्ट झलकने लगते हैं, अत: इन सभी दृष्टियों से विद्यार्थियों को अपने भविष्य को ध्यान में रखते हुए अपनी रूचियों बौद्धिक क्षमताओं आदि की दृष्टि से विषयों के चयन में छूट होनी चाहिए। उनकी बौद्धिक क्षमता के अनुरूप उन्हें उनकी इच्छा से किसी अन्य भाषा के अध्ययन की भी सुविधा होनी चाहिए। इस प्रकार इस स्तर पर तीन भाषाओं का अध्ययन सरलता से कराया जा सकता है। उनके लिए पाठ्यवस्तु होगी -

1. सामाजिक ज्ञान (अनिवार्य)
2. सामान्य विज्ञान (अनिवार्य)
3. विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, भाषाओं आदि के समूहों में से किन्ही तीन विषयों का स्वेच्छा से चयन या अध्ययन। यहाँ विज्ञान वर्ग को छोड़कर भाषाओं और सामाजिक विज्ञान के विषयों को परस्पर मिलाया जा सकता है।
4. किसी भी विदेशी भाषा का अध्ययन (पूरी तरह ऐच्छिक) यहाँ यह आवश्यक नहीं कि विदेशी भाषा देश के बाहर की ही भाषा हो। प्रान्त से बाहर की भाषा का चयन किया जा सकता है।

पाठ्यक्रम **(Curriculum)** की दृष्टि से -

शारीरिक विकास हेतु - ब्रम्हचर्य से अनुभव एवं लाभ जैवीय दृष्टि से प्रजनन अंगों की सामान्य जानकारी, यौन शिक्षा, वंशानुक्रम का प्रभाव, जीव विज्ञान के विभिन्न नियम आदि से सम्बन्धित जानकारी दी जाये।

बौद्धिक विकास हेतु - प्रत्येक विषय का अध्ययन को तर्क आधारित वनाने का प्रयत्न किया जाये। भाषाओं के अध्ययन में शब्द परिवर्तन, तुलना एवं अन्तर के द्वारा तथा सामाजिक विज्ञान के विषयों में स्थिति बदलकर तथ्यों में क्या परिवर्तन आ सकता है - यह बताया जाये। प्रश्नों में 'क्या' का आधार कम किया जाये और क्यों, कैसे, किस प्रकार, किस कारण, क्या प्रभाव पड़ेगा आदि से सम्बन्धित प्रश्न अधिक पूछे जायें।

सामाजिक विकास की दृष्टि से - सामाजिक रीति-रिवाज एवं परम्पराओं के पीछे निहित आधार, परम्पराओं का वैज्ञानिक आधार, रूढ़ियाँ एवं अन्धविश्वासों (यदि वास्तव में है तो) का खण्डन। उपद्रवों, आतंकवाद आदि का सामाजिक आधार और उसे दूर करने के उपाय आदि से सम्बन्धित ज्ञान दिया जाये।

सांवेगिक विकास की दृष्टि से - क्रोध, साहस आदि विभिन्न संवेगों का अस्तित्व, सार्थकता, उपयोगिता एवं महत्व आदि का तर्कसंगत विश्लेषण कराया जाये। भाषा की दृष्टि से पाठ इतने बोधगम्य हों कि विद्यार्थी स्वत: उन्हें समझकर अपने विचारों एवं मान्यताओं में वांछित परिवर्तन कर सकें।

नैतिक विकास की दृष्टि से - सत्य आदि नैतिक गुणों की परिभाषा न देकर उनसे सम्बन्धित तथ्यों का विवेचन वर्तमान संदर्भों में कराया जाये। अनीति के दुष्परिणामों को विद्यार्थियों से ही निकलवाया जाये।

पाठ्यक्रम में उपरोक्त तथा इनसे मिलती-जुलती अन्य बातें पढाने के साथ-साथ इसी दृष्टि से पाठ्य-सहगामी एवं पाठ्येतर क्रियाओं पर विचार किया जाना चाहिए।

व्यक्तित्व का विकास तथा पाठ्य सहगामी **(Co-curricular)** एवं पाठ्येतर **(Extra-curricular)** क्रियाएँ प्राथमिक **(Primary)** स्तर पर -

शारीरिक विकास की दृष्टि से - खो-खो, कुत्ता-बिल्ली, आँख-मिचौली जैसे खेलों की व्यवस्था।

बौद्धिक विकास की दृष्टि से - शब्द प्रतियोगिता, दौड़, वर्ण-अन्त्याक्षरी।

सामाजिक विकास हेतु - सामूहिक खेल, पिकनिक, सामूहिक भोज व्यवस्था, समूह अध्ययन आदि।

सांवेगिक विकास के लिए - खेलने, पढ़ने आदि में उन्हें प्रोत्साहित किया जाये, बच्चों की जिज्ञासाओं का उत्तर प्रेम से दिया जाये न कि क्रोध से

नैतिक विकास हेतु - बच्चों को खेल खिलाते समय ईमानदारी बरतने के लिए उत्प्रेरित किया जाये, ईमानदार बालकों को पुरस्कृत किया जाये।

माध्यमिक स्तर पर -

शारीरिक विकास हेतु - कबड्डी, गेंद-बल्ला, वालीबॉल, फुटबॉल, विभिन्न प्रकार की कूद आदि प्रकार के खेल।

बौद्धिक विकास हेतु - वाद-विवाद प्रतियोगिता, त्वरित-भाषण, मौलिक निबन्ध प्रतियोगिता, कविता प्रतियोगिता आदि।

सामाजिक विकास हेतु - सामूहिक खेल, शैक्षिक भ्रमण, स्नेह सम्मेलन, विषय परिषदें आदि।

सांवेगिक विकास के लिए - पहले विद्यार्थियों को जिज्ञासा को शान्त करना, वह जो भी पूछे उसका सन्तोषप्रद उत्तर देना आदि।

नैतिक विकास की दृष्टि से - नैतिकता के मार्ग पर चलने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कृत करना, सुभाषित, हितोपदेश, अनमोल वचन, महापुरूषों की जीवनियाँ आदि का आयोजन अधिक अच्छा रहता है।

+ 2 एवं उच्च **(Higher)** स्तर पर -

शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विकास हेतु सामान्यतया वे ही क्रियाएँ उपयोगी सिद्ध होगी जिनका उल्लेख हमने माध्यमिक स्तर के लिए किया है।

ऊपर पाठ्य-सहगामी एवं पाठ्येतर क्रियाओं के सबन्ध में जितनी भी बातें बताई गई हैं, उन्हें हम एक दूसरे रूप में भी प्रदर्शित कर सकते हैं। स्तर की दृष्टि से जहाँ जो किया उपयुक्त प्रतीत हो उसे अपनाया जा सकता है।

शारीरिक विकास के लिए - खो-खो, कबड्डी, सितोलिया, गेंद, गोला फेंक, तरह-तरह की दौड़े, बैडमिण्टन, टेबिल टैनिस, वॉलीवॉल फुटबॉल, हॉकी, क्रिकेट, जिमनास्टिक आदि उपयोगी रहते हैं।

बौद्धिक विकास हेतु - विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएँ, अन्त्याक्षरी, वाद-विवाद, आशु भाषण, पहेली, वाक्य पूर्ति, समस्या-पूर्ति आदि उपयोगी रहते हैं।

सामाजिक विकास हेतु - स्नेह सम्मेलन, पिकनिक, शैक्षिक भ्रमण, समूह चर्चा, सह-सम्मेलन, सह-भोज, सामूहिक खेल आदि अधिक उपयोगी रहते हैं।

सांवेगिक विकास की दृष्टि से - सभी स्तरों पर -

1. प्रथम तो यह देखने का प्रयास किया जाये कि किस आयु में किस संवेग का विकास अधिक होता है।
2. उनमें से कौन से संवेग व्यक्तित्व के विकास में सहायक है और कौन से बाधक।
3. व्यक्तित्व के विकास में सहायक संवेगों का विकास किया जाये और बाधक संवेगों का शमन नैतिक विकास की दृष्टि से - सभी स्तरों पर -

1. सभी निर्धारित नीतियों एवं नियमों का पालन स्वयं भी किया जाये और विद्यार्थियों से भी कराया जाये।
2. सुभाषित पद्द सन्तवाणी, महापुरूषों के जीवन के द्रश्टान्त, कहानियाँ, कविताएँ आदि सुनाई जाये और उनका अर्थ भी स्पष्ट किया जाये।

   ये सभी आयोजन व्यतित्व के विकास में सहायक सिद्ध होते हैं।

15.5 विशिष्ट बालकों के लिए विशिष्ट कक्षाएँ (Special Classes for Special Group):

प्रत्येक प्रकार की विशिष्टताओं के लिए अलग अलग प्रकार के पाठ्यक्रम हैं, जैसे नेत्रहीन बालकों के लिए अलग पाठ्यक्रम होना चाहिए तथा मूक बधिर के लिए अलग। जहाँ एक ओर पाठ्यक्रम में प्रत्येक स्तर और विशेषता के, अनुसार पाठ्यक्रम अलग-अलग होगा, वहीं एक ही स्तर और एक ही प्रकार की विशेषता के लिए सभी बालकों के लिए कक्षाएँ समान होनी चाहिए।

प्रतिभावान छात्रों के लिए विशेष शिक्षण कक्षाओं को व्यवस्थित करना होगा जबकि पिछड़े बालकों के लिए सामान्य शिक्षण कक्षाओं को आयोजित करना होगा।

विशिष्ट बालकों में भी छात्रों व छात्राओं की रूचि, योग्यता, कर्तव्यबोध अलग-अलग होता है इसलिए हमें छात्र व छात्राओं के लिए अलग-अलग कक्षाओं की व्यवस्था करनी चाहिए, यह अन्तर प्रतिभाशाली छात्र व छात्राओं में अधिक देखने को मिलता है।

15.6 विशिष्ट विद्यालयों का संगठन (Organisation of Special Schools):

विशिष्ट बालकों की शिक्षा व्यवस्था अलग-अलग प्रकार से होनी चाहिए। जैसे यदि प्रतिभाशाली बालकों के समूह को सामान्य वर्ग के बच्चों के साथ रख दिया जाये, तो ये बच्चे तो किसी बात को बड़ी जल्दी सीख लेते हैं जबकि सामान्य या पिछड़े बालक नहीं सीख पाते। जो बच्चे जल्दी सीख लेते हैं वे यह सोचते हैं कि हम बहुत होशियार हैं और उनमें अहम भाव पनपने लगता है और वे बच्चे जो सीखने में कठिनाई का अनुभव करते हैं उनमें हीन भावना पनपने लगती है। दोनों ही प्रकार की भावनाएँ अधिगम में बाधक होती है। इस दृष्टि से सभी बालकों को

एक ही कक्षा या विद्यालय में पढ़ाना उचित नहीं, प्रत्येक प्रकार के विशिष्ट बालक हेतु अलग-अलग विद्यालय होने चाहिए।

मंद बुद्धि बालकों को शिक्षित करने के बजाय प्रशिक्षित करना अधिक उपयोगी होता है, उनके लिए ऐसे विद्यालय हो जहाँ उन्हें कौशल अर्जन कर कार्य सिखाये जाये ताकि वे जीविकोपार्जन हेतु उनका उपयोग कर सकें।

ज्ञानेन्द्रिय दोष वाले पिछड़े बालकों हेतु सामान्य विद्यालय उपयुक्त नहीं होते ऐसे बच्चों को विशेष साधन सुविधाओं की आवश्यकता होती है। जैसे अलग प्रकार से बैठने की व्यवस्था, सुनने की व्यवस्था देखने की व्यवस्था, श्रव्य-दृश्य साधनों की व्यवस्था, चिकित्सा व्यवस्था, दोषों के अनुरूप प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था इसलिए इस प्रकार के पिछड़े बालकों हेतु अलग विद्यालयों का संगठन करना आवश्यक है। ऐसे बालक उपहास के पात्र न बने क्योंकि उपहास के कारण भी कई छात्र विद्यालय छोड़ देते हैं।

विशेष रूप से मंद बुद्धि व ज्ञानेन्द्रिय दोष वाले पिछड़े हेतु अलग प्रकार के विद्यालयों की व्यवस्था की जानी चाहिए। परन्तु हमारे देश में ऐसे विद्यालयों का अभाव है ऐसी स्थिति में इन बच्चों के शिक्षण के लिए सामान्य विद्यालयों में ही विशिष्ट कोष्ठ विकसित किये जा सकते हैं। जहाँ विशिष्ट कक्षाएँ चलाई जाये इन बालकों हेतु अलग समय सारणी, अलग पाठ्यक्रम व लम्बा कालांश व्यवस्था हो। इन कोष्ठों में विशिष्ट छात्रों के अनुकूल जहाँ तक संभव हो व्यवस्था की जाये। ये व्यवस्थाएँ स्वयं के द्वारा विकसित व आशुरचित भी हो सकती है।

15.7 विशिष्ट समूह और विशिष्ट शिक्षण विधियॉ व प्रविधियॉ (Special Teaching Methods & Techniques for Special Group):

प्रत्येक प्रकार की विशिष्टता के लिए शिक्षण व विधियों में प्रविधियों में विविधता होनी चाहिए। प्रतिभावान बालकों हेतु - तर्क, चिन्तन, मनन, चर्चा व आलोचना पर आधारित विधियों जैसे प्रश्नोत्तर प्रविधि, प्रयोजन विधि ह्युरिस्ट विधि, समस्या समाधान विधि, समूह परिचर्चा आदि द्वारा शिक्षण कार्य हो।

मंद बुद्धि बालकों के समूह हेतु - क्रियाओं पर आधारित विधियों जैसे किंडर गार्टन विधि खेल विधि (Play method) क्रिया विधि (Activity Method) सह-सम्बंध विधि (Correlation Method), नाटक द्वारा (Dramatisation), गीत, कविता गाकर उदाहरणों द्वारा, प्रदर्शन द्वारा, खिलौने (Toys) द्वारा, जादू (Magic) द्वारा ऐसे बालकों को उपयोगी व व्यावहारिक ज्ञान दिया जा सकता है।

पिछड़े बालकों हेतु - निदानात्मक व उपचारात्मक विधि द्वारा, शिक्षक अभिभावक सम्मेलन (Conference) द्वारा पिछड़ेपन के कारण जानकर उनके अनुरूप शिक्षण विधियों का चुनाव किया जाये।

जैसे नेत्रहीनों के लिए व्याख्यान विधि, प्रश्नोत्तर प्रविधि, वर्णन, व्याख्या प्रविधि, मूक बधिर बालकों के लिए प्रदर्शन विधि, प्रयोगशाला विधि, अधिक उपयोगी सिद्ध होगी। कान के दोष वाले बालक होठों की गति के अध्ययन (Lip reading) द्वारा ज्ञानार्जन कर सकते हैं।

15.8 विशिष्ट समूह और शिक्षण सामग्री (Special Group & Teaching aids):

विशिष्ट बालकों के शिक्षण हेतु प्रयुक्त सहायक सामग्री अलग-अलग प्रकार की होगी। प्रतिभाशाली बालकों हेतु ऐसे प्रयोग, चार्ट, मॉडल हो जिन्हें वह अपने विवेक व बौद्धिक क्षमता द्वारा पूर्ण करें व उनमें नयापन लाये। स्वनिर्मित उपकरण, क्रियात्मक मॉडल, मानसिक चिन्तन, तर्क, सोच-विचार वाली सहायक सामग्री उनके लिए हो जो आँखों से देख सकते हैं जबकि जो आँखों से देख नहीं सकते उनके लिए श्रव्य सामग्री जैसे रेडियो, कैसेट प्लेयर, टेपरिकॉर्डर, ग्रामोफोन, छूकर महसूस करने वाली सहायक सामग्री उपयुक्त होगी। शारीरिक विकलांग वाले विशिष्ट समूह हेतु उनकी क्षमता व जिस अंग से वे कार्य कर सकते हैं उसी के अनुरूप श्रव्य, दृश्य सामग्री उनके लिए उपयोगी होगी।

कामचोर व आलसी बेईमान बालकों के लिए प्रेरणादायी कहानियॉ प्रसंग व कविताएँ उपयोगी रहेगी जबकि दुष्ट प्रवृती निर्ममी के लिए दया भरी, दुख भरी कहानियॉ अधिक उपयोगी सिद्ध होगी।

15.9 विशिष्ट समूह हेतु शिक्षक की संक्रियता (Sensitity of teacher for special group):

विशिष्ट समूह के व्यक्तित्व के विकास में यदि सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका किसी की है तो वह है - शिक्षक। शिक्षक के बाद माता-पिता का स्थान है। माता-पिता का स्थान बाद में इसलिए कि व्यक्तित्व का विकास किस प्रकार किया जा सकता है - इसे माता-पिता इतना नहीं जानते जितना शिक्षक। माता-पिता को भी विद्यार्थी के सम्बन्ध में इन सब बातों के विषय में बताने वाला तो शिक्षक ही है फिर माता-पिता शिक्षक को खाने-पान के विषय में ही तो बता सकते हैं, बालक का बौद्धिक, सामाजिक, सांवेगिक और नैतिक विकास किस प्रकार किया जाये, इसे माता-पिता की अपेक्षा शिक्षक अधिक जानता है। अत: हम बालक के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में माता-पिता के दायित्व पर तो बाद में विचार करेंगे। पहले देखते हैं कि शिक्षक को क्या करना चाहिए? अपने विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास हेतु शिक्षक को चाहिए कि वह -

1. पहले तो इस बात को जाने कि विद्यार्थी-विद्यार्थी में किसी न किसी दृष्टि से अन्तर होता है। अत: विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास हेतु ज्ञान-प्राप्ति, भावना-परिवर्तन एवं क्रियाशीलता की दृष्टि से सभी को उत्प्रेरित करने और सिखाने के तरीके अलग-अलग होंगे।
2. व्यक्तित्व के किसी पहलू के विकास हेतु विद्यार्थियों को जो कार्य दिये जाये वह उनकी रूचि (Interest), आयु (Age), योग्यता (Capability) एवं क्षमता (Capacity)) के अनुसार हो।
3. कार्य देते समय विद्यार्थियों की पारिवारिक पृष्ठभूमि का भी अवश्य ध्यान रखा जाये।
4. केवल ज्ञानार्जन की ओर ही बच्चों का ध्यान आकर्षित न किया जाये, अपितु भावात्मक परिवर्तन पर अधिक बल दिया जाये, क्योंकि कर्म तो भावना के अनुरूप ही होते हैं।

5. विशिष्ट समूह के व्यक्तित्व के विभिन्न अंगों का विकास अलग-अलग प्रकार से होता है। बौद्धिक विकास यदि अध्ययन करने से अधिक होता है तो शारीरिक विकास, व्यायाम, खेलकूद जैसी पाठ्येतर (Extra curricular) क्रियाओं से और सामाजिक विकास समूह-कार्यो या शैक्षिक भ्रमण वगैरह से। अत: सभी प्रकार की क्रियाओं को उचित स्थान दिया जाये
6. कक्षा के वातावरण को इतना आकर्षक एवं भयमुक्त बनाने का प्रयास किया जाये कि विद्यार्थी भयमुक्त होकर पढ़ने में रूचि लें।
7. छात्रों में राग, द्वेष, ईर्ष्या, जैसे नकारात्मक भावों को न पनपने दिया जाये और यदि पनप चुके है तो उचित उदाहरण महापुरूषों के दृष्टांत, संस्मरण आदि के द्वारा उनका शमन किया जाये और बदलने का प्रयास किया जाये।
8. हीनता के समय विद्यार्थियों को उत्प्रेरित किया जाये और अहं भाव पनपने से उसे दूर किया जाये।
9. बच्चों के साथ व्यवहार मातृत्व / पितृत्व या मित्रवत हो, न कि अधिकारात्मक।
10. विद्यार्थियों की गलती के समय उन्हें समझाया जाये न कि उन्हें भय दिखाकर उनकी भावनाओं को उकसाया जाये।
11. किसी भी प्रकार की कोई समस्या उत्पन्न होने पर उन्हें उचित मार्गदर्शन दिया जाये।
12. व्यक्तित्व की उन कमजोरियों को दूर करने का हठात् प्रयास न किया जाये जो वंशानुगत है।
13. विद्यार्थियों में नैतिकता और चरित्र के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाये क्योंकि व्यक्तित्व के अन्य पहलू इसी पर आधारित अधिक होते हैं।
14. निष्पक्ष मूल्यांकन द्वारा समय-समय पर उन्हें उनकी कमजोरी से अवगत कराया जाये ताकि वे उस कमजोरी को दूर करने हेतु विशेष प्रयास कर सके।
15. अपने व्यक्तित्व में भी वह परिवर्तन लाने का प्रयास करें जिसकी अपेक्षा वह अपने विद्यार्थियों से करता है।

विशिष्ट समूह के छात्रों के व्यक्तित्व के विकास के सम्बन्ध में ऊपर जो कुछ कहा गया, वह आदर्शपरक अधिक है, व्यवहारपरक कम, अर्थात यह तो सभी जगह लिखा मिलेगा कि विद्यार्थियों के व्यतित्व के विकास हेतु शिक्षक को क्या करना चाहिए, परन्तु मूल समस्या यह नहीं कि क्या किया जाये, मूल समस्या यह है कि जो किया जाये वह कैसे किया जाये अर्थात व्यक्तित्व कि विभिन्न पहलुओं के विकास हेतु कौन-कौन सी पाठ्यक्रमीय (Curricular), पाठ्य-सहगामी (Co-curricular) एवं पाठ्येत्तर (Extra-curricular) क्रियाएँ उसे प्राथमिक, माध्यमिक रूप उच्च स्तर पर करनी है - इस पर विचार किया जाना चाहिए। यहाँ पर एक बात का और ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्तित्व के किसी विशेष गुण के विकासार्थ हम जो क्रियाऍ प्रस्तावित कर रहे हैं उसका आशय यह कभी नहीं लगाया जाना चाहिए कि जो कुछ लिखा गया है वही होना चाहिए, वह तो एक सुझाव मात्र है। इन सुझावों को ध्यान में रखते हुए लड़के-लड़कियों के लिए पाठशाला की परिस्थितियों उपलब्ध संसाधनों आदि को ध्यान में रखते हुए शिक्षक जो कुछ अच्छा कर सकता है उसे वही करना चाहिए।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

08. नेत्रहीनों के लिए .... विधियों का उपयोग शिक्षण हेतु किया जाना चाहिए।

09. बालकों के विकास में सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका .... की होती है।

10. बालकों का मूल्यांकन .... होना चाहिए।

15.10 सारांश (Summary)

विशिष्ट बालकों में सामान्य बालकों की अपेक्षा कुछ समानताएँ व कुछ विशेषताएँ-पाई जाती है। इन विशेषताओं की चरम सीमा वाले बालक विशिष्ट बालकों की श्रेणी में आते है। शारीरिक दृष्टि से - बहुत अच्छे या बहुत कम वालकों की संख्या 1 प्रतिशत है।

- अलग-अलग दृष्टि से विशिष्ट बालक चार प्रकार के होते हैं। प्रतिभाशाली, पिछड़े, मंद बुद्धि व समस्यात्मक बालक। ऐसे बालक दो प्रकार के होते हैं। शिक्षण योग्य व प्रशिक्षण योग्य।
- विकलांग बालक शिक्षण योग्य होते हैं क्योकि वे बौद्धिक दृष्टि से बिल्कुल ठीक नहीं होते।
- विशिष्ट समूह के वे बालक जो शारीरिक रूप से अक्षम है जिसके कारण उनमें बहुत सी व्यक्तिगत सामाजिक, आर्थिक और संवेगात्मक समस्याएँ उत्तपन्न हो जाती हैं और वे मानसिक रूप से अशान्त व विचलित हो जाते हैं। अपनी अक्षमता के कारण उनमें हीन भावना व मानसिक तनाव पैदा हो जाता है। ये बालक अपने चारों ओर के वातावरण द्वारा की जाने वाली उपेक्षाओं के प्रति बहुत संवेदनशील हो जाते हैं। सामाजिक जीवन से कतराने लगते हैं। संकोची, एकाकी होने की प्रवृति पनपने लगती है। अनेक प्रकार की दुविधाएँ, आक्रोश व असमायोजन की समस्या पैदा होने लगती है। इन सब स्थितियों को कम करने के लिए, हल करने के लिए स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करने के लिए विशिष्ट समूह की शिक्षा की आवश्यकता है।
- प्रतिभाशाली बालकों का पाठ्यक्रम कठिन विश्वस्त, तर्क चिन्तन व अनुसन्धान पर आधारित होना चाहिए।
- मंद बुद्धि बालकों हेतु पाठ्यक्रम सरल, सुलभ, उपयोगी, अधिकतर क्रियाओं पर आधारित होना चाहिए।
- शारीरिक दोषयुक्त पिछड़े बालकों का पाठ्यक्रम जीविकोपार्जन व व्यावसायिक दक्षता पर आधारित होना चाहिए।
- विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बालकों का शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, सांवेगिक, नैतिक विकास कर सके।
- प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम बालक की आयु क्षमतानुसार होना चाहिए।
- बालकों के व्यक्तित्व विकास हेतु हर स्तर पर खेलकूद व अलग-अलग पाठ्यक्रम सहभागी क्रियाओं का आयोजन किया जाना चाहिए।
- जहाँ एक ओर प्रत्येक स्तर व विशेषता के लिए अलग-अलग पाठ्यक्रम होगा वही प्रत्येक समूह हेतु अलग कक्षाओं का होना भी आवश्यक है। छात्र व छात्राओं की रूचि, योग्यता, कर्तव्यबोध अलग-अलग होता है इसलिए उनकी कक्षाएँ भी अलग-अलग होनी चाहिए।

- विशिष्ट समूह की शिक्षा हेतु विशिष्ट विद्यालयों का संगठन किया जाना चाहिए। सभी बालकों को यदि एक ही कक्षा या विद्यालय में पढ़ाया जाये तो यह न्यायोचित नहीं होगा। मंद बुद्धि व ज्ञान्नेंद्रियों दोषयुक्त बालकों हेतु विशेष रूप से अलग प्रकार के विद्यालय की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- प्रतिभावान बालकों हेतु तर्क, चिन्तन, मनन, चर्चा आलोचना पर आधारित शिक्षण विधियाँ तथा मंद बुद्धि बालकों हेतु क्रियाओं पर आधारित सरल उपयोगी विधियों का प्रयोग करना उचित होगा।
- नेत्रहीन बालकों हेतु व्याख्यान विधि प्रश्नोत्तर प्रविधि, वर्णन, व्याख्या प्रविधि, मूक बधिर हेतु प्रदर्शन, प्रयोगशाला विधि कान के दोष वाले बालको हेतु होठों की गति अध्ययन (Lip reading) हो।
- विशिष्ट समूह हेतु शिक्षण सामग्री उनकी सामर्थ्य, क्षमता, रूचि, सोच के अनुसार होनी चाहिए। स्वनिर्मित सामग्री का प्रयोग अधिक से अधिक करना श्रेष्ठ होगा।
- विशिष्ट समूह के बालकों के साथ शिक्षक का व्यवहार मातृवत, पितृवत या मित्रवत होना चाहिए। शिक्षक बालको के समक्ष अपना आदर्श स्वरूप प्रस्तुत करें। जो कुछ वे अपने बालकों में चाहते हैं वे सब स्वयं में विकसित करें। शिक्षक आदर्शपरकता को छोड़ व्यवहारिकता पर अधिक बल दें। विद्यालय के सीमित साधनों के रहते अधिकतम उपयोग के सिद्धान्तों को अपनाकर योजना बनाएँ। नई शिक्षा तकनीकियों का प्रयोग करें। श्रेष्ठ शिक्षण द्वारा बालकों की रूचि जागृत करें। कक्षा का वातावरण आकर्षक, भयमुक्त हो, तभी सही मायने में शिक्षक उद्देश्यों को प्राप्त कर पायेगा।

15.11 शब्दावली (Glossary):

प्रतिभाशाली	-	बुद्धिलब्ध 120 और ऊपर/विद्यालय में अत्यधिक तीव्र प्रगति प्रदर्शित करते हैं।
मन्द बुद्धि बालक	-	70 या नीची बुद्धि वाले। इनमें अमूर्त तथा जटिल चिन्तन का अभाव सीखने में पिछड़ापन।
पिछड़े बालक	-	सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से उपेक्षित वर्ग के बालक।
शारीरिक दृष्टि से बाधित बालक	-	ऐसी शारीरिक निर्योग्यताओं से पीड़ित जो उनकी सामान्य अभिवृद्धि सीखने तथा विकास में बाधक है।

15.12 संदर्भ ग्रंथ (Further Readings):

1. Skinner Charles F. - Educational Psychology
2. R.K. Rajoria - Development of learner & Teaching Learning Process
3. S.P. Choubey & Choubey - Fundamental of Educational Psychology
4. A.B. Bhatnagar - Advanced Educational Psychology

5. B. Kuppuswamy - Advanced Educational Psychology
6. B.S. Raizada & Dave - Child Pshchology, Edi. 1992, Rajasthan Hindi Granth Academy.

15.13 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answer/Hints to Self-Learning Exercises

01. (i) प्रतिभाशाली (ii) मन्द बुद्धि (iii) पिछड़े बालक (iv) समस्यात्मक बालक
0.2. (i) प्रतिभावान का उसकी क्षमताओं का अधिकतम व्यक्तिगत तथा सामाजिक उपयोग किया जा सके तथा मन्द बुद्धि बालकों में आत्महीनता की भावनाओं को दूर करने के लिए।
(ii) पिछड़े बालकों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए तथा व्यावसायिक दक्षता प्राप्त करने के लिए।
(iii) शारीरिक रूप से अक्षम, स्वस्थ तथा सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिए।
03. (i) अपेक्षाकृत कठिन (ii) विज्ञान, प्रौद्योगिकी, गणित का समावेश
(iii) तर्क चिन्तन पर आधारित विषयवस्तु (iv) नेतृत्व का अवसर।
04. (i) पाठ्य विषय अधिक न हो (ii) विषय सरल, सुलभ
(iii) जीवनोपयोगी (iv) क्रियात्मक कार्यो पर बल
05. प्रशिक्षण
06. अलग शिक्षण व्यवस्था, अलग-अलग पाठ्यक्रम
07 विशेष साधन सुविधाओं की आवश्यकता
08. व्याख्यान विधि, प्रश्नोत्तर विधि, वर्णन, व्याख्या
09. शिक्षा
10. निष्पक्ष

15.14 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions):

1. विशिष्ट समूह की शिक्षा की क्या आवश्यकता ?
2. बालकों के व्याक्तित्व विकास में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। इस कथन को स्पष्ट कीजिये।
3. विशिष्ट समूह के बालकों के व्यक्तित्व विकास हेतु शिक्षक की क्या भूमिका होनी चाहिए?
4. विशिष्ट समूह हेतु पाठ्यक्रम कैसा होना चाहिए?
5. विशिष्ट समूह के लिए विशिष्ट कक्षाओं का आयोजन क्यों आवश्यक है?
6. प्रतिभाशाली व मंद बुद्धि बालकों के लिए कौन-कौन सी विधियों व प्रविधियों का प्रयोग करना उचित होगा?
7. दृष्टि दोष व श्रवण दोष से युक्त छात्रों हेतु किस प्रकार की सहायक सामग्री तैयार की जानी चाहिए?
8. विशिष्ट समूह के शिक्षण को किन-किन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए?

इकाई 16 (Unit 16)

बालकों का निर्देशन एवं परामर्श
(Guidance and Counselling of children)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

16.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives)

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

16.2 निर्देशन की अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य एवं प्रकार (Concept, Need, Aims and Types of guidance)

16.2.1 निर्देशन की अवधारणा (Concept of Guidance)

16.2.2 निर्देशन की आवश्यकता (Need for Guidance)

16.2.3 निर्देशन के उद्देश्य (Aims of Guidance)

16.2.4 निर्देशन के प्रकार (Type of Guidance)

16.2.4.1 शैक्षिक निर्देशन (Educational Guidance)

16.2.4.2 व्यवसायिक निर्दशन (Vocational Guidance)

16.2.4.3 व्यक्तिगत निर्देशन (Personal Guidance)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

16.3 परामर्श, अवधारणा, उद्देश्य एवं प्रकार (Counselling, Aims and Types)

16.3.1 अवधारणा एवं उद्देश्य (Concept and Aims)

16.3.2 परामर्श के प्रकार (Types of Counselling)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

16.4 बालकों की सहायता एवं क्षेत्र (Areas of Pupils' Help)

16.4.1 शारीरिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ (Problems Related to Health)

16.4.2 सामाजिक एवं संवेगात्मक समस्याएँ (Social and Emotional Problems)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

16.5 समस्याओं में सहायता के उद्देश्य एवं कार्यक्रम (Aims of Help and Programmes)

16.5.1 उद्देश्य (Aims)

16.5.2 कार्यक्रम (Programmes)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

16.6 बालकों का अवलोकन एवं गुणात्मक मानक (Obseruation of Pupil and Standards)

16.6.1 प्रेक्षण

16.6.2 आकस्मिक अभिलेखन (Anecdotal Record)

16.6.3 समाजमित्ति (Sociometry)

16.6.4 साक्षात्कार (Interview)

16.6.4.1 प्रयोजन

16.6.4.2 महत्व

16.6.5 आत्मकथा विवरण (Autobiography Sketches)
16.6.6 पड़ताल सूची (Check List)
16.6.7 स्तर मापनी (Rating Scale)
16.6.8 पढ़क्रममापनी (Ranking)
16.6.9 प्रश्नावली (Questionnaire)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
16.8 सारांश (Summary)
16.8 शब्दावली (Glossary)
16.9 संदर्भ ग्रन्थ (Further Reading)
16.10 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to Self Exercises)
16.11 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit End Questions)

16.0 इकाई के उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :-

1. निर्देशन की अवधारणा, उद्देश्य एवं आवश्यकता को समझ सकेंगे।
2. निर्देशन के विविध रूपों में अंतर कर सकेंगे।
3. परामर्श की अवधारणा तथा परामर्श के प्रकारों का अवबोध कर सकेंगे।
4. विद्यार्थियों की निर्देशन सम्बन्धी विभिन्न प्रकार की समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।
5. विद्यार्थियों को समस्या समाधान हेतु उत्प्रेरित करने वाले कार्यक्रमों के आयोजनों पर विचार कर सकेंगे।
6. बालकों को निर्देशन एवं परामर्श देने हेतु गुणात्मक प्रविधियों व मानकों की योजना बना सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना (Introduction) :-

निर्देशन की जितनी आवश्यकता आज है उतनी कभी नहीं थीं शिक्षक बालक को पढ़ाता ही नहीं है, उसको रचनात्मक जीवन के लिए तैयार करता है, अर्थात निर्देशन शैक्षिक, व्यवसायिक, व्यक्तिगत शिक्षण का अभिन्न भाग है। एक जिम्मेदार शिक्षक इनसे नहीं बच सकता। यह इकाई आपको निर्देशन या परामर्श विशेषज्ञ तो नहीं बना सकती परन्तु अपने विषय से सम्बन्धित ज्ञान के आधार पर काफी सहायता दे सकते हैं तथा निर्देशन सेवाओं के महत्व, स्वरूप तथा प्रकार के बारे में काफी कुछ बता सकेंगे।

16.2 निर्देशन की अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य तथा प्रकार (Concept, Need, Aims and Types of Guidance)

16.2.1 निर्देशन की अवधारणा (Concept of Guidance) :

आज सभी शिक्षाविद इस बात पर एकमत है कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास करना है। बालक का सर्वागीण विकास उचित वातावरण व अनुकूल परिस्थितियों पर निर्भर करता है। वर्तमान में जैसे-जैसे समाज जटिल होता जा रहा है वैसे-वैसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में छात्रों के समक्ष अनेक समस्याएँ उपस्थित होती है। इनका समाधान न

होने पर बालक में तनाव, अंतरदवंद या व्यवहारजन्य समस्याएँ परिलक्षित होती है। बालक की समस्याएँ बहुमुखी होती है। इन समस्याओं के समाधानार्थ उसे सहायता की आवश्यकता होती है ताकि वह एक अच्छा व्यक्ति व नागरिक बन सके। इस संदर्भ में निर्देशन को एक ऐसी सहायता माना गया है जो बालकों के सर्वागीण विकास-शारीरिक, नैतिक, शैक्षिक, सामाजिक, व्यवसायिक तथा व्यक्तिगत विकास में सहायता करती है। निर्देशन एक अन्तर्सम्बन्ध बहुमुखी प्रक्रिया है जिसमें जीवन को सुचारू बनाने हेतु अधिकाधिक बातों का समावेश स्वत: आ जाता है। निर्देशन निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो शैशवावस्था से लेकर जीवन पर्यन्त चलती रहती है। निर्देशन को विभिन्न विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषित किया है।

आर्थर जे.जोन्स के अनुसार, "निर्देशन के अन्तर्गत व्यक्तिगत सहायता का आभास मिलता है। इस सहायता में निर्देशन का केन्द्र व्यक्ति होता है जो उसकी समस्या समाधानार्थ दी जाती है।" वास्तव में निर्देशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अनुसार एक व्यक्ति कम अनुभव वाले व्यक्ति की सहायता करता है। सहायता करने वाले व्यक्ति को मार्गदर्शक कहा जाता है। इस संदर्भ में अभिभावक, शिक्षक, परामर्शदाता, मनोवैज्ञानिक, चिकित्सक अथवा कोई भी अन्य व्यक्ति जो सहायता करता है मार्गदर्शक की श्रेणी में माना जाएगा।

उपरोक्त के संदर्भ में निर्देशन की अवधारणा के अन्तर्गत निम्नलिखित बिन्दु स्पष्ट होते है :-

1. निर्देशन सतत् चलने वाली प्रक्रिया है।
2. इसका प्रमुख उद्देश्य बालक का विकास करना है जिससे वह स्वयं समस्या का हल करने की योग्यता विकसित कर सके।
3. निर्देशन को व्यक्तिगत व सामूहिक दोनों रूपों में दिया जा सकता है।
4. निर्देशन बालक के पूर्ण विकास एवं व्यक्तिगत शैक्षिक व व्यावसायिक समायोजन में मददगार होता है।
5. निर्देशन एक संगठित प्रक्रिया है जिसका एक ढाँचा होता है, कार्यकर्त्ता होते है व एक प्रणाली होती है।
6. निर्देशन शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होता है जैसा कि निम्न चित्र से स्पष्ट है:-

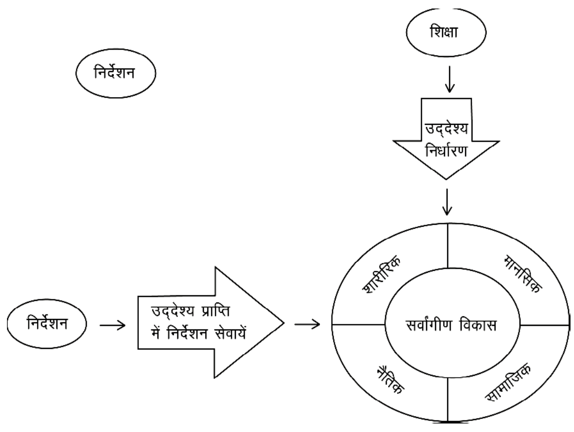

चित्र : 16.1 निर्देशन शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक

16.2.2 निर्देशन की आवश्यकता (Needs of Guidance)

प्रत्येक बालक को अपने विकास के विविध स्तरों पर वय विशेष की परीस्थितियोंनुसार निर्देशन की आवश्यकता होती है -

- व्यक्ति की दृष्टिसे
  - → शैक्षिक वृद्धि `
  - → व्यवसायिक परिपकव्ता (रूचि, कौशल, अभिवृत्ति विकसित किये जा सकते है।
  - → व्यक्तिगत सामाजिक विकास समायोजन स्वयं को समझना
  - → समायोजन
- शैक्षिक दृष्टि से
  - → व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर शिक्षा देने हेतु।
  - → उपलब्धि स्तर बनाए रखने हेतु।
  - → अनुशासन बनाए रखने हेतु।
  - → अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या समाधानार्थ।
- सामाजिक दृष्टि से
  - → अच्छा नागरिक निर्माण हेतु।
  - → अच्छे मूल्यों व शिष्टाचार हेतु।
  - → मानव संसाधनों के उचित उपयोग हेतु।
  - → राष्ट्रीय-सेवार्थ।
- राजनैतिक दृष्टि से
  - → प्रजातांत्रिक मूल्यों के विकासार्थ
  - → राष्ट्रीय एकता हेतु।
  - → अंतराष्ट्रीय भावना विकसित करने हेतु।
- अन्य
  - → शैक्षिक सुविधाओं का लाभ उठाने हेतु।
  - → स्वस्थ मनोरंजन हेतु।
  - → उपयुक्त व्यवसाय चयन एवं नियोजन हेतु।
  - → वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने हेतु।
- आर्थर जोन्स के अनुसार
  - → परिवार की बदलती परिस्थितियों के कारण।
  - → औध्योगिकीकरण करण के कारण।
  - → अवकाश के सदुपयोग हेतु।
  - → सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण।
  - शैक्षिक व्यवस्था में परिवर्तन के कारण।

16.2.3 निर्देशन के उद्देश्य (Aims of Guidance)

निर्देशन एक सोद्देश्य क्रिया है जो व्यक्ति को जीवन की कठिन परिस्थितियों में बुद्धिमतापूर्ण चुनाव करने तथा समायोजन में सहायता करती है। हम्फ्रीज़ एवं ट्रेक्सलर के अनुसार -

1. निर्दशन का उद्देश्य बालक की उसकी योग्यताओं व शक्ति का ज्ञान कराना है।
2. बालक की रूचियों, योग्यताओं व क्षमताओं का पूर्ण विकास करना।
3. बालकों को उन अवसरों की जानकारी देना जिनके योग्य वे हों।

4. बालक को इस योग्य बनाना कि वह विभिन्न विषय परिस्थितियों में अपनी समस्याओं का इस प्रकार समाधान करने योग्य हो जाए कि स्वयं व समाज के हित में हो।
5. निर्देशन का उद्देश्य है व्यक्ति का बहुमुखी विकास करना।
6. बालक को आत्मनिर्देशित बनने में सहायता देना।

निर्देशन एक प्रक्रम है जिसके द्वारा समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बालक के वांछित विकास में सहायता पहुँचाना है। बालकों के साथ लगातार सम्पर्क में आने से अभिभावक व शिक्षक बालकों के व्यवहार के प्रतिमान (पैटर्न) को समझने लगते हैं। कुछ व्यवहार पैटर्न संभवत: प्रमुख रूप से ध्यान आकर्षित करते हैं जैसे प्रतिभाशाली, मंदितमना या उच्च उपलब्धि तथा निम्न उपलब्धि वाले बालक जो अन्य बालकों से स्पष्टतया भिन्न दिखाई पड़ते हैं। कुछ अन्य व्यवहार के पैटर्न जो बालकों में दृश्य होते है। वे इस प्रकार के हो सकते हैं जैसे- पलायनवृत्ति, चिंताग्रस्तता, तनावग्रस्तता, नेतागिरी, झगड़ालू, अनुशासनहीनता, सांस्कृतिक क्रियाकलापों में अधिक रूचि प्रदर्शन आदि।

कुछ बालकों के व्यवहार उनके विकास की अवस्था के अनुरूप नहीं होते हैं, कुछ की अवस्था के अनुरूप नहीं होते हैं, कुछ का आचरण समाज के अनुकूल नहीं होता आदि । इस प्रकार के बालकों की समस्याओं को सुलझाने हेतु निर्देशन की आवश्यकता होती है।

निर्देशन की आवश्यकता सार्वभौमिक है यह कुछ ही देशों या कुछ ही व्यक्तियों तक सीमित नहीं होती।

16.2.4 निर्देशन के प्रकार (Types of guidance) :-

निर्देशन के विविध प्रकार बताए गए हैं। मैक्सकॉन ने तो 57 प्रकार निर्देशन के बताए। मुख्यत: निम्नांकित रूप निर्दशन के हो सकते हैं :-

प्रोक्टर	ब्रीवर	पैटरसन	कूफ एवं कैफयूवर्ती
1. व्यवसायिक निर्देशन	1. व्यवसायिक निर्देशन	1. व्यवसायिक निर्देशन	1. व्यवसायिक निर्देशन
2. शैक्षिक निर्देशन	2. शैक्षिक निर्देशन	2. शैक्षिक निर्देशन	2. शैक्षिक निर्देशन
3. सामाजिक निर्देशन	3. धार्मिक निर्देशन	3. धार्मिक निर्देशन	3. मनोरंजनात्मक निर्देशन
4. स्वास्थ्य व शारी. निर्देशन	4. पारिवारिक निर्देशन	4. स्वास्थ्य निर्देशन	4. स्वास्थ्य निर्देशन
5. अवकाश में सहायता हेतु निर्देशन	5. अवकाश में सदुपयोग हेतु निर्देशन		5. नागरिक, सामाजिक नैतिक निर्देशन
	6. व्यक्तिगत उन्नति हेतु निर्देशन		

उपरोक्त के आधार पर मुख्य रूप से हम इन्हें तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं :-

1. शैक्षिक निर्देशन
2. व्यवसायिक निर्देशन

3. व्यक्तिगत निर्देशन

1. <u>शैक्षिक निर्देशन</u>

शैक्षिक निर्देशन का सम्बंध विद्यार्थियों को निन्नलिखित क्षेत्रों में दी जाने वाली सहायता से है:-

पाठ्यविषयों के चयन, अग्रिम परीक्षा का निश्चय करने, संस्थाओं की जानकारी, पाठ्यक्रमों की जानकारी, प्रवेश शर्तो, अध्ययन आदतों के निर्माणार्थ, संतोषप्रद प्रगति, छात्रवृत्ति सम्बन्धी जानकारी प्रदान आदि सम्बन्धी।

2. <u>व्यवसायिक निर्देशन:-</u>

व्यवसायिक निर्देशन व्यक्ति को व्यवसाय चुनने, उसके लिए आवश्यक तैयारी करने, उसमें प्रवेश पाने तथा वहाँ प्रगति करने में सहायता देने की प्रक्रिया है। व्यवसायिक निर्देशन के बारे में कहा जाता है कि "गोल कील गोल छिद्र में तथा चौकोर कील चौकोर छिद्र में डालने की प्रक्रिया है।"

व्यवसायिक निर्देशन देते समय विचारणीय बिन्दु हैं- व्यवसाय का महत्व, कार्य का स्वभाव, कार्य की दशाएं, व्यवसाय के लिए योग्यताएं, वांछित प्रशिक्षण, उन्नति के अवसर, वेतन, व्यवसाय का इतिहास, अनुभव, कार्य की नियमितता व नियुक्ति का स्थान।

3. <u>व्यक्तिगत निर्देशन:-</u>

क्रो एवं क्रो के अनुसार "व्यक्तिगत निर्देशन का तात्पर्य व्यक्ति को प्रदत्त उस सहायता से है जो उसके जीवन के समस्त क्षेत्रों तथा अभिवृत्तियों के विकास को दृष्टि में रखकर उपयुक्त समायोजन के प्रति निर्देशित होती है।" विल्सन के अनुसार "व्यक्तिगत निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति को उसकी शारीरिक, संवेगात्मक सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास और समायोजन में सहायता देना है।

बालक की समस्याएं उसकी अपनी व्यक्तिगत होती हैं। जीवन में ऐसे पक्ष हँ जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रभाव डालते हैं जैसे स्वास्थ, परिवार, संवेग, समायोजन आदि।

व्यक्तिगत निर्देशन का सम्बन्ध बालक में समायोजन की योग्यता का विकास करना, विभिन्न परिस्थितियों में विवेकपूर्ण व्यवहार करना तथा निर्णय लेने की योग्यता विकसित करना, संवेगात्मक नियंत्रण, स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने व आत्मविश्वास जाग्रत करना है।

शैक्षिक निर्देशन	व्यवसायिक निर्देशन	व्यक्तिगत निर्देशन
* विद्यालय समायोजन में सहायता * भविष्य की संभावनाओं की पहचान में सहायता * शैक्षिक कार्यक्रमों में उन्नति सम्बन्धी सहायता * शैक्षिक आवशयकताओं की जानकारी प्राप्त करने में सहायता शिक्षा हेतु सहायक परिस्थितियां सृजित करना	* व्यवसाय चयन में सहायता * व्यावसायिक समायोजन में सहायता * व्यवसाय सम्बन्धी आवश्यक आहर्ताओं एवं गुणों की जानकारी प्राप्त करने में सहायता * विभिन्न व्यवसायों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना।	* शारीरिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या समाधान में सहायता। * संवेगिक नियंत्रित व्यवहार अपनाने में सहायता। * पारिवारिक जीवन से समायोजन में सहायता। * यौन प्रेम आदि के प्रति स्वस्थ * स्वस्थ अभिवृत्ति विकसित करना। * धर्म एवं मूल्यों सम्बन्धी ज्ञान देना। * सामाजिक समस्या समाधानार्थ सहायता। * सामाजिक समस्याओं के समाधान में सहायता।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

1. निर्देशन सहायता अन्य सहायताओं से किस प्रकार भिन्न है।
2. निर्देशन आज की परिस्थितियों में क्यों अधिक से अधिक होता जा रहा है।
3. एक वाक्य में निर्देशन के उद्देश्य बताइये।
4. निर्देशन के रूप बताइये।

16.3 परामर्श अवधारणा, आवश्यकता, उद्देश्य, प्रकार (Conselling Concept, Need, Aims, Types)

16.3 परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत बालक/शिक्षार्थी, एक व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति के साथ विशिष्ट उद्देश्य को संस्थापित करने के लिए कार्य करता है तथा ऐसे व्यवहारों को सीखता है जिनका अर्जन इन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। परामर्श निर्देशन देने की एक प्राविधि है। परामर्श की सफलता हेतु यह आवश्यक होता है कि:-

1. बालक परामर्श की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए इच्छुक है।
2. परामर्शदाता प्रशिक्षित, अनुभवी एवं कार्य के प्रति सम्मान रखने वाला हो।
3. परामर्श के लिए उचित वातावरण की उपलब्धता जरूरी है।
4. परामर्श के द्वारा व्यक्ति की तात्कालिक एवं भविष्य सम्बन्धी दोनों ही प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति जरूरी है।

कई विद्‌वान निर्देशन और परामर्श को समानार्थी मानते हैं परन्तु वास्तव में यह एकार्थवाची शब्द नहीं है। परामर्श निर्देशन में समाविष्ट है। परामर्श में मूल आवश्यकता आमने सामने बैठकर समस्याओं को समझने और हल करने की होती है।

परामर्श के लक्ष्य:-.

बालक को स्वमूल्यांकन करने मे सहायता करना:-

लियोना टायलर के अनुसार परामर्श को एक सहायक प्रक्रम के रूप में प्रयुक्त करना जिसका उद्देश्य व्यक्ति को बदलना नहीं है अपितु उसको इन स्रोतों के उपयोग में समर्थ बनाना है जो उसके पास जीवन का सामना करने के लिए मौजूद हैं। तभी परामर्श से इस उपलब्धि की आशा हो सकती है कि उपबोध्य अपनी ओर से कुछ रचनात्मक क्रिया करे। इस प्रकार परामर्श की प्रक्रिया व्यक्ति को आत्मपरिज्ञान के साथ-साथ उसे अपनी सहायता स्वयं करने योग्य बनाती है।

आत्मस्वीकृति:- परामर्श का उद्देश्य व्यक्ति को उसके बारे में सही स्वधारणा निर्मित करने में सहायता देना है। आत्मस्वीकृति में बालक/व्यक्ति को अपनी दुर्बलताओं एवं सीमाओं पर भी दृष्टि रखना चाहिए अन्यथा वह निराशा या असफलता का सामना कर सकता है। इस प्रकार परामर्श द्‌वारा व्यक्ति अपने सही स्वरूप को स्वीकारने में सहायक होता है।

बालक की अनेक समस्याएं उसके असमायोजन के कारण उत्पन्न होती हैं। परामर्श द्‌वारा बालक को पूर्वाग्रहों व संकीर्ण सोच से मुक्त कर उसे सामाजिक जीवन के साथ समंजित करने में सहायता दी जाती है।

16.3.2 परामर्श के प्रकार:

परामर्श का सम्बन्ध जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं से होता है। उसके अनेक प्रयोजन होते हैं इन्हीं के आधार पर परामर्श के विविध रूप विकसित हो गए हैं-

1. नैदानिक परामर्श:- इस प्ररूप के अन्तर्गत समस्या का विश्लेषण करने एवं उसका उपचार सुझाने का प्रयास किया जाता है।
2. मनोवैज्ञानिक परामर्श:- इसमें परामर्शदाता एक चिकित्सक की भांति होता है। सामान्य वार्तालाप के द्‌वारा परामर्शदाता उपबोध्य को उसकी दमित भावनाओं एवं संवेगों को अभिव्यक्त करने में सहायता करता है।
3. मनोचिकित्सक परामर्श- इसमें सामाजिक अपसमायोजनों को दूर करने की दृष्टि से मनोचिकित्सक परामर्श की उपयोगिता असंदिग्ध है।

   संक्षेप में नैदानिक परामर्श व्यक्ति की एक संघटित संपूर्णता (Integrated whole) के रूप में ग्रहण किया जाता है अर्थात् केवल समस्या ही केन्द्र बिन्दु न होकर सम्पूर्ण व्यक्तित्व को परिप्रेक्ष्य में रखा जाता है। मनोवैज्ञानिक परामर्श का उद्देश्य व्यक्तित्व के विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने में सहायता से होता है। मनोचिकित्सक परामर्श मे 'मनोवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिए सचेत रूप में शाब्दिक माध्यम से प्रयत्न करता है। इसमें अपबोध्य अपने व्यक्तितत्व में होने वाले परिवर्तनों से अवगत रहता है।
4. विद्‌यार्थी परामर्श:- इसका सम्बन्ध विद्‌यार्थियों की समस्याओं से होता है जो कि सम्पूर्ण शैक्षिक परिवेश से सम्बन्धित होती है। यह समस्याएं शैक्षिक संस्थाओं के चयन, पाठ्‌यक्रम, छात्रवृत्ति व्यवसायिक चयन आदि से सम्बद्ध होती है।

5. नियोजन परामर्श:- यह परामर्श उपबोध्य को उसकी योग्यताओं, अभिरूचियों एवं दृष्टिकोणों के अनुरूप कृत्य का वरण करने में सहायक होता है।

6. वैवाहिक परामर्श:- इस परामर्श में उपयुक्त जीवन साथी के चुनाव में सहायता की जाती है। वर्तमान परिस्थितियों में प्रेम विवाह, अंतर्जातीय विवाह आदि के कारण कई समस्याएं आती है। इसी प्रकार वैवाहिक जीवन से सम्बद्ध समस्याएं का भी सामना करना पड़ता है (विवाहित छात्र-छात्राएं भी विद्यार्थी होते है)। इस प्रकार की समस्याओं के समाधान हेतु परामर्श दिया जाता है।

7. व्यावसायिक परामर्श:- वर्तमान में व्यवसायों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो गई है तथा विशेषीकरण की प्रवृत्ति के कारण विशेष प्रकार की शिक्षा व प्रशिक्षण अपेक्षित होते है। कौनसा व्यवसाय चुना जाए, अध्ययन करने के साथ-साथ क्या व्यवसाय किया जा सकता है आदि समस्याओं के समाधानार्थ इस प्रकार का परामर्श दिया जाता है।

रोजर्स एवं मैलेन के अनुसार परामर्श प्रदान करते समय उपबोध्य को एक वक्ति के रूप में समझना चाहिए उसका व्यक्तित्व ही परामर्श का केन्द्र होता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

05 परामर्श व निर्देशन का मुख्य अंतर बताइए।

06 परामर्श प्रक्रिया की सफलता के लिए किन्हीं दो बिन्दुओं का उल्लेख करें।

07 परामर्श के प्रमुख उद्देश्य क्या है?

08 परामर्श के विविध रूप कौनसे है?

09 रिक्त स्थान भरिए:

(i) परामर्श निर्देश देने की एक ....है। (प्राविधि)

(ii) कई विद्वान निर्देशन और परामर्श को...................मानते हैं। (समनार्थी)

(iii) परामर्शदाता को किसी.................से बंधा नहीं होना चाहिए (...................) उसे अपने.............स्वविवेक का प्रयोग करना भी करना चाहिए। (विवेक)

10 सही कथनों पर सही (✓) का व गलत पर क्रास (X) का चिन्ह अंकित करें :-

(i) नैदानिक परामर्श में उपबोध्य को उसकी दमित भावनाओं एवं संवेगों को अभिव्यक्त करने में सहायता दी जाती है।

(ii) मनोवैज्ञानिक परामर्श सामाजिक अपसमायोजन दूर करने हेतु दिया जाता है। मनोचिकित्सक परामर्श के अंतर्गत समस्या का विश्लेषण एवं उपचार सुझाने का प्रयास किया जाता है।

(iii) मनोचिकित्सक परामर्श के अंतर्गत समस्या का विश्लेषण एवं उपचार सुझाने का प्रयास किया जाता है।

11. सुमेलित कीजिए :-

	क. (पद)	ख. परामर्श के प्रकार
(i)	शैक्षिक परिवेश से सम्बन्धित समस्याएं	(अ) व्यवसायिक परामर्श
(ii)	उपबोध्य की योग्यता व रुचिनुसार व्यवसाय वरण करने से सम्बन्धी	(ब) शैक्षिक परामर्श
(iii)	व्यक्ति को एक संगठित समूर्णता के रूप में ग्रहण करना।	(स) नैदानिक परामर्श
		(द) मनोवैज्ञानिक

16.4 बालकों की सहायता एवं उनके क्षेत्र (Areas of Pupils' Help)

वर्तमान में बलकेन्द्रित शिक्षा पर बल दिया जाता है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक का सर्वागीण विकास करना है। यह उद्देश्य तभी पूर्ण हो सकता है जब विद्यार्थियों को सहायता देने हेतु निर्देशन को शाला का अंतरंग भाग बना दिया जाए। क्योंकि विद्यालय ही एक ऐसा स्थान है जहाँ हम बालकों को सुविधाएं प्रदान कर सकते है। कोई भी शिक्षण संस्था अपने अस्तित्व का औचित्य सिद्ध नहीं कर सकती है जब तक वह अपने विद्यार्थियों को न समझे। समस्त शिक्षा विद्यार्थियों के इर्द गिर्द घूमती है अत: उनकी अपेक्षाओं व आवश्यकताओं की जानकारी शिक्षकों को होना जरूरी है। बालक की आशाएं आदि क्या होना चाहिए व 'कैसे' पूर्ण करें से संबन्धित होती है। निर्देशन द्वारा बालकों को उनकी वास्तविक तस्वीर से परिचित कराया जाता है। बालक/विद्यार्थियों को 'आत्मदर्शन' 'आत्मविश्लेषण' तथा इष्टतम उपयोग करने की राहें दर्शाने में निर्देशन की महती भूमिका होती है।

प्रत्येक बालक / विद्यार्थी एकैक (यूनीक) होता है अतः उसके व्यक्तित्व के सभी पक्ष अन्य बालकों से भिन्न होते है। निर्देशन द्वारा बालकों की सहायता इसी सिद्धान्त (व्यक्तिगत भिन्नता) के आधार पर दी जाती है। बालकों की आवश्यकताओं एवं समस्याओं की जानकारी प्राप्त करके निर्देशन दिया जा सकता है।

16.4.1 शारीरिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं:-

बालकों का सामान्य विकास उसकी शारीरिक स्थिति एवं स्वास्थ पर निर्भर करता है। यह समस्याएं शारीरिक अक्षमता, दृष्टिदोष, वाग्दोष, श्रवण दोष, दांतों की समस्याएं, शारीरिक विकलांगता व इसी प्रकार सिरदर्द, खाँसी-जुकाम, टांसिल्स, अक्सर बुखार रहना, शरीर के अन्य अंगों में दर्द रहना, दमा, बैचेनी, माइग्रेन, त्वचा रोग आदि से सम्बन्धित हो सकती है।

बालकों की यह समस्याएं उसकी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करती है क्योंकि यदि बालकों में दृष्टिदोष या श्रवण दोष होगा तो वह कक्षा में पिछड़ जाएंगे। वाक समस्याएं कई बार गले और वाग्यंत्रों की दोषपूर्ण संरचना, नासावरोध सम्बन्धी परेशानी, जिहवा सम्बन्धी असामान्यता या अन्य कारणों से हो सकती है और कई बार मनावैज्ञानिक कारणों से। इसी प्रकार जिन बच्चों में दृष्टिदोष सम्बन्धी समस्याएं होती है (भैंगापन, रंगभेद दोष, पास या दूर का दृष्टिदोष) ऐसे बालक भी पढ़ाई में पिछड़ जाते हैं व उनका समायोजन भी ठीक से नहीं हो पाता और वे सांवेगिक रूप से परेशान रहते है शारीरिक रोग से विकलांग बालकों को कक्षा में, जाने में यदि सीढियाँ हो तो पैर से विकलांगों को चढ़ने-उतरने में कठिनाई होती है। इन बालकों में कई बार हीन भावना विकसित हो जाती है जिसका प्रभाव भी उनकी उपलब्धि व समायोजन पर पड़ता है।

शिक्षक इस तरह से बालकों की पहचना करके उनके लिए तदनुसर योजनाएं बनाकर उनमें सुधार कर सकते है। इसके लिए निम्नलिखित प्रयास किए जा सकते हैं:-

1. बालकों का डॉक्टर से निरीक्षण व चिकित्सा कराने की व्यवस्था। यदि विद्यालय में उपलब्ध न हो तो अभिभावकों को इन समस्याओं से अवगत कराकर चिकित्सा कराना।
2. नैत्र श्रवण नाक, वाक् आदि दोषग्रस्त बालकों को इनके विशेषज्ञ डॉक्टरों से जाँच कराना चाहिए।
3. बालकों में स्वास्थ सम्बन्धी आदतों का विकास करने हेतु विद्यालय में दाँत, नाखून, व बालों आदि की जाँच समय-समय पर करना चाहिए।
4. विकलांगा बालकों के लिए कक्षा में सुविधापूर्वक आने जाने व बैठने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

16.4.2 बालकों की सामाजिक व संवेगात्मक समस्याएं :-

सामाजिक समायोजन एवं शैक्षिक उपलब्धि में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। बालकों का सामाजिक विकास समूह में ही सम्भव होता है। बालकों के सामाजिक विकास में परिवार की भी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। कई परिवारों में अभिभावक अपने बच्चों को मित्रों के घर जाने या आने की अनुमति नहीं देते या समवयस्की बालकों के साथ खेलने नहीं देते तो वे बालक के सामाजिक विकास में बाधक होते है। ऐसे बालक या तो संकोची हो जाते है, दिवास्वप्न देखने लगते हैं अथवा अवज्ञाकारी हो जाते है। इसी प्रकार यदि विद्यालय में शिक्षकों द्वारा उसकी निम्नउपलब्धि या अन्य कारणों से बालक को तिरस्कृत या उपेक्षित किया जाता है तो वह आक्रामक हो सकता है, विद्रोही हो सकता है और दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने हेतु कुछ भी कर सकता है।

परिवार या विद्‌यालय में बालकों की उपेक्षा, सामाजिक रूप से अस्वीकृत किया जाना अन्यों से तुलना किया जाना आदि व्यवहार बालकों को एकाकी, संकोची, अंतर्मुखी और असुरक्षित बना देता है। बालकों की मित्रता प्राय: समान रूचि, योग्यता, सामाजिक, आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है।

शिक्षक ऐसे बालकों की पहचान कर सकते हैं तथा निम्नलिखित रूप में उनकी सहायता कर सकते है -

1. शैक्षिक उपलब्धि के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करें।
2. वह इस बात की जानकारी दें कि किस प्रकार अपने मित्र बनाए जा सकते है क्या गुण मित्रता हेतु जरूरी है।
3. बालकों को बताया जाए कि नापसन्द या अस्वीकृत क्यों किया जाता है। इसके लिए ऐसे कार्यक्रम या गतिविधियाँ आयोजित करें जिनमें समूह में काम किया जाए तथा समूह में लोकप्रिय व उपेक्षित बालकों को एक साथ रखकर कार्य करने को दिया जाए।
4. अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि कड़ा अनुशासन, अनावश्यक अपेक्षा, बालकों में व्यवहार में कमियां निकालना, उन पर अपने विचार थोपना, अत्यधिक सुरक्षा या बिल्कुल लापरवाह होना विद्‌यालय कार्य का कठिन होना आदि कतिपय कारण बालकों को विद्‌वेषी तनावयुक्त या दवावग्रस्त, अधीर या घबराने वाला विद्रोह, बदमिजाज, आक्रामक बना देते है। <u>अत: शिक्षकों को चाहिए कि वे</u>
    1. उन्हें विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में भाग लेने का अवसर दें।
    2. बालके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करें। उन्हें यह अनुभव हो कि उनके चारो ओर विश्वसनीय लोग है ।
    3. अभिभावकों व शिक्षकों का व्यवहार सत्तावादी न होकर संवदेनशील होना चाहिए। वे बालकों को अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता दें।
    4. बालकों के नैतिक विकासार्थ माता-पिता व शिक्षकों के व्यवहार में आदर्शों का होना आवश्यक है। बालकों को महान व्यक्तियों की कहानियाँ, संस्मरण सुनाकर, अच्छा साहित्य पढ़ने को प्रेरित कर सकते हैं। इनसे उन्हें आदर्शों की पहचान होती है व उनमें सत्यनिष्ठा, बहादुरी, परिश्रम, उदारता आदि मूल्यों को ग्रहण करने की प्रेरणा मिलती है।
    5. शिक्षक केवल शैक्षिक उपलब्धियों पर ही बल न दें वरन बालकों की अन्य क्षमताओं को भी पहचानें वे उनकी प्रशंसा करें।
    6. अभिभावक-शिक्षक संघ की बैठके नियमित रूप में हो। बालकों की समस्या-समाधान में परिवार का सहयोग जरूरी है क्योंकि दोनों ही बच्चों की सफलता में रूचि रखते हैं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

12. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :-

(i) शिक्षा का उद्देश्य तभी पूर्ण हो सकता है जब निर्देशन की शाला का .... भाग बना दिया जाए।

(ii) निर्देशन द्वारा बालकों की सहायता .... के सिद्धान्त के आधार पर दी जाती है।

(iii) बालकों की समस्याएं उसकी .... को प्रभावित करती है।

13. निम्नलिखित में सही कथनों के आगे सामने (✓) का चिन्ह अंकित कीजिए:-

(i) बालकों में शारीरिक दोष व स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं उसकी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते है। ( )

(ii) शिक्षक या अभिभावक द्वारा अपेक्षित या तिरस्कृत किए जाने बालक आक्रामक या विद्रोही जा जाएं। ( )

(iii) बालक के विकास में केवल घर ही महत्वपूर्ण माध्यम होता है, विद्यालय नहीं। ( )

14. निर्देशन में अच्छे अध्यापक के किन्हीं तीन गुणों का उल्लेख करें:-

....

....

....

16.5 निर्देशन सहायता के उद्देश्य एवं कार्यक्रम (Aims Programes of Guidance)

16.5.1 उद्देश्य:-

डन्सूमर तथा मिलर ने छात्र परामर्श का लक्ष्य उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में सहायता करना बताया है।

इसके लिए:-

1. विद्यार्थी को उसकी सफलता के महत्व के विषयों की जानकारी देना।
2. विद्यार्थी के बारे में वे सूचनाएं प्राप्त करना जो उसकी समस्या-समाधान में सहायक हो।
3. विद्यार्थी व अध्यापक/अभिभावक या अन्य के बीच पारस्परिक समझ की भावना विकसित करना।
4. विद्यार्थियों को अपनी कठिनाइयों को हल करने की योजना बनाने में सहायता देना।
5. विद्यार्थी को अपनी रूचियों, योग्यताओं, अवसरों के अनुसार स्वयं को समझने में सहायता देना।
6. विशेष योग्यताओं तथा सही दृष्टिकोणों को प्रोत्साहित एवं विकसित करना।
7. शैक्षिक प्रगति हेतु समुचित प्रयास करने की प्रेरणा देना।
8. शैक्षिक एवं व्यवसायिक चयन की योजना बनाने में विद्यार्थी की सहायता देना।

परामर्श की प्रक्रिया तभी सफल हो सकती है जब परामर्शदाता व उपबोध्य के सम्बन्ध ठीक प्रकार से निर्धारित हों। परामर्श में विचारों का आदान-प्रदान महत्वपूर्ण तत्व है। परामर्शदाता

में बालक/उपबोध्य को मनोभावों को समझने की क्षमता होनी चाहिए क्योंकि कभी-कभी विचार संप्रेषण के साधन केवल शब्द ही नहीं अपितु चेहरे व आंगिक संकेत भी अपना अर्थ रखते हैं।

परामर्शक के लिए यह निपुणता अपेक्षित है कि वह बालक भी समस्या से संबन्धित बातों को ज्ञात करने के लिए उपयुक्त प्रश्नों का निर्माण कर सके ताकि वांछित सूचना प्राप्त की जा सके। यद्पि अनेक तकनीकों का उल्लेख परामर्शदाता हेतु है तथापि यदि परामर्शदाता का लक्ष्य सही मानवीय सम्बन्ध स्थापित करना ही हो तो उसे यह बात समझ लेना चाहिए कि वह किसी प्रणाली विज्ञान (Methodology) या तकनीक से बंधा हुआ नहीं है। वह अपने विवेक का उपयोग कर सकता है।

परामर्श की प्रक्रिया एक गतिशील प्रक्रिया है। बालक (उपबोध्य) एवं परामर्शक जब आपसी समथों की उचित पृष्ठभूमि तैयार करने में सफल हो जाते हैं तभी परामर्श की प्रक्रिया सार्थक होती है। परामर्श का महत्वपूर्ण बिन्दु वह है जब उपबोध्य को अपने महत्व तथा जीवनगत धारणाओं के प्रति विश्वास होने लगता हैं।

16.5.2 बालकों की सहायतार्थ कार्यक्रम :-

निर्देशन व परामर्श प्रक्रिया आजकल अत्यधिक व्यापक व विस्तृत होती जा रही है फलस्वरूप विशिष्टीकृत लोगों की आवश्यकता अनुमव की जाने लगी है। अत: विद्यालय में निर्देशन सेवाओं का संगठन किया जाना समीचीन है और यह संगठन इस प्रकार किया जाना कि सभी निर्देशन कार्यकर्त्ताओं के व एवं अभिभावकों के प्रयत्नों समन्वय स्थापित हो। विद्यालय में बालकों को निम्नलिखित रूप में सहायता प्रदान की जा सकती है:-

1. जिन विषयों में विद्यार्थियों को कठिनाई हो उनके लिए विद्यालय स्तर पर अलग से कोचिंग या ट्यूशन की व्यवस्था की जाए।
2. शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों को अधतन सूचनाएं प्रेषित की जाएं तथा उनकी प्राप्ति के स्त्रोत (मैगनीज, समाचार पत्र, पुस्तक आदि) भी बताएं जाएं।
3. विद्यालय में निर्देशन हेतु 'पूछताछ प्रकोष्ठ' की व्यवस्था हो जहाँ से विद्यार्थी विभिन्न संस्थाओं, पाठ्यक्रमों तथा स्वास्थ्य केन्द्रों आदि की जानकारी प्राप्त कर सके।
4. विद्यालयों में प्रार्थना सभा में (प्रार्थना सम्बन्धी कार्यक्रम होने के बाद) रोजगार सम्बन्धी सूचनाओं को भी पढ़कर सुनाया जाए ताकि कौन कौनसे क्षेत्रों में व्यवसायों का प्रारम्भ हुआ है, यह जान सकें।
5. विद्यालय में स्वास्थ्य जाँच की व्यवस्था नियमित रूप से (कम से कम सत्र में तीन बार) होनी चाहिए तथा उपयुक्त उपचार भी बताएं जाएं।
6. खेलकूद, योगा आदि की भी व्यवस्था होनी चाहिए।
7. विद्यालयों में टीवी., रेडियो द्वारा विभिन प्रकार के कार्यक्रमों का प्रसारण यथा अवसर किया जाए अथवा टेप करके सुनवाया जाने का प्रावधान हो।
8. विद्यालय में परामर्शकों, डॉक्टर्स, मनोवैज्ञानिक तथा मनोचिकित्सकों की वार्ताओं का आयोजन किया जाए ताकि विद्यार्थी अपनी समस्याओं के स्वसमाधान में समर्थ हो सकें।
9. विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक क्षेत्र के विशेषज्ञों की भी वार्ताएं आयोजित की जाए ताकि बालकों को उन व्यवसायों के बारे में यथार्थ स्थिति की जानकारी उपलब्ध हो सके।
10. अभिभावकों से नियमित रूप में 'अभिभावक-शिक्षक संघ' की मीटिंग आयोजित की जाएं ताकि विद्यार्थी के बारे में सही-सही जानकारी प्राप्त हो सके।

11. सहशैक्षिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की (छात्र एवं छात्राओ) समस्याएं भिन्न रूप की हो सकती हैं तथा उनके दृष्टिकोण संकुचित या अत्यधिक उदार हो सकते हैं। शिक्षक विद्यार्थियों के स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करने हेतु विद्यालयी गतिविधियों में दोनों को साथ-साथ सहभागीत्व का अवसर प्रदान करें।

12. विद्यालय में 'ट्यूटोरियल समूह' निर्मित कर विद्यार्थियों की समस्याओं पर अनौपचारिक रूप से विचार विमर्श किया जाए और उन्हें ही इन समस्याओं के हल खोजने हेतु उत्प्रेरित किया जाए।

13. बालकों की व्यक्तिगत भिन्नताओं को मनोवैज्ञानिक परीक्षणों व अप्रमापीकृत विधियों (अवलोकन, समाजमिति, आकस्मिक, अभिलेख, साक्षात्कार आदि) द्वारा ज्ञात कर तदनुरूप निर्देशन व परामर्श की व्यवस्था की जाए।

14. विद्यार्थियों की समस्याओं की जानकारी हेतु विद्यालय में एक प्रश्न पेटिका तथा सूचना पट्ट दिय जाए और विद्यार्थियों को अपनी उनकी समस्याएं लिखित रूप में पर्ची डालने का निर्देश दिया जाए इसके द्वारा भी विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली समस्याओं की जानकारी अप्रत्यक्ष रूप में ज्ञात की जा सकती है और शिक्षकों द्वारा उन समस्याओं के संभावित समाधान लिखकर विद्यालय के सूचनापट्ट पर प्रसारित किया जाए। विद्यार्थी प्रसारित समाधानों को पढ़कर स्वनिर्णय लेने में समर्थ हो सकेंगे कि कौनसा उनके लिए उपयुक्त है।

15. विद्यालय में एक 'परामर्श कक्ष' (यह विद्यालयी शिक्षक या बाहर से आमन्त्रित विशेषज्ञ द्वारा) की स्थापना की जाए जहाँ पर विद्यार्थी व्यक्तिगत रूप से अपनी समस्याओं के बारे में विचार विमर्श कर सकें।

16. विद्यार्थियों को समय-समय पर विभिन्न प्रकार की शैक्षिक संस्थाओं तथा व्यावसायिक संस्थानों पर परिदर्शन हेतु लाया जाए जहाँ वे स्थिति का वास्तविक रूप में परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।

17. विद्यालयों में 'कैरियर दिवस' पर विभिन्न व्यवसायों, शैक्षिक संस्थानों आदि से संबन्धित जानकारी के चार्ट, समाचार पत्रों की कटिंग्स की फाइल, प्रदर्शनी का आयोजन किया जाए। विशेषज्ञों र्क वार्ताओं का आयोजन भी किया जा सकता है ।

18. विभिन्न प्रकार की समस्याओं से सम्बन्धी 'प्रश्नोत्तरी) मंच चर्चा आदि का भी आयोजन किया जान चाहिए।

19. सूचना पट्ट पर प्रसार कार्यक्रम-सूचना पट्ट पर नवीनतम सूचनाओं की कटिंग व्यवसाय सम्बन्धी शैक्षिक व सामान्य सूचनाओं को लगाना ताकि विद्यार्थी उनसे अवगत हो सकें।

20. 'निर्देशन कोण' की स्थापना की जाए। यह विद्यालय के पुस्तकालय में एक ओर अथवा किसी छोर कक्ष में की जा सकती है और इसमें विभिन्न संस्थाओं की निर्देशिका का (डायरेक्टरी), प्रोस्पैक्टस, पेम्फ़्लैट्स, व्यावसायिक जानकारी सम्बन्धी पुस्तकें, प्रेरणास्पद पुस्तकें आदि रखी जाए ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

15. डन्समूर तथा मिलर के अनुसार छात्र परामर्श के लक्ष्य?

16. बालकों के सहायता कार्यक्रम?

16.6 बालकों का अवलोकन एवं गुणात्मक मानक (Observation of Pupils and Qualitative Standards)

निर्देशन शिक्षा का अभिभाज्य अंग है। निर्देशन में बाल से संबन्धित निम्नलिखित मूलभूत पक्षों के अनवेषण पर बल दिया जाता है:-

1. बालक की योग्यताएं, अभिरूचियाँ एवं अभिवृतियाँ।
2. बालक की आकांक्षाएं।
3. बालक की क्षमताएं।

उपरोक्त पक्षों का अन्वेषण एवं मूल्यांकन हेतु परीक्षणों एवं उपयोग वह आधारभूत यांत्रिकी है जो निर्देशन की प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक आधार प्रदान करती है। इन्हें हम दो भागों में विभाजित कर सकते है:-

(i) मानकीकृत परीक्षण (ii) अमानकीकृत परीक्षण ।

मानकीकृत परीक्षण से प्राप्त जानकारी अधिक विश्वसनीय मानी जाती है। इन परीक्षणों का प्रयोग प्राय: निम्नलिखित पक्षों की जानकारी हेतु किया जाता है -

(i) मानसिक योग्यताओं या बौद्धिक स्तर	(बुद्धि परीक्षण)
(ii) उपलब्धि स्तर ज्ञात करने में	(संप्राप्ति/उपलब्धि परीक्षण)
(iii) विशेष योग्यता ज्ञात करने में	(अभियोग्यता परीक्षण)
(iv) रूचि ज्ञात करने में	(रूचि परीक्षण)
(v) व्यक्तित्व विशेषताएं	(व्यक्तित्व परीक्षण)

परन्तु मानकीकृत परीक्षणों की सीमाएं है तथा एक ही प्रकार के परीक्षणों के आधार पर हम समस्त पक्षों से संबन्धित व्यक्ति के बारे में सही जानकारी प्राप्त करने में Authentic नहीं मान सकते। विशेषकर बालक के व्यक्तित्व गुणों का। बालक के विषय में अनेक बातों का ज्ञान अनौपचारिक रूप से भी होता है। व्यक्तित्व मापन एवं मूल्यांकन के क्षेत्र में परीक्षणों को उनके विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के आधार पर दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है -

(i) अणुत्मक विधियाँ (Atomistic method)

(ii) समग्रीकृत विधियाँ (Global method of personality assessment)

अणुत्मक विधियों में आत्मकथा, समाजमिति विकास सम्बन्धी, अभिलेखों का विश्लेषण आदि शामिल होता है।

समग्रीकृत विधियों में सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विषय में एक साथ जानने या सूचनाएं एकत्र की जाती है। अवलोकन प्रेक्षण/व्यक्तित्व के मूल्यांकन क्षेत्र में प्रेक्षण या अवलोकन एक सामान्य विधि है जिसका उपयोग बहुतायत से शिक्षकों व परामर्शदाताओं द्वारा किया जाता है। वास्तव में इस विधि की बहुत महत्ता है। प्रेक्षण द्वारा विभिन्न प्रकार के व्यवहारों एवं क्रियाओं का विवरण प्राप्त होता है। प्रेक्षण में निश्चित अवधि में अनेक दिनों तथा बालक या व्यक्ति के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है व उनका विवरण एकत्र किया जाता है।

16.6.1 प्रेक्षण निम्नलिखित रूपों में किया जा सकता है-

जर्सील्ड तथा मैग्स (Jersield & Meigs)के अनुसार -

(i) स्वतन्त्र प्रेषण

(ii) नियन्त्रित प्रेषण

(iii) अर्द्धनियंत्रित प्रेषण।

बोर्नो तथा हैम्पलमैन ने नियन्त्रित प्रेषण के दो प्रकार के बताए है-

1. जिसमें किसी निश्चित कार्य या व्यवहार का प्रेक्षण करना होता है।

2. जिसमें किन्हीं विशेष परिस्थितियों के व्यवहार को देखना होता है।

प्रेक्षण अलिखित व लिखित (Recorded) हो सकता है। प्रेक्षण विधि द्वारा व्यक्ति के भावात्मक एवं सामाजिक व्यवहार का सरलता से अध्ययन किया जा सकता है। प्रेक्षण द्वारा व्यवहार का अध्ययन किसी भी स्थल पर किया जा सकता है। इसका उपयोग अध्यापक शैक्षिक परिस्थितियों में भली भांति कर सकता है।

16.6.2 आकस्मिक अभिलेख (Anecdotal Record):-

आकस्मिक अभिलेख किसी विद्यार्थी के जीवन की महत्वपूर्ण घटना की रिपोर्ट होती है।

आर. लुइस (R.Louis)

(Z.D. Willard) विलार्ड के अनुसार - "आकस्मिक अभिलेख एक ऐसी सामान्य आख्या है जिसमें निरीक्षक की दृष्टि से किसी बालक से संबन्धित महत्वपूर्ण घटना का उल्लेख होता है।"

आकस्मिक अभिलेख के रूप:-

1. इस प्रकार के अभिलेख में बालक के कार्य एवं व्यवहार का यथार्थ तथा वस्तुनिष्ठ विवरण रहता है। इन पर किसी प्रकार की टीका टिप्पणी नहीं की जाती।

2. दूसरे स्वरूप में विवरण, टीका टिप्पणी के साथ-साथ होते हैं।

3. तीसरे स्वरूप में विवरण टीका टिप्पणी के साथ-साथ समस्या का समाधान भी लिखा जाता है।

4. चतुर्थ स्वरूप के अन्तर्गत विवरण, टीका टिप्पणी समस्या को समाधान के साथ-साथ भविष्य में उपचार सम्बन्धी सुझाव भी दिए जाते है।

आकस्मिक अभिलेख हेतु ध्यातव्य बिन्दु:-

1. जिस बालक के सम्बंध में यह अभिलेख तैयार किया जाए उसका सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए।

2. निरीक्षक या अध्यापक उतना ही विवरण लिखे जितना की आवश्यक है।

3. यथार्थ बातों का सही उल्लेख हो।

4. अभिलेख हेतु एक प्रारूप तैयार कर लेना चाहिए। यथा:

बालक/छात्र का नाम.................................

कक्षा ....वर्ग...........

दिनांक	स्थान	घटना	टीका टिप्पणी	सुझाव

....

निरीक्षक के हस्ताक्षर

5. इसे विद्यार्थियों से गुप्त रखा जाए।

आकस्मिक अभिलेख की उपयोगिता:-

- शिक्षक किसी विद्यार्थी के व्यक्तित्व/व्यवहार का अनुमान सही तौर पर कर सकता है व यह देख सकता है कि उसमें यदि कोई परिवर्तन हो रहे है तो किस प्रकार के है।

- इस अभिलेख की सहातया से बालकों की समस्याएं ज्ञात की जा सकती है। जिससे तदनुरूप निर्देशन एवं परामर्श दिया जा सकता है ।
- नए अध्यापक या निरीक्षक को पूर्व में लिखित अभिलेख के माध्यम से कम समय में बालक के बारे में जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार श्रम व समय की बचत होती है।

16.6.3 समाजमिति (Sociometry):-

इस विधि द्वारा बालक के समूह के साथ किस प्रकार के सबन्ध है यह जाना जाता है। एक ही बालक को सभी चाहते हों या आवश्यक नहीं। इस विधि द्वारा बालक के बारे में निम्नलिखित तथ्य ज्ञात हो सकते हैं:-

तटस्थता:- ऐसे बालक जिन्हें ना तो पसन्द ही किया जाता है और न ही नापसन्द।

नायक:-समूह का कोई बालक जिसे सब नेता के रूप में स्वीकारें।

गुटबंदी :- बालकों में यह प्रवृत्ति भी देखी जाती है वे छोटे-छोटे समूह बना लेते हैं।

तिरस्कृत :- जिन्हें कोई भी पसन्द नहीं करता।

समाजमिति में बालक के बारे में जानकारी दो विधियों से प्राप्त की जा सकती है:-

(i) निरीक्षण विधि द्वारा (पूर्व में उल्लेख है)

(ii) प्रश्नावली।

प्रश्नावली में दो रूपों में प्रश्नों का निर्माण किया जाता है:-

(i) स्वीकारात्मक प्रश्न।

(ii) नकारात्मक प्रश्न।

स्वीकारात्मक प्रश्नों में किसी भी कार्य करने में बालक किसका साथ चाहता है इससे संबन्धित प्रश्न होते है। इसमें तीन, चार नामों का उल्लेख होता है व प्राथमिकता के आधार पर बालकों को अपना मत अभिव्यक्त करना होता है। उदाहरण के लिए-

(i) आप अपनी कक्षा के किस विद्यार्थी के साथ मित्रता करना पसन्द करोगे-

नाम- 1.
2.
3.

नकारात्मक प्रश्नों में उपेक्षित या अनिच्छित बालक का पता लगाने हेतु प्रश्न किए जाते है यथा - अत् आप किस बालक के साथ खेल में रहना पसन्द नहीं करोगे -

नाम - 1.
2.
3.

प्रश्नों से प्राप्त तथ्यों की सारिणी तैयार की जाती है और उसके आधार पर बालकों के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। इसका प्रारूप इस प्रकार होता है -

चयनकर्त्ता						योग			
नाम	ए	बी	सी	डी	ई	प्रथम	द्वितीय	कुल	योग
चयनित ए	1	1	2	-	2	1			3
बी	1	-	1	-	2	-			3
सी	1	-	2	-	1	1			2
डी	1	-	-	-	1	-			1
ई	1	-	2	-	1	1			2

उपरोक्त तालिका के अनुसार 'ई' बालक 'अपेक्षित' के श्रेणी में माना जाएगा क्योंकि उसे कोई भी वरीयता नहीं दी गयी है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार निर्देशक ऐसे बालकों में सामानिकता की भावना विकसित करने में सहायक हो सकता है।

निर्देशन एवं परामर्श में इस विधि का उपभोग निम्नांकित रूपों में किया जा सकता हे।

1. यह अध्ययन किया जा सकता है कि कोई बालक किस सीमा तथा उन कार्यकलापों में भाग लेता है जो उसके साथियों द्वारा आयोजित होती है।
2. इस विधि द्वारा शर्मिले छात्रों का पता लगाया जा सकता है। उनके उपयुक्त समायोजन हेतु परिस्थितियां पैदा की जा सकती है।
3. इस विधि द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि कौनसे बालक ऐसे है जिन्हें सर्वाधिक छात्रों द्वारा पसन्द किया जाता है।
4. इस विधि से व्यवहार के वे पक्ष उजागर होते है जिन्हें अस्वीकार या स्वीकार किया जाता है।

16.6.4 <u>साक्षात्कार</u>-बालक के बारे में जानकारी एवं सूचनाएं प्राप्त करने की अमानकीकृत विधि है।

के.पी. पाण्डे - "विद्यालय में अनेक ऐसे सन्दर्भ आते है जहाँ शिक्षक अपने विद्यार्थियों से मुलाकात करते हैं तथा बातचीत के माध्यम से अपेक्षित सलाह मशवरा करते है। इसका स्वरूप मूलतः अनौपचारिक होता है।"

विंघम तथा मूर - "साक्षात्कार वह गम्भीर वार्तालाप है जिसका एक निश्चित उद्देश्य होता है न कि संतोष के लिए बातचीत।"

साक्षात्कार एक उद्देश्यपूर्ण वार्तालाप होता है।

साक्षात्कार के प्रकार :-

सूचनात्मक	निदानात्मक	उपचारात्मक	तथ्य संकलन	परामर्श
↑	↑	↑	↑	↑
साक्षात्कार	साक्षात्कार	साक्षात्कार	साक्षात्कार	साक्षात्कार

सूचनात्मक साक्षात्कार में विद्यार्थियों को उनकी शैक्षिक उपलब्धि सम्बन्धी या भिन्न-भिन्न शिक्षण संस्थाओं जीविकाओं आदि के बारे में सूचना देने हेतु किया जाता है। निदानात्मक साक्षात्कार में विद्यार्थी की समस्याएं ज्ञात करने हेतु घर वातावरण आदि से संबन्धित सूचनाएं प्राप्त करने हेतु किया जाता है। यह समस्या विश्लेषणात्मक सहायक होता है। उपचारात्मक साक्षात्कार में वार्तालाप का उद्देश्य बालक को उसकी चिन्ताओं से मुक्ति तथा समस्या समाधान में सहायता देना होता है। तथा संकलन साक्षात्कार में प्रेक्षण, प्रश्नावली आदि के माध्यम से जो तथ्य

संकलित नहीं हो पाते उन तथ्यों का शिक्षक या निर्देशक तथ्य संकलन करते है। परामर्श साक्षात्कार का प्रयोजन बालकों की समस्याओं का समाधान करने हेतु होता है।

16.6.4.1साक्षात्कार के प्रयोजन:-

साक्षात्कार के निम्नांकित प्रयोजन होते है -

1. सूचना एवं जानकारी प्राप्त करना।
2. सूचना एवं जानकारी प्रदान करना।
3. समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का निदान करना।
4. बालकों की समस्याओं का समाधान करना।
5. साक्षात्कार के माध्यम से दोनों में अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना।
6. साक्षात्कार के माध्यम से बालक की भावनाओं विचारों तथा अभिवृत्तियों की जानकारी प्राप्त करना।

16.6.4.2 साक्षात्कार का महत्व:-

निर्देशन एवं परामर्श में साक्षात्कार का महत्व असंदिग्ध है। कुछ बालक लिखित रूप में अपने आपको भली प्रकार स्पष्ट नहीं कर पाते। अत: उनके द्वारा प्रदत्त उत्तरों के आधार पर उनकी सही योग्यता समस्या आदि को ज्ञात नहीं किया जा सकता साक्षात्कार मौखिक बातचीत के द्वारा शिक्षक या निर्दशनकर्त्ता अपेक्षित प्रश्न कहकर वस्तुस्थिति का अनुमान लगा सकता है। साक्षात्कार में उत्तरदाता के हावभाव, मुखमुडा, प्रतिक्रियाओं आदि व्यवहार के विभिन्न पक्षों को देखा जा सकता है। जिससे बालक को समग्रित रूप में समझा जा सके। साक्षात्कार की एक विशेषता होती है कि शिक्षक या निर्देशक (साक्षारकर्त्ता) पारिस्थिति के अनुसार प्रश्नों में फेरबदल कर सकता है जो कि लिखित प्रश्नों के माध्यम से प्राप्त नहीं हो सकती।

साक्षात्कार संरचित, असंरचित तथा अर्द्धसंरचित रूप में लिया जा सकता है। संरचित साक्षात्कार में उद्देश्य को ध्यान में रखकर प्रश्नावली या पड़ताल सूची बना ली जाती है उन्हीं के आधार पर तथ्यों का संकलन किया जाता है।

असंरचित साक्षात्कार में लिखित रूप में कोई प्रश्न-पड़ताल सूची नहीं होती है शिक्षक या निर्देशक (साक्षारकर्त्ता) उद्देश्य को ध्यान में रखकर प्रश्न पूछता है।

अर्द्धसंरचित साक्षात्कार में दोनों का मिश्रित रूप होता है। कुछ प्रश्न लिखित रूप" में सूचना संकलन हेतु होते है तथा कुछ मौखिक रूप से परिस्थिति प्रश्न पूछे जा सकते है।

16.6.5 <u>आत्मकथा</u> (Autobiographical sketches):-

निर्देशन एवं परामर्श में आत्मकथात्मक विवरण का भी अत्यन्त महत्व है। निर्देशक या परामर्शक इसके आधार पर विद्यार्थियों के चेतन व अचेतन मत की भावनाओं को समझ लेते है। ट्रेक्सलर के अनुसार "आत्मकथा बालक के व्यक्तिगत गुणों के सम्बन्ध में तथ्य संकलन करने वाला प्राकृतिक एवं शीघ्र उपलब्ध होने वाला साधन है जिसके द्वारा वह अपने व्यक्तित्व एवं परामशार्थ महत्वपूर्ण पक्षों को प्रदर्शित करता है।"

आत्मकथा के रूप

निर्देशित आत्मकथा	अनिर्देशित आत्मकथा	मिश्रित रूपीय आत्मकथा

निर्देशित आत्मकथा एक रूपरेखा के आधार पर लिखी जाती है। शिक्षक या परामर्शक बालक को यह निर्देशन देता है कि वह किन-किन बातों को लिखे। इसके लिए वह एक प्रारूप विद्यार्थियों को देता है जिसके आधार पर वह अपना विवरण लिखते है यथा -

व्यक्तिगत सूचना - (i) परिवार-स्वरूप, सामाजिक आर्थिक स्थिति, व्यवसाय आदि।

विद्यालयी सूचना - (i) विद्यालय के अनुभव (पूर्व के तथा वर्तमान विद्यालय के)
(ii) विद्यालय का मित्र समुदाय।

अध्यापक - योग्यताएं, व्यवहार, विशेषताएं।

विद्यालयी वातावरण (i) भौतिक सुविधाएं।
(ii) पाठ्यसहगामी क्रियाओं सम्बन्धी सुविधाएं।
(iii) व्यक्तिगत निर्देशन सम्बन्धी सुविधाएं।

व्यक्तिगत विचारः-

(i) जीवन का लक्ष्य।
(ii) परिवार के बारे में विचार।
(iii) विद्यालय के प्रति विचार।
(iv) जीवन के प्रेरणा स्रोत।
(v) धर्म के बारे में विचार।
(vi) राष्ट्र के प्रति विचार आदि।
(vii) अच्छे/बुरे अनुभव।

इस प्रकार निर्देशन एवं परामर्श से आत्मकथा की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है। इसके माध्यम से बालक के जीवन दर्शन व विचारों की जानकारी प्राप्त हो जाती है, उनकी अभिव्यक्ति क्षमता का भान हो जाता है तथा बालक द्वारा छुपी हुई भावनाओं को प्रकाशित करने की पूर्ण सुविधा प्राप्त होती है।

इस प्रकार आत्मकथा एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा विद्यार्थी अपने समस्त अनुभव के विषय में सूचनाएं प्रदान करता है तथा अपनी समस्या समाधान में उचित निर्देशन प्राप्त करता है।

16.6.6 पड़ताल सूची (Check list):-

विद्यालय में विद्यार्थी का व्यवहार का अवलोकन शिक्षक करते रहते है। बालक के से संबन्धित कतिपय पक्ष ऐसे होते है जिनका मूल्यांकन की दृष्टि से अंकन करना उपयुक्त रहता है ताकि महत्तवपूर्ण तथ्यों को भूला नहीं जा सके। पड़ताल सूची का निर्माण शिक्षक प्रयोजन के आधार पर करता है। इसका निर्माण करना सरल होता है क्योंकि या तो कथनों पर सही या गलत के (✓ X) के चिन्हों द्वारा पक्षों का अंकन किया जाता है, अथवा 'हाँ' 'नहीं' में उत्तर के रूप में।

जैसेः- (चिन्ह के रूप में उदाहरण)

बालक प्रार्थना सभा में

1. नियमित रूप से उपस्थित रहता है। (✓)
2. बालक गृहकार्य समय पर करता है। (X)

(हाँ/नहीं में उदाहरण)

3. बालक शिक्षकों का आदर करता है । हाँ

4. बालक विद्यालय नियमों का पालन करता है। नहीं

16.6.7 <u>स्तर मापी</u> (Rating scale):-

इस विधि द्वारा बालकों के व्यक्तित्व व निष्पत्ति का मापन संभव होता है। इस प्रविधि का प्रयोग इसलिए किया जाता है कि यथासंभव वस्तुनिष्ठ जानकारी प्राप्त हो सके। इस मापनी में एक सातत्यक (Continuum) गुणों या व्यवहारों की सूची होती है जिसमें क्रम निर्धारक कुछ मूल्य या क्रम निर्धारित करता है।

स्तर मापनी के प्रकार :

1. बलात् चयन विधि।
2. वर्णनात्मक क्रम निर्धारण मापनी।
3. पदक्रम मापदंड।

बलात् चयन विधि :-

इस विधि में बालक क्रम निर्धारक विभिन पदों में से किसी एक पर ही चिन्ह लगाने के लिए बाध्य होता है। इसके द्वारा बालक के विचार या व्यावहार को निश्चित रूप में जाना जा सकता है।

इसका उदाहरण इस प्रकार है:-

1	2	3	4	5
बालक : पुस्तकालय की पुस्तकों से पृष्ठ फाड़ता है	दूसरों को फाड़ने मे सहयोग देता है	स्वयं नहीं पर दूसरों को नहीं रोकता है	दूसरों को भी रोकता है	पुस्तकों कों व्यवस्थित रखने में सहयोग देता है

वर्णनात्मक क्रम निर्धारण:- इसके द्वारा किसी व्यवहार या कार्य से संबन्धित जानकारी हेतु पदों का मूल्यांकन तीन स्तरीय, पाँच स्तरीय या अधिक रूप में किया जा सकता है। इसमें पदों के मूल्यांकन सम्बन्धी आंकिक रूप (0,1,2,3,4) के आधार पर किया जाता है उदाहरणार्थ -

1. बालक कक्षा में अनुशासित रहता है। हमेशा कभी कभी कभी नहीं
2. बालक पढाई में अच्छा है। अत्यधिक अधिक सामान्य रूप में

16.6.8 पदक्रम मापनी (Ranking)

इस मापनी द्वारा बालकों को उनकी योग्यता का व्यवहार गुण के आधार पर मूल्यांकित किया जाता है। यह कार्य उन अध्यापकों द्वारा किया जाता है जो उन बालकों को पढ़ाते है। क्योंकि कोई एक अध्यापक एक बालक 'ए' को प्रथम क्रम (वरीयता) पर रख सकता है जबकि अन्य अध्यापक उस द्वितीय स्थान पर वरीयता या मूल्यांकित कर सकता है। फिर इन सभी अध्यापकों द्वारा प्रदत्त क्रम निर्धारित को मिलाकर औसत क्रम निकाला जाता है। इस प्रकार बालक के जिस पक्ष का अध्ययन करना होता है उसका समूह में तुलनात्मक रूप से स्थान निर्धारण किया जाता है।

इस प्रकार के निर्धारण मापदंड के अनेक लाभ है, यथा अभिभावकों को विद्यार्थियों का प्रतिवेदन लिखकर भेजने में सहायक होता है तथा उसका कक्षा में क्या स्थान है यह भी ज्ञात करने में सहायक होता है। बालक स्वयं भी अपने बारे में जान जाता है तथा सुधार

हेतु प्रयत्नशील हो सकता है। बालक के अध्ययन करने की विधियों में यह पूरक विधि के रूप में सहायक होती है।

16.6.9 प्रश्नावली:-

बालक के अध्ययन हेतु अमानकीकृत गतिविधियों में प्रश्नावली का महत्वपूर्ण स्थान है। गुड एवं हैट के अनुसार "सामान्यत: प्रश्नावली शब्द प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की योजना की ओर संकेत करती है।" निर्देशन कार्यक्रम हेतु प्रश्नावली सामान्यत: बालक द्वारा या अभिभावक द्वारा भराई जा सकती है।

यह दो रूपों में प्रयुक्त हो सकती है:-

(i) प्रतिबन्धित प्रश्नावली- इनमें प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'ना'' पर चिन्हित करना होते है। उसे स्वयं कुछ नहीं लिखना होता। यह प्रश्नावली उत्तर देने में सरल, कम समय तथा व्याख्या करने की दृष्टि से लाभदायक रहती है।

(ii) प्रतिबंध मुक्त प्रश्नावली:- इस प्रकार की प्रश्नावली में उत्तरदाता को स्वयं उत्तर लिखने हेतु स्थान रहता है। इस विधि में सारणी निर्माण तथा व्याख्या करने में समय अधिक लगता है।

प्रश्नावली प्रमापीकृत भी होती है इन्हें "इंवैंट्री'" (अनुसूची) कहते हैं।

प्रश्नावली में निर्देश स्पष्ट रूप में होना चाहिए। अधिक नहीं होना चाहिए। शब्दावली सरल हो व प्रश्न स्पष्ट हो।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

18. बालक के बारे में जानकारी प्राप्त करने की अमानकीकृत प्रविधियाँ कौन कौनसी है?
19. प्रेक्षण द्वारा बालक के व्यवहार का अध्ययन किया जा सकता है -
    (i)
    (ii)
20. आकस्मिक अमिलेख के प्रारूप में किन बातों का उल्लेख आवश्यक होता है?
21. बालक का समूह के साथ संबन्ध की जानकारी प्राप्त करने हेतु किस विधि का प्रयोग किया जाता है?
22. निर्देशन हेतु साक्षात्कार के कोई तीन प्रयोजन लिखिए -
    1.
    2.
    3.
23. आत्मकथा के विभिन्न रूप कौनसे हैं?
24. प्रतिबंधित व मुक्त प्रश्नाबली में क्या अन्तर होता है?

16.7 सारांश (Summary)

निर्देशन कार्य को वैज्ञानिक वस्तुनिष्ठ एवं प्रभावी बनाने हेतु बालक के बारे में आवश्यक तथ्य सूचनाएं एवं आंकड़े एकत्र करना होता है। बालक/व्यक्ति के बारे में उपलब्ध तथ्य शैक्षिक व्यवसायिक एवं व्यक्तिगत निर्देशन में प्रयुक्त होते है। निर्देशन व परामर्श का

उद्देश्य बालक को समझना होता है ताकि उसे उपयुक्त सहायता पहुँचा सके। निर्देशनकर्त्ता के पास यदि व्यक्ति के बारे में सही विश्वसनीय, महत्वपूर्ण तथा पूरी जानकारी है तो वह उसे भली प्रकार जान सकता है तथा उचित निर्देशन एवं परामर्श दे सकता है।

बालक के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने हेतु हमें उससे संबन्धित निम्नलिखित सूचनाएं एकत्र करना चाहिए।

1. पृष्ठभूमि आधार सामग्री (Background data)- वे तथ्य जो हमें उसके बारे में जानकारी देते हैं।
2. भौतिक आधार सामग्री (Physical data) - इसमें बालक के स्वास्थ्य, शारीरिक दोष, रोगग्रस्तता आदि विवरण होता है।
3. मनोवैज्ञानिक आधार सामग्री - इसके अन्तर्गत बालक की मनोवैज्ञानिक विशेषताएं जैसे बुद्धिलब्धि अभियोग्यताएं, रूचियां, व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताएं (स्वभावगत, समायोजन आदि) की जानकारी प्राप्त की जाती है।
4. शैक्षिक आधार सामग्री - इसका सम्बन्ध विद्यालयी जीवन की जानकारी, उपलब्धि स्तर, शैक्षिक या अन्य क्षेत्रों में प्रगति से होता है।
5. भविष्य की योजनाएं तथा अपेक्षाएं - इसके अन्तर्गत यह जानने का प्रयास किया जाता है कि बालक अपने अध्ययन तथा भावी योजनाओं के बारे में क्या आकांक्षाएं रखता है।

सूचना प्राप्ति के स्त्रोत -

उपर्युक्त प्रकार की सूचनाएं एकत्र करने में कई स्त्रोतों को प्रयुक्त करना पड़ता है। इसमें प्रमुख स्रोत हैं -

1. व्यक्ति स्वयं।
2. व्यक्ति के अभिभावक तथा परिवार के अन्य सदस्य।
3. शिक्षक तथा विद्यालय के अन्य कार्मिक वर्ग।
4. बालक के साथी व मित्र।
5. मनोवैज्ञानिक परीक्षण।
8. विभिन्न अन्य स्त्रोत।

उपरोक्त तकनीकों या विधियों को हम निम्नलिखित वर्गो में विभाजित कर सकते हैं -

I. मनोवैज्ञानिक परीक्षण की तकनीकें।
II. निरीक्षण तकनीकें।
III. आत्मनिवेदन की तकनीकें।
IV. विभिन्न अन्य तकनीकें।

16.8 शब्दावली (Glossary)

निर्देशन (Guidance)- यह वह सहायता है जो व्यक्ति को अपनी समस्यों को स्वयं हल करने योग्य बनती है।

परामर्श (Counselling) - निर्देशन की वह विधि है जिसमें परामर्शक एवं परामर्श प्राप्तकर्ता आमने सामने बैठकर किसी समस्या का हल निकालते है।

आकस्मिक अभिलेख (Anecdotal record) - इसमें कोई शिक्षक छात्र से संबन्धित आकस्मिक घटनाओं को प्रत्यक्ष अवलोकन कर रिकॉर्ड रखता है।

समाजमिति (Sociometry)- इसके माध्यम से कोई समूह सामूहिक रूप से समूह के किसी व्यक्ति (छात्र) के सामाजिक स्तर (लोकप्रिय, उपेक्षित, एकांकी इत्यादि) के बारे में अपनी धारणा व्यक्त करता है।

साक्षात्कार (interview) - इसमें कोई साक्षात्कारकर्ता किसी schedule के अनुसार या स्वतंत्र रूप से कि व्यक्ति (छात्र) के बारे में उसके विभिन्न क्षेत्र के व्यवहार के बारे में पता लगाता है।

आत्मकथा (Autobiography) :- इसमें छात्र अपने जीवन की मुख्य घटनाओं का स्वयं वर्णन करता है।

पड़ताल सूची (Check list) :- इसमें दी गई सूची में छात्र अपनी समस्याओं/स्थितियों सम्बन्धित पर निशान लगाता है ।

6.8 संदर्भ ग्रन्थ (Further Readings)

1. अग्रवाल जे.सी. (1989) एजूकेशनल, वोकेशनल गाइडैंस एंड काउंसिलिंग, दुआबा हाउस, देहली।
2. भटनागर आरपी. एण्ड रानी, सीमा (2003) गाइडैंस एण्ड काउंसिलिंग इन एजूकेशन एण्ड साइकोलोजी, आर.लाल बुक डिपो।
3. चौहान, एस.एस. (1982), प्रिंसिपल्स एण्ड टैकनीकस ऑफ गाइडैंस, विकास पब्लिशिंग हाऊस, न्यू देहली।
4. चौहान, बिजय लक्ष्मी (2003), निर्देशन एवं परामर्श, अंकुर प्रकाशन, देहली।
5. दुबे, रमाकान्त (1982), शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के मूल आधार, राकेश पब्लिशिंग हाउस, देहली।
6. गुप्ता मंजु (2003), इफैक्टिव गाइडैंस एण्ड काउंसिलिंग, मंगलदीप प्रकाशन, देहली।
7. जायसवाल सीताराम (1976), शिक्षा में निर्देशन और परामर्श, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
8. कोचर एस.के. (1984), एजूकेशनल एण्ड वोकेशनल गाइडैंस इन सैकेण्ड्री स्कूल, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि.. न्यू देहली।
9. ओबेराय, एसी. (1993), शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श, इंटरनेशनल ईगल बुक, न्यू देहली।
10. पाल, एस.के. (1968), गाइडैंस इन मैनी लैंड्स-एजूकेशनल, वोकेशनल एण्ड फाईनल, सैंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद।
11. पसरीचा प्रेम (1976), गाइडैंस एण्ड काउसिलिंग इन इंडियन एजूकेशन, एन.सी.ई.आर.टी. न्यू देहली।

12. शर्मा ताराचन्द (2002), मॉडर्न मैथड्स ऑफ गाइडैंस एण्ड काउसिलिंग, स्वरूप एण्ड सन्स, न्यू देहली।

13. शर्मा रामनाथ एवं रचना (2004), गाइडैंस एंड काउसिलिंग इन इण्डिया, एटलांटिक प्रकाशन, देहली।

14. शर्मा रमेश (2005), गाइडैंस एण्ड काएसिंलिंग, कल्पना पब्लिकेशन, देहली।

15. सफाया बी.एन. (2002), गाइडैंस एण्ड काउसिलिंग, अभिषेक प्रकाशन, चंडीगढ़।

16. सिंह रामपाल, राधाबल्लभ उपाध्याय (1974), शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा ।

17. वशिष्ठ एस.आर. (1985), मैथड्स ऑफ गाइडैंस, अमोल पब्लिकेशन, न्यू देहली।

16.10 स्वपरख प्रश्नो के उत्तर/ संकेत (Answers/Hints to Self-Learning Exercise)

01. इसमें किसी प्रकार की आर्थिक या अन्य सहायता जो सहायता प्राप्तकर्त्ता को देन के आश्रित न बनाकर उसको स्वयं अपनी समस्या का हल प्राप्त करने में सहायक हे

02. क्योंकि समस्याएं इतनी तेजी से बढ़ रही है कि व्यक्ति सभी का हल अकेले नहीं ढूंढ पाता।

03. Selfunderstanding, Self accepranse. Self direction and Self-realisation

05. शैक्षिक, व्यवसायिक, व्यक्तिगत

06 परामर्श परामर्शदाता तथा उसके प्राप्तकर्त्ता के बीच आमने-सामने होती है। निर्देशन में यह आवश्यक नहीं होता।

07. स्वमूल्यांकन में सहायता, आत्मस्वीकृति, सामाजिक समायोजन।

08. नैदानिक, मनोवैज्ञानिक, मनोचिकित्सक, विद्‌यार्थी परमार्श, नियोजन परामर्श, व्यवसायिक परामर्श इत्यादि।

09. (i) प्रविधि (ii) समअर्थी (iii) तकनीक

10. (i) X (ii) X (iii) X

11. (i) ब (ii) स (iii) स

12. (i) अंतरंग (ii) व्यक्तिगत भिन्नता (iii) समायोजन।

13. (i) ✓ (ii) ✓ (iii) X

14. समस्या का हल न बताकर उसे स्वयं हल करने में सहायता।

15. देखें 16.5.1

16. दैखें 16.5.2

17. 16.2 पूरा देखें।

18. स्वतंत्र प्रेक्षण, नियंत्रित प्रेक्षण

19. देखें 16.6.2

20. समाजमिति

21. देखें 16.6.4

22. निर्देशित, अनिर्देशित, मिश्रित

23. देखें 16.6.7

24. देखे 16.6.8

16.11 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit end question)

1. निर्देशन और परामर्श में अंतर बताइये। किसका क्षेत्र अधिक विस्तृत है? उदाहरण देकर व्याख्या कीजिए ।
2. सामूहिक निर्देशन में कौन-कौन से कार्यक्रम लिए जा सकते है?
3. समाजमिति में व व्यक्ति को किस व्यवहार का अध्ययन किया जाता है?
4. साक्षात्कार तथा प्रश्नावली में क्या अन्तर तथा समानता है।
5. आत्मकथा कौन लिखता है? इसको क्यों लिखवाया जाता है।
8. आकस्मिक अभिलेख क्या होता है? इसे कौन लिखता है, यह कहाँ काम आता है?

इकाई 17 (Unit 17)

अधिगम : व्यक्तिक विभिन्नताएँ -कारक, समस्याएँ तथा शिक्षण अधिगम तन्त्र में इसकी उपयोगिता-

(Learner : Individual Differences-Factors,Problems & Utility in Teaching-Learning System)

इकाई की रूपरेखा (Structure)

17.0 उद्देश्य (Objectives)
17.1 प्रस्तावना (Introduction)
17.2 व्यक्तिक विभिन्नता की परिभाषाएँ (Definitions of Individual Differences)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)
17.3 व्यक्तिक विभिन्नताओं की विशेषताएँ(Characteristics of Individual Differences)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)
17.4 व्यक्तिक विभिन्नताओं की समस्याएँ (Problems of Individual Differences)
17.5 व्यक्तिक विभिन्नताओं के कारक (Factors of Individual Differences)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)
17.6 व्यक्तिक विभिन्नताओं का मापन (Assessment of Individual Differences)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)
17.7 व्यक्तिक विभिन्नताओं की शिक्षण-अधिगम तन्त्र में उपयोगिता(Uses of Individual Differences in Teaching-learning Process)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)
17.8 सारांश (Symmary)
17.9 शब्दावली (Glossary)
17.10 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)
17.11 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/सुझाव (Answer/Hints for Self Learning questions)
17.12 मूल्यांकन प्रश्न (Unit-end Questions)

17.0 उद्देश्य (Objectives):-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :

- व्यक्तिक विभिन्नताओं की परिभाषाओं का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- व्यक्तिक विभिन्नता के अर्थ को समझकर उसकी व्याख्या अपने शब्दों में कर सकेंगे।
- व्यक्तिक विभिन्नताओं की समस्याओं का वर्णन कर सकेंगे।

व्यक्तिक विभिन्नताओं के कारकों की पहचान कर सकेंगे।

व्यक्तिक विभिन्नताओं का मापन कर सकेंगे।

व्यक्तिक विभिन्नताओं की शिक्षण अधिगम तन्त्र में उपयोगिता को समझ सकेंगे|

17.1 प्रस्तावना (Introduction) :-

प्रकृति में अनेकों चीजें विद्‌यमान हैं चाहें वे सजीव अवस्था में हो या निर्जीव अवस्था में

वे कुछ गुणों के आधार पर एक दूसरे से विभिन्नता (differences) रखती हैं। जैसे गुलाब तथा कमल के पुष्प जो कि पुष्प होने के बावजूद भी एक दूसरे से विभिन्नता रखते हैं। इसी प्रकार भारत में रहने वाले व्यक्ति अफ्रीका में रहने वाले व्यक्तियों से भिन्न हैं। समग्र रूप से देखने पर पुष्प व मनुष्य अपनी प्रजाति के आधार पर भी एक दूसरे से भिन्न हैं।

यह सर्वविदित तथ्य (fact) है कि दो मनुष्य एक दूसरे से मानसिक योग्यताओं (Mental Abilities), शारीरिक क्षमताओं (Physical abilities) तथा शील (Traits) गुणों के आधार पर भिन्न होते हैं, यहाँ तक कि जुड़वा भाई-बहिन भी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। यह विभिन्नताएँ एक व्यक्ति को दूसरे से अलग करती है। एक व्यक्ति दूसरे से तो भिन्न होता ही है किन्तु उसकी स्वयं की क्षमताओं में भी विभिन्नता पाई जाती है। अर्थात व्यक्ति में विभिन्न शील गुणों (Traits) की मात्रा एक बराबर नहीं होती है। एक व्यक्ति में कला के प्रति रूचि अधिक हो सकती है परन्तु उसमें संगीत के प्रति रूचि कम हो सकती है और वह बुद्धि में उत्तम हो सकता है। इन भिन्नताओं के कारण कक्षा के सभी छात्रों के साथ एक समान व्यवहार उनकी योग्यताओं के तथा क्षमताओं के विकास में बाधक हो सकता है। व्यक्तिक भिन्नताओं के इन विभिन्न पहलुओं का ज्ञान आपके अपने कक्षा शिक्षण में छात्रों की क्षमताओं तथा विशेषताओं का ध्यान रखकर पढाने में काफी सहायक होगा।

17.2 व्यक्तिक विभिन्नताओं की परिभाषाएँ(Definitions of Individual Differences)

व्यक्तिक विभिन्नताओं को मनोवैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है।

उनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्न हैं :

रेवर (1985) ने व्यक्तिक विभिन्नता को परिभाषित करते हुए कहा कि "एक ऐसी मनोवैज्ञानिक घटना के लिए यह नाम दिया जाता है जो उन विशेषताओं या शील गुणों पर प्रकाश डालता है, जिनके अनुसार व्यक्तिक जीव भिन्न होते दिखाए जा सकते हैं।"

According to Rever(1985),Inividual differences may be defined as,"A lebel used for an approach to Psychological phenomena that focuses on characteristics or traits along which individual organism may be shown to differ."

स्किनर के अनुसार, "मापन किए जाने वाला व्यक्तित्व का प्रत्येक पहलू वैयक्तित्व भिन्नता का अंश है।"

According to Skinner,"Every aspect of the personality which can be measured is the part of individual differences."

टेलर के अनुसार, "शरीर के आकार और रूप शारीरिक कार्य गति की क्षमताओं बुद्धि, उपलब्धि, ज्ञान, रूचियों, अभिवृत्तियों और व्यक्तित्व के लक्षणों में मापी जाने वाली भिन्नताओं का अस्तित्व सिद्ध हो चुका है ।"

According to Taylor,"Measureable differences have been shown to exit in Physical state and shape, physiological functions,motor capacities, intelligence, achievement and knowledge, interest, attitude and personality."

जेम्स ड्रेवर के अनुसार, "औसत समूह से मानसिक, शारीरिक विशेषताओं के सन्दर्भ में समूह के सदस्य के रूप में भिन्नता या अन्तर को व्यक्तिक भेद कहते हैं ।"

According to the James Drever,"Variation to deviation from average of the group with respect to the mental and physical characteristics occurring in individual members of the groups are called Individual Differences."

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति से शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक क्षमताओं (Physical, mental and intellectual Abilities), उपलब्धि (Achievement) , रूचियों (Interest) तथा अभिवृत्तियों (Attitudes) में अन्तर उनमें व्यक्तिक विभिन्नताओं (Individual Differences) का घोतक है । व्यक्तिक विभिन्नताओं को दो भागों में बांटा जा सकता है - (i) व्यक्ति के अन्दर पायी जाने वाली विभिन्नताएँ (Differnces within the individual) अथवा अन्त: व्यक्तिक विभिन्नता (Intra individual differences), जैसे एक व्यक्ति गाना अच्छा गा सकता है किन्तु वह पढाई में तेज न हो। (ii) एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति के साथ विभिन्नता (Differences with other individual) अथवा अन्त: व्यक्तिक विभिन्नता (Inter Individual differences). जैसे एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान होना ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)

01 वैयक्तिक विभिन्नता के प्रत्यय को परिभाषित कीजिए |.
Define the concept of individual differences .

02 अन्तः व्यक्तिक विभिन्नता को स्पष्ट कीजिए |.
Explain the term intra individual differences

17.3 व्यक्तिक विभिन्नताओं की विशेषताएँ (Characteristics of Individual Differences) :-

स्किनर (1962) ने व्यक्तिक विभिन्नताओं की निम्न विशेषताएँ बताई है:

- शील गुणों में विभिन्नता (Variability in traits):

व्यक्तिक विभिन्नताओं के सन्दर्भ में विभिन्नता का अर्थ व्यक्तियों के शील गुणों की मात्रा में अन्तर से होता है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से शील गुणों (traits) में भिन्न होता है तथा प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं में विद्‌यमान शील गुणों (traits) में भी अन्तर होता है।

- प्रासामान्यता (Normal distribution)

प्रासामान्यता का अर्थ इस बात से लगाया जाता है कि जब व्यक्तियों को किसी एक शील गुण पर मापा जाता है तो बहुत कम व्यक्ति ऐसे होंगे जिनमें यह शील गुण ((traits) बहुत कम या बहुत अधिक मात्रा में होगा । अधिकांश व्यक्ति उस समूह में ऐसे होंगे जिनमें यह शील गुण सामान्य मात्रा (Normal quantity) के आस-पास पाया जायेगा। उदाहरणस्वरूप यदि किसी समूह की बुद्धि (Intelligence) का परीक्षण (Test) किया जाये तो बहुत ही कम विद्‌यार्थी मन्द बुद्धि (Dull) तथा बहुत ही कम विद्‌यार्थी अति श्रेष्ठ बुद्धि (very superior) के होंगे जबकि अधिकांश विद्‌यार्थीयो की बुद्धि सामान्य (Normal) के आस-पास होगी।

- वृद्धि की विभेदी दर (Differential Rate of Growth)

बालकों के शारीरिक तथा मानसिक विकास में अन्तर पाया जाता है। सभी बालकों का शारीरिक तथा मानसिक विकास समान रूप से नहीं होता है। स्पष्ट है कि एक ही आयु वर्ग के बालको के शारीरिक तथा मानसिक विकास में विभिन्नताएँ पायी जाती है।

- अधिगम की विभेदी दर (Differential Rate of Learning)

एक ही आयु वर्ग के व्यक्तियों की सीखने की क्षमता (Learning Ability) भिन्न-भिन्न होती हैं। कुछ व्यक्ति एक प्रत्यय को बहुत ही जल्दी सीख लेते है जबकि कुछ व्यक्ति उसी प्रत्यय को सीखने में अधिक समय लगाते हैं ।

शील गुणों के परस्पर सम्बंध (Inter relationship of traits)

व्यक्ति के शील गुण आपस में किसी न किसी प्रकार संबन्धित होते हैं जिसके कारण किसी एक शील गुण में अन्तर दूसरे शील गुण को प्रभावित करता है। उदाहरणार्थ - किसी खेल में एक खिलाड़ी की उसके कोच द्‌वारा लगातार अनदेखी करने पर उसकी खेल के प्रति रुचि तथा उपलब्धि (Achievement) प्रभावित हो सकती है ।

- आनुवांशिकता तथा वातावरण का प्रभाव (Influence of heredity and environment)

व्यक्तिक विभिन्नता पर आनुवांशिकता (heredity) तथा वातावरण (environment) का प्रभाव पडता है। कुछ शील गुण जन्मजात (innate) होते हैं तथा कुछ शील गुण वातावरण के प्रभाव द्‌वारा अर्जित् (acquire) किए जाते हैं । इन शील गुणों की पारस्परिक क्रियाओं के कारण ही व्यक्तियों में भिन्नताएँ पायी जाती हैं ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progess)

03 स्किनर द्‌वारा दी गई वैयक्तिक विभिन्नताओं की सूची दीजिए।.

List the characterisitics of individual differences given by Skinner

04 वैयक्तिक विभिन्नताओं की विशेषता प्रासामान्यता पर टिप्पणी लिखिए ।

Write short note on ‘Normality’ as a characteristics of individual differences

17.4 व्यक्तिगत भिन्नताएँ और शिक्षण - अधिगम समस्याएँ (Problems of Individual Difference)

यदि सभी छात्र हर तरह से एक समान होते तो शायद शिक्षक-प्रशिक्षण के कोर्स में शिक्षण विधियों के पढाने की आवश्यकता नहीं होती। कक्षा शिक्षण में शिक्षण को विभिन्न स्तर के बुद्धि वाले, शारीरिक गठन वाले, सामाजिक स्तर से आने वाले छात्रों का सामना करना पड़ता है। एक सफल शिक्षक वही होगा जो छात्रों की इन व्यक्तिगत भिन्नताओं पर समुचित ध्यान देकर सभी वर्गों के छात्रों का सफल मार्गदर्शन कर सके।

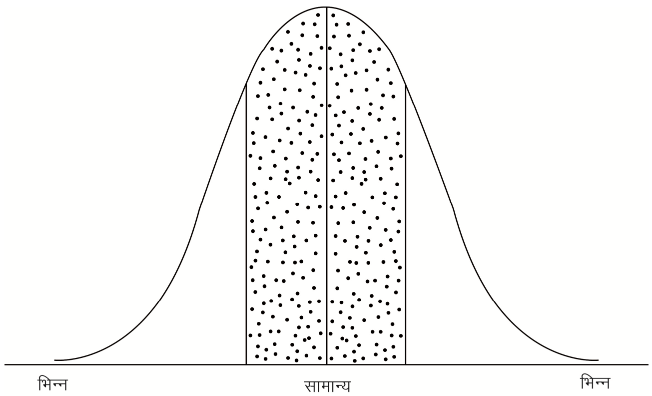

जैसा ऊपर संकेत दिया गया है, व्यक्तिगत भिन्नताओं का वितरण (Distribution) लगभग सामान् सम्भवत: वक्र के (Normal Probability Curve) के अनुसार होता है जिसमें बीच से (औसत से) लगभग दो-तिहाई सामान्य के आस-पास होते हैं (वक्र पर रेखांकित भाग)। इनके शिक्षण में शिक्षक को अधिक कठिनाई नहीं आती। वास्तव में सामान्य शिक्षक की शिक्षण प्रक्रिया अधिकतर इन्हीं को ध्यान में रखकर होती है परन्तु जो छात्र सामान्य से बहुत अधिक भिन्न है (कम या अधिक) वह स्वयं अपने लिए भी समस्या पैदा कर सकते हैं और शिक्षक के लिए समस्या उत्पन्न कर सकते हैं। जैसे-

1 शारीरिक विषमता :

यदि कोई छात्र बहुत नाटा है, मोटा है या बहुत लम्बा है। ऐसे छात्र अक्सर अन्य छात्रों के मजाक का पात्र बन सकते हैं और उनकी यह उपेक्षा (मज़ाक) उसे संवेगात्मक दृष्टि से प्रभावित कर सकती है, जिससे उसका अधिगम नकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकता है।

गल ग्रंथि ऐसी ग्रंथियों के उपक्रिय या अतिक्रिय होने के कारण से भी उसमें मानसिक तथा संवेगात्मक अस्थिरता हो सकती है। गल ग्रंथि के विकार में शिक्षक केवल उसके अभिभावक को उपचार के लिए सलाह दे सकता है परन्तु अधिक शारीरिक विषमता के कारण उसकी उपेक्षा को अन्य छात्रों को उसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार की प्रेरणा देकर (कि सभी में कोई न कोई कमी होती है) तथा यह सुनिश्चित करके कि वास्तव में अन्य छात्र उसके प्रति मजाक न बनायें। इसी प्रकार यदि विकलांग छात्र में अन्य गुण जैसे अच्छा गा सकता है तो उसकी प्रतिभा को उभारकर भी उसे लोकप्रिय बना सकता है।

2 मानसिक विषमता (Mental Differences)

आरम्भ की कक्षाओं (Nursery, K.G etc.) में प्रवेश मुख्यत: आयु के (न कि उनके मानसिक योग्यता) के आधार पर होता है इसलिए उनमें मानसिक दृष्टि से काफी विषमता हो सकती है परन्तु दो कारणों से यह समस्या इतनी विषम नहीं होती।

(1) कक्षाओं के सरल कार्यो को कम बुद्धि वाले अधिकतर बालक भी कर सकते हैं या उन्हें अतिरिक्त अभ्यास दिलाकर उन्हें कराया जा सकता है।

(2) जैसे जैसे हम अगली कक्षाओं में बढते जाते हैं अयोग्य छात्र छँटते जाते हैं। पर यही भी व्यक्तिगत भिन्नता समाप्त नहीं होती, जो बालक तथा शिक्षक दोनों के लिए समस्या उत्पन्न कर सकती है। कम मानसिक योग्यता वाले छात्र कक्षा शिक्षण के साथ तालमेल नहीं बैठा पाते क्योंकि जो कुछ कक्षा में हो रहा है तथा मुख्यत: सामान्य स्तर को ध्यान में रखकर हो रहा है। वह अधिकतर उनके समझ में नहीं आता इसलिए अक्सर कक्षा में होते हुए अन्य कार्य करके अधिगम शिक्षण वातावरण को बिगाड़ते हैं। इस प्रकार प्रखर बुद्धि वाले या सृजनात्मक छात्रों के लिए सामान्य शिक्षण चुनौतीपूर्ण न होने कारण नीरस लगता है इसलिए यह भी हो सकता है कि कक्षा शिक्षण पर वह न ध्यान दें या उटपटांग के प्रश्न पूछकर शिक्षक के लिए समस्या बने।

ऐसी स्थिति में एक कुशल शिक्षक अपनी शिक्षण में विविधता लाकर इस समस्या को हल करने की दिशा में प्रयत्न कर सकता है। कमजोर छात्रों को (अ) सरल प्रश्नों के सही उत्तरो पर भी प्रोत्साहन देकर (शाबाश, Very good इत्यादि), उन्हें उत्प्रेरित करके तथा गलत उत्तरो पर दण्ड न देकर (ब) उनके लिए अधिक अभ्यास दिलाकर (गृह कार्य या कक्षा मे) उनके मनोबल को बढा सकते हैं।

इसी प्रकार प्रखर बुद्धि के छात्रों को अतिरिक्त कार्य देकर तथा उसको अन्य छात्रों को भी बताकर न केवल उनकी अहम् को शान्त कर सकेंगे, उनकी वार्ता से अन्य छात्र भी लाभान्वित होंगे।

परन्तु इसका कोई घिसा पिटा फॉरमूला नहीं है, शिक्षक अपने विवेक से ही इन दोनों अति वर्गो को कक्षा कार्यों की ओर अधिक प्रेरणा दे सकते हैं।

(3) सामाजिक विषमता - आज सरकारी तथा सार्वजनिक प्रयत्नों से शिक्षा का चौमुखी विकास हुआ है। हर वर्ग तथा स्तर के छात्र पढने के लिए आ रहे हैं। शिक्षा केवल किसी उच्च वर्ग या स्तर तक सीमित नहीं है। इसलिए छात्रों में पहले की अपेक्षा बहुत अधिक व्यक्तिगत भिन्नताएँ मिलती हैं जिनको ध्यान में रखकर सभी छात्रों को अपने शिक्षण से लाभान्वित करना एक बड़ी समस्या है। सम्पन्न वर्ग के अतिरिक्त, बहुत से छात्र निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के होते हैं, कुछ वंचित वर्ग (जैसे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, इत्यादि) उनके परिपेक्ष ही अलग नहीं होते, उससे प्रकट होने वाले चिंन्तन, आत्म-सम्मान, शिक्षा से अपेक्षायें तथा आगे बदने की मनोवृत्ति भी अलग-अलग होती है।

अक्सर ऐसे निम्न सामाजिक स्तर के परिवारों से आने वाले छात्रों की पढाई के प्रीत रूचि नहीं होती। शायद उनका ध्यान विद्यालय में मध्यावकाश में मिलने वाले दलिया या भोजन पर होता है इसलिए, अक्सर मध्यावकाश के बाद कक्षाओं में छात्रों की संख्या घट जाती है। उन्हें कक्षाओं में रोकना भी समस्या हो जाती है।

इसके अतिरिक्त विशेषकर गाँवों में अक्सर वंचित वर्ग (जैसे अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति) के बच्चों के प्रति कई शिक्षकों का व्यवहार मानवीय नहीं होता क्योंकि वह उनको अपने उपर थोपी समस्या मानते हैं।

इस प्रकार अन्य कारणों से या उपरोक्त कारणों के बीच अन्त:क्रिया से उपजी व्यक्तिगत भिन्नतायें शिक्षक के लिए समस्या बन सकती है। इसके लिए शिक्षक के सामने कोई अचर फॉरमूला (Fixed formula) नहीं होता है। विभिन्न प्रकार की अधिगम विधियों जैसे- करके सीखना, खोज विधि, प्रत्यक्ष ज्ञान, अवलोकन विधि इत्यादि जो छात्र-अध्यापक ने अपने प्रशिक्षण के दौरान सीखी है उनका सामयिक अकेले या मिलाकर प्रयोग करके तथा धैर्यपूर्ण एवं विवेकपूर्वक सभी वर्ग के छात्रों को अपनी शिक्षण विविधता द्वारा तथा पुनर्वलन द्वारा उनको वांछित अधिगम के प्रति प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करें ।

17.5 व्यक्तिक विभिन्नताओं के कारक (Factors of individual differences)

दो व्यक्तियों के मध्य व्यक्तिक विभिन्नतायें विभिन्न कारणों से होती हैं। इनमें से कुछ यह प्रमुख कारण हैं -

- वंशानुक्रम (Heredity)

व्यक्तिक विभिन्नताओं का एक प्रमुख कारण वंशानुक्रम होता है। वंशानुक्रम का प्रभाव बुद्धि (Intelligence) पर भी पडता है। बुद्धिमान तथा उत्तम शील गुणों वाले माता-पिता की सन्तानें (Progency) सामान्यत: बुद्धि में श्रेष्ठ (Superior) होती हैं तथा उनमें उत्तम शील गुण भी हो सकते हैं जबकि अपराधी माता-पिता के बच्चो में भी वैसे ही गुण विकसित हो सकते हैं। अत: स्पष्ट है इसका कारण वंशानुक्रम (Heridity) हो सकता है ।

- वातावरण (Environment)

वातावरण के कारण भी व्यक्तियों में विभिन्नता पायी जाती है । व्यक्ति पर उसके भौतिक (Physical) तथा सामाजिक (Social) वातावरण का प्रभाव पड़ता है जिसके कारण उनमें व्यक्तिक विभिन्नता पायी जाती है । जिस क्षेत्र में सर्दी अधिक पड़ती है बही के निवासी अधिक गोरे होते हैं तथा इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में गर्मी अधिक पडती है वहा के निवासियों का रंग काला या सांवला अधिक होता है अर्थात भौतिक वातावरण के कारण व्यक्तियों में व्यक्तिक विभिन्नता आ जाती है । इसी प्रकार व्यक्ति यदि ऐसे परिवार से है जहाँ मानवीय मूल्यों (Human values) को अधिक महत्व दिया जाता है तो वह ऐसे व्यक्तियों से भिन्न होगा जिनके परिवार में मानवीय मूल्यों का कोई महत्व नहीं है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि व्यक्ति पर वातावरण का प्रभाव पड़ता है जिसके कारण उसमें व्यक्तिक विभिन्नताएँ उत्पन्न होती है ।

- प्रजाति एवं राष्ट्रीयता (Race and Nationality)

अलग-अलग प्रजाति एवं राष्ट्रों के व्यक्तियों में विभिन्नताएँ देखने को मिलती हैं। अफ्रीका के निवासियों तथा भारतीयों के बीच विभिन्नतायें आसानी से देखी जा सकती है। उनके आचार-विचार, आदतों (Habits) शील गुणों आदि में राष्ट्र के प्रभाव से भी विमिन्नताऐ पायी जाती है ।

इसी प्रकार ब्राहमण तथा क्षत्रियों के बीच में भी उनकी प्रजाति के कारण उनके शील गुणों में अन्तर पाया जाता है । इस प्रकार कहा जा सकता है कि व्यक्तियों में प्रजाति एवं राष्ट्रियता के प्रभाव के कारण व्यक्तिक विभिन्नताएं परिलक्षित होती हैं।

- आर्थिक स्थिति (Economic condition)

आर्थिक स्थिति के कारण भी बालकों में विभिन्नताएँ होती हैं । ऐसे बालक जिनके परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ होती हैं उनका शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ (Physical and mental health) सामान्यत: अच्छा होता है जबकि कमजोर आर्थिक स्थिति वाले परिवार के बालकों का शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य सामान्यत: उतना अच्छा नहीं होता है और उनमें समायोजन (Adjustment) की समस्या भी पाई जा सकती है । इस प्रकार आर्थित स्थिति भी व्यक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख कारण है ।

- लिंग भेद (Gender Difference)

बालक और बालिकाओं के शारीरिक गठन (Body Constitution) में तो अन्तर होता ही है साथ ही उनकी बुद्धि (Intelligence) तथा शारीरिक क्षमता (Physical ability) में भी अन्तर हो सकता है । बालक शारीरिक श्रम (Physical labour) अधिक कर लेते हैं जबकि बालिकाएँ बालकों की तुलना में शारीरिक श्रम कम कर पाती हैं । अत: लिंग भेद भी व्यक्तिक विभिन्नताओं का एक कारण है।

स्वपरख प्रश्न(Check your Progess)

05 वातावरण व्यक्तिक विभिन्नताओं को कैसे प्रभावित करता है ?

How environment affects individual differences ?

17.6 व्यक्तिक विभिन्नताओं का मापन(Measuring Individual Differences)

मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तिक विभिन्नताओं को मापने के लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों (Phychological test) का निर्माण किया गया है। इन परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों (data) का विश्लेषण (Analysis) कर एक व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों या समूह से विभिन्नताओं का मापन किया जा सकता है । कुछ प्रमुख परीक्षण निम्न हैं -

- व्यक्तित्व परीक्षण (Personality test)

व्यक्तित्व परीक्षण के द्वारा व्यक्तिक विभिन्नताओं का अध्ययन किया जा सकता है । व्यक्तित्व परीक्षण को प्रशासित (Administer) कर व्यक्तियों के विभिन्न शील गुणों का मापन किया जा सकता है। ये शील गुण एक व्यक्ति में अधिक तो दूसरे व्यक्ति में कम पाये जा सकते हँ । स्पष्ट है कि व्यक्तित्व परीक्षण के माध्यम से व्यक्तिक विभिन्नताओं को मापा जा सकता है ।

- अभिरूचि परीक्षण (Aptitude test)

विभिन्न व्यक्तियों की अभिरूचियाँ विभिन्न होती हैं किन्तु अभिरूचि परीक्षण (Aptitude test) द्वारा उनकी अभिरूचियों का स्पष्ट रूप से अध्ययन किया जा सकता है। अभिरूचि परीक्षण के माध्यम से व्यक्तियों की अभिरूचियों का अध्यन्न कर उनके मध्य व्यक्तिक भिन्नताओं को स्पष्ट कर लिया जाता है ।

- उपलब्धि परीक्षण (Achievment Test)

बालकों की उपलब्धि के आधार पर उनके मध्य अन्तर स्पष्ट किया जाता है। बालकों की शैक्षिक उपलब्धि (Educational Achievments) का मापन कर उनमें होने वाली व्यक्तिक विभिन्नताओं का मापन किया जा सकता है।

- बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)

बालकों की बुद्धि उनकी व्यक्तिक विभिन्नता का एक प्रमुख कारण है । बुद्धि परीक्षण से प्राप्त आंकड़ों (Data) का विश्लेषण (Analysis) कर बालकों की बुद्धिलब्धि (I.Q) ज्ञात कर ली जाती है और इस बुद्धिलब्धि के माध्यम से बालकों की व्यक्तिक विभिन्नता को ज्ञात कर लिया जाता है।

- अभिवृत्ति परीक्षण (Attitude Test)

व्यक्तियों की किसी वस्तु या घटना के प्रति अलग-अलग अभिवृत्ति (Attitude) होती है, जो कि उनकी व्यक्तिक विभिन्नताओं की घोतक होती है। अभिवृत्ति परीक्षणों के माध्यम से व्यक्तियों की अभिवृत्ति ज्ञात कर उनमें व्यक्तिक विभिन्नता को स्पष्ट किया जा सकता है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

06 बुद्धि परीक्षण के द्वारा व्यक्तिक विभिन्नता को किस प्रकार मापा जा सकता है ?
How individual differences can be measured by individual test ?

17.7 व्यक्तिक विभिन्नताओं की शिक्षण अधिगम तंत्र मे उपयोगिता- (Utility of Individual Differences in Teaching Learning System)-

शिक्षा के क्षेत्र में यह स्थापित तथ्य है कि बालकों को शिक्षा उनकी व्यक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर देनी चाहिए। किन्तु वास्तविकता यह है कि एक ही कक्षा के सभी विद्यार्थियों में पर्याप्त व्यक्तिक विभिन्नताओं के होते हुए भी उन्हें एक ही शिक्षण विधि (Teaching method) द्वारा एक ही पाठ्यक्रम (Curriculum) का अध्ययन कराया जाता है । इस समस्या के समाधान हेतु शिक्षक को निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए।

- शिक्षकों को शारीरिक विभिन्नताओं (Physical differences) के आधार पर बैठक व्यवस्था (Sitting Arrangement) करना चाहिए । जैसे छोटे कद वाले विद्यार्थियों को आगे तथा बड़े कद वाले विद्यार्थियों को कक्षा में पीछे बैठाना चाहिए ।
- शिक्षकों को बुद्धि के अनुसार विद्यार्थियों का वर्गीकरण (Classification) कर, शिक्षा देनी चाहिए ।

- अधिगम (Teaching) को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षक को नवीन शिक्षण विधियो (Innovative teaching method) का प्रयोग करना चाहिए ताकि प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी अन्तर व्यक्तिक विभिन्नता (Inter individual differences) के आधार पर शिक्षित किया जा सके ।

- पाठ्यक्रम का निर्माण (Cirriculum Construction) विद्यार्थियों की बुद्धि, रूचि तथा आयु स्तर के अनुसार किया जाना चाहिए ।

- विद्यार्थियों की व्यक्तिक विभिन्नताओं के आधार पर शैक्षिक तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन (Educational and vocational guidance) किया जाना चाहिए ।

- शिक्षकों को विद्यार्थियों की व्यक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना चाहिए ताकि कम बुद्धिलब्ध (I.Q.) वाले विद्यार्थी भी सम्प्रत्य्य को आसानी से समझ सकें ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

07 व्यक्तिक विभिन्नताओं की कक्षा शिक्षण में उपयोगिता बताइये ?
What is the utility of Individual Differences in Classroom Teaching ?

17.8 सारांश (Summary)

शिक्षा के क्षेत्र में यह सर्वमान्य तथ्य है कि व्यक्ति को उसकी क्षमताओं के अनुरूप शिक्षा देनी चाहिए। व्यक्तिक विभिन्नता दो प्रकार की होती है - अन्त व्यक्तिक तथा अन्त: व्यक्तिक विभिन्नता । शिक्षक को अपनी कक्षा में इन दोनों प्रकार की व्यक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम शिक्षक द्वारा अपनी कक्षा के विद्यार्थियों की व्यक्तिक विभिन्नताओं की माप विभिन्न परीक्षणों यथा-व्यक्तित्व परीक्षण, अभिरूचि परीक्षण, बुद्धि परीक्षण आदि के द्वारा की जानी चाहिए । तत्पश्चात व्यक्तिक विभिन्नताओं के कारणों को खोजना चाहिए। शिक्षक को इसी आधार पर विद्यार्थियों का शिक्षण कार्य सम्पादित करना चाहिए।

17.9 शब्दावली (Glossary)

1 अभिवृत्ति (Attitude) - किसी दिशा में व्यवहार करने की प्रवृत्ति

2 आनुवांशिकता (Heridity) - वे सब गुण जो व्यक्ति अपने माता-पिता से पित्रैक के माध्यम से प्राप्त करता है

3 बुद्धि (Intelligence) - वातावरण से समायोजन करने की क्षमता

4 अधिगम (Learning) - अनुभवजन्य व्यवहार परिवर्तन

5 प्रासामान्यता (Normality) - सामान्य समभावता : वक्र के अनुसार वितरित

6 व्यक्तित्व (Personality) - व्यवहार करने का अपना अनूठा तरीका

7 शील गुण (Traits) - वह गुण जो व्यक्ति के व्यक्तित्व का भाग है ।

17.10 संदर्भ पुस्तके (Further Reading)

1 भटनागर, सुरेश (1999), शिक्षा मनोविज्ञान, आर0 लाल0 बुक डिपो, मेरठ

2. गुप्ता, एस. पी. एवं गुप्ता, (2002), शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद

3 शर्मा, आर. (2000) अधिगम एवं विकास के मनोवैज्ञानिक आधार, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ

4. सिंह, रामपाल, सिंह, एस. डी. एवं शर्मा देवदत्त (1999), व्यवहारिक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

5. Bhatnagar, A.B, Bhatnagar, M & Bhatnagar, A, Developer of Learner & Teaching Learning Process, R.Lall Book Depot,Merrut.

6. Bhatnagar, A.B, Bhatnagar, M & Bhatnagar, A. (2006), Psychology of Teaching Learning & Instruction,International Publishing House ,Merrut.

7. Kulshreshtha, Educational Psychology, R.Lall Book Depot,Merrut.

17.11 स्वपरख प्रश्नो के उत्तर/सुझाव

(Ansewr/Hints to Self Learning Exercises)

- प्रश्न संख्या 01 में व्यक्तियों के गुणों और विशेषताओं व भिन्नता में दी गई परिभाषाओं का सारांश दें ।
- प्रश्न संख्या 02 एक व्यक्ति के गुणों के स्वभाव में भिन्नता ।
- प्रश्न संख्या 03 शील गुणों, वशधि, अधिगम गति में।
- प्रश्न संख्या 04 अधिकतर व्यक्ति औसत के पास होते हैं, कुछ बहुत नीचे, कुछ बहुत ऊपर होते है|
- प्रश्न संख्या 05 में 17.4 का अवलोकन करें ।
- प्रश्न संख्या 06 में भौतिक एवं सामाजिक भिन्नताओं के कारण ।
- प्रश्न संख्या 07 में उनसे प्राप्त I.Q. Percentile Rank, Standard score,
- प्रश्न संख्या 08 छात्रों की बैठने की व्यवस्था, बुद्धि के अनुसार वर्गीकरण तथा उसके अनुसार शिक्षा में विषमता लाकर, शैक्षिक निर्देशन, व्यक्तिगत सहायता।

17.12 मूल्यांकन प्रश्न (Unit End Question)

1. व्यक्तिगत विभिन्नताओं से आपका क्या आशय है? विस्तार से चर्चा कीजिये ।
   What do you mean by individual differences ? Discuss in details.
2. व्यक्तिक विभिन्नताओं को आनुवांशिकता तथा वातावरण कैसे प्रभावित करते हैं?
   How do the heredity and environment affect individual differences ?
3. व्यक्तिक विभिन्नता के क्षेत्रों का विस्तार से वर्णन कीजिए ।
   Describe the ares of individual differences in detail.
4. आप अपनी कक्षा के विद्यार्थियों के मध्य व्यक्तिक विभिन्नताओं को मापने के लिए किन विधियों का प्रयोग करेंगे?

Which methods would you adopt to measure the individual differences among the student of your class ?

5. एक शिक्षक के लिए व्यक्तिक विभिन्नताओं की जानकारी क्यों आवश्यक है?

Why the knowledge of individual differences is important for the teacher ?

इकाई 18 (UNIT 18)

मनोवैज्ञानिक परीक्षण : अवधारणा, प्रयोग, विभिन्न परीक्षण, प्रक्रिया व विश्लेषण एवं अर्थनिर्णय, समाजमिति एवं समूह गतिकी इत्यादि

Psychological Testing-Concept, Uses, Different Tests Procedures, Analysis, Interpretation, Sociometry Group Dyanmics etc.

इकाई की रूपरेखा (Structure)

18.0 उद्देश्य (Objectives)

18.1 प्रस्तावना(Introduction)

18.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण

18.2.1 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की अवधारणा (Concept of Psychological Tests)

18.2.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्गीकरण(Classification of PsychologicalTests)

18.2.3 अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की विशेषताएँ (Characteristics of Psychological Test)

18.2.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं प्रशासन (Administration of PsychologicalTest)

18.2.5 विश्लेषण एवं फलांकन (Analysis and Scoring of PsychologicalTest)

18.2.6 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग (Uses of Psychological Test)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

18.3 समाजमिति (Sociometry)

18.3.1 समाजमिति की अवधारणा (Concept of Sociometry)

18.3.2 समाजमिति मापनी के विभिन्न पद (Different Steps in Sociometry)

18.3.3 समाजमितिय विश्लेषणात्मक प्रविधियॉ (Methods of Analysis)

18.3.3.1 समाजमितिय मैट्रिक्स (Concept of Sociometric Matrix)

18.3.3.2 समाज आलेख (Sociogram)

18.3.3.3 समाजमितिय सूचकांक (Sociometric index)

18.3.4 समाजमिति के उपयोग (Uses of Sociometry)
18.3.4.1 पूर्वाग्रहों के अध्ययन में प्रयोग (Uses)
18.3.4.2 प्रयोगात्मक शोध में प्रयोग
18.3.4.3 पशु समाजमिति में
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
18.4 समूहगतिकी (Group Dynamics)
18.4.1 समूहगति की की अवधारणा (Concept of Group Dynamics)
18.4.2 समूहगति की के संप्रत्यय की विशेषताएँ (Characteristics of Group Dynamics)
18.4.3 समूहगति की के चरण (Steps of Group Dynamics)
18.4.4 समूहगति की के उपयोग(Uses of Groups Dynamics)
स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
18.5 सारांश (Summary)
18.6 शब्दावली (Glossary)
18.7 संदर्भ ग्रंथ सूची (Further Readings)
18.8 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर/संकेत (Answers/Hints for self learning exercise)
18.9 अभ्यास के प्रश्न (Unit End Questions)

18.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की अवधारणा को समझ सकेंगे।
2. विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को प्रस्तुत करने, विश्लेषण करने तथा अन्तर्निहित प्रयुक्त विधियों को समझ सकेंगे।
3. विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की उपयोगिता समझ सकेंगे।
4. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग कहाँ और कैसे करना? सीख सकेंगे।
5. समाजमिति की अवधारणा तथा प्रयोग की व्याख्या कर सकेंगे।
6. समूहगतिकी की व्याख्या कर सकेंगे एवं सम्प्रत्यय को समझ सकेंगे।
7. समूहगतिकी द्वारा सामूहिक निर्णय प्रक्रिया को भलीभांति समझ सकेंगे।
8. समूहगति की द्वारा समूह में किस प्रकार का वातावरण चल रहा है, का पता लगा सकेंगे।
9. व्यक्ति की वर्तमान क्षमताओं एवं योग्यताओं के आधार पर भविष्य के विषय में विचार प्रकट कर सकेंगे।
10. व्यावसायिक तथा शैक्षिक क्षेत्रों में व्यक्ति का मार्ग निर्देशित कर सकेंगे।
11. व्यक्ति तथा व्यक्तियों के समूह की मानसिक, शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक शीलगुणों का तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।

12. शिक्षा के क्षेत्र में अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों का पता लगाकर उनका निदान कर सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना (Introduction):

कक्षा शिक्षण में शिक्षक को सभी छात्र एक समान नहीं मिलते हैं । इनमें कुछ प्रतिभाशाली होते हैं, काफी समान स्तर के होते हैं तथा कुछ पढ़ाई में काफी पीछे होते हैं। भले ही शिक्षक का ध्यान समान व प्रतिभाशाली छात्रों पर न जाये परन्तु इन पिछडे / कमजोर छात्रों पर उसका ध्यान जाना स्वाभाविक ही नहीं अति आवश्यक है क्योंकि वे उसके कक्षा परिणाम को भी प्रभावित करते हैं।

इसलिए शिक्षक को यह जानना अति आवश्यक हो जाता है कि उन छात्रों के पिछड़ेपन के क्या कारण हैं? ये अपेक्षा अनुरूप क्यों नहीं प्रगति कर पा रहे हैं? अत: किसी भी उपलब्धि के लिए सफलता प्राप्त करने के तीन मुख्य कारकों के बीच अन्योन्य क्रिया (interactive) होती है ।

1. क्षमता (योग्यता)
2. अभिप्रेरणा तथा
3. वातावरण

इसलिए शिक्षक को जानना आवश्यक हो जाता है कि पिछड़ा बालक किस क्षेत्र या क्षेत्रों में पिछड़ रहा है या पीछे है और इसे जानने के लिए यह उसकी क्षमता (बुद्धि तथा अभिरूचि) कक्षा का सामूहिक वातावरण जैसा वह महसूस करता है तथा कक्षा में उसकी सामूहिक स्थिति जैसा कि छात्रों में देखते हैं। इन सबके लिए शिक्षक उसे मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के आधार पर जैसे बुद्धि, अभिरूचि तथा व्यक्तित्व परीक्षणों आदि व कक्षा का सामाजिक वातावरण जैसा वह स्वयं देखता है या जैसे अन्य छात्र उसे देखते हैं, का पता लगाना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षण, समाजमिति तथा समूहगतिकी द्वारा उपरोक्त समस्या को हल करने में शिक्षक को काफी सहायता मिलती है।

18.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण (Psychological Tests)

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में व छात्रों के विकास हेतु शिक्षकों तथा शिक्षक प्रशिक्षकों को शिक्षा मनोविज्ञान ज्ञान होना अति आवश्यक है। चूंकि मनोवैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा छात्र/छात्राओं के व्यवहार की ज्ञानात्मक, कौशलात्मक तथा भावनात्मक पक्षों के अध्ययन से विभिन्न योग्यताओं एवं समस्याओं का ज्ञान प्राप्त होता है, इस ज्ञान का उपयोग करके शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावशाली बना सकता है तथा छात्र-छात्राओं के व्यवहार को समझने में उसे सहायता मिलेगी। मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्ति की व्यवहारिक अध्यन का वह साधन है जो उसके प्रति निर्णय लेने एवं समझने में सहायक है। इसके द्वारा व्यक्ति की विभिन्न योग्यताओं का मापन एवं उसकी व्यक्तित्व और चरित्र का अध्ययन भी संभव होता है। फीमैन के शब्दों में "मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह मानकीकृत यंत्र है जो समस्त व्यक्तित्व के एक पक्ष या अधिक पहलुओं का मापन, शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य किसी भी प्रकार व्यवहार के माध्यम से करता है।"

18.2.1 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की अवधारणा (Concept of Psychological Tests)

एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्तियों की कुछ विशेष उद्दीपकों के प्रति अनुक्रियाओं अथवा परीक्षणों की स्थितियों को एक पूर्व निश्चित तथा पूर्व स्थापित सतत (कन्टीन्यूअम) पर व्यक्त करता है। एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण में एक भौतिक स्केल की भांति निरपेक्ष (undisputed) शून्य बिन्दु नहीं होता है, अत: इसके माध्यम से एक सतत् कन्टीन्यूअम पर एक व्यक्ति की एक विषय के प्रति अभिवृत्ति अथवा एक स्थिति में निष्पादन का आंकलन ही किया जा सकता है उसका वास्तविक मापन नहीं। मनोवैज्ञानिक स्केलों का स्वरूप, स्थूल रुप से लेकर अत्यधिक विकसित व विशिष्ट रूप से देखने में आते हैं। इसके विविध रूप - नामात्मक स्केल कमात्मक स्केल तथा अन्तरालात्मक स्केल होते हैं। आनुपातिक स्केल की रचना व्यवहारपरक विज्ञानों में वर्तमान समय पर उपलब्ध तकनीकी ज्ञात की परिधि के आधार पर साध्य नहीं है। अत: इन विज्ञानों में अधिकतम विकसित स्केल अंतरालात्मक स्केल तक ही प्रयोग होता है, अभिवृत्तियों के मापन में इसी प्रकार के परीक्षण का उपयोग सर्वाधिक किया जाता है।

सामान्य रूप से परीक्षण का अर्थ किसी वस्तु, घटना आदि को किसी नियम के अनुसार कुछ आंकिक तत्वों के रुप में अभिव्यक्त करना है परन्तु मनोवैज्ञानिक व शैक्षिक मापन में सामान्यत: आंकिक तत्व अस्पष्ट ही होता है चूंकि इसके अन्तर्गत 'शून्य' बिन्दु नहीं पाया जाता है। अत: मापन का सम्बन्ध व्यकित या वस्तु के गुणो तथा विशेषताओं से होता है न कि स्वयं किसी व्यक्ति या वस्तु का ही मापन होता है।

18.2.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्गीकरण (Classification of psychological Tests)

(i) पदों के आधार पर

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षणों में प्रयुक्त होने वाले पदों को कई प्रकार से बाँटा जा सकता है-

(1) उत्तरों के स्वभाव के आधार पर: (1) निबन्धात्मक (11) वस्तुनिष्ठ पद।

(i) निबन्धात्मक पद:

इसमें व्यक्ति की अपने ज्ञान एवं स्मृति के आधार पर पदों का उत्तर देना होता है । इस प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग व्यक्ति की संगठनात्मक क्षमता, मौलिकता तथा आलोचनात्मक चिन्तन की जांच के लिए होता है, दूसरे प्राप्तांक लेखन/गणना "आत्मनिष्ट" होती है तथा समय भी अधिक लगता है ।

(ii) वस्तुनिष्ठ पद:

जिनका एक निश्चित उत्तर होता है जिसे या तो प्रशिक्षार्थी कई उत्तरों में से चुनकर देता है या पद को पढ़कर/सुनकर अपनी ओर से एक शब्द में उत्तर दे देता है । इस प्रकार के पदों में रिक्त स्थान पूर्ति भी सम्मिलित होते हैं।

(2) विकल्पों के आधार पर, (i) द्वि विकल्पी तथा (ii) बहु विकल्पी

(i) द्वि विकल्पी पद - द्वि विकल्पी पदों में परीक्षार्थी पद का उत्तर दो विकल्पों में से चुनकर देता है जैसे -हां/नहीं, सत्य/असत्य, सहमत/असहमत ।

(ii) बहु विकल्पी पद - इस प्रकार के पदों में एक पद के कई उत्तर दिये होते हैं जिनमें एक ही सही बाकी गलत उत्तर के होते हैं जैसे - मनोविश्लेषण संप्रदाय के जनक थे? (अ) बुण्ट ख) फाइड (स) एविगहॉस (द) वरदाइमर। इस प्रकार के बहु विकल्पी पदों द्वारा परीक्षार्थी के ज्ञान, शब्दावली, कारण, परिणाम, सम्बंध तथा विश्लेषण, संश्लेषण आदि क्षमताओं की जाँच की जाती है। इसमें वस्तुनिष्ठ रूप से अंकन किया जाती है।

(iii) मिलान पद : इस प्रकार के पदों में दो कॉलम होते हैं, बाँया कॉलम तथा दाँया कॉलम, बांए कॉलम का पद बांए कॉलम से भिन्न होता है।

फायड	-	गेस्टाल्ट
वाटसन	-	संरचनावाद
बरदाइमर	-	व्यवहारवाद
टिचनर	-	मनोविश्लेषणवाद

मिलान पदों द्वारा साहचर्यात्मक सीखना सम्बन्धित क्षमताओं का मापन किया जाता है।

(iv) मानकीकरण के आधार पर - (1) मानकीकृत परीक्षण- जिसमें दिये हुए मापदण्ड के अनुसार अंकन तथा मूल्याकन किया जाता है । (2) अध्यापक निर्मित परीक्षण।

(v) फलांकन के आधार पर - (1) आत्मनिष्ठ परीक्षण (2) वस्तुनिष्ठ परीक्षण।

(vi) रूप के आधार पर - (1) गति परीक्षण- इसमें गति के साथ परिशुद्धता (accuracy) पर भी अंकन होता है । (2) शक्ति परीक्षण।

(vii) माध्यम के आधार पर - (1) भाषाबद्ध या पेपर पेन्सिल परीक्षण (2) अभाषाबद्ध या निष्पादन परीक्षण (Performacne Test) (3) मिश्रित परीक्षण (mixed)

(viii) शील गुणों (traits) के आधार पर -

(1) योग्यता एवं कौशल सम्बन्धी परीक्षण -
- (अ) बुद्धि परीक्षण
- (ब) सृजनात्मक
- (स) अभिक्षमता परीक्षण (Aptitude)

(2) उपलब्धि मापन सम्बन्धी -
- (अ) निबन्धात्मक
- (ब) वस्तुनिष्ठ
- (ग) निदानात्मक (Diagnostic)

(3) व्यक्तिव सम्बन्धी विशेषताओं के परीक्षण -
- (अ) व्यक्तित्व सूचियाँ
- (ब) प्रक्षेपी विधियाँ -इसमे किसी अस्पष्ट उद्दीपकों पर प्रतिक्रिया प्राप्त की जाती है।
- (स) रूचि एवं मूल परीक्षण
- (द) समायोजन सूचियॉ
- (य) अभिवृत्ति मापनी (Attitude Test)
- (र) अप्रत्यय परीक्षण (Self concept Test)
- (ल) नेराश्य, चिन्ता, स्नायुदौर्बल्य परीक्षण
- (व) अन्य व्यावहारिक विधियाँ - साक्षात्कार प्रश्नावली अनुसूची निरीक्षण विधि निर्धारण मापनियों, व्यक्ति इतिहास विधि आत्मकथा आदि।

18.2.3 अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की विशेषताएँ (Characteristics of Good Psychological Tests)

1. उत्तम परीक्षण संप्रयोजन होना चाहिए।

2. वह परीक्षण मानकीकृत होना चाहिए।
3. परीक्षण वस्तुनिष्ठ होना चाहिए।
4. प्रशासन, फलांकन एवं विवेचना की दृष्टि से सुगम होना चाहिए।
5. समय, धन एवं व्यक्ति के संदर्भ में मितव्ययी होना चाहिए।
8. परीक्षण व्यापक होना चाहिए।
7. भेद बोधक होना चाहिए।
8. समस्त परिस्थितियों में ग्राह्य होना चाहिए।
9. मानक निर्धारित होने चाहिए।
10. परीक्षण विश्वसनीय एवं वैध होना चाहिए अर्थात बार-बार वही परिणाम देने वाला तथा लक्ष्य पूर्ति करने वाला।

18.2.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षण का प्रशासन (Administration of Psychological Tests)

(अ) परीक्षण की तैयारी:-

सुनिश्चित कर लें कि (i) परीक्षण स्थान कोलाहल रहित हो तथा उसमें पर्याप्त आराम से बैठने का स्थान तथा प्रकाश हो (ii) यदि कोई सामूहिक परीक्षण करना है तो पहले से यह देख लें कि (अ) परीक्षण पुस्तिकाएँ एवं उनसे सम्बन्धित उत्तर पत्र पर्याप्त संख्या में हैं (ब) कुछ अतिरिक्त पेंसिलों की भी व्यवस्था कर लें (स) परीक्षण आरम्भ करने के तुरन्त पहले परीक्षण सामग्री तथा उपयुक्त बैठक की एक बार समीक्षा कर लें।

(ब) प्रशासन प्रक्रिया :-

1 प्रशिक्षार्थियों को आश्वस्त करने के लिए उनसे 2-3 साधारण बात करके बतायें कि परीक्षा क्या है, उसे कैसे देना है, इसके लिए कितना समय मिलेगा, क्या करना होगा (यदि परीक्षा सामूहिक है) इत्यादि से भलीभाँति परिचित करायें। यदि कोई उदाहरण देना है, समझाना है तो वह भी करें।

2 यदि नियम पुस्तिका (Manual) में कोई निर्देश हैं तो उसे उसी प्रकार अक्षरशः दोहरायें ।

3 सामूहिक परीक्षाओं में -

   (i) पहले उत्तर पत्र देकर सभी प्रविष्टियाँ सही-सही भरवा लें तथा सुनिश्चित कर लें कि सभी ने आवश्यक सूचनाएँ भर ली।

   (ii) प्रश्न पत्रों को बाँट दें परन्तु उनका उल्टा करके रखने को कहें जब तक अगला आदेश न हो।

   (iii) प्रश्न पत्र में कोई अभ्यास कराना है तो करायें, नही तो आरम्भ करने को कहें।

4 व्यक्तिगत परीक्षणों में (i) परीक्षण की सारी अवधि में परीक्षार्थी की सभी असाधारण या विशेष गतिविधियों को नोट करते चलें (ii) विषयी को खुलकर बोलने दें, अपनी राय न दें।

18.2.5 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विश्लेषण एवं फलांकन
(Analysis and Scoring of Psychological Tests)

गणना के लिए यदि कोई प्रपत्र है, तो उसका विवरण होना चाहिए तथा फल का आंकलन मैनुअल के आधार पर करना चाहिए। परिणाम का निर्दशन / विश्लेषण भी उसमें दिये निर्देशानुसार किया जाना चाहिए।

परीक्षण के बारे में परीक्षणकर्ता का निर्णय अंतिम निर्णय होता है इसलिए उसे सावधानी से सम्बन्धित डाटा को विश्लेषण कर प्रस्तुत करना चाहिए। अवलोकन रिपोर्ट व प्रयोज्य के अन्त:दर्शन रिपोर्ट का जहां आवश्यक हो, हवाला देना चाहिए। प्रयोज्य की शैक्षिक पृष्ठभूमि का भी उपयोग सम्भव हो, किया जाना चाहिए और उसका उल्लेख होना चाहिए। किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अत्यन्त सावधानी बर्तनी चाहिए। निष्कर्ष के संदर्भ में परीक्षक को सावधान रहना चाहिए कि वे अति नकारात्मक भविष्यवाणियाँ न करें क्योंकि मनुष्य की मानसिक क्षमताएँ असीमित और निश्चित होती है। केवल कम सफलता व अधिक सफलता की सम्भावना प्रकट करनी चाहिए और उन्हीं का उल्लेख करना चाहिए।

18.2.5 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग (Uses of Psychlogical Test)

मनोविज्ञान के क्षेत्र में परीक्षणों का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य के वास्तविक व्यवहार का अध्ययन करना है। शैक्षिक मनोविज्ञान का प्रमुख संदर्भ शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान के नियमों, सिद्धान्तों तथा नये तथ्यों का प्रयोग करना है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रमुख उपयोग निम्नांकित हैं -

(i) वर्गीकरण व चयन :-

शिक्षा संस्थाओं में शारीरिक व मानसिक भिन्नताओं के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण तथा चयन करना परीक्षण का प्रमुख उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान के क्षेत्र में इन परीक्षणों की सहायता से विभिन्न विशेषताओं के आधार पर व्यक्तियों का प्रतिदर्श इकाइयों का वर्गीकरण तथा चयन करना भी प्रमुख रूप से उदृष्ट है।

(ii) पूर्व कथन :-

विभिन्न संस्थाओं में कार्यरत कर्मचारियों, छात्रों के संदर्भ में पूर्व-कथन की आवश्यकता के समय मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का ही प्रयोग करना पड़ता है। इन परीक्षणों की सहायता से बुद्धि, रूचि, समायोजन, चिन्ता तथा अनेक व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताओं के सम्बन्ध में पूर्व-कथन सरलता से किया जा सकता है।

(iii) तुलना :-

शारीरिक रचना व व्यवहार की दृष्टि से जीवों में व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। इन जीवों का शक्तियों की भिन्न प्रकार की अथवा एक विशेष भिन्नता के आधार पर तुलना करनी होती है तो भी यह मनोवैज्ञानिक परीक्षण का ही कार्य होता है।

(iv) निदान :-

मानसिक चिकित्सा और शिक्षा के क्षेत्र में समस्याओं तथा कमजोरियों का पता लगाना तथा उनका निदान मनोवेज्ञानिक विधियों द्वारा किया जाता है।

(v) शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन :-

व्यावसायिक अथवा शैक्षिक मार्गदर्शन के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षण बहुत आवश्यक होते हैं चूंकि इसके द्वारा विषयों का चयन, प्रतियोगी परीक्षाओं का चयन तथा अपनी योग्यतानुसार पद का चयन करना सम्भव होता है।

18.2.6 परीक्षण की अंतिम रिपोर्ट में ये सूचनाएँ अवश्य शामिल होनी चाहिए -

1. परीक्षण का नाम -
2. परीक्षण का उद्देश्य -
3. परीक्षण सामग्री -
4. प्रयोज्य का परिचय -

नाम	-	शिक्षा	-
कक्षा	-	वर्ग	-
जन्म तिथि	-	आयु	-

5. परीक्षण परिचय
6. परीक्षण विधि
   6.1 परीक्षण प्रशासन
   6.2 मुख्य निर्देश
   8.3 सावधानियाँ
7. प्रयोगकर्ता द्वारा प्रयोज्य का अवलोकन
8. प्रयोज्य का अन्तर्दर्शन
9. फलांकन एवं विश्लेषण
10. विवेचना
11. निष्कर्ष

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

2.1 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।

2.2 शील गुण के आधार पर मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्गीकरण कैसा होगा?

2.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रशासन में उसकी तैयारी तथा प्रशासन प्रक्रिया के मुख्य सावधानियों क्या होगी?

2.4 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को किन कार्यों में प्रयोग हो सकता है?

18.3 समाजमिति तकनीकी (Sociometric Technique)

18.3.1 समाजमिति की अवधारणा (Concept of Sociometry)

समाजमिति प्रविधि द्वारा समूह गत सदस्यों की अन्त:व्यक्तिक सम्बन्धों का अध्ययन, सामूहिक मनोबल का मापन समूहगत स्वीकृत-अस्वीकृत, आकर्षक-विकर्षक आदि का मापन किया जाता है। समाजमिति प्रेक्षण की एक विधि है जिसे मूलत: मोरेनो (Marono 1953) ने समान समूहों के मध्य, पारस्परिक क्रियाओं के प्रतिरूपों को अध्ययन करने के लिए विकास किया। प्रेक्षण की इस विधि में निम्नलिखित कार्यो में सहायता ली जाती है।

1 किस अंश तक व्यक्ति अपने समूह में स्वीकार किया जाता है ।

2 समूह के सदस्यों में परस्पर सम्बन्धों की क्या स्थिति है?

3 समूह की संरचना किस प्रकार की हे?

4 समूह में कितने उप समूह है तथा कितनी प्रकार की स्थिति वाले व्यक्ति हैं जैसे लोकप्रिय, पृथक तथा उपेक्षित इत्यादि।

समाजमिति विधि द्वारा किसी व्यक्तियों को किसी विशिष्ट क्रिया या अवसर के लिए, जो इसके लिए अर्थ रखता है, एक या एक से अधिक व्यक्तियों, समूहों, प्रतिरूपों (patterns) को चुनने को कहा जाता है। इसमें से उस व्यक्ति का नाम भी बताने को कहा जाता है जिसे वह किसी किया या अवसर के लिए केवल सबसे आखिर में चुनेगा । इसके लिए कुछ निम्न प्रकार के प्रश्न हो सकते है :-

1 कक्षा में तुम किस कक्षा साथी के साथ बैठना पसंद करोगे?

2 किसके साथ काम करना पसंद करोगे?

3 किसके साथ खेलना पसंद करोगे?

इस प्रकार समाजमिति में मापन की कोई भी विधि प्रयोग में लाई जा सकती है। केवल शर्त यह है कि यह सामाजिक चयन पारस्परिक क्रियाओं, संचारों और प्रभावों को प्रतिबिम्बित करती है।समाजमिति प्रविधि में शिक्षा की समाजीकरण प्रक्रिया की मुख्य भूमिका होती है। दोनों एक दूसरे के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कभी साधन और कभी साध्य के रूप में कार्य करते हैं इसलिए विद्यालय को समाज का लघु रूप कहा जाता है। एक कक्षा में छात्र/छात्राऐ अभिमान्यताओं को छोड़कर स्वतंत्र रूप से अन्तर्क्रिया करते हैं और इस तरह पूर्ण अधिगम की एक सतत् प्रक्रिया चलती रहती है। छात्र/छात्रों के विकास के लिए यह अति आवश्यक है। इन पारस्परिक सम्बन्धों को मापने के लिए एक समाजमिति प्रविधि का प्रयोग किया जाता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मारेने ने इस विधि का प्रयोग 'सामूहिक मनोबल' मापने में किया था। जेनिडजू (1946) ने कुछ सुधार के साथ इस विधि का उपयोग नाविकों का मनोबल नापने में किया, उन्होंने उसका नाम नामीकरण-शिल्प रखा। इस विधि का प्रयोग बाद में उन्होंने आपसी सम्बन्धों और सामूहिक मूल्यों के अध्ययन के लिए किया।

समाजमिति प्रविधि समाज मनोविज्ञान के क्षेत्र में प्रयोग होने वाली एक प्रमुख वैज्ञानिक विधि है। यह एक प्रकार की “नामजदगी प्रविधि” है। “नामजदगी प्रविधि” से तात्पर्य एक ऐसी प्रविधि से होता है जिसमें समूह का प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति जो किसी खास या श्रेणी में सही-सही बैठते हैं, को मनोनीत करता है। इस प्रविधि का प्रतिपादन मोरेनो (1954) द्वारा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हू शैल सर भाईथ' में किया गया था। इस प्रविधि में समूह का प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के प्रति स्वीकरण तथा अस्वीकरण के सहारे समूह की संरचना, सामाजिक पद तथा सदस्यों का पारस्परिक सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में समाजमितिय प्रविधि स्वीकरण तथा अस्वीकरण के माध्यम से समूह के अन्तर व्यक्तितत्व या पारस्परिक सम्बन्धों कां अध्ययन करने का एक माध्यम है।" स्टैनले एवं हापकिन्स के शब्दों में -

“समाजमिति समूह में सदस्यों के उत्तर सम्बन्धों अर्थात सामाजिक संरचना प्रत्येक व्यक्ति द्वारा समूह का प्रत्यक्षण किस तरह से किया जाता है, का अध्ययन है।"

अत: इस तकनीकी द्वारा समूहगत स्वीकृत - अस्वीकृत, आकर्षण - विकर्षण को मापकर समूह संगठन तथा अन्तक्रिया का अध्ययन किया जाता है। समूह में व्यक्ति की स्थिति अध्ययन

के लिए भी यह एक उपयोगी तकनीक है। यों तो मोरेनो व मर्फी ने इस प्रविधि का प्रयोग समाजमिति परीक्षण के नाम से किया था पर वास्तव में यह प्रविधि हार्टशोर्न द्वारा वर्णित "अनुमान करो कौन' परीक्षण पर आधारित है। एक समूह में सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति हेतु किये गये प्रयास परस्पर अन्तर्किया द्वारा आपसी पसंद और नापसंद का प्रभाव आना स्वाभाविक है और यही लोकप्रिय, अलोकप्रिय और तिरष्कृत होने का आकार भी बनता है ।

अत: इस विधि द्वारा किसी समूह के सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों, घनिषठता, लोकप्रियता, अलोकप्रियता का पता लगाया जाना सम्भव है। इन सम्बन्धों को दर्शाने के लिए 'समाजमिति चक्र' का उपयोग किया जाता है। शिक्षा की दृष्टि से इस विधि का उपयोग कक्षा की गतिशीलता जानने के लिए भी उपयोगी है।

18.3.2 समाजमिति मापनी के विभिन्न पद (Different Steps in Sociometry)

समाजमिति मापनी के लिए उपकरण का निर्माण करना कठिन नहीं है परन्तु इस प्रक्रिया की महत्वपूर्ण आशयों पर सावधानी से विचार कर लेना चाहिए।

1 चयन स्थिति के चयन का मापदण्ड निर्धारित करना।

2 चयन संख्या का निर्धारण अवश्य ही कर लेना चाहिए।

3 समाजमितिक प्रश्नों की शब्दावली।

4 वैध अनुक्रियाएँ प्राप्त करने के लिए उपकरण के आकार और कार्य निर्देशनो का विकास।

18.3.3 समाजमितिकी विश्लेषणात्मक प्रविधियाँ (Method of Analysis Sociometry)

1 समाजमितिय मैट्रिक्स (Sociometric Matrix)

2 समाज आलेख (Sociogram)

3 समाजमितिय सूचनांक (Sociometric Index)

18.3.3.1 समाजमितिय मैट्रिक्स (Sociometric Matrix)

मैट्रिक्स संख्याओं या अन्य वस्तुओं को एक आयताकार प्रदर्शन को कहा जाता है जो वर्गाकार n x n होता है । यहाँ n से तात्पर्य समूह के सदस्यों की संख्या से होती है जिससे मैट्रिक्स की रो एवं कॉलम बराबर होते है।

18.3.3.2 समाज आलेख (Sociogram):

समाज आलेख दूसरी विधि है जिसके द्वारा समाजमितिय आंकड़ों का विश्लेषण किया जाता है। इस विधि में समूह के सदस्यों द्वारा एक दूसरे के प्रति किए गये पसंदों को एक आलेख पर या सादे कागज पर चित्र बनाकर दिखलाते हैं। चित्र पर एक तरफा पसंद को एक ऐसी रेखा से दिखलाते हैं जिसके एक छोर पर तीर बना होता है। जैसे - यदि छात्र ए छात्र बी को पसंद करता है परन्तु छात्र बी छात्र ए को नहीं करता है तो इस आलेख पर ए –> बी से दिखलाया जाएगा। पारस्परिक युग्म को एक ऐसी सीधी रेखा से दिखलाते हैं जिसके दोनों छोरों पर तीर बना होता है, जैसे यदि छात्र सी छात्र एफ को पसंद करता है और एफ भी सी को पसंद करता है तो इसे समाज आलेख पर सी <–> एफ से दिखलाया जाता है।

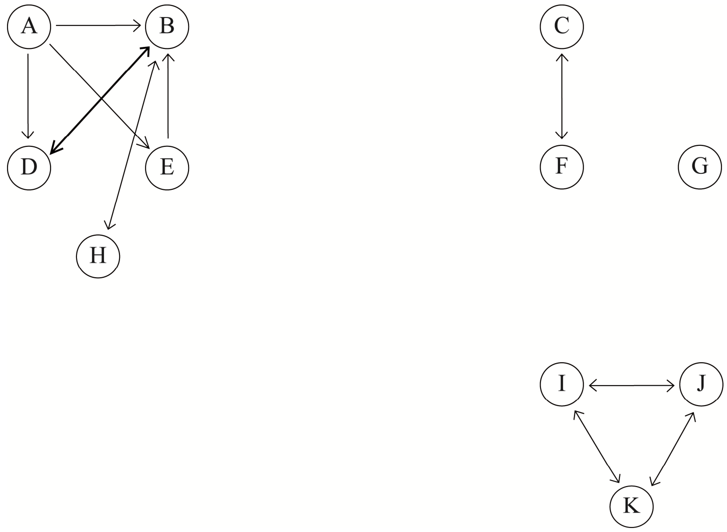

चित्र: 18.1 समाजभित्तिक आलेख उदाहरण

उपरोक्त डायग्राम में 'बी पर सबसे अधिक तीर पड़ा है, अत: बी को अधिक लोगों ने पसंद किया है। अत: यह समूह का सबसे लोकप्रिय छात्र है। ए समूह का एक अस्वीकृत सदस्य है क्योंकि इस पर एक भी तीर नहीं है जबकि इसने बी डी एवं इ को पसंद किया है। छात्र सी तथा एफ एक पारंपरिक युग्म के उदाहरण हैं तथा छात्र 'आई' जे एव के का एक गुट, तथा छात्र 'जी एक अकेला छात्र है।

स्पष्ट हुआ है कि समाज आलेख के माध्यम से भी हम उसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं जिस निष्कर्ष पर समाजमितिय मैट्रिक्स के आधार पर पहुंचे थे।

समाज आलेख को समाजमितिय मैट्रिक्स की तुलना में अधिक लाभप्रद माना जाता है क्योंकि इसे मात्र देखते ही समूह के सदस्यों के अन्तव्यक्तिक सम्बन्धों का पता चल जाता है परन्तु समाज आलेख का दोष यह बतलाया गया है कि इसकी उपयोगिता ऐसे ही समूह तक सीमित है जिसमें सदस्यों की संख्या कम जैसे 20 से नीचे होती है। समूह में सदस्यों की संख्या अधिक होने से समाज आलेख को पढकर उससे कोई अर्थ निकालना एक टेढी खीर के समान है।

18.3.3.3 समाजमितिय सूचकांक (**Sociometric Index**) :

समाजमिति के कुछ सूचकांक ज्ञात करके समूह के सदस्यों के अन्तव्यक्तिक सम्बन्धों का अन्दाज मिलता है। इस तरह के सूचकांक ज्ञात करने के लिए अलग अलग सूत्र है जिनकी चर्चा यहां अपेक्षित नहीं है । सामान्यत: इन सूचकांकों के द्वारा व्यक्ति के पसंद, स्तर एवं समूह समग्रता को अनुपात में व्यक्त किया जाता है और यह अनुपात जितना ही अधिक होता है, व्यक्ति का पसंद, स्तर या समूह समग्रता उतनी ही अधिक होती समझी जाती है।

समाजमितिय विधि का प्रयोग करके समाज मनोवेज्ञानिक समूह की सरचना, नेत्रत्व तथा समूह में व्यक्तियों के दोस्ताना सम्बन्धों का अध्ययन करते हैं।

18.3.3.4 समाजमिति के उपयोग (**Uses of Sociometry**)

यद्यपि समाजमिति विधि का उपयोग समरूप समूहों के संगठन में लोकप्रिय या अप्रिय सदस्यों के पहचान में किया जाता है परन्तु कई शोधों में भी प्रयोग में इसके नवीन प्रयोग भी किये गये हैं। जैसे -

18.3.3.1 पूर्वाग्रहों के अध्ययन में -

समाजमिति विधि द्वारा यह आसानी से पता लगाया जा सकता है कि क्या समूह की संरचना प्रजातांत्रिक मूल्यों पर है? यदि धर्म, जाति या क्षेत्र के आधार पर समूह में कोई गुट नहीं है तो हम कह सकते हैं कि समूह प्रजातांत्रिक है। डा. स्मिथ ने 1969 में एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जिसमें कक्षा की एक समूह के सभी विद्यार्थियों से अपने समूह से अपने पांच अच्छे मित्रों को बताने के लिए कहा गया, फिर इन छात्रों की अनुक्रियाओं की उन सदस्यों की अनुक्रियाओं से तुलना की गई जिनको उन्होंने मित्र के रूप में चुना था। इसका प्रमुख उद्देश्य यह देखना था किं क्या चुनाव के तरीकों में कोई जातीय या धार्मिक पक्षपात था? प्राय: अध्ययन में देखा गया कि छात्रों में अपने समान धार्मिक व जातीय छात्रों में से निम्न चुनने प्रवृति थी।

18.3.3.2 प्रयोगात्मक शोध में प्रयोग -

समाजमिति विधि का प्रयोग प्रयोगात्मक शोधों में प्रमुख रूप से किया जाता है। फलैण्डर तथा हेवयुमैकी ने चुनाव स्तर पर प्रशंसा के प्रभाव का अध्ययन करना था। इसमें वे समूह एक प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरे नियंत्रित समूह - प्रथम प्रयोगात्मक समूह की परस्पर विचार विमर्श करने की अनुमति दी गई, परन्तु नियमित समूह को परस्पर विचार विमर्श की अनुमति नहीं दी गई। प्रयोग के बाद समूह के सदस्यों को अपने समूह से उन पांच व्यक्तियों को चुनने को कहा गया जिन्हें वे प्रश्नोतरी में भाग लेने में सबसे अच्छा समझते थे। इस प्रकार चुनावों से प्रशंसा के चुनाव स्तर पर प्रभाव का पता लगाना था।

18.3.3.3 पशु समाजमिति -

प्रेट और सैकेट (1967) ने एक अध्ययन द्वारा पशुओं की सामाजिक वरियताओं पर उनके लालन-पालन की स्थिति के प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने बंदरों के तीन समूह बनाये। एक समूह के बच्चों को अलग-अलग कर हरो (Cages) में रखा। दूसरे समूह के बच्चों को नर्सरी कमरे तथा तृतीय समूह के बच्चों के साथ जानवर कटहरों में रखा परिणामस्वरूप देखा गया कि प्रत्येक समूह के बच्चों ने अपने-अपने ही समूह के साथ व्यवहार किया।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

3.1 समाजमिति अवधारणा को स्पष्ट करें।

3.2 समाजीमीतक आंकड़ों को कितने प्रकार से विश्लेषण किया जाता है?

3.3 समाजमितिक विश्लेषण के क्या उपयोग हैं?

18.4 समूहगतिकी (Group Dynamics)

18.4.1 प्रस्तावना -

प्राय: देखा जाता है कि कक्षा में अध्ययन के समय वांछित वातावरण बनाये रखना सम्भव नहीं हो पाता। छात्र ऐसा व्यवहार नहीं करते जैसा कि उनसे अध्यापक अपेक्षा रखते हैं। कभी छात्र वह कुछ नहीं समझते जो कुछ व जैसा कुछ उन्हें पढाना चाहते हैं। इतना ही नहीं अनेक बार वे अनुशासनात्मक समस्याएँ भी खड़ी कर सकते हैं। सभी प्रकार की कक्षागत विशेषताओं को समझने हेतु मनोविज्ञान एवं शिक्षण विधियों को समझने पर बल दिया जाता है। छात्र को केवल एक इकाई के रूप में स्वीकारा जाता रहा है परन्तु 1940 में टोम्प्र हेपकिस ने अपनी पुस्तक 'इंटरएक्शन दू डेमोकेटिक प्रोसेस' एवं वैक्सर व कैसडी ने "ग्रुप एक्सपीरियन्स द डेमोक्रेटिक वे" में अमुख अवांछनीय समस्याओं के समाधान हेतु कक्षा व कक्षा वातावरण तथा छात्र अध्यापक के बीच होने वाली अन्त:क्रियाओं को समझने पर बल दिया। परिणामस्वरूप पाया गया कि कक्षागत स्थितियों की अधिक स्पष्टता से समझने और उन्हें अधिक प्रभावी बनाने हेतु विद्यार्थी के व्यक्तिक व्यवहार के स्थान पर समूहगत व्यवहार पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार कक्षागत व्यवहार में छात्रों की समूह गत्यात्मकता के अध्ययन से अनेक क्रियाशील जटिल घटकों को समझना व अनेकानेक समूहजनित समस्याओं को समझना एवं उनका समाधान कर पाना सम्भव है।

अध्यापक की हर क्रिया से कोई न कोई प्रक्रिया शुरू होती है यही उसकी गत्यात्मकता का परिचालक है। यही प्रभाव विद्यार्थियों के बौद्धिक, साम्बैधिक एवं सामाजिक विकास पर पड़ता है और अध्यापक एवं छात्रों की अन्त:क्रिया, विषय सम्प्रेषण और अधिगम स्तर को भी प्रभावित करता है। अत: यहां समूह गत्यात्मकता से हमारा तात्पर्य कक्षागत वातावरण में होने वाली समस्त अन्त:क्रियाओं के अध्ययन से है, जिनमें अध्यापक, छात्र समूह एवं छात्र उप समूह सभी शामिल हैं।

अत: समूह गत्यात्मकता की ओर मनोवैज्ञानिकों का ध्यान उस समय अधिक आकर्षण का केन्द्र बन गया जब कक्षागत व्यवहार तथा छात्र अध्यापक के बीच अन्तर क्रियात्मक सम्बन्धों का प्रभाव अधिगम को प्रभावित करने लगा। कक्षागत व्यवहार को अधिक स्पष्टता से समझने एवं प्रभावी करने हेतु विद्यार्थियों की व्यक्तिक-व्यवहारों के स्थान पर समूह- व्यवहार का अधिक महत्व दिया जाने लगा। समूहगतिकी के अन्तर्गत कक्षा का अध्ययन एक समूह के रूप में किया जाता है जिसमें उसके विभिन्न तलों, अंतर निर्भरता एवं अन्त:क्रियाओं का समायोजन होता है। समूह के सदस्यों के बीच बोल-चाल, जान-पहचान, लव्य की एकरूपता, स्पष्ट पहचान, अन्त:सम्बन्ध एवं 'हम' की भावना परिलक्षित होती है।

कक्षागत समूह में उद्देश्यों की समानता, सुसंगणिता, लगभग एक जैसा स्तर और एक ही नेतृत्व विशिष्टत: दिख पड़ता है। कक्षागत समूह की गत्यात्मकता की प्रभावोत्पादकता का अनुमान उसके उद्देश्यों की स्पष्टता, वातावरण की प्रकृति, विद्यार्थियों के किया-कलाप एवं व्यवहार निसबद्दता की स्थिति एवं अध्यापक के नेतृत्व व उसके फलस्वरूप निर्मित वातावरण में लगाया जा सकता है। अत: अध्यापक एवं छात्र शिक्षण प्रक्रिया में तथा एक दूसरे से अन्त:क्रिया करने व एक दूसरे के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

अत: समूहगतिकी समाज मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण अंग है। यद्यपि विभिन्न समाज मनोवैज्ञानिकों ने समूहगतिकी का अभिप्राय थोड़ा अपने ढंग से लगाया है परन्तु इस बात की

सहमति है कि समूहगतिकी से तात्पर्य समूह में विशेषकर छोटे समूह में घटित उन बलों तथा प्रभावों से होता है जिनका प्रभाव सदस्यों पर इतना अधिक पड़ता है कि इससे उनके व्यवहार में परिवर्तन हो जाता है।

समूहगतिकी के क्षेत्र में अनेक समाज मनोवैज्ञानिको ने जिनमें लेविन (1058) लिपिट व वाईट (1950) प्रमुख हैं जिसमें यह स्पष्ट किया गया है कि सामुहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा सदस्यों के व्यवहार में महत्वपूर्ण परिवर्तन आते हैं. दूसरी तरफ समूह में द्वारा सृजित सामाजिक आबोहवा से सदस्यों का व्यवहार एवं समूह का निष्पादन काफी प्रभावित होता है।

18.4.1 समूहगतिकी की अवधारणा (Concept of group Dynamics)

" समूहगतिकी " एक समप्रत्यय है इस का प्रतिपादन सर्वप्रथम समाज मनोवैज्ञानिक कर्ट लेविन (1945) ने किया। समूहगतिकी से तात्पर्य समूह के विशेषकर समूह के उन बलों एवं प्रभावों से होता है जिनमें सदस्यों का व्यवहार एक निश्चित दिशा में परिवर्तित होता है। अर्थात समूह के भीतर के उन बलों एवं दबावों से होता है, जो सदस्यों के व्यवहारों को इस सीमा तक प्रभावित करते हैं कि उनमें महत्वपूर्ण परिवर्तन आ जाते हैं। समूह के भीतर भिन्न-भिन्न तरह घटित प्रक्रियाओं जैसे - शक्ति, शक्ति परिवर्तन, समूह निर्माण नेतृत्व अन्य समूहों के प्रति क्रियाएँ, निर्णय कार्य आदि के अध्ययनों पर अधिक बल डाला है। चूंकि इन सभी समूह प्रक्रियाओं का प्रभाव छोटे समूहों में स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है इसलिए कुछ समाज मनोवैज्ञानिकों ने समूहगतिकी का प्रयोग छोटे समूह तक ही सीमित रखा है। प्रसिद्ध समाज मनोवैज्ञानिक फिशर ने स्पष्ट किया है 'समूहगतिकी का अध्ययन एक ऐसा क्षेत्र है जो आंतरिक उन बलों व दबाबों पर प्रकाश डालता है जिनसे छोटे समूह में व्यक्तियों का व्यावहार प्रभावित होता है।"

कर्ट लेविन, फिशर तथा फेलमैन ने स्पष्ट किया कि - समूह और उसका वातावरण एक साथ मिलकर व्यक्ति के लिए एक निश्चित 'सामाजिक क्षेत्र' का निर्माण करता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का अपना विशिष्ट स्थान होता है जिसके फलस्वरूप अपने इस विशिष्ट पद या स्थान के अनुसार व्यवहार करता है। प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार अन्य व्यक्ति द्वारा किये गये व्यवहारों द्वारा प्रभावित होता है। इसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने गत्यात्मक अंतर-निर्भरता नाम दिया। दूसरी तरफ समूह में संशक्तिशाली तथा विघटकारी दोनों तरह के बल कार्य करते हैं। जब सदस्यों/ व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध सहयोगी तथा आकर्षक होता है तो समूह में संशक्तिशाली बल कार्य करता है ऐसी स्थिति में सदस्यों की अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है। जब व्यक्तियों, सदस्यों का व्यक्तिक लक्ष्य तथा समूह के लक्ष्य में संघर्ष होता है या सदस्यों के बीच उचित संचार में बाधा होने से उनके बीच दीवार खडी हो जाती है तो समूह में विघटनकारी बल अधिक सक्रिय माने जाते हैं ऐसी स्थिति में समूह का अस्तित्व खतरे में आ जाता है।

18.4.2 समूहगतिकी के सम्प्रत्यय की विशेषताएँ (Characteristics of Group Dynamics)

समूहगतिकी के सम्प्रत्यय की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार है -

1 समूहगतिकि में समूह में व्याप्त उन बलों का अध्ययन किया जाता है जिनसे सदस्यों का व्यवहार प्रभावित होता है।

2 समूह से संशक्तिशील बल तथा पूर्व विघटनकारी बल में से कोई भी बल कार्य करता है तो सदस्यों के व्यवहार में परिवर्तन होना अपेक्षित है।

3 छोटे-छोटे समूहों में इन बलों का प्रभाव स्पष्ट रूप से अपेक्षित है। फलत: छोटे समूहों में परिवर्तन की सम्भावना अधिक रहती है।

समूहगतिकि के संप्रत्यय के महत्व से प्रभावित होकर अनेक समाज मनोवैज्ञानिकों ने कई तरह के प्रयोग तथा शोध किये, जिनमें कर्ट लेविन प्रमुख है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सामूहिक निर्णय कार्य की प्रक्रिया द्वारा सदस्यों के व्यवहारों में परिवर्तन कराया गया। प्राय: समूह के सदस्यों के व्यवहारों में सामूहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा परिवर्तन लाने में मूलत: कुछ प्रमुख चरण निम्न है -

18.4.3 समूहगतिकि के चरण (**Steps of Group Dynamics**)

1. समूह में सदस्यों की आवश्यकताओं एवं प्रेरणाओं के अनुकूल समस्या का होना एक निश्चित कार्यक्रम भी होता है।
2. उस निश्चित कार्यक्रम के समूह के सदस्य परस्पर विचार-विमर्श कर विचारों व भावनाओं की अभिव्यक्ति करते हैं।
3. समूह के सदस्यों द्वारा विरोध के प्रमुख तथ्यों पर विचार-विमर्श किया जाता है।
4. समूह के प्रत्येक सदस्य के समस्या से अवगत कराना नेता का कार्य होता है।
5. समूह के सदस्यों के बीच विचार-विमर्श का प्रोत्साहन देना तथा विरोध बिन्दुओं को अधिक से अधिक संतोषजनक उत्तर मिल सके।
6. विचार-विमर्श के बाद समूह का नेता इस बात के लिए सभी सदस्यों को राजी करता है कि वांछित क्रियाओं को हम सब मिलकर सफलतापूर्वक सम्पन्न करेंगे।
7. अंत में समूह का नेता यह जानने का प्रयास करता है कि कितने और लोग नई क्रियाओं के कार्य रूप देने के लिए सहमत हो जाते हैं ।

इस प्रकार उपरोक्त कथनों द्वारा समूहगतिकी के क्षेत्र में विभिन्न समाज मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोग किये जिनमें प्रमुख कर्ट लेविन लिपिट तथा डाइट किपनिस प्रमुख हैं । उन्होंने बताया कि सामूहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा सदस्यों के व्यवहारों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आता है, अत: सामुहिक निर्णय समूहगतिकी का एक महत्वपूर्ण अंग है।

इसे निम्न उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया गया है कि -

समूहगतिकि के क्षेत्र में प्रमुख अध्ययन लिपिट तथा व्हाइट ने किया - उन्होंने यह जानने का प्रयास किया कि समूह मे नेता का प्रभाव समूह के सदस्यों के व्यवहार पर, सामाजिक आवो हवा का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है? इसके लिए समान आयु वाले या समान कक्षा के छात्रों के तीन समूहों में बराबर -बराबर बांट दिया। प्रथम समूह का नेता प्रजातांत्रिक था वह सदस्यों के साथ काफी उदारतापूर्वक व्यवहार करता था तथा उनके कार्यो के प्रति प्रोत्साहन भी देता था। दूसरे समूह के सदस्यों को निर्देश मात्र देता था, प्रोत्साहन नहीं देता था। तीसरे समूह का नेता अहस्तक्षेपी था जो समूह के कार्य मै किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करता था । वह मात्र प्रेक्षक (observer)के रूप में कार्य करता था। परिणामस्वरूप यह देखा गया कि सत्तावादी समूह में परिवर्तन धीरे-धीरे परन्तु कुछ समय पश्चात सामान्य स्तर तक पहुंच गया, दूसरे समूह में परिवर्तन काफी तेजी से हुआ परन्तु कुछ समय बाद कम होता गया । ऐसा इस कारण हुआ कि

प्रजातांत्रिक व सत्तावादी नेतृत्व में जो परिवर्तन देखा गया है वह सामाजिक अवहेलना के कारण हुआ। प्रयावार्थक समूह में उदारता तथा सहिष्णुता एवं विनम्रता का भाव वाले व्यक्ति एवं सतावादी समूह मे भावुकता, गुस्सा, हिंसा, बैर भाव पाई जाती है अत: समूहगतिकी द्वारा सामाजिक नेतृत्व व नेतृत्व का प्रभाव आदि देखा गया।

मनोविज्ञान की अन्य शाखाओं के समान समाज मनोविज्ञान की भी अपनी कुछ विधियाँ हैं जिसके सहारे समाज मनोवैज्ञानिक समाज मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र के विषय-वस्तु का अध्ययन करते हैं जैसे-जैसे समाज मनोविज्ञान का कार्यक्षेत्र बढ रहा है वैसे-वैसे समाज मनोविज्ञान की अन्य विधियाँ भी विकसित होती जा रही है। जैसे प्रयोगात्मक विधि प्रेक्षपण विधि, सर्वे विधि, व्यक्ति इतिहास लेखन विधि, क्षेत्र अध्ययन विधि एवं समाजमितिय विधि आदि। प्रस्तुत इकाई में "समाजमितिय विधि" का वर्णन किया जा रहा है। समाजमितिय प्रविधि द्वारा समूहगत सदस्यों की अन्त: व्यक्तिक सम्बन्धों का अध्ययन सामूहिक मनोबल, मापन समूहगत, स्वीकृत, अस्वीकृत, आकर्षक, निकर्षक आदि का मापन किया जाता है।

18.4.4 समूहगतिकी के उपयोग (Uses of Group Dynamics)

1. सामूहिक निर्णय प्रक्रिया द्वारा मनुष्यों के व्यवहारों में आसानी से परिवर्तन लाया जा सकता है क्योंकि इस प्रक्रिया में स्वयं इनके द्वारा ही सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं और परस्पर विचार-विमर्श कर एक निश्चित निर्णय पर पहुंचा जाता है।
2. सदस्यों में कार्य संतुष्टि तथा समूह का निष्पादन बहुत कुछ नेतृत्व के प्रकार पर निर्भर करता है। प्रजातांत्रिक नेत्रत्व में सदस्यों में कार्य संतुष्टि तथा समूह का निष्पादन सतावादी नेतृत्व की अपेक्षा अधिक होता है।
3. सहभागी नेतृत्व में भाषण नेतृत्व की अपेक्षा सदस्यों के व्यवहारों में परिवर्तन तेजी से आता है।
4. छोटे समूहों में बड़े समूहों की अपेक्षा सदस्यों के व्यवहारों में परिवर्तन लाना अधिक आसान होता है अत: यह सही है कि "समूहगतिकी" का सम्प्रत्यय जितना छोटे समूह पर सही उतरता है उतना बड़े समूह पर नहीं।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

4.1 समूहगतिकी अवधारणा को स्पष्ट करें।

4.2 कखा की समूहगतिकी जानने के लिए क्या करते है?

4.3 समूहगतिकी विश्लेषण के क्या उपयोग हैं?

18. 5 सारांश (Summary)

एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण में परीक्षार्थी से कुछ चयनित उद्दीपकों के प्रति लिखित या मौखिक अनुक्रियाएँ करने को कहा जाता है । इसके आधार पर उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का आंकलन किया जाता है । इनके पदों और परीक्षणों का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जा सकता है.

(i) निबंधात्मक-वस्तुनिष्ठ (ii) द्वि-विकल्पी-बहु विकल्पी (iii) मिलान पद (iv) मानकीकृत-अध्यापक निर्मित (v) आत्मनिष्ठ-वस्तुनिष्ठ परीक्षण (vi) गीत-शक्ति परीक्षण (vii) पेपर-पेंसिल-निष्पादन-मिश्रित परीक्षण (viii) शील गुण पर आधारित जैसे बुद्धि, अभिरूचि, सृजनता व्यक्तित्व मापनियाँ इत्यादि। एक अच्छे मनोवैज्ञानिक परीक्षण में मुख्यतः ये विशेषताएँ होती हैं मानकीकृत, वस्तुनिष्ठता, प्रशासन, फलांकन एवं विवेचना में सरल, समय, धन तथा व्यक्ति के संदर्भ में मितव्ययी मंद बोधक तथा विश्वसनीय एवं वैध होना चाहिए ।

समाजीमीतक विधि प्रेक्षण की एक विधि है जिसमें किसी समूह में सदस्यों की लोकप्रियता उनके परस्पर संबन्धों तथा समूहों की संरचना के बारे में पता लगाने के लिए प्रयत्न किया जाता है। इसमें समूह के प्रत्येक समूह सदस्य को किसी विशिष्ट क्रिया या अवसर के लिए, जो उसके लिए अर्थ रखता है, एक या एक से अधिक व्यक्तियों समूहों, प्रतिरूपों को चुनने को कहा जाता है तथा उसे भी जिसे वह सबसे कम पसंद करता है । चुनाव समूह के बाहर के व्यक्तियों का भी हो सकता है या व्यक्ति के स्थान पर संचार प्रणालियों के पारस्परिक क्रियाओं के प्रतिरूप इत्यादि से भी हो सकता है ।

कक्षा में अध्ययन के समय वांछित वातावरण बनाये रखना "अधिगम' के लिए अति आवश्यक होता है । यदि ऐसा नहीं होगा तो अधिगम तो अप्रभावी होगा ही साथ ही आस-पास का वातावरण भी अप्रभावी होगा इसलिए छात्र व अध्यापक का दायित्व है कि कक्षा का वातावरण अनुशासनात्मक तथा पढाने योग्य होना चाहिए ताकि शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा सके । इससे कक्षा की गत्यात्मकता की प्रकृति में परिवर्तन आ जाता है, गत्यात्मकता को बनाये रखना सम्भव हो सकता है । यथा आवश्यकता है कक्षा की व्यवस्था को निर्माण कर छात्र समूह बनाना, विचार विनिमय, सूत्रों का आयोजन करना, छात्रों की प्रतिभा को खोजना एवं उसे काम में लाना, समस्या समाधान की प्रविधियों को काम में लाना एवं वांछित व्यवहार का पुनर्वलन करना आदि तकनीकों का ज्ञान छात्र-अध्यापक को आवश्यक हे ताकि कक्षा उन्नयन हेतु वह उनका उपयोग कर सके ।

18.6 शब्दावली (Glossary) :

1 वस्तुनिष्ठ पद - जिसका एक निश्चित उत्तर होता है।
गति परीक्षण - जिसमें गति के साथ परिशुद्धता का भी परीक्षण होता है।

2 प्रक्षेपी परीक्षण - इसमें किन्हीं अस्पष्ट उद्दीपकों (स्याही के धब्बों या अस्पष्ट चित्रों) पर प्रतिक्रिया मांगी जाती है।

3 स्वप्रत्यय परीक्षण - इसमें उत्तरों के आधार पर विषयी अपने बारे में क्या धारणा रखता है इसका आंकलन किया जाता है।

4 समाजमिति - इसमें किसी समूह के व्यक्ति किसी अभिपूर्ण कार्य के लिए किन्हीं विशिष्ट चुनाव करते हैं, जिसके आधार पर सदस्यों की अन्त: व्यक्तिक सम्बन्धों, सामूहिक मनोबल, समूहगत स्वीकृत-अस्वीकृत, आकर्षक-विकर्षक का अध्ययन किया जाता है।

5 समाजमिति मैट्रिक्स - यह एक वर्गाकार प्रदर्शन चार्ट है जिसमें समूह के प्रत्येक घटक ने किसी विशेष स्थिति के लिए किन/किन को चुना है।

8 समाज आलेख - इसमें तीरों (↗↗↗↗, ↗↗↗↗↗, ↗↗↗↗↗) द्वारा किसने किसको चुना है, यह दर्शाया जाता है।

समाजमिति सूचकांक - इसके आधार पर समूह के किसी सदस्य के पसंद स्तर एवं समूह समग्रता को अनुपात में व्यक्त किया जाता है।

8 समूहगतिकि - इसमें कक्षा वातावरण तथा छात्र-शिक्षक के बीच सम्बन्ध का पता लगाया जाता है।

18.7 संदर्भ ग्रन्थ (Further Readings)

1	डॉ0 प्रयाग मेहता	: अंडर स्टेन्डिंग क्लास रूम बिहेवियर एन. सी. ई. आर. टी.,1967
2	रेवन व रयूबिन	:सोशल साइकोलोजी - जोन विली एण्ड संस, न्यूयार्क, 1997
3	अग्रवाल, चरणी जा	: प्रयोगात्मक मनोविज्ञान, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1995
4	घनश्याम दास रस्तोगी	: आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान - मनोविज्ञान विभाग, गोरखपुर वि. वि. ,गोरखपुर,1980
5	डॉ॰ बी. एस. रायजादा	: शिक्षा अनुसंधान के आवश्यक तत्व, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1997
6	डा0. के. पी. पाण्डेय	: नवीन शिक्षा मनोविज्ञान - विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2005
7	डॉ॰ अरूण कुमार सिंह	: उच्चतम सामाजिक मनोविज्ञान, कानपुर विश्वविद्यालय प्रकाशन, कानपुर, 2003
6	डॉ. टी. वी. सोमशेखर	: शिक्षा मनोविज्ञान एवं मापन, निर्मला प्रकाशन, बंगलौर, 2004
7	स्टीवर्ट एच. डुलसे	: द साइकोलोजी ऑफ लर्निंग, मेकगोहिल कोगाकुशा लि., टोकियो, 1975
8	एस. दान पाणी	: उन्नत शिक्षा मनोविज्ञान - अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2002
9	हिलगार्ड ई. आर. एटकिन्सन	: इट्रोडक्सन दू साइकोलोजी परीक्षण, ओक्सफोर्ड और आई वी एच प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975

18.8 स्वपरख प्रश्नो के उत्तरों / संकेत (Answer/Hints to Self- Learning Exercises)

2.1 - 18.2.1 से सहायता लें

2.2 - 18.2.2 से सहायता लें

2.3 - 18.2.3 से सहायता लें

2.4 - 18.2.4 से सहायता लें
3.1 - 18.3.1 से सहायता लें
3.2 - 18.3.2 से सहायता लें
3.3 - 18.3.3 से सहायता लें
4.1 - 18.4.1 से सहायता लें
4.2 - 18.4.2 से सहायता लें
4.3 - 18.4.3 से सहायता लें

18.9 अभ्यसार्थ प्रश्न (Unit End Questins)

1 मनोविज्ञान प्रयोगों के अन्तर्गत पाये जाने वाले विभिन्न चरों की विवेचना कीजिए?
2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण क्या है और उनका प्रयोग कहाँ किया जाता है?
3 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में परिकल्पना तथा नियंत्रण का क्या महत्व है?
4 चरों का नियंत्रण प्रयोग के प्रमुख चरणों का वर्णन कीजिए।
5 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
6 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग स्पष्ट कीजिए।
7 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की प्रयोग विधि विश्लेषणात्मक तथा गणनात्मक व्याख्या कीजिए।
8 कक्षाध्यापक की अधिगम प्रभावी बनाने के लिए समाजमिति तथा समूहगतिकी विधि का प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए।
9 समाजमिति विधि क्या है? उपयोग स्पष्ट कीजिए।
10 समूहगतिकि विधि को स्पष्ट कीजिए तथा उपयोग भी बताइये!
11 समाजमिति 'सामाजिक व्यवहार मे प्रयोग' पर टिप्पणी कीजिए?
12 समाजमितिय प्रविधि एक अध्यापक के किस प्रकार उपयोग हो सकती है?
13 समूह गत्यात्मकता की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
14 समूहगतिकी क्या है? कक्षाध्यापक के लिए यह विधि किस प्रकार उपयोगी है?
15 कक्षा समूह किस प्रकार एक विशिष्ट मानव समूह है?
16 समूह गत्यात्मक द्वारा प्रभावित कुद कक्षागत स्थितियों का उल्लेख कीजिए?
17 समूह गत्यात्मकता के अन्तर्गत आप किन कक्षागत स्थितियों को सम्मिलित करेंगे?
18 शिक्षण के समय गत्यात्मकता बनाये रखने हेतु क्या उपयोग करेंगे? उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

इकाई 19 (unit 19)

संख्याकीय अवधारणाओ तथा केन्द्रीय प्रवर्तिया, प्रतिशतक, विचलन तथा अनुक्रमित आकांडों से सह-संबंध गुणांक का संख्याकीय अर्थ निर्णय

(Statistical Concepts and Statistical Interpretation of Central Tendencies, Percentile, Dispersion and Rank Order Coefficient of Correlation)

इकाई की रूपरेखा (structure)

19.0 उद्देशय (objective)

19.1 प्रस्तावना (introduction)

19.2 केन्द्रीय प्रवर्तिया (Central Tendencies)

19.2.1 मध्यमान (Mean)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.2.2 मध्यांक (Meadian)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.2.3 बहुलाक (Mode)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.3 प्रतिशतक एवम प्रतिशतक क्रम (Percentile and Percentile Rank)

19.3.1 प्रतिशतक (Percentile)

19.3.2 प्रतिशतक क्रम (Percentile Rank)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.4 विचरणशीलता (Dispersion)

19.4.1 परास (Range)

19.4.2 चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.4.3 औसत विचलन (Average Deviation)

19.4.4 प्रामाणिक विचलन (Standard Deviation)

19.4.4.1 वर्गीकृत आंकड़ो से (Catagorised data)

19.4.4.2 संक्षिप्त विधि से (Short method)

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

19.5 अनुक्रमित आंकड़ो से सह- समबन्ध गुणाक

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)
19.6 सारांश (Summary)
19.7 शब्दावली (Glossary)
19.8 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)
19.9 स्वपरख प्रश्नों के उत्तर (Answers to self-learning Exercise)
19.10 परीक्षा योग्य प्रशन (Unit End Questions)

19.0 उदशेय (Objective)

इस इकाई को पड़ने के बाद आप-

(1) मध्यमान, मध्यांक, बहुलांक (Mean, Median, Mode) जेसी केन्द्रीय प्रवर्तियों की (i) अवधारणा को समझ सकेंगे (ii) इनकी गणना कर सकेंगे तथा (iii) इनकी अन्य विशेषताओ को समझ सकेंगे ।

(2) प्रतिशतक (Percentile) तथा प्रतिशतक क्रम (Percentile Rank) की (i) अवधारणों को समझ सकेंगे (ii) विभिन्न स्थितियों मे इनकी गणना कर सकेंगे तथा (iii) इनकी अन्य विशेषताओं को समझ सकेंगे ।

(3) प्रसरण के विभिन्न रूपो जैसे औसत विचलन (Average deviation), चतुर्थक विचलन (Standard deviation) की (i) अवधारणओ को समझ सकेंगे (ii) विभिन्न स्थितियों मे इनकी गणना कर सकेंगे तथा (iii) इनकी अन्य विशेषताये समझ सकेंगे ।

(4) सह-संबद्ध गुणांक (Coefficient of correlation) की (i) अवधारणा को समझ सकेंगे तथा (iii) अनुक्रम-अंतर सह-संबंध गुणांक की गणना कर सकेंगे ।

19.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव व्यवहार के अधिकांश क्षेत्रों मे उसके व्यवहार को समझने उसका आंकलन करने, उसमे वांछित प्रभाव लाने के प्रयत्न की सफलता इत्यादि का आंकलन करने मे संख्याकी का तेजी से प्रयोग बड़ता जा रहा है। शिक्षा मे छात्रों की शिक्षा -दीक्षा को वांछित दिशा देने, उसका सतत संप्रेषण करने तथा उसकी सफलता का आंकलन करने मे संख्याकी काफी उपयोगी सिद्ध हो रही है। इसलिए संख्याकी की कम से कम आधारभूत संकल्पनाओ को समझना तथा उसका आंकलन करना आपके लिए काफी उपयोगी हो सकता है। इन आधाभूत संकल्पनाओ को समझना तथा उनका आंकलन करना आपके लिए काफी उपयोगी हो सकता है। इन आधारभूत संकल्पनाओ को मोटे तोर पर चार भागों मे बांटा गया है। केन्द्रीय प्रवर्ती, प्रतिशतक एवम प्रतिशतिक क्रम, व्यवहार विचलन तथा सह-संब्ध गुणांक।

19.2 केन्द्रीय प्रवृत्तियाँ (Central Tendencies)

यदि हम किसी कक्षा के बालको को कोई मानसिक परीक्षा दे, तो अधिकांश स्थितियों मे केन्द्रीय प्रवर्ती वाले मापों (मध्यमान, मध्यांक, बहुलांक) की प्रवृती मध्य मे होने की होती है। इन मापों का मुख्य उद्देशय प्रतिदर्श- आंकड़ो की विशेषताओं को प्रदर्शित करने वाला एक अंक प्रदान करना है। उदाहरण के लिए किसी समूह के छात्रों का औसत बुद्धिलब्ध 125 है तो यह संकेत होगा

की यह उच्च बुद्धिलब्ध वाले छात्रों का समूह है, याधपी इनमे कुछ छात्रों की बुद्धिलब्ध 125 से कम होगी तथा कुछ की उससे ऊपर।

इस प्रकार यदि अंको का वितरण सममित है तो यह सभी मापों (मध्यमान, मध्यांक, तथा बहुलांक) बीच (केंद्र) के आस-पास होंगे।

19.2.1 मध्यमान **(Mean)**

केंद्रीय प्रवृति के मापों मे यह सबसे अधिक परिचित तथा प्रयोग मे आना वाला माप है। समान्यतः इसे औसत के रूप मे जाना जाता है।

अवधारणा (Concept) - मध्यमान केन्द्रीय प्रवर्ती का यह माप है जो प्राप्त अंको को जोड़ कर उनकी संख्या से भाग देकर प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए यदि किसी परीक्षा पर प्राप्त 6 छात्रों के अंक 9, 10, 5, 11, 6, 7 है तो

अंको का मध्यमान $= \frac{9+10+5+11+6+7}{6} = \frac{48}{6}$

= 8 होगा

समीकरण के रूप मे

मध्यमान = $\left(\overline{X}\right) = \frac{\sum fx}{N}$

जहाँ x, समूह मे कोई अंक है ।

N अंको की संख्या है ।

सभी अंको का जोड़ है

19.2.1.1 वर्गीकृत आंकड़ों से मध्यमान की गणना : -

(Calculation of Mean from categorized Data)

तालिका 19.1 - 60 छात्रों के एक मानसिक परीक्षा पर वर्गीकृत अंक

(I)	(II)	(III)	(IV)	(V)
वर्ग अंतराल (Class-interval) (C.I)	वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु (Mid point of the class interval) (X)	आवृर्ती (Frequency) (f)	काल्पनिक मध्यमान से इकाई के रूप मे (x)	f(x)
90-99	94.5	2	+4	+8
80-89	84.5	5	+3	15
70-79	74.5	13	+2	+26
60-69	64.5	14	+1	+14
50-59	54.5	15	0	0
40-49	44.5	13	-1	-13
30-39	34.5	12	-2	-24
20-29	24.5	5	-3	-15
10-19	14.5	1	-4	-4
	$\sum f$ =N	80	$\sum fx$ =+63-56=7	

संकेतो की व्याखया :-

1. वर्ग अंतराल (class -interval)

(i) 60-69 वर्ग अंतराल का परास (range) 59.5 से 69.5 तक होगा 59.5 के नीचे के अंक 50-59 मे होंगे । इसी प्रकार 69.5 से ऊपर 70-79 मे होंगे ।

(ii) वर्ग अंतरालों को 10-20, 20-30 ....90-100 या 9.5 -19.5, 19.5 -29.5 ...... 89.5 -99.5 मे भी लिखा जाता है ।

परंतु व्याख्या 10-19 इत्यादि की तरह ही होगी ।

2. वर्ग-अंतराल का मध्यबिन्दु (Midpoint of the Class - interval)

इसको वर्ग अंतराल के दोनों छोरों (ends) को जोड़कर 2 से भाग देकर प्राप्त किया जाता है जैसे

70-79 का मध्यबिन्दु $= \frac{70+79}{2}$ = 74.5

30-39 का मध्यबिन्दु $= \frac{30+39}{2}$ = 34.5 इत्यादि

3. परंपरा - इस विधि से मध्यमान प्राप्त करने के लिए वर्ग सारी आवर्तियों को उसके मध्य बिन्दु पर केन्द्रित मान लिया जाता है। जैसे वर्ग अंतराल 70-79 की सभी 13 आवर्ति

को हम उसके मध्यबिंदु 74.5 पर केन्द्रित मान लेते है। देखने मे यह परंपरा संदिग्ध लग सकती है परंतु दो कारणो से यह मध्यमान के मूल्यो को प्रभावित करती नहीं लगती

(i) इस परंपरा से होने वाली त्रुटि नगण्य है

(ii) जब हम मध्यमान का मान निकलते है तो सारे अंतरो का योग लगभग शून्य हो जाता है । इसलिय मध्यमान आवश्यक रूप से सटीक (exact) होता है ।

4 मध्यमान प्राप्त करने का सूत्र (Formula)

Mean $=\left(\bar{X}\right)=\dfrac{\sum fx}{N}$

जहाँ x वर्ग अंतराल का मध्यबिंदु है

इसलिए उपरोक्त उदाहरण मे

$$\text{मध्यमान} = \frac{\begin{Bmatrix}(94.5\times2)+(84.5\times5)+(74.5\times13)\\(64.5\times14)+(54.5\times15)+(44.5\times13)\\(34.5\times12)+(24.5\times5)+(14.5\times1)\end{Bmatrix}}{80}$$

$$=\frac{\begin{Bmatrix}189+422.5+968.5+9.3+817.5\\+578+414+122.5+14.5\end{Bmatrix}}{80}$$

=55.375 ....(i)

19.2.1.2 संक्षिप्त विधि (अनुमानित मध्यमान) से मध्यमान की गणना

इसमे हम एक अनुमानित मध्यमान को किसी वर्ग अंतराल के मध्य बिन्दु के रूप मे कल्पना करते है और बाद मे इस काल्पनिक मूल्य (assumed value) मे संशोधन करके वास्तविक मध्यमान प्राप्त करते है। इससे गणना संछिप्त हो जाती है। समान्यतः अनुमानित मध्यमान को उस वर्ग अंतराल के मध्य बिन्दु के रूप मे लेते है जिससे सबसे अधिक होती है, ऐसे इसे किसी भी वर्ग-अंतराल के मध्यबिन्दु के रूप मे ले सकते है। उत्तर पर कोई अन्तर नहीं पड़ेगा ।

तालिका 19.1 के आंकड़ो को एक बार हम फिर लेते है, यह पुष्टि करने के लिए कि इस विधि से भी वास्तविक मध्यमान वही रहता है जो पहले पाया गया (अर्थात = 55.375)

सबसे अधिक आवृति 50-59 वर्ग अंतराल मे है जिसका मध्य बिन्दु है 54.5। यदि हम वर्ग अंतराल 10 को एक इकाई माने तो 54.5 से 50-59 की दूरी शून्य होगी। इस प्रकार 60-69 की दूरी +1 होगी, इत्यादि। इसी प्रकार 40-49 की दूरी -1, 30-39 की दूरी -2 इत्यादि होगी जैसे तालिका 19.1 के कांलम (iv) मे दिखाया गया है।

इस पद्धति से वास्तविक मध्यमान $\left(\bar{X}\right)$ का सूत्र यह होगा

$$\left(\bar{X}\right) = \text{काल्पनिक मध्यमान } \left(AM\right)+\frac{\sum fx}{N}\times CI$$

यहाँ $=54.5+\dfrac{(63-56)}{80}\times10$

$$= = 54.5 + \frac{7}{8}$$

= 55.375

फिर वही मूल्य जो (i) मे प्राप्त हुआ था। यह हमारी परम्परा की पुष्टि करता है ।

19.2.1.3 मध्यमान की अन्य विशेषताये :-

1. यदि सभी अंको से कोई अचर (constant) c जोड़ या घटा दिया जाए तो नया मध्यमान, $M' = M \pm C$ जहाँ M पुराना मध्यमान है

2. यदि C से प्रत्येक अंक को गुणा कर दिया जाये तो नया मध्यमान M'= MC होगा।

3. यदि n प्रतिदर्शों के मध्यमान $M_1, \bar{M_2}......Mn$ है तथा प्रतिदर्शों मे अंको की संख्या क्रमशः $N_1, N_2......Nn$ है तो संयुक्त मध्यमान

$$MCOM = \frac{N_1M_1 + N_2M_2 + ...N_nM_n}{N_1 + N_2 + ...N_n}$$

यदि सभी अंको से उनके मध्यमान (M) को घटा दिया जाए तो

$$\sum(x - M) = 0$$

4. किसी भी अंको के वितरण मे मध्यमान केन्द्रीय प्रवृति के अन्य मापों से अति- मूल्यो (extremes values) से अधिक संवेदनशील होगा।

उदाहरण के लिए 1 + 2 + 3 + 5 + 19 का मध्यमान = $\frac{30}{6}$ होगा यदि अति मूल्य 19 हटा लिया जाए तो मध्यमान = 2.75 रह जाएगा।

5. परंतु तथ्यो से आगे निष्कर्ष निकालने (inferential statistics) मे मध्यमान सबसे अधिक किया जाता है।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

01 6, 2, 7, 9, 10, 18, 11, अंको का मद्यमान ज्ञात कीजिये और जांच कीजिये कि (i) यदि प्रत्येक अंक में 8 बढ़ा दिया जाये तो मद्यमान भी 8 अंक बढ़ जाएगा (ii) यदि सभी अंको से मद्यमान घटा दिया जाये तो नये अंकों का जोड़ शून्य हो जायेगा ।

19.2.2 मध्यांक **(Meadian)**

क्रमिक अंको के समूह मे यह वह बिन्दु (Point) है जिसके ऊपर और नीचे बराबर संख्या मे अंक होते है। अर्थात यदि अंको को आरोही या अवरोही क्रम मे रखा जाए तो मध्यांक इस क्रम का मध्य बिन्दु होगा । उदाहरण के लिए यदि प्राप्त अंक 3, 8, 2, 9, 11, 5, 1 है तो आरोही क्रम मे इन्हे रखने पर यह इस प्रकार होंगे

1, 2, 3, 5, 8, 9, 11...(i)

इसलिए मध्यांक होगा 5 क्योकि नीचे और ऊपर तीन- तीन अंक है ।

परंतु यदि अंको कि संख्या सम (even) हो जैसे -

1, 2, 3, 5, 7, 11,...(ii)

तो मध्यांक होगा $\frac{5+7}{2}=6$ जिसके नीचे और ऊपर तीन- तीन अंक होंगे । सामान्यीकरण करते हुए मध्यांक होगा $-\frac{n+1}{2}th$ स्थान जहां n अंको की संख्या है:

(i) में $\frac{7+1}{2}=4^{th}$ स्थान जो 5 है ।

(ii) मे $\frac{8+1}{2}=4.5^{th}$ वां स्थान जो 4^{th} और 5^{th} के बीच में है:

19.2.2.1 वर्गीक्रत अंको मे मध्यमान की गणना :-

तालिका 19.1 की एक बार फिर लेते है जिसके वर्ग अंतरालोंको इस प्रकार भी लिखा जा सकता है-

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति आरोही	संचयी-आवृति अवरोही
89.5 - 99.5	2	80	2
79.5 - 89.5	5	78	7
69.5 - 79.5	13	73	20
59.5- 69.5	14	60	34
49.5 - 59.5	15	46	49
39.5 - 49.5	13	31	62
29.5 - 39.5	12	18	74
19.5 - 29.5	5	6	79
9.5 - 19.5	1	1	80

N=80

यहाँ अंको की संख्या (N) 80 है इसलिए मध्यांक वह बिन्दु होगा जिसके ऊपर / नीचे 40, 40 अंक हो । आरोही या अवरोही संचयी आवृति मे यह बिन्दु 49.5 - 59.5 वर्ग अंतराल मे आता है । आरोही संचयी आवृति मे 39.5 - 49.5 तक 31 अंक आ चुके है ।

31 + 49.5------------15- - - - - 59.5

इसलिए 49.5 - 59.5 वर्ग अंतराल मे हमें 40 - 31 = 9 अंक आगे चाहिए । 49.5 -59 में अंको की संख्या 15 है ।

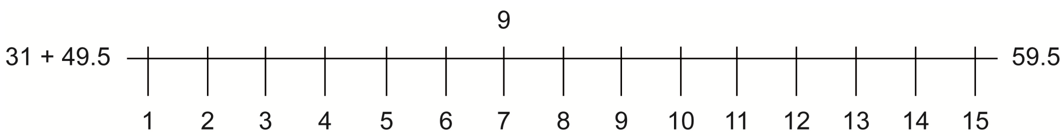

यहाँ हम यह मानकर चलते है कि वर्ग अंतरालों मे अंक समान रूप से वितरित है । इसलिए 49.5 - 59.5 मे प्रत्येक अंक को 10/15 का स्थान मिलेगा। इसलिए 9 अंक का स्थान 49.5 से 49.5 + 10/15 x 9 = 55.5 होगा जो इस वितरण मध्यांक होगा ।

समीकरण के रूप मे मध्यांक $= L + \frac{N/2 - F}{2} \times C.I.$

जहाँ L= उस अंतराल कि निचली सीमा जिसमे मध्यांक स्थित है

N= अंको की संख्या

F = निचली सीमा तक अंको की संख्या

f = वर्ग अंतराल मे अंको की संख्या

C.I.= वर्ग अंतराल

इसलिए ऊपर उदाहरण में

मध्यांक (Meadian) = $49.5 + \left(\frac{\frac{80}{2} - 31}{15} \right) 10$

= 55.5

इसी प्रकार यदि हम ऊपर से नीचे की और चले तो समीकरण इस प्रकार होगा

Meadian = $U - \left(\frac{\frac{N}{2} - F}{f} \right) \times C.I.$

U = वर्ग अंतराल की उच्चतम सीमा जिसमे मध्यांक है

इसलिए उपरोक्त उदाहरण में

$$59.5 - \left(\frac{\frac{80}{2} - 34}{15} \right) \times 10$$

= 59.5 - 4.00

= 55.5

यह एक प्रकार की जांच (check) है कि दोनों तरफ से मध्यांक का एक ही बिन्दु आना चाहिए।

19.2.2.1 विशिष्ट स्थितियों मे मध्यांक की गणना :-

(i) जब मध्यांक किसी दो वर्ग अंतरालों की सीमा (border) पर हो तो उसे उभयनिष्ठ सीमा (common border) पर रखना चाहिए । उदाहरण तालिका 19.2 मे उभयनिष्ठ सीमा पर मध्यांक की गणना करनी चाहिए ।

तालिका 19.2 (उभयनिष्ठ सीमा पर मध्यांक की गणना)

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति	
		आरोही	अवरोही
39.5 - 44.5	4	50	4
34.5 - 39.5	6	46	10
29.5 - 34.5	8	40	18
24.5 - 29.5	7	32	25
19.5 - 24.5	9	25	34
14.5 - 19.5	8	16	42
9.5 - 14.5	6	8	48
4.5 - 9.5	2	2	50
N = 50 $\frac{N}{2} = 25$			

इसीलिए यहाँ मध्यांक होगा 24.5

(ii) जब मध्यांक उस वर्ग अंतराल की निचली सीमा पर हो, जिसमे कोई अंक नहीं

उदाहरण - तालिका 19.3 (बिना अंक वाले अंतराल मे स्थिति मध्यांक की गणना)

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति	
		आरोही	अवरोही
44.5 - 49.5	2	36	2
39.5 - 44.5	3	34	5
34.5 - 39.5	6	31	11
29.5 - 34.5	7	25	18
24.5 - 29.5	0	18	0
19.5 - 24.5	10	18	28
14.5 - 19.5	6	8	34
9.5 - 14.5	2	2	36

यहाँ यदि नीचे से ऊपर संचयी आवृति लेते है तो मध्यांक 24.5 होगा यदि, ऊपर से नीचे ले तो 29.5 होगा इसलिए ऐसे दोनों सीमाओ का मध्य अर्थात 27 मध्यांक के रूप में लेते है ।

(iii) जब क्रमगत (consecutive) अंतरालों मे दो या उससे अधिक शून्य (0) हो जिसका उदाहरण नीचे दिया गया है ।

उदाहरण - तालिका 19.4 अंतरालों मे दो या उससे अधिक मे शून्य होने पर मध्यांक की गणना

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति	
		आरोही	अवरोही
39.5 - 44.5	4	20	4
34.5 - 39.5	2	16	6
29.5 - 34.5	0	14	6
24.5 - 29.5	0	14	6
19.5 - 24.5	4	14	10
14.5 - 19.5	0	10	10
9.5 - 14.5	0	10	10
4.5 - 9.5	6	10	16
0 - 4.5	4	4	20

N = 20

ऐसी स्थिति मे दो मुख्य सुझाव है:

(Garrett. (1996 Hindi Edn P. 41) द्वारा

वर्ग अंतरालों की सीमाओं को इस प्रकार अंतर्वेशित (interpolate) किया जाए कि ऊपर-नीचे दोनों तरफ से एक ही मध्यांक आए जैसे ऊपर के उदाहरण मे

39.5 - 44.5	4
34.5 - 39.5	2
29.5 - 34.5	0
24.5 - 29.5	0
14.5 - 19.5	4
4.5 - 14.5	6
0 - 4.5	4

यहाँ ऊपर-नीचे दोनों तरफ से मध्यांक 14.5 होगा

(Guilford, JP(1956 p-61) द्वारा

ऐसी स्थिति मे मध्यांक का अच्छा आंकलन नहीं हो सकता ।

19.2.2.3 मध्यांक की अन्य विशेषताये :-

(iii) मध्यांक परम (extreme) मूल्यों से अधिक प्रभावित नहीं होता

उदाहरण के लिए यदि अंक है

3, 4, 6, 8, 10

तो मध्यांक 6 होगा । यदि इसमे 20 और लेते तो

3, 4, 6, 8, 10, 20

में मध्यांक $\frac{6+8}{2}=7$ अर्थात केवल 1 बिन्दु बढेगा

परन्तु मध्यमान 8.5 हो जाएगा ।

(ii) अपूर्ण वितरण से भी मध्यांक प्राप्त किया जा सकता है । उदाहरण के लिए यदि अंको का वर्गीकृत वितरण इस प्रकार हो जैसा तालिका मे दिखाया' गया है-

तालिका सं. 19.5 अपूर्ण वितरण से मध्यांक की गणना

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति	
		आरोही	अवरोही
89.5 और ऊपर	5	100	5
79.5 - 89.5	8	95	13
69.5 - 79.5	12	87	25
59.5 - 69.5	10	75	35
49.5 - 59.5	20	65	55
39.5 - 49.5	15	45	70
29.5 - 39.5	18	30	88
19.5 और नीचे	12	12	100

N=100

यहाँ मध्यांक नीचे से ऊपर

$$49.5+\frac{50-45}{20}\times 10=52$$

ऊपर से नीचे $59.5-\frac{50-35}{20}\times 10=52$ (checked)

(ii) मध्यांक का प्रयोग इन स्थितियो मे अधिक उपयोगी होगा-

(अ) जब आंकड़ो मे परम (exteme) अंक हो

(ब) जब वह सटीक बिन्दु (exact point) प्राप्त करना हो, जिसके ऊपर / नीचे बराबर संख्या मे अंक हो ।

(iv) सीमायें :-

(अ) मध्यमान की तरह उतना अधिक नहीं प्रयोग में आता ।

(ब) कम विश्वसनीय है

(स) हम संयुक्त (combined) मध्यमान प्राप्त नहीं कर सकते ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

02 छात्रों के अंको का मध्यांक है । यदि सबसे अधिक अंक पाने वाले छात्र के अंक 10 बढ़ा दिये जाये तो नया मध्यांक क्या होगा ?

19.2.3. बहुलांक **(Mode):-**

अवधारणा - किसी अंको के कुलक (set) मे बहुलांक वह अंक है जो सबसे अधिक बार आता है अर्थात जिसकी आवृति सबसे अधिक होती है उदाहरण के लिए

10, 11, 11, 12, 12, 13, 13, 13, 14, 15, मे 13 सबसे बार आया है इसलिए इस प्रतिदर्श मे बहुलांक 13 है परंतु यहाँ दो स्थितियां हो सकती है-

(अ) जैसे कोई बहुलांक न हो जैसे -

3, 5, 2, 8, 7, 6 जहाँ सभी अंक एक बार आये है

(ब) जहाँ एक से अधिक बहुलांक हो जैसे - 8, 9, 17, 17, 17, 15, 15, 15, 21, 22 जहाँ 17 और 15 दोनों तीन बार आये है -

19.2.3.1 वर्गीकृत आंकड़ो से बहुलांक की गणना :-

यहाँ बहुलांक वह वर्ग अंतराल है जिसमे सबसे अधिक आवृति हो । परंतु यदि बहुलांक का एक मुल्य चाहिए तो वह इस वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु होगा जैसे यदि बहुलांक 49.5 - 59.5 वर्ग अंतराल मे है तो सटीक (exact) बहुलांक $\frac{49.5+59.5}{2}=54.5$ होगा ।

19.2.3.2 बहुलांक प्राप्त करने की अन्य विधियाँ :-

(i) बहुलांक (Mode) = $L+\frac{f_1-f_0}{2f_1-f_0-f_2}\times C.I$

L = उस वर्ग अंतराल की निचली सभी जिसमे बहुलांक है

f_1 = उस वर्ग अंतराल की आवृति जिसमे बहुलांक है

f_0 = बहुलांक वाले वर्ग अंतराल के ठीक नीचे वाले वर्ग अंतराल की ।

f_2 = बहुलांक वाले वर्ग अंतराल के ठीक ऊपर वाले वर्ग अंतराल की आवृति ।

C.I.= वर्ग अंतराल ।

तालिका 19.5 के उदाहरण में

बहुलांक = $49.5+\frac{20-15}{2\times 20-15-10}\times 10$

49.5 + $\frac{5}{15}$

49.83

(ii) जब अंक वितरण सममित हो

Mode = 3 median - 2 mean

(iii) जब एक से अधिक बहुलांक हो

(अ) जब बहुलांक वाले दोनों वर्ग आसन्न (adjacent) हो - यहाँ बहुलांक वह बिन्दु होगा जो दोनों वर्गो को विभाजित करता है

(ब) जब एक वर्ग अंतराल का अंतर हो तो 3 median - 2 mean

(स) जब एक से अधिक अंतराल की दूरी हो

तो हम कहेंगे कि यह बहु-बहुलांक वाली स्थिति है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)		
03	निम्नलिखित आकड़ों के बहुलांक क्या होगा ?	
	वर्ग अंतराल	आवृति
	18 - 19	3
	16 - 17	5
	14 - 15	5
	12 - 13.1	4

19.3 प्रतिशतक एवम प्रतिशतक क्रम (Percentile and Percentile Rank)

किसी सामूहिक परीक्षा पर किसी छात्र का प्राप्तांक तभी अर्थपूर्ण होगा जब उसकी तुलना समूह के अन्य सदस्यो से की जाय उदाहरण के लिए यदि उसे 58 अंक उस समूह मे मिले है जिसमे अधिकांश लोगो ने 15 से 30 अंक प्राप्त किए है तो हम उसकी उपलब्धि को सराहनीय मानेंगे । परंतु यदि अधिकांश लोगों ने 50 से 60 के बीच अंक पाये है तो उसकी उपलब्धि को केवल साधारण ही मानेगे। यह आंकलन और भी सटीक होता यदि हम बता सकते कि कितने प्रतिशत छात्रों ने उससे कम या अधिक अंक प्राप्त किए है । इसलिए हम उसके अंक को प्रतिशत के रूप मे व्यक्त करते है ।

यदि उसका प्रतिशतक 95% है तो उसका अर्थ यह हुआ कि 95% छात्रो ने उससे कम अंक प्राप्त किए है तथा 5% (100%- 95%) ने उससे अधिक प्राप्त किए है ।

इस प्रकार हम कह सकते है कि यदि अंको को आरोही क्रम (ascending order) मे रखा जाए तो P प्रतिशतक (Percentile) वह बिन्दु होगा जिसके नीचे समूह के P% सदस्य होंगे और (100% - P%) सदस्य उससे ऊपर अंक वाले होंगे ।

19.3.1 गणना (Computation) कच्चे आंकड़ो से

(i) जब कच्चे आंकड़े हो जैसे :

30, 28, 27, 50, 70, 35, 40, 48, 25, 30,
60, 32, 30, 52, 72, 37, 42, 50, 37, 32,
51, 48, 40, 42, 37, 41, 20, 26, 29, 31

N = 30

आरोही क्रम मे -

20, 25, 26, 27, 28, 28, 29, 30, 30, 30,
31, 32, 32, 35, 37, 37, 37, 40, 40, 41,
42, 42, 48, 50, 50, 51, 52, 60, 70, 72

यदि Pr को ज्ञात करना है तो पहले $\left(\frac{r}{100}\right)N$ ज्ञात करे

(a) यदि $\left(\frac{r}{100}\right)N$ एक पूर्ण संख्या K है तो

Pr = Kth + (K+1)th अंको का मध्यमान होगा ।

उदाहरण के लिए

यहाँ Pr = 70, और N = 30

इस $=\left(\frac{r}{100}\right)N=\frac{70}{100}\times 30=21$

यह एक पूर्ण संख्या है इसलिए P_{70}, 21वे तथा 22वे अंक का मध्यमान होगा

21वां अंक 40 है तथा 22वां भी 40 है इसलिए

$\therefore P_{70}=\frac{40+40}{2}=40$ होगा

(b) इसी प्रकार यदि $\left(\frac{r}{100}\right)N$ एक पूर्ण संख्या नहीं है तो अगली वाले संख्या प्रतिशतक होगी ।

उदाहरण के लिए $P_{25}=30\left(\frac{25}{100}\right)=7.5$

इसलिए आठवी संख्या प्रतिशतक होगी अर्थात

$P_{25}=30$

(ii) वर्गीकृत आंकड़ो से प्रतिशतक

उदाहरण - तालिका 19.6 - प्रतिशतक की गणना

वर्ग अंतराल	आवर्ती	संचयी आवर्ती	
		आरोही	प्रतिशत संचयी अंक
39.5 - 44.5	3	50	100
34.5 - 39.5	5	47	94
29.5 - 34.5	7	42	84
24.5 - 29.5	8	35	70
19.5 - 24.5	10	27	54
14.5 - 19.5	9	17	34
9.5 - 14.5	6	8	16
4.5 - 9.5	2	2	4

N=50

आइये 10^{th} 25^{th} 50^{th} तथा 60^{th} प्रतिशतक ज्ञात करें

यह बिलकुल मध्यांक प्राप्त करने के समान है । मध्यांक को हम 50th प्रतिशतक भी कह सकते है ।

प्रक्रिया -

10% of 50 = 5

25% of 50 = 12.5

50% of 50 = 25

60% of 50 = 30

इसलिए 10^{th} प्रतिशतक $9.5+\frac{5-2}{6}\times 5$

= 9.5+2.5

= 12.00

25^{th} प्रतिशतक

$$14.5+\frac{12.5-8}{6}\times 5$$

$$=14.5+2.5$$

$$=17.00$$

50^{th} प्रतिशतक = $19.5+\frac{25-17}{10}\times 5$

$$=19.5+4$$

$$=23.5$$

60^{th} प्रतिशतक = $24.5+\frac{30-27}{8}\times 5$

$$=24.5+1.875$$

$$=26.375$$

19.3.2 प्रतिशतक क्रम की गणना (Computation of Percentile Rank PR)

इसका सूत्र है

$$PR=\left[F+\frac{(S-L)}{i}f\right]\frac{100}{N}$$

F = PR से संबन्धित वर्ग अंतराल तक संचयी आवृति

f = PR से संबन्धित वर्ग अंतराल मे आवृति

L = से संबन्धित वर्ग अंतराल की निचली सीमा

i = से संबन्धित वर्ग अंतराल की लम्बाई

S = विषयी का अंक

N = समूह मे अंको की संख्या

उदाहरण - 27 अंक पाने वाले का PR ज्ञात करना है

अंतराल जिसमे यह प्रतिशतकक्रम 24.5 - 29.5

F = 27

S = 27 = $\therefore PR_{27}=\left[27+\left(\frac{27-24.5}{5}\right)8\right]\frac{100}{50}$

N = 50

L = 24.5 $= \left(27+\frac{2.5}{5}\times 8\right)\times 2$

i = 5 = (27 + 4) 2

f = 8 = 62 प्रतिशतक क्रम

जब संचयी आवृति प्रतिशतक के रूप मे हो तो -

$$PR = P + \left(\frac{S-L}{L_2}\right)\times dp$$

P = PR से संबन्धित वर्ग अंतराल तक अंको का प्रतिशत

S = विषयी का अंक

L = PR वर्ग की निचली सीमा

I = वर्ग अंतराल की लम्बाई

Dp = PR वर्ग मे ऊपरी तथा निचली सीमा तक % का अंतर

उपरोक्त उदाहरण मे -

P = 54%

S = 27

L = 24.5

i = 5

dp = 16

$$\therefore PR_{27} = 54 + \left(\frac{27-24.5}{5}\right)\times 16$$

$= 54 + 8$

$= 62$ (checked)

टिप्पणी -

(i) दो प्रतिशतकों का अंतर अंको के वितरण मे प्रसरण (dispersion) का संकेत देता है 10 और 90 प्रतिशतक का प्रसार (range) चतुर्थक प्रसरण (quadratic deviation) $\left[\frac{P_{75}-P_{25}}{2}\right]$ से अधिक स्थाई होती है।

(ii) (a) प्रतिशतक अंक (कच्चे आंकड़ो) को अर्थ प्रदान करता है (b) अंतर टेस्ट (inner test) के तुलना मे यह सहायक है (c) मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं के लिए मानक (norms) प्रदान करने मे महत्वपूर्ण है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

04 जांच कीजिये कि निम्नलिखित आकड़ों से 25 प्रतिशत 14.5 तथा 22 अंक पाने वाले का प्रतिशत क्रम 85.4167 है ।

वर्ग अंतराल आवृति संचयी आवृति संचयी प्रतिशत

वर्ग अंतराल	आवृति	संचयी आवृति	संचयी प्रतिशत
24.5-29.5	4		
19.5-24.5	6		
14.5-19.5	8		
9.5-14.5	4		
4.5-9.5	2		

19.4 विचारशीलता Dispersion

विचरणशीलता (dispersion) के माप भी कच्चे आंकड़ो के सारांश प्रस्तुत करने की विधियाँ है । यद्यपी यह केन्द्रीय माप से अलग, आंकड़ो के सारांश का दूसरा पक्ष प्रस्तुत करते है और केन्द्रिय प्रवृति से मिलकर आंकड़ो कहीं अधिक अर्थपूर्ण बनाते है।

उदाहरण के लिए मान लीजिये किसी विद्यालय मे किसी कक्षा के दो सेक्सनों (sections) मे बुद्धिलब्ध का मध्यमान 108 है । यदि हम इन पर किसी नयी शिक्षण विधि का प्रभाव देखना चाहते है तो किस सेक्शन मे अधिक समरूप (homogenous) प्रगति की अपेक्षा की जा सकती है ? बुद्धिलब्ध की दृष्टि से दोनों समूह समान है इसलिए यह उत्तर हो सकता है कि दोनों मे नवीन विधि का प्रभाव सामरूप होगा। परंतु उत्तर इतना सरल नहीं है। जिस सेक्शन मे बुदीलब्ध (IQ) का विचलन (dispersion) अधिक है उसमे नवीन विधि से अधिकल समरूप की सम्भावना कम होगी । इस प्रकार हम देखते है कि अंको विवरणीय विशेषताए (descriptive characteristics) विचलन के मापों के बिना अधूरी रह जाएगी ।

इन विचलनों के मापों का एक वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है परास (Range), औसत विचलन (average deviation), चतुर्थक विचलन (quartile deviation) तथा प्रामाणिक विचलन (Standard deviation) । इनका एक-एक करके कुछ विस्तृत वर्णन करेंगे ।

19.4.1 परास (Range)

इसे प्रतिदर्श के अंको मे उच्चतम तथा निम्नतम अंको के बीच के अंतर के रूप में पारिभाषित किया जाता है। उदाहरण के लिए 35, 50, 30, 58, 70, 82 का परास 82 - 30 = 52 होगा क्योकि सबसे छोटा अंक 30 है तथा सबसे बडा अंक 82 है।

इस प्रकार परास (Range) - R = उच्चतम अंक - निम्नतम अंक

टिप्पणी -

(i) विचलन का यह सबसे सरल परंतु सबसे अपरिष्कृत (crude) माप है। इसलिए इसका प्रयोग तभी किया जाता है जब दो या दो से अधिक समूहो के विचलन कि एक काम - चलाऊ (rough) तुलना करना ही लक्ष्य हो ।

(ii) जब प्रतिदर्श छोटा हो तथा अंको मे काफी अंतर हो तो यह माप काफी अविश्वसनीय होगा ।

19.4.2 चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation) :-

इसे अंतर - चतुर्थक परास के रूप मे भी परिभाषित किया जाता है तथा Q के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है समीकरण के रूप में

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

जहाँ Q_3 = 75^{th} प्रतिशतक

Q_1 = 25^{th} प्रतिशतक

इससे स्पष्ट है कि Q को ज्ञात करने के लिए पहले Q_3 और Q_1 को ज्ञात करना होगा।

हम देख चुके है कि

$$Q_3 = L_1 + \left(\frac{\frac{3}{4}N - cum.freq.}{fq} \right) C.I.$$

$$Q_1 = L_1 + \left(\frac{\frac{N}{4} - cum.freq.}{fq} \right) C.I.$$

जहाँ L = चतुर्थक वाले अंतराल कि निचली सीमा

Cum. Fre = चतुर्थक तक कि संचयी आवृति

Fq = चतुर्थक वाले अंतराल कि आवृति

उदाहरण

तालिका 19.6, - Q_1, Q_2 तथा Q_3 की गणना

वर्ग अंतराल	आवर्ती	संचयी आवर्ती
39.5 - 44.5	3	50
34.5 - 39.5	5	47
29.5 - 34.5	7	42
24.5 - 29.5	8	35
19.5 - 24.5	10	27
14.5 - 19.5	9	17
9.5 - 14.5	6	8
4.5 - 9.5	2	2

N = 50

$$Q_1 = 14.5 + \frac{(12.5-8)}{9} \times 5$$

$$= 14.5 + \frac{4.5}{9} \times 5$$

$$= 14.5 + 2.5 = 17.00$$

$$Q_3 = 29.5 + \left(\frac{50\times 3}{4} - 35\right) \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{2.5\times 5}{7} = 29.5 + 1.79$$

$$= 31.29$$

$$\therefore Q = \frac{31.29-17.00}{2} = \frac{14.29}{2}$$

$$= 7.145$$

चतुर्थक विचलन की अन्य विशेषताए :-

1. यह वितरण के रूप मे अंको की सघनता का अच्छा संकेतक है

2. $$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{(Q_3 - Q_2) + (Q_2 - Q_1)}{2}$$

इसका अर्थ यह हुआ कि Q मध्यांक से चतुर्थक बिन्दुओं का औसत (मध्यमान) है ।

3. Q_1, Q_2, Q_3 आवृति वितरण मे तिरछेपन (skewness) जानने मे भी सहायक है

यदि वितरण सममित है, तो

$$Q_3 - Q_2 = Q_2 - Q_1$$

तथा Q को त्रुटि (PE) कहते है

यदि $Q_3 - Q_2 > Q_2 - Q_1$ तिरछापन (skewness) सकारात्मक (positive) होगा ।

यदि $Q_3 - Q_2 < Q_2 - Q_1$ तिरछापन (skewness) नकारात्मक (negative) होगा ।

$$Q_2 = 19.5 + \frac{(25-17)}{10} \times 5$$

= 23.5

$$Q_3 - Q_2 = 31.29 - 17 = 7.79$$

$$Q_2 - Q_1 = 23.5 - 17 = 6.5$$

$$\therefore (Q_3 - Q_2) > (Q_2 - Q_1)$$

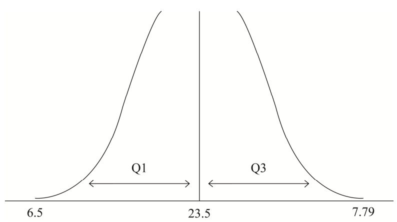

इसलिए तिरछापन सकरात्मक (skewness) होगी ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)	
05	PE की व्याख्या कीजिये ।

19.4.3 औसत विचलन **(Average Deviation - AD)**

यदि आंकड़ो के समूह के प्रत्येक अंक उसके मध्यमान से विचलन ज्ञात किया जाये तथा सभी विचलनों का सकारात्मक माना जाए तो उनका औसत, औसत विचलन कहलाएगा। समीकरण के रूप में

Average deviation $= \frac{\sum |(X - M)|}{N}$

जहां (X - M) का अर्थ है X - M के विचलन का सकारात्मक मूल्य

उदाहरण के लिए यदि प्रतिदर्श के अंक इस प्रकार है :

3, 7, 5, 2, 10, 15, 8, 6

तो मध्यमान $= \frac{3+7+5+2+10+15+8+6}{8} = \frac{56}{8}$

= 7

इसलिए AD $= \frac{|(3-7)|+|(7-7)||+.........+|(6-7)|}{8}$

=3

टिप्पणी

1. इसका शिक्षा मे बहुत की कम प्रयोग होता है
2. यदि वितरण सममित है तो Mean - AD तथा Mean + AD के बीच 57.5% अंक होंगे ।
3. SD > AD > Q

19.4.3 प्रामाणिक विचलन **(Standard Deviation)**

इसे σ या S.D. के रूप मे चिन्हित किया जाता है

तथा σ (SD) = $\sqrt{\frac{\sum (X - M)}{N}}$...................(1)

के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है तथा इसका केवल धनात्मक मूल्य लिया जाता है यहाँ X - M किसी अंक की मध्यमान M से दूरी

N = अंको की संख्या

(i) का दूसरा रूप है: $\sigma = \sqrt{\frac{\sum X^2}{N} - (Mean)^2}$

या $= \sqrt{\frac{\sum X^2}{N} - \left(\frac{\sum x}{N}\right)^2}$

उदाहरण - प्रतिदर्श के अंक : 15, 19, 14, 16, 17, 19, 26, 10

$\therefore$ मध्यमान $= \frac{15+19+................+26+10}{8}$

$= \frac{136}{8} = 17$

$$\therefore SD(\sigma) = \sqrt{\frac{(15-17)^2 + (19-17)^2 + (10-17)^2}{N}}$$

$$= \frac{152}{8} = \sqrt{19} = 4.36$$

19.4.4.1 वर्गीकृत आंकड़ो से प्रामाणिक विचलन ज्ञात करना :-

उदाहरण : तालिका 19.7 के आंकड़ो से प्रामाणिक विचलन ज्ञात करना

वर्ग अंतराल	मध्य बिन्दु	आवृति	अनुमानित मध्यमान से वर्ग- अंतराल दूरी	fx'	fx'^2
80 - 84	82	1	+3	+3	9
75 - 79	77	2	+2	+4	8
70 - 74	72	4	+1	+4	4
65 - 69	67	8	0	0 (+11)	0
60 - 64	62	6	-1	-6	6
55 - 59	57	5	-2	-10	20
50 - 54	52	2	-3	-6	18
45 - 49	47	1	-4	-4	16
40 - 44	42	2	-5	-10	50
				-36	
	N =	31		$\sum fx' = -25(+11-36)$	131

यहाँ मध्यमान = $67 + \frac{11-36}{31} \times 5 = \frac{125}{31}$

= 62.97

$$\therefore SD = \sqrt{\frac{(82-62.97)^2 + (77-62.97)^2 + ... + (42-62.97)^2 \times 2}{31}}$$

$$= \sqrt{\frac{(19.3)^2 + (14.03)^2 + ... + (20.97)^2 \times 2}{31}}$$

$$= \sqrt{\frac{362.1409 + 393.6818 + ... + 879.4818}{31}}$$

$$= \sqrt{\frac{2770.9678}{31}}$$

= 9.45

19.4.3.2- उपरोक्त उदाहरण का संक्षिप्त विधि (short method) से प्रामाणिक विचलन ज्ञात करना ।

इसका सूत्र है $i\sqrt{\frac{\sum fx'^2}{N}-\left(\frac{fx'}{N}\right)^2} = 5\sqrt{\frac{131}{31}-\left(\frac{-25}{31}\right)^2}$ = 5×1.89

SD= 5×1.89 = 9.45 (checked)

टिप्पणी :-

1. जब वर्ग अंतराल (C.I.) बड़े हो और अंको की संख्या कम तो वास्तविक SD प्राप्त करने के लिए (Sheppard Correction) का प्रयोग करते है तथा संशुद्ध (corrected) वास्तविक प्रामाणिक विचलन इस सूत्र से प्राप्त करते है ।

   (Corrected) SD = $\sqrt{SD^2-\frac{i^2}{12}}$

2. सभी अंको मे कोई अचर जोड़ने या घटाने पर प्रमाणिक विचलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, परंतु सभी को K से गुणा करने पर नया SD= K (पुराना SD)

3. जब वितरण सममित हो (symmetrical) हो तो वितरण के

   68% अंक M - σ और M + σ के बीच मे होंगे

   95% अंक M - 2σ और M + 2σ के बीच होंगे

4. विचलन मापों का यथोचित प्रयोग

   (i) परास (Range) - जब मोटे तोर पर अंको की विचलनशिलता ज्ञात करनी हो।

   (ii) औसत विचलन (A.D.) जब बहुत चरम अंक (extreme scores) बेकार में (SD) को प्रभावित कर रहे' हो ।

   (iii) चतुर्थक - जब मध्यांक को केन्द्रीय प्रवशति के रूप मे प्रयोग किया जाए ।

   (iv) प्रामाणिक विचलन (SD) -

   अ - जब आगे भी कोई परिकल्पनाओ का परीक्षण करना हो ।

   ब - जब सबसे सुसंगित विचलन (Consistent variability) ज्ञात करना हो ।

   स - जब समान्य समभवतः वक्र मे अंको का वितरण ज्ञात करना हो ।

5 संयुक्त SD (Combined SD) की गणना ।

   Combined SD $=\sqrt{\frac{n_1(M_1^{\ 2}+\sigma_1^{\ 2})+..........+n_r(m_r^{\ 2}+\sigma_r^{\ 2})-M^2Comb}{n_1+n_2+.......n_r}}$

Comb m $=\frac{25\times60+75\times50}{75+25}$

= 52.5

उदाहरण -

	N	m	SD
	25	60	10
	75	50	15

Comb $SD = \sqrt{\frac{25(60^2 + 10^2) + 75(50^2 + 75^2)}{25 + 75} - (52.5)^2}$

	स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)			
06	35, 40, 25, 22, 50, 45, 30, 41 अंकों के प्रामाणिक विचलन ज्ञात कीजिये ।			
07	नीचे वितरणों से सयुक्त M और SD ज्ञात कीजिये ।			
	वितरण	N	M	
	1	10	50	8
	2	100	40	20
	3	50	30	10

19.5 अनुक्रमित आंकड़ो से सह- संबद्ध गुणांक की गणना (Calculation of coefficient of correlation from Rank order data)

अभी तक हमने उन सांख्यकी विधियों का अध्ययन किया जिनके समूह के आंकड़ो का केन्द्रीय प्रवर्ति तथा: विचलन के रूप मे संक्षेपीकरण किया जाता है । इनके माध्यम से आगे विभिन्न समूहों मे विभेदीकरण करने में सहायता मिलती है । अब हम दो या उससे अधिक चरों (variables) के बीच सह-सम्बंध ज्ञात करने की एक सरल विधि पर विचार करेंगे ।

यदि एक चर में परिवर्तन पर किसी दूसरे चर में भी परिवर्तन होता है तो ऐसा समझा जाता है कि दोनों चरो के बीच सह-सम्बंध है उदाहरण के लिए यदि छात्रों कि बुद्धिलब्ध और उनके गणित के परीक्षण के अंको के बीच उसी दिशा में परिवर्तन पाया जाता है तो हम कहते है कि बुद्धि और गणित में गहरा संबंध है । सह संबंध गुणांक (Coefficient of Correlation) सह-संबंध को प्रदर्शित करने वाली वह संख्या है जो यह प्रदर्शित करती है कि एक चर पर होने वाले विचलन किस सीमा तक दूसरे चर को प्रभावित करते है । 1 का गुणांक दोनों चरो में पूर्ण सह - सम्बंध है अर्थात एक चर में जिस दिशा में परिवर्तन होगा, उसी दिशा में परिवर्तन होगा । इसी प्रकार - 1 का अर्थ एक में जिस दिशा में परिवर्तन होगा दूसरे का उल्टी दिशा में परिवर्तन होगा ।

सह-सम्बंध ज्ञात करने की अनेक विधियाँ है परंतु यहाँ एक सरल क्रम - अंतर विधि (rank difference method) से सह-गुणांक प्राप्त करने का तालिका 19.8 का उदाहरण प्रस्तुत कर रहे है, जिसमें एक समूह के छात्रों के बुद्धिलब्ध और गणित के प्रश्न पत्र पर अंको को साथ-साथ दिखलाया गया है ।

तालिका 19.8 दिये आंकड़ो से सह-संबंध गुणांक ज्ञात करना

विषयी	बुद्धिलब्ध	क्रम	गणित परीक्षा क्रम		क्रमों का अन्तर	D^2
A	105	5	73	5	0.00	0.00
B	123	1	98	1	0.00	0.00
C	108	4	68	7	-3.00	09.00
D	115	3	84	3	0.00	00.00
E	96	6.5	62	10	-3.50	12.25
F	94	8	74	4	+4.00	16.00
G	88	10	63	5	+1.00	1.00
H	117	2	85	2	0.00	00.00
I	96	6.5	64	8	-1.5	2.25
J	90	9	72	6	+3.00	9.00
					$\sum D^2 = 49.50$	

∴ क्रम निर्धारित सह- सम्बंध गुणांक (ρ)

∴ (Rank order coefficient of correlation ρ) $= 1 - \frac{6 \times \sum D^2}{N(N^2 - 1)}$

$$= 1 - \frac{6 \times 49.5}{10(100 - 1)}$$

9929822017

$$= 1 - \frac{6 \times 49.5}{10 \times 99}$$

$$= 1 - \frac{99}{330}$$

= 1-.30 = .70

नोट - जहां अनुक्रम ग्रंथित है (rank are tied) अर्थात जहां दो या उससे अंक समान है वहाँ उनके संभावित क्रमो के मध्यमान का उनमे समान रूप से वितरण कर दिया जाता है । जैसे ऊपर के उदाहरण में बुद्धिलब्ध 96 दो बार आया है । और यह स्थिति 5वें क्रम के बाद आई है अर्थात 6 तथा 7 वें क्रम में अंक समान है । इसलिए दोनों अंको को क्रम 6+7/2 =6.5 दिया गया है

2. सह- संबंध गुणांक की सार्थकता की जांच के लिए Garrett Hindi Edition ने page 227 पर एक सारणी दी है ।

स्वपरख प्रश्न (Check Your Progress)

08 नीचे आंकड़ो से ρ की गणना कीजिये । तथा जजों के बीच सह सम्बंध बताइए ।

छात्र	जज (निर्णायक) द्वारा दिये गए क्रम	
	जज (1)	जज (2)
1	2	1
2	1	2
3	4	5
4	3	6
5	6	4
6	5	3

(चेक कीजिये उत्तर है : .43)

2. जब मध्यांक वाले वर्ग अंतराल में कोई आवृति न हो तो उस अंतराल का मध्यबिंदु मध्यांक होगा ।

3. जब क्रमगत (Consecutive) अंतरालों में दो से अधिक शून्य हों - ऐसी स्थिति में या तो अंतरालों की सीमा को इस प्रकार अंतर्वेर्शित (interpolate) किया जाए कि ऊपर और नीचे दोनों से एक ही मध्यांक आए । या यह मान लिया जाए कि ऐसी स्थिति में मध्यांक का अच्छा आंकलन नहीं हो सकता ।

अन्य विशेषताएँ :-

1. मध्यांक परम (extreme) से अधिक विचलित नहीं होता ।
2. अपूर्ण अंको से भी प्राप्त हो सकता है ।

स -बाहुलांक :-

यह प्रतिदर्श में सबसे अधिक आने वाला अंक है । ऐसे अंको के कई समूह हो सकते है अर्थात एक प्रतिदर्श में एक से अधिक बहुलांक हो सकते है।

प्रतिशतक एवं प्रतिशतकक्रम (Percentile & Percentile Rank)

(i) प्रतिशतक- यदि समूह के अंको को आरोही क्रम में रखा जाए तो p प्रतिशतक (Percentile) वह बिन्दु होगा जिसके अंक नीचे p% सदस्य होंगे तथा (100- p%) अंक ऊपर होंगे । जैसे 70 प्रतिशतक में 70 प्रतिशतक अंक नीचे तथा (100 - 70)% 30 प्रतिशत ऊपर ऊपर होंगे । समीकरण के रूप में (p/100)N प्रतिशतक यदि वह पूर्ण संख्या n है तो प्रतिशतक n वां तथा (n + 1) वां अंक का मध्यमान है यदि पूर्ण अंक नहीं है तो (n + 1) वां अंक होगा जिस प्रकार हमने मध्यांक में देखा था । सभी प्रतिशतकों में median वाली विधि ही लगेगी ।

(ii) प्रतिशतक क्रम की गणना **(Percentile Rank)** :-

सूत्र

$$PR = \left[F + \frac{(S-L)f}{i} \right] \frac{100}{N}$$

जहां F = PR अंतराल तक संचयी आवर्ति

f = PR वाले अंतराल की आवर्ति

L = PR वाले अंतराल की निचली सीमा

i = वर्ग अंतराल की लंबाई

N = समूह में अंको की संख्या

S = विषयी के अंक

टिप्पणी -

1. दो प्रतिशतकों के वितरण में प्रसरण का संकेत देते है ।
2. प्रतिशतक अंक कच्चे आंकड़ो को अर्थ प्रदान करता है तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं में मानक (norms) का कार्य करता है ।

<u>विचरणशीलता (Dispersion)</u>

इसमे परास (range), औसत विचलन (average deviation), चतुर्थक विचरण (quartile deviation) तथा प्रामाणिक विचलन (standard deviation) जैसी अवधारणायें आती है-

परास (range) =Max. score - Minimum score

औसत विचलन (AD) = $\frac{|\sum X|}{N}$

19.6 सारांश (Summary)

शिक्षक को अपने छात्रो के व्यवहार को समझने तथा उसे वांछित दिशा में निर्देशित तथा उसकी सफलता का आंकलन करने में संख्याकीय अवधारणायें एवं विधियां काफी उपयोगी हो सकती है इसलिए उनका कम से कम आधारभूत ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है जैसे केन्द्रीय प्रवृत्ति, विचलन तथा सह-सम्बन्ध।

केंद्रीय प्रवृत्ति (Central Tendencies) में वह सांख्यिकी अवधारनाएं आती हैं, जिनकी स्थिति आकड़े सममित हैं तो क्रमिक आकड़ों के मध्य में होती है जैसे

अ . मध्यमान यह केन्द्रीय प्रवृत्ति का वह माप है जो प्राप्त आंकड़ो को जोड़कर उनकी संख्या से भाग देने पर प्राप्त होता है । समीकरण के रूप में इसे इस प्रकार रखा जा सकता है-

मध्यमान $\left(\bar{X}\right)=\frac{\sum fx}{N}$

वर्गीकृत आंकड़ो में यह $\left(\bar{X}\right)=\frac{\sum fx}{N}$

जहाँ $\left(\bar{X}\right)$ वर्ग अंतराल का मध्यबिंदु है

या $\left(\bar{X}\right)$ = काल्पनिक मध्यमान $(AM)=\frac{\sum fx}{N}\times C.I.$

जहाँ x, AM से वर्ग अंतराल की दूरी तथा C.I.= वर्ग अंतराल

मध्यमान की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार है

(i) $M' = M \pm C,\ M' = M \times C$

(ii) $Mcomb = \dfrac{N_1 m_1 + N_2 m_2 + ... + N_r m_r}{N_1 + N_2 .... + N_r}$

(iii) $\sum (x - \overline{X}) = 0$

ब. मध्यांक (Median) :-

क्रमित अंको के समूह में वह बिन्दु है जिसके ऊपर तथा नीचे अंको की संख्या बराबर है यदि अंको की N संख्या विषम (odd) है तो यह (N+1)/2 वी संख्या होगी यदि सम (even) है तो यह N^{th} / 2 तथा उसकी अगली संख्या का मध्यबिंदु होगी ।

वर्गीकृत आंकड़ो में

मध्यांक (Mdn) = $L + \dfrac{\left(\dfrac{N}{2} - F\right)}{f} \times C.I.$

जहाँ L = उस अंतराल की निचली सीमा जिसमे मध्यांक है

N = अंको की संख्या

F = निचली सीमा तक अंको की संख्या

f = मध्यांक वाले अंतराल की आवृति

C.I. = वर्ग अंतराल

विशेष स्थितियाँ :-

1 जब मध्यांक दो अंतरालों की सीमा पर हो तो वह सीमा ही उसका मध्यांक होगा ।

चतुर्थक विचलन $(Q) = \dfrac{Q_3 - Q_1}{2}$

चतुर्थक विचलन अंको की सघनता का अच्छा संकेत है :

वितरण में skewness जानने में सहायक है

प्रामाणिक विचलन (Standrad deviations)

$$SD = \sqrt{\frac{\sum (X - M)^2}{N}}$$

संक्षिप्त विधि से = $\sqrt{\dfrac{\sum X^2}{N} - \left\{\dfrac{\sum X}{N}\right\}^2}$ = i $\sqrt{\dfrac{\sum fx'^2}{N} - \left\{\dfrac{fx'}{N}\right\}}$

= Corrected SD = जब अंतराल बड़े तथा अंको की संख्या कम हो ।

अनुक्रमित आंकड़ो से सह-संबंध गुणांक

P = 1-

जहाँ D= क्रमो में अंतर, N= विषयीयों की संख्या

19.7 शब्दावली (Glossary)

मध्यमान (Mean):- केन्द्रीय प्रवर्ती का वह माप है जो प्राप्त अंको को जोड़कर उनकी संख्या से भाग देने से प्राप्त होता है

मध्यांक :- अंको को अवरोही या आरोही क्रम मेँ रखने पर मध्यांक वह बिन्दु है जिसके ऊपर और नीचे बराबर- बराबर अंक होंगे ।

बहुलांक :- अंको के समूह मेँ सबसे अधिक आवर्ति वाला /वाले अंक उसका बहुलांक कहलाते है वर्गीकृत अंको मैं वह बहुलंक वाले वर्ग अंतराल का मध्यबिन्दु होगा ।

प्रतिशतक :- 74 प्रतिशतक का अर्थ है कि 74: अंक उसके नीचे तथा 26 (100-74)% अंक उसके ऊपर है ।

विचरणशीलता :- यह संकेत देती है कि प्राप्तांकों मेँ आपस मेँ कितनी विभिन्नता है ।

तिरछापन (skewness) :- तिरछापन यह दर्शाता है कि यदि अंको का ग्राफ बनाया जाय तो वह सममित (symmetry) से कितने हट कर है ।

सह -संबंध गुणांक :- यह संकेत देता है कि एक ही समूह के अंको के सेट मेँ अंको के क्रम मेँ कितनी समानता है । +1 का अर्थ है पूर्ण समानता तथा +1 का अर्थ है पूर्ण असमानता ।

19.8 संदर्भ ग्रंथ (Further Reading)

1. हेनरी ई। गेर्रेट (1996) हिंदी संस्करण, कल्याणी पब्लिशर, नई दिल्ली
2. Guilford J. P. C.

19.9 स्वपरख प्रश्नो के उत्तर/संकेत (Answers/ Hints तो self-learning Exercises)

01. मध्यमान $=\frac{63}{7}=9$

02. $=\frac{\sum(X+8)}{7}=17$ $=\frac{\sum(X-M)}{7}=0$

03. 15.5

04. सममित वितरण मेँ PE = Q को संभावित त्रुटि कहते है

05. 9.165

06. 502.64

19.10 परीक्षा योग्य प्रश्न (Unit end Questions)

1. मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक को किन परिस्थितियों मेँ प्रयोग करना अधिक उपयोगी होगा।
2. निम्नलिखित आंकड़ो से मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक ज्ञात करो तथा दिखाइए कि यह सभी आरोहीक्र्त अंको के मध्य मेँ है :

वर्ग अंतराल	आवृत्ति
40-44	2
35-39	4
30-34	5
25-29	7
20-24	5
15-19	4
10-14	2

3. (i) उपरोक्त आंकड़ो से P_{30}, P_{70} तथा P_{40} ज्ञात कीजिये ।

(ii) यदि किसी छात्र का अंक 37 है तो उसका प्रतिशतक क्रम ज्ञात कीजिये ।

(iii) चतुर्थक कि व्याख्या कीजिये तथा उपरोक्त आंकड़ो से उसकी गणना कीजिये।

(iv) P.E.क्या है और उपरोक्त आंकड़ो मेँ उसका क्या मान है।

ISBN NO - 13/978-85-8496-329-8